जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र

(शुद्ध मूल पाठ, कठिन शब्दार्थ, भावार्थ एवं विवेचन सहित)

प्रकाशक

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन
संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर
शाखा-नेहरू गेट बाहर, ब्यावर-३०५९०१
(०१४६२) २५१२१६, २५७६९९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ साहित्य रत्न माला का ११९वाँ रत्न

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र

(शुद्ध मूल पाठ, कठिन शब्दार्थ, भावार्थ एवं विवेचन सहित)

सम्पादक

नेमीचन्द बांठिया

पारसमल चण्डालिया

अनुवादक

प्रो० डॉ० छगनलाल शास्त्री

एम. ए. (त्रय), पी. एच.डी., काव्यतीर्थ, विद्यामहोदधि

महेन्द्रकुमार रांकावत

बी.एस.सी. एम. ए., रिसर्च स्कॉलर

प्रकाशक

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर

शाखा-नेहरू गेट बाहर, ब्यावर-३०५९०१

☎ : (०१४६२) २५१२१६, २५७६९९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य सहायक

उदारमना श्रीमान् सेठ जशवंतभाई शाह, मुम्बई

प्राप्ति स्थान

१. श्री अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, सिटी पुलिस, **जोधपुर** : २६२१४५

२. शाखा-अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, नेहरू गेट बाहर, **ब्यावर** : २५१२१६

३. महाराष्ट्र शाखा-माणके कंपाउंड, दूसरी मंजिल
आंबेड़कर पुतले के बाजू में, **मनमाड़** (नासिक) : २५२५१

४. श्री जशवन्तभाई शाह एदुन बिल्डिंग पहली धोबी तलावलेन पो० बॉ० नं० २२१७, **बम्बई-२**

५. श्रीमान् हस्तीमल जी किशनलालजी जैन ६७ बालाजी पेठ, **जलगांव**

६. श्री एच. आर. डोशी जी-३६ बस्ती नारनौल अजमेरी गेट, **दिल्ली-६** : २३२३३५२१

७. श्री अशोकजी एस. छाजेड़, १२१ महावीर क्लॉथ मार्केट, **अहमदाबाद**

८. श्री सुधर्म सेवा समिति भगवान् महावीर मार्ग, **बुलडाणा**

९. श्री श्रुतज्ञान स्वाध्याय समिति सांगानेरी गेट, **भीलवाड़ा**

१०. श्री सुधर्म जैन आराधना भवन २४ ग्रीन पार्क कॉलोनी साउथ तुकोगंज, **इन्दौर**

११. श्री विद्या प्रकाशन मन्दिर, ट्रांसपोर्ट नगर, **मेरठ** (उ. प्र.)

१२. श्री अमरचन्दजी छाजेड़, १०३ वाल टेक्स रोड़, **चैन्नई** : २५३५७७७५

मूल्य : ५०-००

प्रथम आवृत्ति
८००

वीर संवत् २५३०
विक्रम संवत् २०६१
मार्च २००४

मुद्रक - **स्वास्तिक प्रिन्टर्स प्रेम भवन हाथी भाटा, अजमेर** २४२३२९५, २४२७८३७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निवेदन

जैन दर्शन एवं इसकी संस्कृति का मूल आधार सर्वज्ञ-सर्वदर्शी वीतराग प्रभु द्वारा कथित वाणी है। सर्वज्ञ अर्थात् पूर्णरूपेण आत्मद्रष्टा। सम्पूर्ण रूप से आत्म दर्शन करने वाले ही विश्व का समग्र दर्शन कर सकते हैं, जो समग्र जानते हैं, वे ही तत्त्वज्ञान का यथार्थ निरूपण कर सकते हैं। अन्य दर्शनों की अपेक्षा जैन दर्शन की सबसे बड़ी विशेषता यही तो है कि इस दर्शन के प्रणेता सामान्य व्यक्ति न होकर सर्वज्ञ सर्वदर्शी वीतराग प्रभु हैं, जो अट्ठारह दोष रहित एवं बारह गुण सहित होते हैं। यानी सम्पूर्णता प्राप्त करने के पश्चात् ही वाणी की वागरणा करते हैं, अतएव उनके द्वारा फरमाई गई वाणी न तो पूर्वापर विरोधी होती है, न ही युक्ति बाधक। उनके द्वारा कथित वाणी जिसे सिद्धान्त कहने में आता है, वे सिद्धान्त अटल, ध्रुव, नित्य, सत्य, शाश्वत एवं त्रिकाल अबाधित एवं जगत के समस्त जीवों के लिए हितकर, सुखकर, उपकारक, रक्षक रूप होते हैं, जैन दर्शन का हार्द निम्न आगम वाक्य में निहित है -

सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं। पेच्चाभाविकं आगमेसिभद्ध सुद्धं णेयाउयं अकुडिलं अनुत्तरं सव्वदुक्खपावाण विउसमणं॥

भावार्थ - समस्त जगत के जीवों की रक्षा रूप दया के लिए भगवान् ने यह प्रवचन फरमाया है। भगवान् का यह प्रवचन अपनी आत्मा के लिए तथा समस्त जीवों के लिए हितकारी है। जन्मान्तर के शुभ फल का दाता है, भविष्य में कल्याण का हेतु है। इतना ही नहीं वरन् यह प्रवचन शुद्ध न्याय युक्त मोक्ष के प्रति सरल प्रधान और समस्त दुःखों तथा पापों को शान्त करने वाला है।

सर्वज्ञों द्वारा कथित तत्त्व ज्ञान, आत्म ज्ञान तथा आचार-व्यवहार का सम्यक् परिबोध आगम, शास्त्र अथवा सूत्र के रूप में प्रसिद्ध है। जिसे तीर्थंकर भगवन्त अर्थ रूप में फरमाते हैं। उस अर्थ रूप में फरमाई गई वाणी को महान् प्रज्ञावान् गणधर भगवंत सूत्र रूप में गुन्थित करके व्यवस्थित आगम का रूप देते हैं। इसीलिए कहा गया है - **''अत्थं भासइ अरहा सुत्तं गंथंति गणहरा निउणं।''** आगम साहित्य की प्रमाणिकता केवल गणधर कृत होने से ही नहीं, किन्तु अर्थ के प्ररूपक तीर्थंकर प्रभु की वीतरागता और सर्वज्ञता के कारण है। गणधर केवल द्वादशांगी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की रचना करते हैं। अंग बाह्य आगमों की रचना स्थविर भगवन्त करते हैं। स्थविर भगवन्त जो सूत्र की रचना करते हैं, वे दश पूर्वी अथवा उससे अधिक पूर्व के ज्ञाता होते हैं। इसलिए वे सूत्र और अर्थ की दृष्टि से अंग साहित्य के पारंगत होते हैं। अतएव वे जो भी रचना करते हैं, उसमें किंचित् मात्र भी विरोध नहीं होता है। जो बात तीर्थंकर भगवंत फरमाते हैं, उसको श्रुतकेवली (स्थविर भगवन्त) भी उसी रूप में कह सकते हैं। दोनों में अन्तर इतना ही है कि केवली सम्पूर्ण तत्त्व को प्रत्यक्ष रूप से जानते हैं, तो श्रुतकेवली, श्रुतज्ञान के द्वारा परोक्ष रूप में जानते हैं। उनके वचन इसलिए भी प्रामाणिक होते हैं, क्योंकि वे नियमतः सम्यग्दृष्टि होते हैं। वे हमेशा निर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे रखकर ही चलते हैं। उनका उद्घोष होता है **'णिग्गंथं पावयणं अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे'** निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ रूप, परमार्थ रूप है, शेष सभी अनर्थ रूप हैं। अतएव उनके द्वारा रचित आगम ग्रन्थ भी उतने ही प्रामाणिक माने जा रहे हैं जितने गणधर कृत अंग सूत्र।

जैनागमों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया गया है। समवायांग सूत्र में इनका वर्गीकरण पूर्व और अंग के रूप में मिलता है, दूसरा वर्गीकरण अंग प्रविष्ट और अंग बाह्य के रूप में किया गया है, तीसरा और सबसे अर्वाचीन वर्गीकरण अंग, उपांग, मूल और छेद रूप में है, जो वर्तमान में प्रचलित है।

११ अंग :- आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञाताधर्मकथांग, उपासकदशांग, अन्तकृतदसा, अनुत्तरौपातिक, प्रश्नव्याकरण एवं विपाक सूत्र।

१२ उपांग :- औपपातिक, राजप्रश्नीय, जीवाभिगम, प्रज्ञापना, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, निरियावलिका, कल्पावतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा सूत्र।

४ छेद :- दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प, व्यवहार और निशीथ सूत्र।

४ मूल :- उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, नन्दी और अनुयोग द्वार सूत्र।

१ आवश्यक :-

कुल ३२

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बारह उपांगों में जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र पांचवां उपांग है। यह स्थविर भगवंत द्वारा रचित है। चार अनुयोगों में जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति का समावेश गणितानुयोग में किया जाता है। इसमें मुख्यतया गणित-सम्बद्ध वर्णन है। यह सूत्र सात वक्षस्कारों में विभक्त है।

जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति नामक इस पंचम उपांग सूत्र में जंबूद्वीप के क्षेत्र, पर्वत, द्रह, नदियाँ, कूट, कालचक्र ऋषभदेव भगवान् तथा भरत चक्रवर्ती का जीवन चरित्र, ज्योतिषी चक्र आदि का विस्तार से वर्णन है। यह कालिक सूत्र है। इसमें १० अधिकार हैं। जिनमें नीचे लिखे विषय वर्णित हैं -

१. भरत क्षेत्र का अधिकार - जम्बूद्वीप का संस्थान व जगती। द्वारों का अन्तर। भरत क्षेत्र, वैताढ्य पर्वत व ऋषभकूट का वर्णन।

२. काल का अधिकार - उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल का वर्णन। काल का प्रमाण (गणित भाग) समय से १९८ अङ्कों तक का गणित। पहले, दूसरे तथा तीसरे आरे का वर्णन। भगवान् ऋषभदेव का अधिकार। निर्वाण महोत्सव। चौथे आरे का वर्णन। पांचवें और छठे आरे का वर्णन। उत्सर्पिणी काल।

३. चक्रवर्त्यधिकार - विनीता नगरी का वर्णन। चक्रवर्ती के शरीर का वर्णन। चक्ररत्न की उत्पत्ति। दिग्विजय के लिए प्रस्थान। मागधदेव, वरदामदेव, प्रभासदेव और सिन्धुदेवी का साधन। वैताढ्य गिरि के देव का साधन। दक्षिण सिन्धु खण्ड पर विजय। तिमिस्र गुफा के द्वारों का खुलना। गुफा प्रवेश, मण्डल लेखन। उन्मग्नजला और निमग्नजला नदियों का वर्णन। आपात नाम वाले किरात राजाओं पर विजय। चुल्लहिमवन्त पर्वत के देव का आराधन। ऋषभकूट पर नामलेखन। नमि तथा विनमि पर विजय। गङ्गा देवी का आराधन। खण्डप्रपात विजय नृत्यमालदेव का आराधन। नौ निधियों का आराधन। विनीता नगरी में प्रवेश। राज्यारोहण महोत्सव। चक्रवर्ती की ऋद्धि। शीशमहल में वैराग्य और कैवल्य प्राप्ति।

४. क्षेत्रवर्षधरों का अधिकार - चुल्लहिमवन्त पर्वत, हैमवत क्षेत्र, महाहिमवन्त पर्वत, हरिवर्ष क्षेत्र, निषध पर्वत, महाविदेह क्षेत्र, गन्धमादन गजदन्ता पर्वत, उत्तरकुरु क्षेत्र, यमक पर्वत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व राजधानी, जम्बूवृक्ष, माल्यवन्त पर्वत, कच्छ आदि आठ विजय, सीतामुख व वच्छ आदि आठ विजय। सौमनस गजदन्त, देवकुरु, विद्युत्प्रभ गजदन्त, पद्म आदि १६ विजय, मेरु पर्वत, नीलवन्त पर्वत, रम्यकवास क्षेत्र, रुक्मी पर्वत, हैरण्यवत क्षेत्र, शिखरी पर्वत, ऐरावत क्षेत्र। तीर्थंकरों का अभिषेक। दिशाकुमारियों द्वारा किया गया उत्सव। इन्द्रों द्वारा किया गया उत्सव। तीर्थंकरों का स्वस्थान स्थापन।

५. **खण्डयोजनाधिकार** - प्रदेश स्पर्शनाधिकार। खण्ड, योजना, क्षेत्र, पर्वत, कूट, तीर्थ, श्रेणी, विजय, द्रह और नदीद्वार।

६. **ज्योतिषीचक्राधिकार** - चन्द्र, सूर्य आदि की संख्या। सूर्यमण्डल की संख्या, क्षेत्र, अन्तर, लम्बाई, चौड़ाई, मेरु से अन्तर, हानि, वृद्धि, गतिपरिमाण, दिन रात्रि परिमाण, तापक्षेत्र, संस्थान, दृष्टिविषय, क्षेत्र गमन तथा ऊपर नीचे और तिर्छे ताप (गरमी)। ज्योतिषी देव की उत्पत्ति तथा इन्द्रों का च्यवन। चन्द्रमण्डलों का परिमाण, मण्डलों का क्षेत्र, मण्डलों में अन्तर, लम्बाई चौड़ाई और गतिपरिमाण। नक्षत्र मण्डलों में परस्पर अन्तर, विष्कम्भ, मेरु से दूरी, लम्बाई चौड़ाई तथा गति परिमाण, चन्द्रगति का परिमाण तथा उदय और अस्त की रीति।

७. **संवत्सरों का अधिकार** - संवत्सरों के नाम व भेद। संवत्सर के महीनों के नाम। पक्ष, तिथि तथा रात्रि के नाम। मुहूर्त्त व करण के नाम। चर व स्थिर करण। प्रथम संवत्सर आदि के नाम।

८. **नक्षत्राधिकार** - नक्षत्र के नाम व दिशा योग। देवता के नाम व तारों की संख्या। नक्षत्रों के गोत्र व तारों की संख्या। नक्षत्र और चन्द्र के द्वारा काल का परिमाण, कुल, उपकुल, कुलोपरात्रि पूर्ण करने वाले नक्षत्रों का पौरुषी प्रमाण।

९. **ज्योतिषी चक्र का अधिकार** - नीचे तथा ऊपर के तारे तथा उनका परिवार। मेरु पर्वत से दूरी। लोकान्त तथा समतल भूमि से अन्तर। बाह्य और आभ्यन्तर तारे तथा उनमें अन्तर। संस्थान और परिमाण। विमान वाहक देवता। गति, अल्पबहुत्व, ऋद्धि, परस्पर अन्तर तथा अग्रमहिषी। सभाद्वार। ८८ ग्रहों के नाम। अल्पबहुत्व।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०. समुच्चय अधिकार - जम्बूद्वीप में होने वाले उत्तम पुरुष। जम्बूद्वीप में निधान। रत्नों की संख्या। जम्बूद्वीप की लम्बाई चौड़ाई। जम्बूद्वीप की स्थिति। जम्बूद्वीप में क्या अधिक है? इसका नाम जम्बूद्वीप क्यों है? इत्यादि का वर्णन।

इस आगम का अनुवाद जैन दर्शन के जाने-माने विद्वान् डॉ० छगनलालजी शास्त्री काव्यतीर्थ एम. ए., पी. एच. डी. विद्यामहोदधि ने किया है। आपने अपने जीवन काल में अनेक आगमों का अनुवाद किया है। अतएव इस क्षेत्र में आपका गहन अनुभव है। प्रस्तुत आगम के अनुवाद में भी संघ द्वारा प्रकाशित अन्य आगमों की शैली का ही अनुसरण आदरणीय शास्त्री जी ने किया है यानी मूल पाठ, कठिन शब्दार्थ, भावार्थ एवं विवेचन आदि। आदरणीय शास्त्रीजी के अनुवाद की शैली सरलता के साथ पांडित्य एवं विद्वता लिए हुए है। जो पाठकों के इसके पठन अनुशीलन से अनुभव होगी। आदरणीय शास्त्रीजी के अनुवाद में उनके शिष्य श्री महेन्द्रकुमारजी का भी सहयोग प्रशंसनीय रहा। आप भी संस्कृत एवं प्राकृत के अच्छे जानकार हैं। आपके सहयोग से ही शास्त्री जी इस शास्त्र का अल्प समय में ही अनुवाद कर पाये। अतः संघ दोनों आगम मनीषियों का आभारी है।

तत्पश्चात् मैंने एवं श्रीमान् पारसमल जी चण्डालिया ने पुनः सम्पादन की दृष्टि से इसका पूरी तरह अवलोकन किया। इस प्रकार प्रस्तुत आगम को प्रकाशन में देने से पूर्व सूक्ष्मता से पारायण किया गया है। बावजूद इसके हमारी अल्पज्ञता की वजह से कहीं पर भी त्रुटि रह सकती है। अतएव समाज के विद्वान् मनीषियों की सेवा में हमारा नम्र निवेदन है कि इस आगम के मूल पाठ, अर्थ, अनुवाद आदि में कहीं पर भी कोई अशुद्धि, गलती आदि दृष्टिगोचर हो तो हमें सूचित करने की कृपा करावें। हम उनके आभारी होंगे।

संघ का आगम प्रकाशन का काम प्रगति पर है। इस आगम प्रकाशन के कार्य में **धर्म प्राण समाज रत्न तत्त्वज्ञ सुश्रावक श्री जशवंतलाल भाई शाह एवं श्राविका रत्न श्रीमती मंगला बहन शाह, बम्बई** की गहन रुचि है। आपकी भावना है कि संघ द्वारा जितने भी आगम प्रकाशन हों वे अर्द्ध मूल्य में ही बिक्री के लिए पाठकों को उपलब्ध हो। इसके लिए उन्होंने सम्पूर्ण आर्थिक सहयोग प्रदान करने की आज्ञा प्रदान की है। तदनुसार प्रस्तुत आगम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाठकों को उपलब्ध कराया जा रहा है, संघ एवं पाठक वर्ग आपके इस सहयोग के लिए आभारी है।

आदरणीय शाह साहब तत्त्वज्ञ एवं आगमों के अच्छे ज्ञाता हैं। आप का अधिकांश समय धर्म साधना आराधना में बीतता है। प्रसन्नता एवं गर्व तो इस बात का है कि आप स्वयं तो आगमों का पठन-पाठन करते ही हैं, पर आपके सम्पर्क में आने वाले चतुर्विध संघ के सदस्यों को भी आगम की वाचनादि देकर जिनशासन की खूब प्रभावना करते हैं। आज के इस हीयमान युग में आप जैसे तत्त्वज्ञ श्रावक रत्न का मिलना जिनशासन के लिए गौरव की बात है। आपकी धर्म सहायिका **श्रीमती मंगलाबहन शाह** एवं पुत्र रत्न **मयंकभाई शाह** एवं **श्रेयांसभाई** शाह भी आपके पद चिह्नों पर चलने वाले हैं। आप सभी को आगमों एवं थोकड़ों का गहन अभ्यास है। आपके धार्मिक जीवन को देख कर प्रमोद होता है। आप चिरायु हों एवं शासन की प्रभावना करते रहें, इसी शुभ भावना के साथ!

इसके प्रकाशन में जो कागज काम में लिया गया है वह उच्च कोटि का मेफलिथो है साथ ही पक्की सेक्शन बाईंडिंग है बावजूद आदरणीय शाह साहब के आर्थिक सहयोग से इस आगम का **मूल्य मात्र ९०) रुपये** ही रखा गया है। जो अन्य संस्थानों के प्रकाशनों की अपेक्षा अल्प है।

संघ की आगम बत्तीसी प्रकाशन योजना के अन्तर्गत इस सूत्र का प्रथम बार ही प्रकाशन हो रहा है। पाठक बन्धुओं से निवेदन है कि इस नूतन प्रकाशन का अधिक से अधिक लाभ उठावें।

ब्यावर (राज.)
दिनांक: ३१-३-२००४

संघ सेवक
नेमीचन्द बांठिया
अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्वाध्याय

निम्नलिखित चौंतीस कारण टालकर स्वाध्याय करना चाहिये।

आकाश सम्बन्धी १० अस्वाध्याय	काल मर्यादा
१. बड़ा तारा टूटे तो-	एक प्रहर
२. दिशा-दाह ●	जब तक रहे
३. अकाल में मेघ गर्जना हो तो-	दो प्रहर
४. अकाल में बिजली चमके तो-	एक प्रहर
५. अकाल में बिजली कड़के तो-	आठ प्रहर
६. शुक्ल पक्ष की १, २, ३ की रात-	प्रहर रात्रि तक
७. आकाश में यक्ष का चिह्न हो-	जब तक दिखाई दे
८-९. काली और सफेद धूंअर-	जब तक रहे
१०. आकाश मंडल धूलि से आच्छादित हो-	जब तक रहे

औदारिक सम्बन्धी १० अस्वाध्याय	काल मर्यादा
११-१३. हड्डी, रक्त और मांस,	ये तिर्यंच के ६० हाथ के भीतर हो। मनुष्य के हो, तो १०० हाथ के भीतर हो। मनुष्य की हड्डी यदि जली या धुली न हो, तो १२ वर्ष तक।
१४. अशुचि की दुर्गंध आवे या दिखाई दे-	तब तक

● आकाश में किसी दिशा में नगर जलने या अग्नि की लपटें उठने जैसा दिखाई दे और प्रकाश हो तथा नीचे अंधकार हो, वह दिशा-दाह है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५. श्मशान भूमि-	सौ हाथ से कम दूर हो, तो।
१६. चन्द्र ग्रहण-	खंड ग्रहण में ८ प्रहर, पूर्ण हो तो १२ प्रहर
१७. सूर्य ग्रहण-	खंड ग्रहण में १२ प्रहर, पूर्ण हो तो १६ प्रहर
१८. राजा का अवसान होने पर,	जब तक नया राजा घोषित न हो
१९. युद्ध स्थान के निकट	जब तक युद्ध चले
२०. उपाश्रय में पंचेन्द्रिय का शव पड़ा हो,	जब तक पड़ा रहे
२१-२५. आषाढ़, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक और चैत्र की पूर्णिमा	दिन रात
२६-३०. इन पूर्णिमाओं के बाद की प्रतिपदा-	दिन रात
३१-३४. प्रातः मध्याह्न, संध्या और अर्द्ध रात्रि- इन चार सन्धिकालों में-	१-१ मुहूर्त

उपरोक्त अस्वाध्याय को टालकर स्वाध्याय करना चाहिए। खुले मुंह नहीं बोलना तथा दीपक के उजाले में नहीं वांचना चाहिए।

नोट - नक्षत्र २८ होते हैं उनमें से आर्द्रा नक्षत्र से स्वाति नक्षत्र तक नौ नक्षत्र वर्षा के गिने गये हैं। इनमें होने वाली मेघ की गर्जना और बिजली का चमकना स्वाभाविक है। अतः इसका अस्वाध्याय नहीं गिना गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रमणिका

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र

क्रं.	विषय	पृष्ठ
	प्रथम वक्षस्कार	**१-३६**
१.	जम्बूद्वीप का स्वरूप	४
२.	जंबूद्वीप का परकोटा	५
३.	वनखण्ड	७
४.	जंबूद्वीप के भव्य द्वार	८
५.	भरत क्षेत्र का स्थान एवं स्वरूप	१०
६.	वैताढ्य पर्वत का वर्णन	१५
७.	विद्याधर श्रेणियों का स्वरूप	१८
८.	सिद्धायतन कूट की अवस्थिति	२२
९.	दक्षिणार्द्ध भरत कूट	३०
१०.	उत्तरार्द्ध भरत स्वरूप	३३
११.	ऋषभ कूट	३५
	द्वितीय वक्षस्कार	**३७-११२**
१२.	भरत क्षेत्र में कालानुवर्तन	३७
१३.	काल विस्तार	४०
१४.	अवसर्पिणी का प्रथम-आरक-सुषम सुषमा	४३
१५.	मानवों की आयु	६६
१६.	अवसर्पिणी-सुषमाकाल	६८
१७.	भगवान् ऋषभ : गृहवास : श्रमण दीक्षा	७२
१८.	केवल्य : संघ स्थापना	७८
१९.	परिनिर्वाण पर देवकृत महोत्सव	८५
२०.	अवसर्पिणी-दुषम सुषमा आरक	९७
२१.	अवसर्पिणी का दुःषमा आरक	९८
२२.	अवसर्पिणी का दुःषम-दुःषमा आरक	९९
२३.	भावी उत्सर्पिणी के दुःषम दुःषमा एवं दुःषमा आरक	१०६
२४.	पानी, दूध, घी और अमृत की वर्षा	१०७
२५.	क्रमशः सुखमय स्थितियाँ	१०९
२६.	उत्सर्पिणी : अवशेष आरक	११०
	तृतीय वक्षस्कार	**११३-२१३**
२७.	राजधानी विनीता	११३
२८.	चक्रवर्ती सम्राट भरत	११४
२९.	चक्ररत्न का उद्भव एवं उत्सव	११६
३०.	राजधानी की सुसज्जा	११८
३१.	भरत का मागध तीर्थ की दिशा में प्रस्थान	१२५
३२.	वरदाम तीर्थ पर विजय	१३५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रं.	विषय	पृष्ठ
३३.	वर्द्धकि रत्न का बहुमुखी वास्तु नैपुण्य	१३७
३४.	प्रभास तीर्थ विजय	१४२
३५.	सिंधुदेवी पर विजय	१४५
३६.	वैताढ्य विजय	१४५
३७.	तमिस्रा विजय	१४६
३८.	सेनापति द्वारा निष्कुट प्रदेश के विजय की तैयारी	१४७
३९.	चर्मरत्न द्वारा सिंधु महानदी पार	१४९
४०.	सेनापति द्वारा विशाल विजयाभियान	१५०
४१.	तमिस्रागुहा : दक्षिणी कपाटोद्घाटन	१५२
४२.	तमिस्रागुहा में काकणी रत्न द्वारा मंडल आलेखन	१५६
४३.	उन्मग्नजला निमग्नजला महानदियाँ उत्तरण	१५८
४४.	आपात किरातों द्वारा भीषण संघर्ष	१६०
४५.	मेघमुख देवों का उपसर्ग	१६७
४६.	छत्ररत्न द्वारा उपसर्ग से रक्षा	१७०
४७.	रत्न चतुष्टय द्वारा सुरक्षा	१७२
४८.	विद्याधरराज नमि विनमि पर विजय	१८१
४९.	खण्डप्रपात विजय	१८४
५०.	राजधानी में प्रत्यावर्तन	१९१
५१.	राजतिलक	१९९
५२.	रत्नों एवं निधियों के उत्पत्ति स्थान	२०८
५३.	विपुल ऐश्वर्य एवं सुखोपभोगमय विशाल राज्य	२०९

क्रं.	विषय	पृष्ठ
५४.	सर्वज्ञत्व का प्राकट्य	२१०
५५.	भरत क्षेत्र का नामकरण	२१३

चतुर्थ वक्षस्कार २१४-३३२

क्रं.	विषय	पृष्ठ
५६.	चुल्लहिमवान् पर्वत	२१४
५७.	पद्मद्रह	२१५
५८.	चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत के शिखर	२२७
५९.	हेमवत क्षेत्र	२३१
६०.	शब्दापाती वृत वैताढ्य पर्वत	२३३
६१.	महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के कूट	२४१
६२.	हरिवर्ष क्षेत्र	२४२
६३.	निषध वर्षधर पर्वत	२४४
६४.	महाविदेह : स्वरूप : संज्ञा	२४९
६५.	गन्धमादन वक्षस्कार पर्वत	२५२
६६.	उत्तरकुरु	२५५
६७.	यमक संज्ञक पर्वत द्वय	२५६
६८.	नीलवान् द्रह	२६५
६९.	जंबू पीठ एवं जंबू सुदर्शना	२६६
७०.	माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत	२७३
७१.	हरिसहकूट	२७५
७२.	कच्छ विजय	२७६
७३.	चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत	२८२
७४.	सुकच्छ विजय	२८४
७५.	महाकच्छ विजय	२८५
७६.	पद्मकूट वक्षस्कार पर्वत	२८६
७७.	कच्छकावती विजय	२८७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रं.	विषय	पृष्ठ
७८.	आवर्त्त विजय	२८८
७९.	नलिनकूट वक्षस्कार पर्वत	२८८
८०.	मंगलावर्त्त विजय	२८९
८१.	पुष्कलावर्त विजय	२९०
८२.	एकशैल वक्षस्कार पर्वत	२९०
८३.	पुष्कलावती विजय	२९१
८४.	उत्तरवर्ती सीतामुख वन	२९२
८५.	दक्षिणवर्ती सीतामुख वन	२९३
८६.	वत्स आदि विजय	२९४
८७.	सौमनस वक्षस्कार पर्वत	२९६
८८.	देवकुरु	२९८
८९.	चित्र विचित्र कूट पर्वत	२९९
९०.	निषध द्रह	२९९
९१.	कूटशाल्मलीपीठ	३००
९२.	विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत	३०१
९३.	पक्ष्मादि विजय	३०२
९४.	मंदर पर्वत	३०५
९५.	नंदन वन	३१२
९६.	सौमनस वन	३१५
९७.	पंडक वन	३१६
९८.	अभिषेक शिलाएं	३१८
९९.	मंदर पर्वत के काण्ड	३२१
१००.	मंदर पर्वत के नाम	३२२
१०१.	नीलवान् वर्षधर पर्वत	३२३
१०२.	रम्यक् वर्ष	३२६
१०३.	रुक्मी वर्षधर पर्वत	३२७
१०४.	हैरण्यवत वर्ष	३२९
१०५.	शिखरी वर्षधर पर्वत	३३०
१०६.	ऐरावत वर्ष	३३२
	पंचम वक्षस्कार ३३३-३७४	
१०७.	अधोलोक की दिक्कुमारियों द्वारा समारोह	३३३
१०८.	ऊर्ध्वलोकवर्तिनी दिक्कुमारियों द्वारा समारोह	३३७
१०९.	रुचकवासिनी दिक्कुमारिकाओं द्वारा उत्सव	३३८
११०.	ईशान आदि इन्द्रों का आगमन	३५८
१११.	चमरेन्द्र आदि का आगमन	३६०
११२.	अभिषेक द्रव्यों का आनयन	३६२
११३.	अभिषेक समारोह	३६४
११४.	अभिषेक समायोजन	३६८
११५.	अभिषेक की संपन्नता	३७१
	षष्ठ वक्षस्कार ३७५-३८३	
११६.	स्पर्श एवं जीवोत्पत्ति	३७५
११७.	जंबूद्वीप के खण्ड आदि	३७५
	सप्तम् वक्षस्कार ३८४-४८०	
११८.	चन्द्र आदि की संख्याएं	३८४
११९.	सूर्य मंडलों की संख्या आदि	३८५
१२०.	मेरु से सूर्य मंडल का अंतर	३८६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रं.	विषय	पृष्ठ
१२१.	सूर्यमंडल : आयाम विस्तार आदि	३८६
१२२.	मुहूर्त्त गति	३६२
१२३.	दिवस रात्रि प्रमाण	३६६
१२४.	ताप क्षेत्र	४००
१२५.	लेश्या प्रभाव एवं सूर्यदर्शन	४०३
१२६.	क्षेत्र-स्पर्श	४०५
१२७.	सूर्य की अवभासन आदि क्रिया	४०६
१२८.	सूर्य द्वारा परितापित प्रदेश	४०६
१२६.	ज्योतिष्क देवों की स्थिति एवं वैशिष्ट्य	४०७
१३०.	इन्द्र के अभाव में वैकल्पिक व्यवस्था	४०८
१३१.	चन्द्र मंडल	४०६
१३२.	चन्द्र मंडल : विस्तार	४१४
१३३.	चन्द्र मुहूर्त्त गति	४१७
१३४.	नक्षत्र मंडल आदि	४२०
१३५.	संवत्सर भेद	४२५
१३६.	मास पक्ष आदि	४२६
१३७.	करण विवेचन	४३३
१३८.	संवत्सर अयन, ऋतु आदि	४३५
१३६.	नक्षत्र	४३६
१४०.	नक्षत्र योग	४३७
१४१.	नक्षत्रों के देवता	४३८
१४२.	नक्षत्र संबद्ध तारे	४३६
१४३.	नक्षत्रों के गोत्र एवं संस्थान	४४०
१४४.	नक्षत्र चन्द्र एवं सूर्य का योग	४४२
१४५.	कुल, उपकुल, कुलोपकुल अमावस्या पूर्णिमा	४४४
१४६.	मास समापक नक्षत्र	४५१
१४७.	सूर्य चन्द्र एवं तारागण	४५७
१४८.	चन्द्र परिवार	४५८
१४६.	गतिक्रम	४५६
१५०.	चतुर्विध रूपधारी विमान वाहक देव	४६२
१५१.	ज्योतिष्क देवों की गति का तारतम्य	४६८
१५२.	ज्योतिष्क देवों की ऋद्धि	४६८
१५३.	तारों का पारस्परिक अंतर	४६६
१५४.	ज्योतिष्क देवों की प्रमुख देवियाँ	४६६
१५५.	नक्षत्रों का अधिष्ठायक देव	४७१
१५६.	देवों की काल स्थिति	४७२
१५७.	संख्या तारतम्य	४७३
१५८.	तीर्थंकरादि संख्या क्रम	४७४
१५६.	जंबूद्वीप का विस्तार	४७७
१६०.	जंबूद्वीप की नित्यता, अनित्यता	४७७
१६१.	जंबूद्वीप का स्वरूप	४७८
१६२.	जंबूद्वीप : नामकरण	४७६
१६३.	उपसंहार	४८०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संघ के प्रकाशन

क्रं. नाम	मूल्य	क्रं. नाम	मूल्य
१. अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग १	१४-००	३४. सूयगडो	६-००
२. अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग २	४०-००	३५. सूयगडांग सूत्र भाग १	२०-००
३. अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग ३	३०-००	३६. सूयगडांग सूत्र भाग २	२५-००
४. अंगपविट्ठसुत्ताणि संयुक्त	८०-००	३७. मोक्ष मार्ग ग्रन्थ भाग १	३५-००
५. अनंगपविट्ठसुत्ताणि भाग १	३५-००	३८. मोक्ष मार्ग ग्रन्थ भाग २	३०-००
६. अनंगपविट्ठसुत्ताणि भाग २	४०-००	३९-४१. तीर्थंकर चरित्र भाग १,२,३	१५०-००
७. अनंगपविट्ठसुत्ताणि संयुक्त	८०-००	४२. तीर्थंकर पद प्राप्ति के उपाय	५-००
८. अंतगडदसा सूत्र	१०-००	४३. सम्यक्त्व विमर्श	१५-००
९. अनुत्तरोववाइय सूत्र	३-५०	४४. आत्म साधना संग्रह	२०-००
१०. आचारांग सूत्र भाग १	२५-००	४५. आत्म शुद्धि का मूल तत्वत्रयी	२०-००
११. आचारांग सूत्र भाग २	२५-००	४६. नवतत्वों का स्वरूप	१५-००
१२. आयारो	८-००	४७. सामण्ण सड्ढिधम्मो	अप्राप्य
१३. आवश्यक सूत्र (सार्थ)	१०-००	४८. अगार-धर्म	१०-००
१४. उत्तरज्झयणाणि(गुटका)	६-००	४९-५१. समर्थ समाधान भाग १,२,३	५७-००
१५. उत्तराध्ययन सूत्र भाग १,२,३	४५-००	५२. तत्त्व-पृच्छा	१०-००
१६. उपासक दशांग सूत्र	अप्राप्य	५३. तेतली-पुत्र	४५-००
१७. उववाइय सुत्त	२५-००	५४. शिविर व्याख्यान	१२-००
१८. दसवेयालिय सुत्तं (गुटका)	५-००	५५. जैन स्वाध्याय माला	१८-००
१९. दशवैकालिक सूत्र	१२-००	५६. स्वाध्याय सुधा	७-००
२०. णंदी सुत्तं	३-००	५७. आनुपूर्वी	१-००
२१. नन्दी सूत्र	२५-००	५८. भक्तामर स्तोत्र	२-००
२२. प्रश्नव्याकरण सूत्र	३५-००	५९. जैन स्तुति	६-००
२३-२९. भगवती सूत्र भाग १-७	३००-००	६०. मंगल प्रभातिका	अप्राप्य
३०-३१. स्थानांग सूत्र भाग १-२	६०-००	६१. सिद्ध स्तुति	३-००
३२. समवायांग सूत्र	२५-००	६२. संसार तरणिका	७-००
३३. सुखविपाक सूत्र	२-००	६३. आलोचना पंचक	२-००

Jain Education International · For Personal & Private Use Only · www.jainelibrary.org

क्रं. नाम	मूल्य
६४. विनयचन्द चौबीसी	१-००
६५. भवनाशिनी भावना	२-००
६६. स्तवन तरंगिणी	५-००
६७. सुधर्म स्तवन संग्रह भाग १	२२-००
६८. सुधर्म स्तवन संग्रह भाग २	१५-००
६९. सुधर्म चरित्र संग्रह	१०-००
७०. सामायिक सूत्र	१-००
७१. सार्थ सामायिक सूत्र	३-००
७२. प्रतिक्रमण सूत्र	३-००
७३. जैन सिद्धांत परिचय	३-००
७४. जैन सिद्धांत प्रवेशिका	४-००
७५. जैन सिद्धांत प्रथमा	४-००
७६. जैन सिद्धांत कोविद	३-००
७७. जैन सिद्धांत प्रवीण	४-००
७८. १०२ बोल का बासठिया	०-५०
७९. तीर्थंकरों का लेखा	१-००
८०. जीव-धड़ा	२-००
८१. लघुदण्डक	२-००
८२. महादण्डक	१-००
८३. तेतीस बोल	२-००
८४. गुणस्थान स्वरूप	२-००
८५. गति-आगति	१-००
८६. कर्म-प्रकृति	१-००
८७. समिति-गुप्ति	१-५०
८८. समकित के ६७ बोल	२-००
८९. पच्चीस बोल	२-५०
९०. नव-तत्त्व	७-००
९१. जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग १	१०-००

क्रं. नाम	मूल्य
९२. जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग २	अप्राप्य
९३. जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग ३	अप्राप्य
९४. जैन सिद्धांत थोक संग्रह संयुक्त	अप्राप्य
९५. पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग १	८-००
९६. पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग २	१०-००
९७. पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग ३	६-००
९८. Saarth Saamaayik Sootra	१०-००
९९. सामायिक संस्कार बोध	४-००
१००. प्रज्ञापना सूत्र भाग १	४०-००
१०१. प्रज्ञापना सूत्र भाग २	४०-००
१०२. प्रज्ञापना सूत्र भाग ३	४०-००
१०३. प्रज्ञापना सूत्र भाग ४	४०-००
१०४. चउछेयसुत्ताइं	१५-००
१०५. जीवाजीवाभिगम सूत्र भाग १	३५-००
१०५. जीवाजीवाभिगम सूत्र भाग २	४५-००
१०६. लोंकाशाह मत समर्थन	१०-००
१०७. जिनागम विरुद्ध मूर्त्ति पूजा	१५-००
१०८. मुखवस्त्रिका सिद्धि	३-००
१०९. विद्युत् सचित्त तेऊकाय है	३-००
११०. निरयावलिका सूत्र	२०-००
१११. धर्म का प्राण यतना	२-००
११२. विपाक सूत्र	३०-००
११३. बड़ी साधु वंदना	१०-००
११४. ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र भाग १	४०-००
११५. ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र भाग २	४०-००
११६. कुगुरु गुर्वाभास स्वरूप	४-००
११७. जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र	५०-००

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ णमो सिद्धाणं॥

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र

(मूल पाठ, कठिन शब्दार्थ, भावार्थ एवं विवेचन सहित)

पढमो वक्खारो - प्रथम वक्षस्कार

(१)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं। तेणं कालेणं तेणं समएणं मिहिला णामं णयरी होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धा, वण्णओ। तीसे णं मिहिलाए णयरीए बहिया उत्तर-पुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं माणिभद्दे णामं चेइए होत्था, वण्णओ। जियसत्तू राया, धारिणी देवी, वण्णओ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे, परिसा णिग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिगया।

शब्दार्थ- **रिद्ध** - रिद्धि युक्त, **थिमिय** - स्थिति-सुरक्षा युक्त, **समिद्धा** - वैभव संपन्न।

भावार्थ - अरहंत भगवंतों, सिद्ध भगवंतों, आचार्य भगवंतों, उपाध्याय भगवंतों तथा साधु भगवंतों को नमस्कार हो। उस काल, उस समय मिथिला नामक नगरी थी। वह अत्यधिक संपत्ति, सुरक्षा और ऋद्धि आदि से युक्त थी। नगरी का वर्णन औपपातिक आदि आगमों के अनुसार ग्राह्य है। उस मिथिला नगरी के बहिर्भाग में-ईशान कोण में मणिभद्र नामक चैत्य अवस्थित था। औपपातिक आदि आगमों में आया हुआ चैत्य वर्णन यहाँ योजनीय है।

मिथिला के राजा का नाम जितशत्रु तथा महारानी का नाम धारिणी था। राजा और महारानी का वर्णन औपपातिक सूत्र आदि के अनुसार जानना चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उस काल, उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का वहाँ पदार्पण हुआ। उनके दर्शन, उपदेश-श्रवण हेतु परिषद् उपस्थित हुई। भगवान् ने धर्मोपदेश दिया, जिसे श्रवण कर जनपरिषद् वापस लौट गई।

विवेचन - इस सूत्र में काल और समय इन दो शब्दों का जो प्रयोग हुआ है, उसका विशेष अभिप्राय है। सामान्यतः लोकभाषा में ये दोनों शब्द एक सदृश अर्थ के द्योतक है। जैन पारिभाषिक शब्दावली की दृष्टि से यदि सूक्ष्मता से देखा जाय तो उनमें अन्तर भी है। काल शब्द वर्तना लक्षण-सामान्य समय का सूचक है तथा समय शब्द काल के सूक्ष्मतम अंश का बोधक है। इस सूत्र में इन दोनों शब्दों का इस अपेक्षा से प्रयोग नहीं हुआ है। जैन आगमों का उद्देश्य जनसाधारण में तत्त्वबोध देना रहा। अतएव वहाँ विशेष रूप से वर्णन में ऐसी शैली प्राप्त होती है, जिसमें एक ही बात को समानार्थ द्योतक अनेक शब्दों के प्रयोग द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता रहा है। इसे पुनरुक्त दोष नहीं कहा जा सकता। तत्त्व को सरलतम, सर्वसुलभ शैली में व्यक्त करना इसका आशय है। यहाँ काल और समय शब्द का प्रयोग घटनाक्रम की समयावधि को स्पष्ट करने की दृष्टि से हुआ है। काल शब्द कालचक्र गत अवसर्पिणी से संबद्ध है तथा समय शब्द उसी अवसर्पिणी संबद्ध काल को घटना के साथ जोड़ता है।

वैदिक, जैन एवं बौद्ध इन तीनों ही परंपराओं के प्राचीन साहित्य में मिथिला नगरी का उल्लेख हुआ है। यह विदेह की राजधानी थी। वैदिक परंपरा के अनुसार सीता के पिता जनक यहीं के राजा थे। जो गृहस्थ में रहते हुए भी उच्च कोटि के अध्यात्मनिष्णात राजयोगी थे।

ज्ञातृधर्मकथा सूत्र में विदेह की राजधानी मिथिला का वर्णन आया है। जहाँ के राजा कुंभ के यहाँ तीर्थंकर मल्ली का जन्म हुआ। उत्तराध्ययन सूत्र में वर्णित नमि राजर्षि भी मिथिला के ही राजा थे, जिन्होंने राज्य वैभव का परित्याग कर श्रमण जीवन स्वीकार किया। वे अत्यंत निस्पृह, साधना परायण, तपोमय जीवन के महान् धनी थे।

वर्तमान में उत्तरी बिहार का दरभंगा जिला मुख्यतः मिथिला के अंतर्गत है। यह भू भाग प्राचीन काल से ही विद्या, साहित्य और संस्कृति का महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहा है।

वण्णओ - इस सूत्र में नगरी, चैत्य, राजा और रानी का उल्लेख मात्र हुआ है। इनका वर्णन नहीं दिया गया है। **वण्णओ** - शब्द द्वारा अन्यत्र आए हुए वर्णन को यहाँ गृहीत करने की सूचना की गई है। ऐसा करने का एक विशेष अभिप्राय है। प्राचीन काल में जैन आगम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मौखिक परंपरा से सुरक्षित रहे हैं। गुरुजन से शिष्य श्रवण करते और अपनी स्मृति में बनाए रखते। विस्तृत आगमों को कंठस्थ रखने में सुविधा रहे इस हेतु नगर, चैत्य, उद्यान, राजा, रानी इत्यादि का एक सर्वसामान्य वर्णन क्रम मान लिया गया।

जहाँ भी इनका वर्णन आए, वहाँ यथास्थान उसे जोड़ लिया जाए, ऐसी शैली अपनाई गई। यद्यपि सभी नगर, राजा, उद्यान आदि एक समान नहीं होते किन्तु फिर भी साधारणतया उनमें सदृशता दृष्टिगोचर होती है।

चैत्य - इस सूत्र में आया हुआ 'चैत्य' शब्द अनेक अर्थों का सूचक है। इस संबंध में विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से भिन्न-भिन्न रूप में व्याख्यात किया है। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से इस पर विचार किया जाय तो कुछ विशेष तथ्य परिलक्षित होते हैं। इस शब्द के मूल में 'चिति' शब्द है। चिति शब्द चिता का द्योतक है। मृत व्यक्ति को जलाया जाता है, उसे चिता कहा जाता है। मृत व्यक्ति के प्रति उसके पारिवारिक जनों के मन में श्रद्धा, स्नेह या आदर होता है। अतः उसकी स्मृति के किसी चिह्न को बनाए रखने का उनमें सहज भाव प्राप्त होता है। प्राचीनकाल में जहाँ किसी मृत व्यक्ति को जलाया जाता, वहाँ उसकी स्मृति में वृक्ष लगाने की परंपरा रही हो, ऐसा अनुमान है। तदनुसार चैत्य का एक अर्थ वृक्ष है।

पारिवारिकजन उस वृक्ष को देखकर अपने मृत संबंधी की स्मृति करते रहे हों। समय और स्थिति के अनुसार जन मानस भी परिवर्तित होता रहता है। मृतजन की स्मृति को और अधिक स्थिर बनाए रखने हेतु वृक्ष के स्थान पर एक पीठिका या मकान का निर्माण कराया जाने लगा। लोक मानस आगे चलकर इतने से ही परितुष्ट नहीं हुआ। उसमें सजीवता लाने के लिए, उसे आवागमन का केन्द्र बनाने के लिए संभवतः लौकिक देव या यक्ष आदि की प्रतिमा भी स्थापित की जाने लगी। यों चैत्य का अर्थ भवन, देवस्थान या यक्षायतन के रूप में परिवर्तित हुआ।

पुनश्च, लोगों ने वहाँ उद्यान आदि का निर्माण कर उसे विशाल रूप दे दिया, जिससे उनके आराम-विश्राम, गोष्ठी, आयोजन बाहर से आने वाले लोगों के आवास-स्थान आदि में भी प्रयोग होने लगा। नगर से बाहर होने के कारण प्रायः साधु-संतों के ठहरने के लिए उसकी विशेष उपयोगिता सिद्ध हुई।

आगमों में भगवान् महावीर स्वामी तथा अन्य महापुरुषों का चैत्य स्थानों, उद्यानों में ठहरने का वर्णन प्राप्त होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२)

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई णामं अणगारे गोयमगोत्तेणं सत्तुस्सेहे, सम-चउरंस-संठाणे-जाव (तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता, णमंसित्ता) एवं वयासी।

शब्दार्थ - **जेट्ठे** - ज्येष्ठ-बड़े, **अंतेवासी** - शिष्य, **सत्तुस्सेहे** - सात हाथ ऊँचे, **सम-चउरंस-संठाणे** - समचतुरस्र संस्थान युक्त।

भावार्थ - उस काल, उस समय भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ शिष्य, गौतम गोत्रोत्पन्न इन्द्रभूति ने, जिनका शरीर सात हाथ ऊँचा था, जिनके देह के चारों अंश-भाग सुसंगत, परस्पर समान अनुपात युक्त, संतुलित रचना युक्त थे यावत् उत्तमोत्तम, गुणयुक्त थे, (तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा पूर्वक वंदन, नमन कर) भगवान् से निवेदन किया।

जंबूद्वीप का स्वरूप

(३)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे १? केमहालए णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे २? किंसंठिए णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे ३? किमायारभावपडोयारे णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे ४, पण्णत्ते?

गोयमा! अयं णं जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतराए १, सव्वखुड्डाए २, वट्टे, तेल्लापूयसंठाणसंठिए वट्टे, रहचक्कवालसंठाणसंठिए वट्टे, पुक्खर-कण्णियासंठाणसंठिए एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं, तिण्णि जोयणसय-सहस्साइं सोलस सहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं पण्णत्ते।

शब्दार्थ - **कहि** - कहाँ, **केमहालए** - कितना विशाल, **आयारभावपडोयारे** - आकार-स्वरूप युक्त, **सव्वब्भंतराए** - सबके आभ्यंतर-बीच में, **सव्वखुड्डाए** - सबसे छोटा, **वट्टे** - गोल, **तेल्लापूय** - तेल में तले हुए पूए, **रहचक्कवाल** - रथ का पहिया, **पुक्खरकण्णिया** - पद्मकर्णिका, **आयाम** - लम्बाई, **विक्खंभ** - विष्कंभ-चौड़ाई, **परिक्खेवेणं** - परिक्षेप-परिधि, **पण्णत्ते** - बतलाई गई है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप की स्थिति कहाँ है? वह कितना विशाल है? किस प्रकार संस्थित है? उसका आकार-प्रकार या स्वरूप किस प्रकार का है?

भगवान् महावीर स्वामी ने उत्तर दिया - हे गौतम! यह जंबूद्वीप समस्त द्वीप-समुद्रों के भीतर है - समस्त तिर्यक् लोक के बीच में विद्यमान है। यह सबसे छोटा है, वर्तुलाकार है। तेल में तले हुए मालपुए अथवा रथ के पहिए जैसी गोलाई लिए हुए है। पद्मकर्णिका-कमल गट्टे जैसा गोल है। इसकी लंबाई-चौड़ाई एक लाख योजन परिमित है। इसकी परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन तीन कोस एक सौ अट्ठाईस धनुष और साढे तेरह अंगुल से कुछ अधिक है।

जंबूद्वीप का परकोटा

(४)

से णं एगाए वइरामईए जगईए सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते। सा णं जगई अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, मूले बारस जोयणाइं विक्खंभेणं, मज्झे अट्ठ जोयणाइं विक्खंभेणं, उवरिं चत्तारि जोयणाइं विक्खंभेणं, मूले वित्थिण्णा, मज्झे संक्खित्ता, उवरिं तणुया गोपुच्छसंठाणसंठिया, सव्ववइरामई, अच्छा, सण्हा, लण्हा, घट्ठा, मट्ठा, णीरया, णिम्मला, णिप्पंका, णिक्कंकडच्छाया, सप्पभा, सस्सिरीया, सउज्जोया, पासाईया, दरिसणिज्जा, अभिरूवा, पडिरूवा। सा णं जगई एगेणं महंतगवक्खकडएणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता।

से णं गवक्खकडए अद्धजोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं पंच धणुसयाइं विक्खंभेणं, सव्वरयणामए, अच्छे (सण्हे, लण्हे, घट्ठे, मट्ठे, णीरए, णिम्मले, णिप्पंके, णिक्कंकडच्छाए, सप्पभे, समिरीए, सउज्जोए, पासाईए, दरिसणिज्जे, अभिरूवे) पडिरूवे।

तीसे णं जगईए उप्पिं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगा पउमवरवेइया पण्णत्ता-अद्धजोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, पंच धणुसयाइं विक्खंभेणं, जगईसमिया परिक्खेवेणं, सव्वरयणामई, अच्छा जाव पडिरूवा। तीसे णं पउमवरवेइयाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तं जहा - वइरामया णेमा एवं जहा जीवाभिगमे जाव अट्ठो जाव धुवा णियया सासया जाव णिच्चा।

शब्दार्थ - **जगईए** - प्राचीर या परकोटे द्वारा, **संपरिक्खित्ते** - संपरिवृत्त, **विक्खंभेणं** - चौड़ाई, **संक्खित्ता** - संक्षिप्त, **गोपुच्छसंठाणसंठिया** - गाय के पूंछ के आकार में संस्थित, **अच्छा** - स्वच्छ, **सण्हा** - श्लक्ष्ण, **लण्हा** - चिकनी, **घट्ठा** - घृष्ट-घिसी हुई जैसी, **मट्ठा** - मृष्ट-तरासी हुई जैसी, **णीरया** - रजरहित, **णिम्मला** - मैल रहित, **णिप्पंका** - कर्दम रहित, **णिक्कंकड** - निष्कंटक-अव्याहत, **छाया** - आभा, **सस्सिरिया** - श्रीयुक्त, **अभिरूवा** - सुंदर, **पडिरूवा** - आकर्षक, **गवक्खकडएणं** - गवाक्ष-जालीदार झरोखे द्वारा, **उप्पिं** - ऊपर, **पउमवरवेइया** - पद्मवरवेदिका-कमलाकृतियुक्त वेदिका, **णेमा** - नेमा-पृथ्वी से ऊपर निकला हुआ भाग, **धुवा** - ध्रुव, **णियया** - नियत, **सासया** - शाश्वत, **णिच्चा** - नित्य।

भावार्थ - वह जंबूद्वीप एक वज्रनिर्मित प्राचीर द्वारा चारों ओर से परिवृत-घिरा हुआ है। वह प्राचीर-परकोटा आठ योजन ऊँचा, मूल में बारह योजन चौड़ा, मध्य में आठ योजन चौड़ा तथा उपरितन भाग में चार योजन चौड़ा है। वह मूल में विस्तीर्ण-फैला हुआ, मध्य में संक्षिप्त-सकड़ा तथा ऊपरी भाग में तनु-पतला है। वह आकार में गाय के पूँछ के सदृश है। वह सर्वथा रत्नमय, स्वच्छ, सुकोमल, चिकना, घिसा हुआ सा, तरासा हुआ सा, रजशून्य, मैल रहित, पंकरहित एवं अव्याहत प्रकाश युक्त है। वह प्रभा-विशिष्ट आभा एवं उद्योत-द्युति से युक्त है। उसे देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता है। वह दर्शनीय, सुंदर, मनोरम एवं मन में बस जाने वाला है।

उस प्राचीर के चारों ओर एक जाली युक्त गवाक्ष-झरोखों की पंक्ति है। वह आधा योजन ऊँची, पाँच धनुष चौड़ी, स्वच्छ, सुकोमल, चिकनी, घिसी हुई सी, तरासी हुई सी, रजशून्य, मैल एवं कर्दम रहित तथा अप्रतिहत प्रकाशयुक्त है। प्रभा, कांति एवं द्युतियुक्त है, मनोज्ञ, दर्शनीय एवं सुन्दर है।

उस प्राचीर के ठीक मध्य भाग में एक विशाल कमलाकृतियुक्त वेदिका है, जो अर्द्धयोजन ऊँची एवं पाँच सौ धनुष चौड़ी है। उसकी परिधि प्राचीर जितनी है। यह सर्वरत्नमय, स्वच्छ यावत् सुंदर है। उस पद्मवरवेदिका का वर्णन वैसा ही है, जैसा जीवाभिगम सूत्र में आया है। तदनुसार उसका भूमि से ऊपर निकला हुआ भाग वज्ररत्नमय है यावत् पद्मवरवेदिका ध्रुव, नियत, शाश्वत तथा नित्य है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वन खण्ड

(५)

तीसे णं जगईए उप्पिं बाहिं पउमवरवेइयाए एत्थ णं महं एगे वणसंडे पण्णत्ते। देसूणाइं दो जोयणाइं विक्खंभेणं, जगईसमए परिक्खेवेणं वणसंडवण्णओ णेयव्वो।

शब्दार्थ - देसूणाइं - कुछ कम।

भावार्थ - उस प्राचीर के ऊपरी भाग में तथा पद्मवरवेदिका के बाहर एक विशाल वनखण्ड है। यह वनखण्ड दो योजन से कुछ कम विस्तार युक्त तथा प्राचीर के समान परिधि युक्त है। उसका वर्णन अन्य आगमों से ग्राह्य है।

(६)

तस्स णं वणसंडस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते। से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा जाव णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं, तणेहिं उवसोभिए, तं जहा - किण्हेहिं एवं वण्णो, गंधो, रसो, फासो, सद्दो, पुक्खरिणीओ, पव्वयगा, घरगा, मंडवगा, पुढविसिलावट्टया य णेयव्वा।

तत्थ णं बहवे वाणमंतरा देवा य देवीओ य आसयंति, सयंति, चिट्ठंति, णिसीयंति, तुयट्टंति, रमंति, ललंति, कीलंति, मेहंति, पुरापोराणाणं सुपरक्कंताणं, सुभाणं कल्लाणाणं कडाणं कम्माणं कल्लाणफलवित्तिविसेसं पच्चणुभवमाणा विहरंति।

तीसे णं जगईए उप्पिं अंतो पउमवरवेइयाए एत्थ णं एगे महं वणसंडे पण्णत्ते, देसूणाइं दो जोयणाइं विक्खंभेणं, वेइयासमएण परिक्खेवेणं, किण्हे जाव तणविहूणे णेयव्वे।

शब्दार्थ - जहाणामए - यथानामक-किसी, **आलिंगपुक्खरेइ** - मुरज या ढोलक का ऊपरी भाग, **तणेहिं** - तृणों द्वारा, **किण्हेहिं** - काले, **घरगा** - भवन, **णेयव्वा** - नेतव्य-लेने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

योग्य, **आसयंति** - आश्रय लेते हैं, **सयंति** - सोते हैं, **चिट्ठंति** - खड़े होते हैं, **तुअट्टंति** - देह को इधर-ऊधर मोड़ते हैं-अंगड़ाई लेते हैं, **ललंति** - आनंद लेते हैं, **मेहंति** - सुरत क्रिया करते हैं, **पुरापोराणाणं** - पूर्व-पूर्व भवों में, **सुपरक्कंताणं**- सुंदर रूप में आचरित, **कल्लाणाणं**- किए हुए, **कल्लाणफलवित्तिविसेसं** - पुण्यात्मक कर्मों के फलस्वरूप विशेष सुखों का, **तणविहूणे** - तृणों के शब्द से रहित-अत्यंत प्रशांत।

भावार्थ - उस वनखंड में अत्यंत समतल, रमणीय-सुंदर भूमिभाग है। वह किसी मढी हुई ढोलक के ऊपरी भाग-चर्मपुट जैसा सुकोमल यावत् भिन्न-भिन्न प्रकार की पाँच रंगों की मणियों, वनस्पतियों से सुशोभित है। उनके कृष्ण आदि विशिष्ट वर्ण, गंध, रस, स्पर्श एवं शब्द हैं। वहाँ सरोवर, पर्वत, भवन, लता आदि के मंडप तथा पाषाणमय शिलापट्ट हैं। हे गौतम! इन सबका वर्णन अन्य आगमों से ग्राह्य है।

वहाँ अनेक वानव्यंतर जातीय देव एवं देवियाँ आश्रय लिए रहते हैं, सोते हैं, खड़े होते हैं, बैठते हैं, अंगड़ाई लेते हैं-देह को दायें-बाएँ घुमाते हैं, रमण करते हैं, मनोविनोद करते हैं, क्रीड़ा एवं रतिक्रिया करते हैं। इस प्रकार वे अपने पूर्व-पूर्व भवों में आचरित शुभ, पुण्यमय कर्मों के परिणाम स्वरूप विशिष्ट सुखों का उपभोग करते हैं।

उस प्राचीर के ऊपर भीतर की ओर स्थित कमलाकार उत्तम वेदिका पर एक वनखंड कहा गया है, जो कुछ कम दो योजन चौड़ा है। उसकी परिधि वेदिका के सदृश है। वह कृष्ण आभायुक्त यावत् सर्वथा निःशब्द-तिनके गिरने जितनी आवाज से भी रहित-अत्यंत प्रशान्त है।

जंबूद्वीप के भव्य द्वार

(७)

जंबुद्दीवस्स णं भंते! दीवस्स कइ दारा पण्णत्ता?

गोयमा! चत्तारि दारा पण्णत्ता, तं जहा - विजए, वेजयंते, जयंते, अपराजिए।

भावार्थ - गौतम स्वामी ने पूछा - हे भगवन्! जंबूद्वीप संज्ञक द्वीप के कितने द्वार बतलाए गए हैं?

भगवान् ने कहा - हे गौतम! विजय, वैजयंत, जयंत और अपराजित नामक उसके चार द्वार परिज्ञापित हुए हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(८)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवस्स दीवस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते?

गोयमा! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं पणयालीसं जोयणसहस्साइं वीइवइत्ता जंबुद्दीवदीवपुरत्थिमपेरंते लवणसमुद्दपुरत्थिमद्धस्स पच्चत्थिमेणं सीआए महाणईए उप्पिं एत्थ णं जंबुद्दीवस्स दीवस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते, अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, चत्तारि जोयणाइं विक्खंभेणं, तावइयं चेव पवेसेणं, सेए वरकणगथूभियाए, जाव दारस्स वण्णओ जाव रायहाणी। एवं चत्तारि वि दारा, सरायहाणिया जाणियव्वा।

शब्दार्थ - **तावइयं** - उतना ही, **सेए** - श्रेष्ठ, **थूभिया** - शिखर।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप नामक द्वीप के 'विजय' नामक द्वार की स्थिति कहाँ बतलाई गई है?

हे गौतम! जंबूद्वीपगत मंदर पर्वत की पूर्व दिशा में पैंतालीस सहस्र योजन आगे जाने पर, जंबूद्वीप के पूर्वान्त में एवं लवण समुद्र के पूर्वार्द्ध के पश्चिम में, सीता महानदी पर जंबूद्वीप का विजय नामक द्वार बतलाया गया है। वह ऊँचाई में आठ योजन तथा चौड़ाई में चार योजन है। उसमें प्रवेश मार्ग भी उतना ही चौड़ा-चार योजन का है। वह द्वार श्रेष्ठ स्वर्णनिर्मित स्तूपिकाओं-शिखरों से युक्त है यावत् द्वार एवं राजधानी का वर्णन उसी प्रकार यहाँ योजनीय है, जैसा पूर्व आगमों में आया है। इस प्रकार राजधानी सहित चारों द्वारों का वर्णन कथनीय है।

(९)

जंबुद्दीवस्स णं भंते! दीवस्स दारस्स य दारस्स य केवइए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

गोयमा! अउणासीइं जोयणसहस्साइं बावण्णं च जोयणाइं देसूणं च अद्धजोयणं दारस्स य दारस्स य अबाहाए अंतरे पण्णत्ते -

अउणासीइं सहस्सा बावण्णं चेव जोयणा हुंति।
ऊणं च अद्धजोयणं दारंतरं जंबुद्दीवस्स॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - **अबाहाए** - बाधा रहित।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप के एक द्वार से दूसरे द्वार के मध्य अवरोध रहित कितना अंतर है?

हे गौतम! जंबूद्वीप के एक द्वार से दूसरे द्वार का अव्यवहित अंतर उनासी हजार बावन योजन तथा आधे योजन से कुछ कम है।

भरत क्षेत्र का स्थान एवं स्वरूप

(१०)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे भरहे णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, दाहिणलवणसमुद्दस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे भरहे णामं वासे पण्णत्ते-खाणुबहुले, कंटगबहुले, विसमबहुले, दुग्गबहुले, पव्वयबहुले, पवायबहुले, उज्झरबहुले, णिज्झरबहुले, खड्डाबहुले, दरीबहुले, णईबहुले, दहबहुले, रुक्खबहुले, गुच्छबहुले, गुम्मबहुले, लयाबहुले, वल्लीबहुले, अडवीबहुले, सावयबहुले, तणबहुले, तक्करबहुले, डिम्बबहुले, डमरबहुले, दुब्भिक्खबहुले, दुक्कालबहुले, पासंडबहुले, किवणबहुले, वणीमगबहुले, ईतिबहुले, मारिबहुले, कुवुट्ठिबहुले, अणावुट्ठिबहुले, रायबहुले, रोगबहुले, संकिलेसबहुले, अभिक्खणं अभिक्खणं संखोहबहुले। पाईण-पडीणायए, उदीणदाहिणवित्थिण्णे, उत्तरओ पलियंकसंठाणसंठिए, दाहिणओ धणुपिट्ठसंठिए, तिहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, गंगासिंधूहिं महाणईहिं वेयड्ढेण य पव्वएण छब्भागपविभत्ते, जंबुद्दीवदीवणउयसयभागे पंचछव्वीसे जोयणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खंभेणं।

भरहस्स णं वासस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं वेयड्ढे णामं पव्वए पण्णत्ते, जे णं भरहं वासं दुहा विभयमाणे २ चिट्ठइ, तं जहा - दाहिणड्ढभरहं च उत्तरड्ढभरहं च।

Jain Education International　　For Personal & Private Use Only　　www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - **खाणु** - स्थाणु-सूखे ठूंठ, **विसम** - ऊँची-नीची असमान भूमि, **दुग्ग** - दुर्गम-जहाँ जाना कठिन हो ऐसा स्थान, **पवाय**- प्रपात-ऊँचाई से जल गिरने के स्थान, **उज्झर**-अवझर-जलस्रोत, **णिज्झर** - निर्झर, **खड्डा** - गड्ढे, **दरी** - गुफा, **दह** - द्रह-ह्रद-जलपूर्ण स्थान, **रुक्ख** - वृक्ष, **गुम्म** - गुल्म-वृक्षों के झुरमुट, **वल्ली** - बेल, **अडवी** - अटवी-विशाल वन, **सावय** - श्वापद-हिंसक पशु, **तक्कर** - तस्कर-चोर, **डिम्ब** - विप्लव-स्थानीय उत्पात, **डमर** - शत्रुकृत उपद्रव, **दुब्भिक्ख** - दुर्भिक्ष, **दुक्काल** - दुष्काल-धान्य आदि की महंगाई से युक्त समय, **पासंड** - पाषंड-विविध मतवाद, **किवण** - कृपण-दयनीय स्थिति युक्त, **वणीमग**- याचक, **ईति** - फसल नाशक टिड्डी आदि जनित प्रकोप, **मारि** - मारक-प्राणघातक रोगों की स्थिति, **कुवुट्ठि** - कुवृष्टि-अवांछित-हानिप्रद वर्षा, **अणावुट्ठि** - अनावृष्टि-समय पर वर्षा का अभाव, **रायबहुले** - राजाओं का बाहुल्य, **संकिलेस** - संक्लेश-कष्ट, **अभिक्खणं-अभिक्खणं**- क्षण-क्षणवर्ती, **संखोह** - संक्षोभ-चैतसिक व्यथा, **पाईण** - पूर्व, **पडीण** - पश्चिम, **आयए** - लम्बा, **पलियंकसंठाणसंठिए** - पलंग के आकार सदृश, **धणुपिट्ठसंठिए** - प्रत्यंचा चढाए धनुष के पीछे के भाग के सदृश, **पुट्ठे**- स्पृष्ट-स्पर्श किए हुए।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में विद्यमान भरत नामक वर्ष-क्षेत्र कहाँ परिज्ञापित हुआ है - उसकी स्थिति कहाँ है?

हे गौतम! भरत क्षेत्र चुल्लहिमवंत-लघु हिमवंत पर्वत के दक्षिण में, दक्षिणवर्ती लवण समुद्र के उत्तर में, पूर्ववर्ती लवणसमुद्र के पश्चिम में तथा पश्चिमवर्ती लवणसमुद्र के पूर्व में अवस्थित है।

इसमें स्थाणु, कंटकमय झाड़ी, बबूल आदि वृक्ष, ऊंची-नीची भूमि, दुर्गम स्थान, पर्वत, प्रपात, जलस्रोत, निर्झर, गड्ढे, गुफाएँ, नदियाँ, पेड़, गुच्छ, गुल्म, लताएँ, बेलें, वन, जंगली हिंसक प्राणी, विविध घास-पात, तस्कर, विप्लव, शत्रुकृत उपद्रव, दुर्भिक्ष, दुष्काल, विविध मतवादी जनों द्वारा संचालित मिथ्यावाद, दयनीय, याचक, फसल विनाशक चूहे, टिड्डी आदि, प्राणघातक रोग, अवांछित-हानिप्रद वृष्टि, अनावृष्टि, राजाओं की बहुलता से उत्पन्न अस्थिरता के कारण प्रजोत्पीड़न, रुग्णता, संक्लेश, क्षण-क्षणवर्ती संक्षोभ-इन सबकी बहुलता है।

वह भरत क्षेत्र पूर्व-पश्चिम में लंबा एवं उत्तर-दक्षिण में चौड़ा है। वह उत्तर में पलंग के संस्थान जैसा तथा दक्षिण में प्रत्यंचा चढाए धनुष के पीछे के भाग जैसा है। वह तीन ओर से लवण समुद्र से संस्पृष्ट है। गंगा महानदी, सिंधु महानदी एवं वैताढ्य पर्वत से यह भरत क्षेत्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छह भागों में विभक्त है, जो उसके छह खण्ड कहलाते हैं। जंबूद्वीप को १९० भागों में विभक्त करने पर भरत क्षेत्र उसका एक भाग होता है। यों भरत क्षेत्र जंबूद्वीप का १९० वाँ भाग है। इस प्रकार यह ५२६ $\frac{६}{१९}$ योजन विस्तीर्ण है।

भरत क्षेत्र के बीचों-बीच वैताढ्य संज्ञक पर्वत कहा गया है। जिससे यह भरत क्षेत्र दो भागों में विभक्त होता है। ये दोनों भाग दक्षिणार्ध तथा उत्तरार्ध भरत के रूप में विश्रुत हैं।

विवेचन - इस सूत्र में प्रयुक्त '**किवण**' शब्द भाषा शास्त्रीय दृष्टि से अर्थ परिवर्तन का एक विशेष उदाहरण है। इसका संस्कृत रूप कृपण है। "**कृपां नयतीति कृपणः**" के अनुसार कृपण उसे कहा जाता है, जिसकी दीनावस्था को देखकर मन में दया आ जाए। तदनुसार कृपण का अर्थ दीन या दरिद्र होता है। यहाँ इसी अर्थ में कृपण (**किवण**) शब्द का प्रयोग हुआ है किन्तु आज कृपण शब्द का अर्थ दीन या दरिद्र शब्द न होकर कंजूस हो गया है। जो व्यक्ति धन संपन्न होते हुए भी दान में, यहाँ तक की खाने-पीने में भी पैसा नहीं खर्च करता, दूसरे शब्दों में, वित्तीय साधनों की प्रचुरता के बावजूद अभावमय जीवन जीता है, उसे कृपण कहा जाता है। उस पर भी "**कृपां नयतीति कृपणः**" - यह व्युत्पत्ति घटित हो जाती है, क्योंकि वैसे व्यक्ति को देखकर मन में ग्लानिपूर्ण कृपा का भाव उद्बुद्ध होता है कि यह कैसा अभागा पुरुष है, जो साधन-सम्पन्न होते हुए भी साधनहीन का जीवन जीता है। यों वह भी लोगों को दयनीय ही प्रतीत होता है।

भाषा शास्त्रीय दृष्टि से परिवर्तित हुए सामाजिक दृष्टिकोण के अनुसार शब्दों का अर्थ भी भिन्न-भिन्न युगों में परिवर्तित होता जाता है। आज किसी दीन-दुःखी को कृपण नहीं कहा जाता। किन्तु यहाँ प्रयुक्त 'कृपण' शब्द प्राचीनकाल में प्रचलित दयनीय पुरुष का ही द्योतक है, कंजूस का नहीं।

(११)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणद्धे भरहे णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! वेयड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेणं, दाहिणलवणसमुद्दस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे दाहिणद्धभरहे णामं वासे पण्णत्ते-पाईणपडीणायए, उदीण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दाहिणवित्थिण्णे, अद्धचंदसंठाणसंठिए, तिहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, गंगासिंधूहिं महाणईहिं तिभागपविभत्ते। दोण्णि अट्ठतीसे जोयणसए तिण्णि य एगूणवीसइभागे जोयणस्स विक्खंभेणं। तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा, पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा। णव जोयणसहस्साइं सत्त य अडयाले जोयणसए दुवालस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स आयामेणं, तीसे धणुपुट्ठे दाहिणेणं णव जोयणसहस्साइं सत्तछावट्ठे जोयणसए एक्कं च एगूणवीसइभागे जोयणस्स किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं पण्णत्ते।

दाहिणद्धभरहस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहा णामए-आलिंगपुक्खरेइ वा जाव णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं तणेहिं उवसोभिए, तं जहा-कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।

दाहिणद्धभरहे णं भंते! वासे मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! ते णं मणुया बहुसंघयणा, बहुसंठाणा, बहुउच्चत्तपज्जवा, बहु-आउपज्जवा, बहूइं वासाइं आउं पालेंति, पालित्ता, अप्पेगइया णिरयगामी, अप्पेगइया तिरियगामी, अप्पेगइया मणुयगामी, अप्पेगइया देवगामी, अप्पेगइया सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।

शब्दार्थ - **अद्धचंद** - अर्द्धचन्द्राकार, **कित्तिम** - कृत्रिम, **बहुसंघयणा** - अनेक संघननों में युक्त, **जीवा** - धनुष की प्रत्यंचा के सदृश सर्वांतिम प्रदेश पंक्ति, **उच्चत्तपज्जवा** - उच्चत्व पर्यायुक्त - ऊँचाई युक्त, **आउपज्जवा** - आयुष्य पर्याय।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में दक्षिणार्द्ध भरत क्षेत्र कहाँ बतलाया गया है?

दक्षिणार्द्ध भरत क्षेत्र वैताढ्य पर्वत के दक्षिण में, दक्षिण लवण समुद्र के उत्तर में, पूर्व लवण समुद्र के पश्चिम में एवं पश्चिम लवणसमुद्र के पूर्व में जंबूद्वीप के अंतर्गत बतलाया गया है। वह पूर्व-पश्चिम में लम्बा है और उत्तर-दक्षिण में चौड़ा है। वह अर्द्ध चन्द्राकार संस्थान में अवस्थित है। अर्थात् उसकी आकृति आधे चन्द्र के तुल्य है। वह तीन ओर से लवण समुद्र का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्श किए हुए है। वह गंगा महानदी एवं सिंधु महानदी द्वारा तीन भागों में बंटा हुआ है। उसकी चौफाई २३८$\frac{३}{१९}$ योजन है। उसकी जीवा उत्तर में पूर्व पश्चिम दिशाओं में लम्बी है तथा दो ओर से वह लवण समुद्र का स्पर्श करती है। वह अपनी पशिचमी कोटि–किनारे या कोने से पश्चिम लवण समुद्र का स्पर्श करती है एवं पूर्वी कोटि से लवण समुद्र के पूर्वी भाग का स्पर्श करती है। दक्षिणार्द्ध भरतक्षेत्र की जीवा की लम्बाई ९७४८$\frac{१२}{१९}$ योजन है। उसका धनुष्यपृष्ठ–पीठिका – दक्षिणार्द्ध भरत के जीवोपमित भाग का पीछे का हिस्सा दक्षिण में ९७६६$\frac{१}{१९}$ से कुछ अधिक है। यह वर्णन परिक्षेप - परिधि की अपेक्षा से है।

हे भगवन्! दक्षिणार्द्ध भरत आकार या स्वरूप में कैसा है?

हे गौतम! उसका भूमिभाग अत्यंत समतल तथा रमणीय है। वह मुरज (ढोलक) के ऊपरी भाग-चर्मपुट जैसा यावत् समतल है, बहुत प्रकार के कृत्रिम-मनुष्यकृत, अकृत्रिम-प्राकृतिक, पाँच रंगयुक्त मणियों और तृणों से सुशोभित है।

हे भगवन्! दक्षिणार्द्ध भरत में मनुष्यों का आकार या स्वरूप किस प्रकार का है?

हे गौतम! दक्षिणार्द्ध भरत के मनुष्य संहनन, संस्थान, ऊँचेपन तथा आयुष्य की दृष्टि से बहुत प्रकार के हैं। वे बहुत वर्षों का आयुष्य भोगते हैं। तदुपरांत उनमें से कतिपय नरक, तिर्यंच मनुष्य या देव गति में जाते हैं तथा कतिपय सिद्धत्व, बुद्धत्व, मुक्तत्व एवं परिनिर्वाण प्राप्त करते हैं एवं समस्त दुःखों का नाश करते हैं।

विवेचन - इस सूत्र में भरतक्षेत्र की वैविध्य पूर्ण स्थिति का वर्णन है। उसे जो स्थाणु, कंटकादि बहुल एवं विषम आदि कहा गया है, वह समस्त क्षेत्र के सामान्य वर्णन की अपेक्षा से है। साथ ही साथ उसके रमणीय भूमिभाग का उल्लेख हुआ है, वह स्थान विशेष के दृष्टिकोण को लिए हुए है। शुभ एवं अशुभ स्थितियों की विद्यमानता के कारण एक ही क्षेत्र में द्विविधता का होना असंगत नहीं है।

इस सूत्र में दक्षिणार्द्ध भरत के मनुष्यों को नरक, तिर्यंच, मनुष्य एवं देवगति में जाने तथा मुक्ति लाभ करने का जो उल्लेख हुआ है, वह भिन्न-भिन्न जीवों को लेते हुए आरक विशेष की अपेक्षा से है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैताढ्य पर्वत का वर्णन

(१२)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे भरहे वासे वेयड्ढे णामं पव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! उत्तरड्ढभरहवासस्स दाहिणेणं, दाहिणड्ढभरहवासस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे भरहे वासे वेयड्ढे णामं पव्वए पण्णत्ते - पाईणपडीणायए, उदीणदाहिणवित्थिण्णे, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, पणवीसं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं छस्सकोसाइं जोयणाइं उव्वेहेणं, पण्णासं जोयणाइं विक्खंभेणं, तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं चत्तारि अट्ठासीए जोयणसए सोलस य एगूणवीसइभागे जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणं पण्णत्ता। तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा, पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा, दस जोयणसहस्साइं सत्त य वीसे जोयणसए दुवालस य एगूणवीसइभागे जोयणस्स आयामेणं, तीसे धणुपुट्ठे दाहिणेणं दस जोयण-सहस्साइं सत्त य तेयाले जोयणसए पण्णरस य एगूणवीसइभागे जोयणस्स परिक्खेवेणं, रुयगसंठाणसंठिए, सव्वरययामाए, अच्छे, सण्हे, लट्ठे, घट्ठे, मट्ठे, णीरए, णिम्मले, णिप्पंके, णिक्कंकडच्छाए, सप्पभे, सस्सिरीए, पासाईए, दरिसणिज्जे, अभिरूवे, पडिरूवे।

उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते। ताओ णं पउमवरवेइयाओ अद्धजोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, पंचधणुसयाइं विक्खंभेणं, पव्वयसमियाओ आयामेणं वण्णओ भाणियव्वो। ते णं वणसंडा देसूणाइं दो जोयणाइं विक्खंभेणं पउमवरवेइयासमगा आयामेणं, किण्हा, किण्होभासा जाव वण्णओ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीपगत भरत क्षेत्र में वैताढ्य संज्ञक पर्वत कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र की दक्षिण दिशा में, दक्षिणार्द्ध भरत क्षेत्र की उत्तर दिशा में, लवण समुद्र के पूर्वीय भाग के पश्चिम में, पश्चिमी भाग के पूर्व में, जंबूद्वीप के अंतर्गत भरत क्षेत्र में वैताढ्य पर्वत विद्यमान है। उसकी लम्बाई पूर्व पश्चिम में तथा चौड़ाई उत्तर दक्षिण में है। वह दो पार्श्वों में - दो ओर से लवण समुद्र का स्पर्श करता है। अपने पूर्वी छोर से लवण समुद्र के पूर्वी भाग तथा पश्चिमी छोर से लवण समुद्र के पश्चिमी भाग का स्पर्श करता है। वह पच्चीस योजन ऊँचा तथा सवा छह योजन जमीन में गहरा है। इसकी लम्बाई पचास योजन है। उसकी बाहा-दक्षिण-उत्तर में व्याप्त वक्राकार आकाश प्रदेश पंक्ति पूर्व-पश्चिम में ४८८ $\frac{१६}{१९}$ योजन है। उत्तर में वैताढ्य पर्वत की जीवा पूर्व एवं पश्चिम दोनों ओर से लवण समुद्र का संस्पर्श करती है। वह पूर्वी छोर से लवण समुद्र के पूर्वी भाग का तथा पश्चिमी छोर से लवण समुद्र के पश्चिमी भाग का स्पर्श किए हुए है। जीवा की लम्बाई १०७२० $\frac{१२}{१९}$ योजन है। दक्षिण में उसकी धनुष पीठिका की परिधि १०७४३ $\frac{१५}{१९}$ योजन है।

वैताढ्य पर्वत रुचक संस्थान-गले में धारण करने योग्य आभरण विशेष के आकार में विद्यमान है। वह संपूर्णतः रजतमय है, स्वच्छ, चिकना, घिसा हुआ सा, तरासा हुआ सा है, रज, मैल, कर्दम एवं कंकड़ रहित है। वह आभा, कांति एवं उद्योत-द्युतियुक्त है। चित्त में हर्षोत्पादक, दर्शनीय, सुंदर और आकर्षक है।

वह अपने दोनों पार्श्वों में-दोनों ओर से दो दो पद्मवरवेदिकाओं एवं वनखण्डों द्वारा चारों ओर से संपरिवृत्त-घिरा हुआ है। वे पद्मवरवेदिकाएँ अर्द्धयोजन प्रमाण ऊँची तथा पाँच सौ धनुष प्रमाण चौड़ी हैं। इनकी लम्बाई पर्वत के सदृश ही हैं। इनका विस्तृत वर्णन अन्य आगमों के अनुरूप कथनीय है। वे वनखण्ड दो योजन से कुछ चौड़े हैं, लम्बाई में पद्मवरवेदिका के तुल्य हैं। वे कृष्ण वर्ण एवं कृष्ण प्रभा से युक्त हैं यावत् इनका विस्तृत वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

(१३)

वेयड्ढस्स णं पव्वयस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं दो गुहाओ पण्णत्ताओ- उत्तरदाहिणाययाओ, पाईणपडीणवित्थिण्णाओ, पण्णासं जोयणाइं आयामेणं, दुवालस जोयणाइं विक्खंभेणं, अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, वइरामयकवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

डोहाडिआओ, जमलजुयलकवाडघणदुप्पवेसाओ, णिच्चंधयारतिमिस्साओ, ववगयगहचंदसूरणक्खत्तजोइसप्पहाओ जाव पडिरूवाओ, तं जहा - तमिसगुहा चेव खंडप्पवायगुहा चेव।

तत्थ णं दो देवा महिड्ढिया, महज्जुईया, महाबला, महायसा, महासोक्खा, महाणुभागा, पलिओवमट्ठिईया परिवसंति, तं जहा - कयमालए चेव णट्टमालए चेव।

तेसि णं वणसंडाणं बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ। वेअड्ढस्स पव्वयस्स उभओ पासिं दस दस जोयणाइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं दुवे विज्जाहरसेढीओ पण्णत्ताओ-पाईणपडीणाययाओ, उदीणदाहिणवित्थिण्णाओ, दस दस जोयणाइं विक्खंभेणं, पव्वयसमियाओ आयामेणं, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं, दोहिं वणसंडेहिं संपरिक्खित्ताओ, ताओ णं पउमवरवेइयाओ अद्धजोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, पञ्च धणुसयाइं विक्खंभेणं, पव्वयसमियाओ आयामेणं, वण्णओ णेयव्वो, वणसंडावि पउमवरवेइयासमगा आयामेणं, वण्णओ।

शब्दार्थ - **कवाड** - कपाट, **णिच्च** - नित्य, **अंधयारतिमिस्साओ** - घोर अंधकार युक्त, **ववगय** - व्यपगत-रहित, **महाणुभागा** - अत्यंत प्रभाव युक्त।

भावार्थ - वैताढ्य पर्वत के पूर्व एवं पश्चिम में दो गुफाएँ हैं। वे उत्तर-दक्षिण एवं पूर्व-पश्चिम में क्रमशः लम्बी-चौड़ी हैं। वे पचास योजन लम्बी, बारह योजन चौड़ी तथा आठ योजन ऊँची हैं। उनके वज्ररत्नमय-हीरकनिर्मित कपाट हैं। वे दो-दो भागों—फलकों के रूप में बने हुए हैं, समस्थित एवं सघन-छिद्ररहित हैं। जिसके कारण गुफाओं में प्रवेश कर पाना दुःशक्य-कठिन है। उन दोनों गुफाओं में नित्य अंधकार रहता है। अतएव वे ग्रह, चंद्र, सूर्य एवं नक्षत्रों के प्रकाश से रहित हैं। सुन्दर एवं मनोज्ञ हैं। उनके नाम तमिस्रगुफा एवं खण्डप्रपात गुफा हैं।

कृतमालक तथा नृत्यमालक नामक दो देव वहाँ निवास करते हैं। वे अत्यंत ऐश्वर्य, द्युति, बल, यश, सुख एवं सौभाग्ययुक्त हैं। उनकी स्थिति-आयुष्य एक पल्योपम कालपरिमित है।

उन वनखण्डों के भूमिभाग अत्यंत समतल तथा रमणीय हैं। वैताढ्य पर्वत के दोनों ओर दस-दस योजन की ऊँचाई पर दो विद्याधर श्रेणियाँ - विद्याधरों के आवासों की पंक्तियाँ-कतारें हैं। वे पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा उत्तर-दक्षिण चौड़ी है। उनकी ऊँचाई दस-दस योजन परिमित है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथा लम्बाई पर्वत के सदृश ही है। वे अपने दोनों पार्श्वों में दो-दो पद्मवरवेदिकाओं तथा दो-दो वनखण्डों से घिरी हुई हैं। पद्मवरवेदिकाएँ अर्द्ध योजन ऊँची तथा पाँच सौ धनुष चौड़ी हैं। ये पर्वत जितनी ही लम्बी हैं। वनखण्ड भी वेदिकाओं जितने ही लम्बे हैं। पद्मवरवेदिकाओं एवं वनखण्डों का वर्णन पूर्ववत् ज्ञातव्य है।

विद्याधर श्रेणियों का स्वरूप

(१४)

विज्जाहरसेढीणं भंते! भूमीणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा जाव णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं, तणेहिं उवसोभिए, तं जहा - कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव। तत्थ णं दाहिणिल्लाए विज्जाहरसेढीए गगणवल्लभ-पामोक्खा पण्णासं विज्जाहरणगरावासा पण्णत्ता, उत्तरिल्लाए विज्जाहरसेढीए रहणेउरचक्कवालपामोक्खा सट्ठिं विज्जाहरणगरावासा पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं दाहिणिल्लाए, उत्तरिल्लाए विज्जाहरसेढीए एगं दसुत्तरं विज्जाहर-णगरावाससयं भवतीतिमक्खायं, ते विज्जाहरणगरा रिद्धत्थिमियसमिद्धा, पमुइय-जणजाणवया जाव पडिरूवा। तेसु णं विज्जाहरणगरेसु विज्जाहररायाणो परिवसंति महयाहिमवंतमलयमंदरमहिंदसारा रायवण्णओ भाणियव्वो।

शब्दार्थ - **केरिसए** - कैसे, **आयार** - आकार, **भाव** - स्वरूप, **अक्खायं** - आख्यात हुआ है-कहा गया है।

भावार्थ - हे भगवन्! विद्याधर श्रेणियों की भूमि का आकार, स्वरूप कैसा बतलाया गया है?

हे गौतम! उनका भू भाग अत्यंत समतल एवं सुंदर है। वह मुरज के चर्मनद्ध - चर्म निर्मित ऊपरी भाग की तरह यावत् समतल है। वह नाना प्रकार की कृत्रिम तथा प्राकृतिक मणियों एवं तृणादि वनस्पतियों से सुशोभित है। दक्षिणवर्ती विद्याधर श्रेणी में गगनवल्लभ आदि पचास विद्याधरों के नगर हैं। उत्तरवर्ती विद्याधर श्रेणी में रथनूपुर चक्रवाल आदि साठ नगर हैं। इस प्रकार दक्षिणवर्ती एवं उत्तरवर्ती दोनों विद्याधर श्रेणियों के कुल एक सौ दस नगर हैं। वे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विद्याधर नगर वैभव, सुरक्षा और समृद्धि से युक्त हैं। वहाँ के जन निवासी, जानपद–अन्य स्थानों से आए हुए व्यक्ति अत्यंत प्रसन्न हैं यावत् वे नगर बड़े ही सुंदर, मनोज्ञ, दर्शनीय एवं प्रतिरूप हैं।

उन विद्याधर नगरों-राजधानियों में विद्याधर राजा निवास करते हैं। वे महत्ता में महा हिमवान पर्वत के तुल्य तथा प्रधानता एवं विशिष्टता में मलय, मेरू एवं महेन्द्र पर्वतों के सदृश हैं। राजाओं का वर्णन अन्य आगमों के अनुरूप योजनीय है।

(१५)

विज्जाहरसेढीणं भंते! मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! ते णं मणुया बहुसंघयणा, बहुसंठाणा, बहुउच्चत्तपज्जवा, बहु-आउपज्जवा जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।

तासि णं विज्जाहरसेढीणं बहुसमर-मणिज्जाओ भूमिभागाओ वेयड्ढस्स पव्वयस्स उभओ पासिं दस दस जोयणाइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं दुवे आभिओगसेढीओ पण्णत्ताओ-पाईणपडीणाययाओ, उदीणदाहिणविच्छिण्णाओ, दस दस जोयणाइं विक्खंभेणं, पव्वयसमियाओ आयामेणं उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ताओ वण्णओ दोण्हवि पव्वयसमियाओ आयामेणं।

भावार्थ - हे भगवन्! विद्याधर श्रेणियों के मनुष्यों का आकार तथा स्वरूप कैसा परिज्ञापित हुआ है?

हे गौतम! वे मनुष्य बहुविध संघनन, संस्थान, ऊँचाई तथा आयुष्य युक्त हैं यावत् उनमें कतिपय निर्वाण प्राप्त करते हैं, समस्त दुःखों का अन्त करते हैं।

उन विद्याधर श्रेणियों के बहुत समतल एवं रमणीय भूभाग के वैताढ्य पर्वत के दोनों पार्श्वों में दस-दस योजन ऊपर दो आभियोगिक देवों, शक्र, लोकपाल आदि के आज्ञापालक देवों की आवास-पंक्तियाँ हैं, जो पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा उत्तर-दक्षिण चौड़ी हैं। उनकी चौड़ाई दस-दस योजन तथा लम्बाई पर्वत के सदृश है। वे दोनों श्रेणियाँ अपने दोनों ओर दो-दो पद्मवरवेदिकाओं तथा दो-दो वनखण्डों से घिरी हैं। इन दोनों की लम्बाई वैताढ्य पर्वत के सदृश है। इनका वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१६)

आभिओगसेढीणं भंते! केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव तणेहिं उवसोभिए वण्णाइं जाव तणाणं सद्दोत्ति। तासि णं आभिओगसेढीणं तत्थ तत्थ देसे तहिं तहिं जाव वाणमंतरा देवा य देवीओ य आसयंति, सयंति जाव फलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति। तासु णं आभिओगसेढीसु सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमजमवरुणवेसमणकाइयाणं आभिओगाणं देवाणं बहवे भवणा पण्णत्ता। ते णं भवणा बाहिं वट्टा, अंतो चउरंसा वण्णओ जाव अच्छरघणसंघसंविकिण्णा जाव पडिरूवा।

तत्थ णं सक्कस्स, देविंदस्स, देवरण्णो सोमजमवरुणवेसमणकाइया बहवे आभिओगा देवा महिड्डिया, महज्जुइया जाव महासोक्खा पलिओवमट्ठिइया परिवसंति।

तासि णं आभिओगसेढीणं बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ वेयड्ढस्स पव्वयस्स उभओ पासिं पंच पंच जोयणाइं उड्ढं उप्पइत्ता, एत्थ णं वेयड्ढस्स पव्वयस्स सिहरतले पण्णत्ते-पाईणपडीणायए, उदीणदाहिणवित्थिण्णे, दस जोयणाइं विक्खंभेणं, पव्वयसमगे आयामेणं, से णं इक्काए पउमवरवेइयाए, इक्केणं वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, पमाणं वण्णओ दोण्हंपि।

भावार्थ - हे भगवन्! उन आभियोगिक देवों की श्रेणियों का आकार, स्वरूप किस प्रकार का बतलाया गया है?

हे गौतम! उनके भूमिभाग बहुत ही समतल एवं सुंदर हैं यावत् वे विविध वनस्पतियों से सुशोभित हैं। उनके वर्ण यावत् शब्द आदि का वर्णन अन्य आगमों से ग्राह्य है। उन आभियोग्य श्रेणियों में भिन्न-भिन्न स्थानों पर वाणव्यंतर देव और देवियाँ आश्रय लेते हैं, शयन करते हैं यावत् अपने पूर्वाचरित विशिष्ट कर्मों का फलभोग करते हुए विहरणशील हैं। उन आभियोग्य श्रेणियों में देवेन्द्र देवराज शक्र, सोम-पूर्व दिक्पाल, यम-दक्षिण दिक्पाल, वरुण-पश्चिम दिक्पाल

Jain Education International　　For Personal & Private Use Only　　www.jainelibrary.org

एवं वैश्रमण–उत्तर दिक्पाल आदि आभियोगिक देवों के बहुत से भवन-प्रासाद हैं। वे बाहर से वृत्ताकार तथा भीतर से चतुष्कोण हैं। इन भवनों का वर्णन अन्य आगमों से ग्राह्य है यावत् वे अप्सराओं के विपुल समुदाय से संपरिवृत्त है यावत् वे भवन सुंदर तथा आकर्षक हैं।

वहाँ देवेन्द्र देवराज शक्र, सोम, यम, वरुण तथा वैश्रमण आदि के आभियोगिक देव, जो अत्यंत ऋद्धि, द्युति यावत् सुखयुक्त हैं की स्थिति कालपरिमित बतलाई गई हैं।

उन आभियोगिक श्रेणियों के अत्यंत समतल एवं रमणीय भूमिभाग से वैताढ्य पर्वत के दोनों ओर पांच-पांच योजन ऊँचे जाने पर उस पर्वत का शिखर तल - चोटी की तलहटी है। वह शिखर तल पूर्व-पश्चिम लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण चौड़ा है। वह चौड़ाई में दस योजन एवं लम्बाई में पर्वत के सदृश है। वह एक पद्मवरवेदिका और एक वनखंड से चारों ओर से घिरा हुआ है, उन दोनों का वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

(१७)

वेयड्ढस्स णं भंते! पव्वयस्स सिहरतलस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते। से जहाणामए–आलिंगपुक्खरेइ वा जाव णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं उवसोभिए जाव वावीओ, पुक्खरिणीओ, जाव वाणमंतरा देवा य देवीओ य आसयंति जाव भुंजमाणा विहरंति।

भावार्थ - हे भगवन्! वैताढ्य पर्वत के शिखर तल का आकार-प्रकार कैसा कहा गया है?

हे गौतम! उसका भूमिभाग अत्यंत समतल तथा सुंदर है। वह मुरज के चर्मनद्ध - ऊपरितन चर्मपुट जैसा समतल है यावत् भिन्न-भिन्न प्रकार की पाँच वर्णों की मणियों से सुशोभित है यावत् वापी, पुष्करिणी से युक्त है यावत् वहाँ वानव्यंतर देव और देवियाँ आश्रय लेते हैं यावत् अपने पूर्व भव में अर्जित पुण्यों का शुभकर्मों का फल भोग करते हुए विहरणशील है।

(१८)

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भारहे वेयड्ढपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा - सिद्धाययणकूडे १. दाहिणड्ढभरहकूडे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२. खंडप्पवायगुहाकूडे ३. मणिभद्दकूडे ४. वेयड्ढकूडे ५. पुण्णभद्दकूडे ६. तिमिसगुहाकूडे ७. उत्तरड्ढभरहकूडे ८. वेसमणकूडे ६।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप के अन्तर्गत, भारत वर्ष में, वैताढ्य पर्वत के कितने कूट-शिखर परिज्ञापित हुए हैं?

हे गौतम! उसके नौ कूट बतलाए गए हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं - १. सिद्धायतन २. दक्षिणार्द्धभरत ३. खण्डप्रपातगुहा ४. मणिभद्र ५. वैताढ्य ६. पूर्णभद्र ७. तमिस्रगुहा ८. उत्तरार्द्धभरत एवं ६. वैश्रमण कूट।

सिद्धायतनकूट की अवस्थिति

(१६)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वेयड्ढपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, दाहिणड्ढभरहकूडस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वेयड्ढे पव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते-छ सक्कोसाइं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, मूले छ सक्कोसाइं जोयणाइं विक्खंभेणं, मज्झे देसूणाइं पंच जोयणाइं विक्खंभेणं, उवरिं साइरेगाइं तिण्णि जोयणाइं विक्खंभेणं, मूले देसूणाइं बावीसं जोयणाइं परिक्खेवेणं, मज्झे देसूणाइं पण्णरस जोयणाइं परिक्खेवेणं, उवरिं साइरेगाइं णव जोयणाइं परिक्खेवेणं, मूले वित्थिण्णे, मज्झे संखित्ते, उप्पिं तणुए, गोपुच्छसंठाणसंठिए, सव्वरयणामए, अच्छे, सण्हे जाव पडिरूवे।

से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, पमाणं वण्णओ दोण्हंपि, सिद्धाययण-कूडस्स णं उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा जाव वाणमंतरा देवा य जाव विहरंति।

तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महं एगे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धाययणे पण्णत्ते, कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, देसूणं कोसं उद्धं उच्चत्तेणं, अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे, अब्भुग्गयसुकयवइरवेइआ-तोरण-वररइय-सालभंजिअ-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-लट्ठ-संठिय-पसत्थ-वेरुलिय विमलखंभे, णाणामणिरयणखचिअउज्जलबहुसमसुविभत्तभूमिभागे, ईहामिग-उसभ-तुरग-णर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय जाव पउमलय-भत्तिचित्ते, कंचणमणिरयण-थूभियाए, णाणाविहपंच-वण्ण-घंटापडाग-परिमंडियग्गसिहरे, धवले, मरीइकवयं विणिम्मुयंते, लाउल्लोइयमहिए, जाव झया। तस्स णं सिद्धाययणस्स तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता। ते णं दारा पंच धणुसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं, अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं विक्खंभेणं तावइयं चेव पवेसेणं, सेयवरकणगथूभियागा दारवण्णओ जाव वणमाला।

तस्स णं सिद्धाययणस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा जाव तस्स णं सिद्धाययणस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे देवच्छंदए पण्णत्ते-पंचधणुसयाइं आयामविक्खंभेणं साइरेगाइं पंच धणुसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं, सव्वरयणामए। एत्थ णं अट्ठसयं जिणपडिमाणं जिणुस्सहेप्पमाणमित्ताणं संणिक्खित्तं चिट्ठइ, एवं जाव धूवकडुच्छगा।

शब्दार्थ - **संखित्ते** - संक्षिप्त-संकरा, **तणुए** - पतला, **ईहामिग** - ईहामृग-भेड़िया, **उसभ** - वृषभ-बैल, **तुरग** - अश्व, **णर** - मानव, **विहग** - पक्षी, **वालग** - व्यालक-सर्प, **रुरु** - कस्तूरी मृग, **सरभ** - अष्टापद, **चमर** - चंवर, **कुंजर** - हाथी, **वणलय** - वनलता, **पउमलय** - पद्मलता, **भत्तिचित्ते** - चित्रांकित, **थूभियाए** - स्तूपिका-गुम्बज, **पडाग** - पताका, **मरीइ** - किरणे, **विणिम्मुअंते** - प्रस्फुटित होती है, **लाउल्लोइम-महिए** - गोबर आदि से प्रलिप्त, **देवच्छंदए** - देवासन विशेष, **जिणुस्सेहापमाणमित्ताणं** - तीर्थंकरों की शारीरिक ऊँचाई जितनी ऊँची, **धूवकडुच्छुगा** - धूप के कुडछे-धूपदान।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में अवस्थित भरतक्षेत्र में वैताढ्य पर्वत पर सिद्धायतन कूट कहाँ प्रज्ञप्त हुआ है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! पूर्वीय लवण समुद्र के पश्चिम में, दक्षिणार्द्ध भरतक्षेत्र के पूर्व में, जंबूद्वीप के अंतर्गत, भरत क्षेत्र में सिद्धायतन नामक कूट है। वह छह योजन एक कोस ऊँचा, मूलभाग-नीचे से छह योजन एक कोस चौड़ा, मध्य में पांच योजन से कुछ कम चौड़ा, ऊपर तीन योजन से कुछ अधिक चौड़ा है। निम्न भाग में उसकी परिधि बाईस योजन से कुछ कम है, मध्य भाग में पन्द्रह योजन से कुछ कम है तथा उपरितन भाग में नौ योजन से कुछ अधिक है। वह मूल भाग में विस्तीर्ण, मध्य में संकडा तथा उपरितन भाग में तनु-पतला है। वह गाय के पूंछ के आकार सदृश है। वह सर्व रत्नमय, उज्ज्वल सुकोमल यावत् सुंदर है।

वह एक पद्मवरवेदिका तथा एक वनखंड से चारों ओर से घिरा है। दोनों का वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है। सिद्धायतन कूट के ऊपर अत्यंत समतल तथा सुन्दर भूमिभाग है। वह मुरज के ऊपरितन चर्मावृत भाग के समान समतल है यावत् वहाँ वानव्यंतर देव-देवियाँ यावत् सुखोपभोग पूर्वक विहरणशील है।

उस अत्यंत समतल, सुंदर भूमिभाग के बीचों-बीच एक विशाल सिद्धायतन है, जो लम्बाई में एक कोस, चौड़ाई में अर्द्ध कोस और ऊंचाई में एक कोस से कुछ कम है। वह सैकड़ों खंभों पर अवस्थित है। वह ऊँची उठी हुई, सुंदर रूप में निर्मित वेदिकाओं, तोरणों तथा सुन्दर सालभंजिकाओं–पुतलियों से सुशोभित है। उसके निर्मल–उज्ज्वल स्तंभ चिकने, विशिष्ट, सुंदर, आकार युक्त, उत्तम वैडूर्य-नीलम रत्नों से संरचित है। उसका भूमिभाग तरह-तरह की मणियों एवं रत्नों से जड़ा हुआ है, द्युतिमय, अत्यंत समतल एवं सुविभक्त है। उसमें वृक, वृषभ, अश्व, मानव, मगर, पक्षी, सर्प, किन्नर, कस्तूरीमृग, अष्टापद, चंवर, हाथी, वनलता यावत् पद्मलता के चित्र अंकित हैं। उसकी स्तूपिका स्वर्ण, मणियों एवं रत्नों से बनी हैं। वह सिद्धायतन विविध प्रकार के पाँच रंग के रत्नों से विभूषित है, जैसा कि अन्यत्र वर्णन आया है।

उसके शिखर घंटाओं और पताकाओं से सुशोभित है। वह श्वेत वर्ण का है एवं इतना उद्योतमय है कि उससे किरणें प्रस्फुटित होती है। वहाँ की भूमि गोमय आदि से उपलिप्त है यावत् ध्वजाओं से युक्त है।

उस सिद्धायतन की तीन दिशाओं में तीन द्वार बतलाए गए हैं जो पांच-पांच सौ धनुष ऊँचे तथा ढाई सौ-ढाई सौ धनुष चौड़े हैं। उनका प्रवेश-परिमाण भी उतना ही है। उसकी स्तूपिकाएँ उत्तम जातीय स्वर्ण निर्मित है यावत् वह द्वार तथा वनमालाओं से युक्त है, जिनका वर्णन अन्य आगमों से ग्राह्य है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उस सिद्धायतन के भीतर अत्यंत समतल, सुंदर भूमिभाग है, जो मुरज आदि के चर्मपुट रूप ऊपरी भाग के सदृश है यावत् उस सिद्धायतन के अत्यंत समतल, सुंदर भूमिभाग के बीचों-बीच देवच्छंदक-देवासन विशेष बतलाया गया है। यह लम्बाई तथा चौड़ाई में पांच सौ-पांच सौ धनुष तथा ऊँचाई में पांच सौ धनुष से कुछ अधिक है। वह सम्पूर्णतः रत्नमय है।

वहाँ तीर्थंकरों के शरीर की ऊँचाई जितनी ऊँची एक सौ आठ जिन प्रतिमाएं हैं यावत् वहाँ धूप खेने के कुड़छे - धूपदान रखे हैं।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में सिद्धायतन कूट के अंतर्गत एक सौ आठ जिन प्रतिमाओं का उल्लेख हुआ है परन्तु ये जिन प्रतिमाएं तीर्थंकरों की नहीं है। निम्न शंका-समाधान से यह विषय स्पष्ट हो जायगा।

जिन प्रतिमा तीर्थंकरों की नहीं

शंका - जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र के प्रथम वक्षस्कार में जिन प्रतिमा का उल्लेख है वे देवों द्वारा पूजी जाती हैं तो फिर मूर्तिपूजा मानने में क्या बाधा है?

समाधान - उपरोक्त आगम पाठ में जहाँ जिन प्रतिमा का उल्लेख है उसके आगे पीछे के वर्णन से यह सिद्ध होता है कि ये मूर्तियाँ सरागी देवों की हैं, तीर्थंकर भगवान् की नहीं तथा भौतिक सुख-समृद्धि की लालसा से देवों द्वारा पूजी जाती हैं, धर्म समझ कर नहीं।

शंका - 'जिन प्रतिमा' शब्द का अर्थ 'तीर्थंकर की मूर्ति' होता है तो आप 'सरागी देवों की मूर्ति' ऐसा अर्थ किस आधार से मानते हैं?

समाधान - ठाणांग सूत्र के तीसरे स्थान के चौथे उद्देशक में तीन प्रकार के जिन बताये हैं-

''तओ जिणा पण्णत्ता तं जहां - ओहिणाण जिणे, मण पज्जवणाण जिणे, केवल णाण जिणे'' अर्थात् तीन प्रकार के जिन होते हैं - १. अवधि ज्ञानी जिन २. मनःपर्यव ज्ञानी जिन ३. केवल ज्ञानी जिन। इस पाठ में अवधि ज्ञानी को भी जिन कहा है तथा पन्नवणा सूत्र के तेतीसवें अवधि पद में अवधि ज्ञानी के दो भेद बताये हैं - सम्यग् दृष्टि और मिथ्या दृष्टि। इस पाठ के आधार से लोक में जितने भी देव हैं चाहे सम्यग् दृष्टि हों या मिथ्या दृष्टि, वे सभी अवधि ज्ञानी ही होने से 'जिन' कहलाते हैं और इनकी मूर्ति 'जिन प्रतिमा' कहलाती है। अतः कामदेव, भैरु, यक्ष, यक्षिनी, भूत, प्रेत, पित्तर आदि की मूर्तियाँ भी जिन प्रतिमा ही होती हैं और सांसारिक लालसा से इनकी पूजा की जाती है, धर्म के लिए नहीं। क्योंकि इनकी पूजा में छह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काय जीवों की हिंसा होती है। तीर्थंकर भगवान् के दर्शन करते समय सचित्त का त्याग करना होता है। जहाँ सचित्त त्याग का विधान नहीं है वहाँ तीर्थंकर की आज्ञा नहीं होती। कहा भी है-

असली भगवान् के दीपक जलता नहीं,

जहाँ दीपक जलता वो मूर्ति भगवान् नहीं।

भगवान् का दर्शन करते समय सचित्त का त्याग होता है,

जहाँ सचित्त वस्तु चढ़ाई जाती है, वहाँ निश्चित ही भगवान् नहीं॥

अतः शास्त्र में वर्णित जिन प्रतिमाएं सरागी देवों की हैं। तीर्थंकरों की नहीं।

शंका - विजय देव, सूर्याभ देव आदि सम्यग् दृष्टि देवों ने भी देवलोक में जिन प्रतिमा की पूजा की है तो आप मूर्ति-पूजा क्यों नहीं मानते?

समाधान - सूयगडांग सूत्र के दूसरे श्रुतस्कन्ध के दूसरे क्रिया स्थान नामक अध्ययन में बताया है कि जो अव्रती है अर्थात् पहले से चौथे गुण-स्थान तक के जितने भी जीव हैं, वे सभी अधर्मी कहलाते हैं और श्रावक (पांचवें गुणस्थान वाले) धर्माधर्मी कहलाते हैं। साधु सभी (छठे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान वाले) धर्मी कहलाते हैं। अतः जितने भी देव हैं, वे सब अव्रती ही होते हैं और उन्हें धर्म होता ही नहीं है। इसलिए देवों की मूर्ति-पूजा से धर्म की सिद्धि नहीं हो सकती।

देवलोक में बारहवें देवलोक तक भवी, अभवी, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, किल्विषि आदि से लेकर एक भवावतारी इन्द्र आदि जितने भी देव हैं, वे सभी अनंत भवों में जब-जब भी देवलोक में उत्पन्न होते हैं, तब-तब वहाँ रही हुई उन सरागी देवों की शाश्वत प्रतिमाओं की पूजा करते ही हैं, यह उनका जीताचार (लोक व्यवहार) है। इसमें भौतिक सुख-समृद्धि की लालसा होती है, धर्म-भावना नहीं। अगर, धर्म होता तो सभी जीवों ने अनंत बार देवलोक में मूर्ति-पूजा की है, फिर भी हमारा मोक्ष, कल्याण नहीं हुआ, बल्कि असंख्य देव वहाँ से काल करके पृथ्वी, पानी, वनस्पति और तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं। अगर मूर्ति-पूजा में धर्म होता तो आपके मत में सभी देव धर्म करने वाले ही हैं फिर ऐसी दुर्गति क्यों होती है?

अतः जिस प्रकार मनुष्य लोक में अनेक प्रसंगों पर लोगों द्वारा भौतिक सुख-समृद्धि के लिए, लक्ष्मी आदि के साथ दवात, कलम, सिक्के, बहीखाता आदि अनेक पदार्थों की पूजा की जाती है, वैसे ही देव भी अपनी दैनिक जीवन की सुख-समृद्धि में विघ्न न हो, इसके लिए मूर्ति के साथ दरवाजा, द्वारशाखा, तोरण, दाढ़ा, नागबिंब, दवात, कलम, पुतली, पुस्तक आदि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनेक वस्तुओं की पूजा करते हैं, अतः इसका धर्म के साथ कोई संबंध नहीं है तथा इन मूर्तियों को, तीर्थंकर की मूर्ति कहना भी हास्यास्पद है एवं शास्त्रज्ञान की अज्ञानता को सूचित करता है, क्योंकि इन मूर्तियों के पास नाग, भूत, यक्ष की प्रतिमाएं हैं, जबकि तीर्थंकरों के पास तो गणधर, साधु, साध्वी, श्रावक आदि होने चाहिए। तीर्थंकर तो सचित्त पदार्थ को छूते भी नहीं, इन मूर्तियों पर पानी, अग्नि, फूल आदि चढ़ाया जाता है और साक्षात् जीव हिंसा होती है जबकि दशवैकालिक सूत्र के पाँचवें अध्ययन के दूसरे उद्देशक की चौदहवीं से अठारहवीं गाथा में बताया है कि यदि गृहस्थ, साधु को भिक्षा देते समय, किसी भी फूल को छू ले या कुचल दे तो साधु को वहाँ से भिक्षा लेने की आज्ञा नहीं है।

अब सोचिये कि साधु चाहे थका हुआ हो, भूख-प्यास से व्याकुल हो और वहाँ सभी वस्तु मिल रही हो, तो भी फूल छूने मात्र से वहाँ से भिक्षा लेने की भगवान् की आज्ञा नहीं है तो फिर भगवान् अपने ऊपर निरर्थक फूल चढ़ाने की आज्ञा कैसे दे सकते हैं? सुज्ञ जन विचार करें। इसी सूत्र के पांचवें अध्ययन की गाथा इकत्तीस से तैंतीस तक में बताया है कि यदि साधु को भिक्षा देने के लिए कोई गृहस्थ पानी में चलकर, हाथ, बर्तन आदि धोकर अथवा पहले से गीले हों या हाथ की रेखा मात्र भी गीली हो, तो उससे भिक्षा लेने की भगवान् की आज्ञा नहीं है। तो क्या भगवान् ऐसी आज्ञा दे सकते हैं कि मेरे ऊपर पानी डालो, प्रक्षाल करो और मेरे पास आने के लिए स्नान करो, हाथ पाँव धोओ आदि निरर्थक हिंसा की आज्ञा नहीं हो सकती तथा जहाँ रात्रि में दीपक आदि जलता हो, वहाँ साधु को ठहरने की भी बृहत्कल्प सूत्र में भगवान् की मनाई है। श्रावक भी रात्रि में प्रतिक्रमण, सामायिक, पौषध आदि में लाइट नहीं जला सकता तो भगवान् अपने लिये अखंड ज्योत और धूप, दीपक आदि जलाने की कैसे आज्ञा दे सकते हैं? सुज्ञ जन विचार करें। जहाँ भगवान् की आज्ञा नहीं, वहाँ धर्म होता ही नहीं है। क्योंकि - आचारांग सूत्र अध्ययन छठा, उद्देशक दूसरे में बताया है कि **'आणाए मामगं धम्मं'** अर्थात् मेरी आज्ञा में ही धर्म है और सूयगडांग सूत्र के अध्ययन प्रथम, उद्देशक-चतुर्थ, गाथा दस में कहा है कि **'एयं खु णाणिणो सारं जं न हिंसई किचणं'** अर्थात् ज्ञानी पुरुष होने का सार यही है कि किंचित् मात्र भी हिंसा न करे।

निष्कर्ष यह है कि देवों द्वारा पूजित मूर्तियों पर हिंसा होने से वे तीर्थंकरों की मूर्तियाँ नहीं हो सकती हैं, देवताओं के अव्रती होने से उनके द्वारा पूजित क्रिया, धर्म भी नहीं हो सकती तथा उववाई सूत्र में भगवान् के शरीर का वर्णन 'मस्तक से पाँव तक' किया है। इसमें भगवान्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के वक्ष स्थल पर स्तन के चिह्न नहीं बताये, आँखों में विकृति सूचक लाल डोरे भी नहीं बताये और मूर्ति का वर्णन जीवाभिगम सूत्र में - 'पाँव से मस्तक तक' किया है। मूर्ति में स्तन के चिह्न भी बताये और आँखों में विकृति सूचक लाल डोरे भी बताये हैं। इस प्रकार दोनों प्रत्यक्ष भेद होने से, ये विकारी और सरागी भाव की सूचक मूर्तियाँ तीर्थंकर की कैसे हो सकती है? समझदार व्यक्ति चिंतन करें।

शंका - सूर्याभ आदि देवों द्वारा की गई मूर्ति-पूजा का फल बताते हुए शास्त्र में **'पेच्चा हियाए'** और **'निस्सेयसाए'** इन दो शब्दों का प्रयोग किया है, जिसका अर्थ होता है पीछे हितकारी और कल्याणकारी तो फिर इसे धर्म क्यों नहीं माना जाये?

समाधान - शास्त्रों में जहाँ-जहाँ भी तीर्थंकर भगवान् एवं मुनियों के दर्शन का फल बताया वहाँ पर **'पेच्चा हियाए'** शब्द कहा है। जिसका अर्थ है - परलोक में हितकारी तथा मूर्ति के दर्शन के फल में कहा है **'पुव्विं पच्छा हियाए'** अर्थात् इस लोक में आगे-पीछे हितकारी। निष्कर्ष यह है कि देवों की पूजा से वे प्रसन्न होकर इस लोक में आगे-पीछे भौतिक-सुखों के सहयोगी बन सकते हैं और तीर्थंकर भगवान् के दर्शन से परलोक सुधर जायेगा। धर्म का वास्तविक फल भी यही है। भौतिक सुखों की लालसा में धर्म होता ही नहीं है। अतः देवों की मूर्ति पूजा का फल, भौतिक सुखों की लालसा ही बताया होने से धर्म का उससे कोई संबंध नहीं है, इसलिए ये मूर्तियाँ तीर्थंकर की नहीं होकर कामदेव आदि की समझनी चाहिये। **'निस्सेयसाए'** का अर्थ मुक्ति होता है, जो प्रसंगानुसार शास्त्र में अनेक स्थान पर आया है। जैसे भगवती सूत्र शतक दो उद्देशक एक में खंदक अधिकार में जलते हुए मकान में से धन आदि, सार-सार पदार्थ निकाल लेने के फल में भी **'निस्सेयसाए'** शब्द कहा है। यहाँ पर इसका अर्थ यह है कि कीमती पदार्थ निकाल लेने से इस भव में दरिद्रता के दुःख से मुक्ति हो जायेगी अर्थात् संपन्नता से जीवन-यापन करेगा।

इसी प्रकार देवों की मूर्ति-पूजा भी इस भव में शारीरिक-मानसिक दुःखों की मुक्ति के लिए होने से **'निस्सेयसाए'** शब्द का प्रयोग है, परन्तु सर्वकर्म रहित होकर शाश्वत मुक्ति के लिए नहीं है। क्योंकि रायप्पसेणी सूत्र में ही दोनों (मूर्ति-पूजा और तीर्थंकर दर्शन, सूर्याभ देव के द्वारा करना) पाठ है - सूर्याभ देव भगवान् के दर्शन करने गया तब उसके फल में **'पेच्चा हियाए और निस्सेयसाए'** कहा है और जब सूर्याभ देव ने जिन प्रतिमा की पूजा की तब **'पुव्विं पेच्चा हियाए'** व **'निस्सेयसाए'** कहा है, अर्थात् - तीर्थंकरों का दर्शन, जन्म-मरण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिटाने वाला है और मूर्तियाँ भौतिक सुखों के लिए हैं। इस प्रकार दोनों का फल एक-दूसरे से विपरीत होते हुए भी दोनों संदर्भों को एक सरीखा समझ कर मूर्तिपूजा में धर्म बताना, शास्त्र ज्ञान के रहस्य की अनभिज्ञता सिद्ध करता है। अतः मूर्ति-पूजा लौकिक मंगल के लिए है और तीर्थंकरों के दर्शन आध्यात्मिक मंगल के लिए है। इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि देवलोक में वर्णित मूर्तियाँ तीर्थंकरों की न होकर, सरागी देवों की हैं और उनकी पूजा में धर्म बताना सत्य ज्ञान का अभाव सिद्ध करता है। सुज्ञ बंधु चिंतन करें।

शंका - देवलोक में वर्णित मूर्तियों के जो चार नाम बताये हैं, यथा - **ऋषभ, वर्धमान, चंद्रानन** और **वारीसेन** - ये ही नाम तीर्थंकरों के हैं तो फिर इन्हें तीर्थंकरों की मूर्तियाँ क्यों न मानी जायें?

समाधान - देवलोक की मूर्तियाँ अनादिकालीन और शाश्वत हैं तथा ये चार नाम के तीर्थंकर तो इस अवसर्पिणी में जंबूद्वीप के भरत और ऐरावत क्षेत्र के, प्रथम और अंतिम हुए हैं। केवल नाम की समानता से उन अनादिकालीन शाश्वत मूर्तियों को इन तीर्थंकरों की बतलाना अज्ञानता है, क्योंकि तीर्थंकर तो अनंत हुए हैं, फिर इन चार का ही नाम क्यों? धातकी खंड एवं अर्द्धपुष्कर द्वीप में भी तीर्थंकर हुए हैं, वर्तमान में पांचों महाविदेह में बीस तीर्थंकर मौजूद हैं तथा इन सभी क्षेत्रों में भूत, भविष्य की चौबीसियाँ भी होती हैं। अन्य भी अजितनाथ जी, संभवनाथ जी आदि अनेक तीर्थंकरों के होने पर भी उनकी मूर्तियों से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसलिए देवलोक में रही मूर्तियाँ तीर्थंकरों की नहीं हैं। एक सरीखे नाम के कारण गहरी खोज के बिना कुछ इतिहासकारों ने भी भूलें की हैं, जैसे - भगवान् महावीर के बाद ग्यारहवीं शताब्दी में होने वाले, उपसर्गहर स्तोत्र के रचयिता भद्रबाहु के साहित्य में रही हुई आगम विरुद्ध बातों को, तीसरी शताब्दी में होने वाले चौदह पूर्व भद्रबाहु के नाम पर लगाकर काफी भ्रम पैदा किया है। इसी प्रकार देवलोक की उन अनादिकालीन कामदेव आदि की सरागी मूर्तियों को एक जैसे नामों के कारण वर्तमान चौबीसी में होने वाले तीर्थंकर ऋषभदेव और वर्धमान की मूर्तियाँ बताकर भोले लोगों को गुमराह किया गया है। परन्तु जो गहरे खोजी होते हैं, वे क्षीर-नीर के न्याय से सत्य को समझ जाते हैं। देवलोक में मूर्तियों की संख्या एक सौ आठ बतायी गयी है और नाम सिर्फ चार ही बताये हैं। जबकि तीर्थंकर तो अनंत हुए हैं। अतः सराग भाव की सूचक मूर्तियाँ तीर्थंकरों की नहीं हो सकती। सुज्ञ बन्धु चिंतन करें।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दक्षिणार्द्ध भरतकूट

(२०)

कहि णं भंते! वेयड्ढे पव्वए दाहिणड्ढभरहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! खंडप्पवायकूडस्स पुरत्थिमेणं, सिद्धायतणकूडस्स पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं वेअड्ढपव्वए दाहिणड्ढभरहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते-सिद्धायतणकूडप्पमाणसरिसे जाव वाणमंतरा देवा य जाव विहरंति।

तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे पासायवडिंसए पण्णत्ते-कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, अब्भुग्गय-मूसियपहसिए जाव पासाईए ४।

तस्स णं पासायवडिंसगस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगा मणिपेढिया पण्णत्ता-पंच धणुसयाइं आयाम-विक्खंभेणं, अड्ढाइज्जाहिं धणुसयाइं बाहल्लेणं, सव्वमणिमई०। तीसे णं मणिपेढियाए उप्पिं सिंहासणं पण्णत्तं, सपरिवारं भाणियव्वं।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-दाहिणड्ढभरहकूडे दाहिणड्ढभरहकूडे ?

गोयमा! दाहिणड्ढभरहकूडे णं दाहिणड्ढभरहे णामं देवे महिड्ढीए जाव पलिओवमट्ठिईए परिवसइ। से णं तत्थ चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं, चउण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं सोलसण्हं आयारक्खदेवसाहस्सीणं दाहिणड्ढभरहकूडस्स दाहिणड्ढाए रायहाणीए अण्णेसिं च बहूणं देवाण य देवीण य जाव विहरइ।

कहि णं भंते! दाहिणड्ढभरहकूडस्स देवस्स दाहिणड्ढा णामं रायहाणी पण्णत्ता?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स दक्खिणेणं तिरियमसंखेज्जदीवसमुद्दे वीईवइत्ता, अण्णंमि जंबुद्दीवे दीवे दक्खिणेणं बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणड्ढभरहकूडस्स देवस्स दाहिणड्ढभरहा णामं रायहाणी भाणियव्वा जहा

Jain Education International　For Personal & Private Use Only　www.jainelibrary.org

विजयस्स देवस्स, एवं सव्वकूडा णेयव्वा जाव वेसमणकूडे परोप्परं पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं, इमेसिं वण्णावासे -

गाहा - मज्झ वेअड्डस्स उ कणगमया तिण्णि होंति कूडा उ।

सेसा पव्वयकूडा सव्वे रयणामया होंति॥

मणिभद्दकूडे १, वेयड्ढकूडे २, पुण्णभद्दकूडे ३-एए तिण्णि कूडा कणगामया, सेसा छप्पि रयणमया दोण्हं विसरिसणामया देवा कयमालए चेव णट्टमालए चेव, सेसाणं छण्हं सरिसणामया -

जण्णामया य कूडा तण्णामा खलु हवंति ते देवा।

पलिओवमट्ठिईया हवंति पत्तेयं पत्तेयं॥ १॥

रायहाणीओ जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरिअं असंखेज्जदीवसमुद्दे वीईवइत्ता अण्णंमि जंबुद्दीवे दीवे बारस जोअणसहस्साइं ओगाहित्ता, एत्थ णं रायहाणीओ भाणियव्वाओ विजयरायहाणीसरिसयाओ।

शब्दार्थ- **उसिय** - उच्छ्रित-उठे हुए, **पहसिए** - प्रहसित-हंसता हुआ सा, **पासायवंडिसए-** प्रासादावतंसक-उत्तम प्रासाद, **तिरियम** - तिरछे, **असंखेज्ज** - असंख्यात, **वीईवइत्ता** - व्यतिवृत्त-कर-लांघने पर, **ओगाहित्ता** - अवगाहन करने पर - नीचे जाने पर, **परोप्परं** - पर्यन्त-तक, **विसरिसणामया** - असमान नाम वाले, **सरिसणामया** - सदृश नाम युक्त।

भावार्थ - हे भगवन्! वैताढ्य पर्वत का दक्षिणार्द्ध भरतकूट कहाँ पर अवस्थित है?

हे गौतम! वह खण्डप्रपात कूट के पूर्व में तथा सिद्धायतन कूट के पश्चिम में विद्यमान है। उसका परिमाण आदि विस्तृत वर्णन सिद्धायतन कूट के सदृश है यावत् वहाँ बहुत से वाणव्यंतर देव और देवियाँ विहरणशील हैं।

दक्षिणार्द्ध भरत कूट के अत्यंत समतल एवं रमणीय भूमिभाग में एक उत्तम प्रासाद है। वह ऊँचाई में एक कोस तथा चौड़ाई में अर्द्धकोस है। वह भूमि से ऊँचा उठा हुआ है। अपने से निकलती हुई उद्योतमय किरणों से ऐसा प्रतीत होता है, मानो हंस रहा हो यावत् वह बहुत ही सुंदर, मनोज्ञ, अभिरूप और प्रतिरूप है।

उस प्रासाद के बीचों-बीच एक विशाल मणिपीठिका है। वह लम्बाई में पाँच सौ धनुष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लम्बी-चौड़ी एवं अढाई सौ धनुष मोटी है। संपूर्णतः रत्नमय है। उस मणिपीठिका के ऊपर एक सिंहासन है। उसका सपरिवार-अंगोपांग सहित विस्तृत वर्णन अन्य आगमों से ग्राह्य है।

हे भगवन्! उसका नाम दक्षिणार्द्ध भरतकूट क्यों पड़ा है?

हे गौतम! दक्षिणार्द्ध भरतकूट पर अत्यंत समृद्धिमय यावत् एक पल्योपम स्थितिक दक्षिणार्द्ध भरत नामक देव निवास करता है। उसके चार सहस्र सामानिक देव, सपरिवार चार अग्रमहीषियाँ, तीन परिषदें, सात सेनाएँ, सात सेनापति एवं सोलह सहस्र आत्मरक्षक देव हैं। दक्षिणार्द्ध भरतकूट की दक्षिणार्द्धा नामक राजधानी है। वहाँ वह अपने देव परिवार का तथा अन्य बहुत से देव-देवियों का आधिपत्य करता हुआ यावत् सुखपूर्वक विहरणशील है।

हे भगवन्! दक्षिणार्द्ध भरतकूट की दक्षिणार्द्धा नामक राजधानी कहाँ विद्यमान है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के दक्षिण में, तिर्यक् दिशा में असंख्यात द्वीप समुद्रों को लांघने के बाद अन्य जंबूद्वीप आता है। वहाँ दक्षिण दिशा में बारह सौ योजन नीचे जाने पर दक्षिणार्द्ध भरतकूट के देव की दक्षिणार्द्धभरता संज्ञक राजधानी बताई गई है। उसका विस्तृत वर्णन विजयदेव की राजधानी के तुल्य है यावत् वैश्रमण कूट तक इन सभी कूटों का वर्णन सिद्धायतन कूट की तरह योजनीय है। वे क्रमशः पूर्व से पश्चिम की ओर हैं। इनके वर्णन के संबंध में एक गाथा प्रचलित है -

वैताढ्य पर्वत के मध्य में तीन स्वर्णमय कूट हैं। उनके अतिरिक्त समस्त पर्वत कूट रत्नमय हैं।

मणिभद्रकूट, वैताढ्यकूट एवं पूर्णभद्रकूट—ये तीन स्वर्णमय कूट हैं तथा शेष छह रत्नमय हैं। दो कूटों पर कृत्यमालक एवं नृत्यमालक नामक दो कूटों के नाम से भिन्न नाम वाले देव निवास करते हैं। अवशिष्ट छह कूटों पर कूटों के सदृश नामयुक्त देव रहते हैं। (अर्थात्) कूटों के जो-जो नाम हैं, उन्हीं नाम के देव वहाँ रहते हैं। उनमें से प्रत्येक की स्थिति पल्योपम काल परिमित है। मंदर पर्वत के दक्षिण में, तिर्यक् दिशा में असंख्यात द्वीप समुद्रों को लांघते हुए अन्य जंबूद्वीप में बारह सहस्र योजन नीचे जाने पर इनकी राजधानी है। इनका वर्णन विजय राजधानी की तरह ज्ञातव्य है।

(२१)

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ - वेयड्ढे पव्वए वेयड्ढे पव्वए?

गोयमा! वेयड्ढे णं पव्वए भरहं वासं दुहा विभयमाणे २ चिट्ठइ, तंजहा -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दाहिणड्ढभरहं च उत्तरड्ढभरहं च। वेअड्ढगिरिकुमारे य इत्थ देवे महिड्ढीए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ। से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-वेयड्ढे पव्वए २।

अदुत्तरं च णं गोयमा! वेअड्ढस्स पव्वयस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते, जं ण कयाइ ण आसि, ण कयाइ ण अत्थि, ण कयाइ ण भविस्सइ, भुविं च, भवइ य, भविस्सइ य, धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए, णिच्चे।

शब्दार्थ - अदुत्तरं - इसके अतिरिक्त।

भावार्थ - हे भगवन्! वैताढ्य पर्वत का ऐसा नाम किस कारण है?

हे गौतम! वैताढ्य पर्वत भरत क्षेत्र को दक्षिणार्द्ध भरत एवं उत्तरार्द्ध भरत - दो भागों में बांटता हुआ स्थित है। उस पर वैताढ्य गिरिकुमार नामक देव निवास करता है, जो महान् वैभवशाली यावत् एक पल्योपम काल परिमित स्थिति युक्त है। इस कारण से वह पर्वत वैताढ्य कहा जाता है।

हे गौतम! इसके अतिरिक्त वैताढ्य पर्वत का नाम शाश्वतता का प्रतीक है। वह कभी नहीं था, कभी नहीं है, कभी नहीं होगा, ऐसा नहीं है। वह अतीत में था, वर्तमान में है, भविष्यत् में होगा तथा ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित एवं नित्य है।

उत्तरार्द्ध भरत स्वरूप

(२२)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, वेअड्ढस्स पव्वयस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे णामं वासे पण्णत्ते-पाईणपडीणायए, उदीण-दाहिणवित्थिण्णे, पलियंकसंठाणसंठिए, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, पच्चत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठे, गंगासिंधूहिं महाणईहिं तिभागपविभत्ते, दोण्णि अट्ठतीसे जोयणसए तिण्णि य एगूणवीसइ-भागे जोयणस्स विक्खंभेणं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं अट्ठारस बाणउए जोयणसए सत्त य एगूणवीसइभागे जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणं।

तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा, तहेव जाव चोद्दस जोयणसहस्साइं चत्तारि य एक्कहत्तरे जोयणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोयणस्स किंचिविसेसूणे आयामेणं पण्णत्ता।

तीसे धणुपिट्ठे दाहिणेणं चोद्दस जोयणसहस्साइं पंच अट्ठावीसे जोयणसए एक्कारस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं।

उत्तरड्ढभरहस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा जाव कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।

उत्तरड्ढभरहे णं भंते! वासे मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! ते णं मणुआ बहुसंघयणा जाव अप्पेगइया सिज्झंति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप के अंतर्गत उत्तरार्द्ध भरत नामक क्षेत्र कहाँ पर विद्यमान है?

हे गौतम! चुल्लहिमवंत वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, वैताढ्य पर्वत के उत्तर में, पूर्वीय लवण समुद्र के पश्चिम में, पश्चिमीय लवण समुद्र के पूर्व में, जंबूद्वीप के अंतर्गत उत्तरार्द्ध भरत नामक क्षेत्र अवस्थित है। वह पूर्व पश्चिम लंबा तथा उत्तर-दक्षिण चौड़ा है, पलंग के आकार के सदृश विद्यमान है। यह दोनों ओर लवण समुद्र का संस्पर्श करता है। वह अपने पूर्वी छोर से पूर्वीय लवण समुद्र का तथा पश्चिमी छोर से यावत् (पश्चिमीय लवण समुद्र का) स्पर्श करता है। वह गंगा महानदी एवं सिंधु महानदी द्वारा तीन भागों में बंटा हुआ है। उसकी चौड़ाई २३८ $\frac{३}{१९}$ योजन परिमित है।

उसकी बाहा - भुजाकृतिमय क्षेत्र विशेष पूर्व-पश्चिम में १८९२ $\frac{७\frac{१}{२}}{१९}$ योजन लम्बा है। उत्तर में उसकी जीवा पूर्व-पश्चिम लम्बी है। वह लवण समुद्र का दोनों ओर से संस्पर्श करती है यावत् उसकी लम्बाई १४४७१ $\frac{६}{१९}$ योजन से कुछ कम है। उसकी धनुष्यपीठिका दक्षिण में १४५२८ $\frac{११}{१९}$ योजन परिमित है। यह वर्णन परिक्षेप-परिधि की अपेक्षा से है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन! उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र की आकृति या स्वरूप किस प्रकार का है?

हे गौतम! उसका भूमिभाग अत्यधिक समतल तथा सुंदर है। वह मुरज के उपरितन भाग-चर्मपुट जैसा समतल है यावत् कृत्रिम-अकृत्रिम मणिओं से सोभित है।

हे भगवन्! उत्तरार्द्ध भरत में मनुष्यों का आकार किस प्रकार का है?

हे गौतम! उत्तरार्द्ध भरत में मनुष्यों का संहनन अनेक प्रकार का है यावत् उनमें से कतिपय समस्त कर्मों का क्षय कर सिद्ध होते हैं यावत् सब दुःखों का अंत करते हैं।

ऋषभकूट

(२३)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे वासे उसभकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! गंगाकुंडस्स पच्चत्थिमेणं, सिंधुकुंडस्स पुरत्थिमेणं, चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णितंबे, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे वासे उसहकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते - अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, दो जोयणाइं उव्वेहेणं, मूले अट्ठ जोयणाइं विक्खंभेणं, मज्झे छ जोयणाइं विक्खंभेणं, उवरिं चत्तारि जोयणाइं विक्खंभेणं, मूले साइरेगाइं पणवीसं जोयणाइं परिक्खेवेणं, मज्झे साइरेगाइं अट्ठारस जोयणाइं परिक्खेवेणं, उवरिं साइरेगाइं दुवालस जोयणाइं परिक्खेवेणं◆। मूले विच्छिण्णे, मज्झे संक्खित्ते, उप्पिं तणुए, गोपुच्छसंठाणसंठिए, सव्वजंबूणयामए, अच्छे, सण्हे जाव पडिरूवे।

◆ **पाठान्तरम् - मूले बारस जोअणाइं विक्खंभेणं, मज्झे अट्ठ जोअणाइं विक्खंभेणं, उप्पिं चत्तारि जोअणाइं विक्खंभेणं, मूले साइरेगाइं सत्ततीसं जोअणाइं परिक्खेवेणं, मज्झे साइरेगाइं पणवीसं जोअणाइं परिक्खेवेणं, उप्पिं साइरेगाइं बारस जोअणाइं परिक्खेवेणं।**

(यह मूल में बारह योजन, मध्य में आठ योजन तथा ऊपरितन भाग में चार योजन चौड़ा है। इसकी परिधि मूल में सैंतीस योजन से कुछ अधिक, मध्य में पच्चीस योजन से कुछ अधिक तथा ऊपरितन भाग में बारह योजन से कुछ अधिक है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से णं एगाए पउमवरवेइयाए तहेव जाव भवणं कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, देसऊणं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, अट्ठो तहेव, उप्पलाणि, पउमाणि जाव उसभे य एत्थ देवे महिड्ढीए जाव दाहिणेणं रायहाणी तहेव मंदरस्स पव्वयस्स जहा विजयस्स अविसेसियं।

॥ पढमो वक्खारो समत्तो ॥

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में, उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र में ऋषभकूट नामक पर्वत कहाँ स्थित है?

हे गौतम! गंगा महानदी के उद्गम स्थान के पश्चिम में, सिंधु महानदी के उद्गम स्थान के पूर्व में तथा चुल्लहिमवंत वर्षधर पर्वत के दक्षिण नितंब-मेखला, सन्निकटवर्ती प्रदेश में, जंबूद्वीप के अंतर्गत उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र में ऋषभकूट संज्ञक पर्वत है। वह आठ योजन ऊँचा, दो योजन गहरा भूमि में धंसा हुआ, मूल में आठ योजन चौड़ा, मध्य में छह योजन चौड़ा तथा अपरितन भाग में चार योजन चौड़ा है। मूल में पच्चीस योजन से कुछ अधिक परिधि युक्त, मध्य में अठारह योजन से कुछ अधिक परिधि युक्त तथा ऊपरितन भाग में बारह योजन से कुछ अधिक परिधि युक्त है। मूल विस्तीर्ण, मध्य में संकीर्ण तथा उपरितन भाग में तनुक-पतला है। वह गाय के पूँछ के आकार सदृश है। वह संपूर्णतः जंबूनद जाति के उच्च कोटि के स्वर्ण से निर्मित है, स्वच्छ, सुकोमल यावत् मनोज्ञ है।

वह एक पद्मवरवेदिका से परिवृत्त है यावत् उसके बीचों-बीच एक सुंदर प्रासाद कहा गया है यावत् वह प्रासाद एक कोस लंबा, आधा कोस चौड़ा तथा एक कोस से कुछ कम ऊँचा है। इसका वर्णन अन्यत्र आए वर्णन के अनुरूप जानना चाहिए। वहाँ उत्पल, पद्म यावत् शत-सहस्रपत्र कमल आदि हैं। वहाँ परम ऋद्धिशाली ऋषभ नामक देव निवास करता है यावत् दक्षिणी भाग में उसकी राजधानी स्थित है, जिसका वर्णन मंदर पर्वतवर्ती विजय देव की राजधानी के सदृश (अविशेष) है।

॥ प्रथम वक्षस्कार समाप्त ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बीओ वक्खारो - द्वितीय वक्षस्कार

भरतक्षेत्र में कालानुवर्तन

(२४)

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भारहे वासे कइविहे काले पण्णत्ते?

गोयमा! दुविहे काले पण्णत्ते, तं जहा - ओसप्पिणिकाले य उस्सप्पिणिकाले य।

ओसप्पिणिकाले णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! छव्विहे पण्णत्ते, तं जहा - सुसमसुसमाकाले १, सुसमाकाले २, सुसमदुस्समाकाले ३, दुस्समसुसमाकाले ४, दुस्समाकाले ५, दुस्समदुस्समाकाले ६।

उस्सप्पिणिकाले णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! छव्विहे पण्णत्ते, तंजहा - दुस्समदुस्समाकाले १ जाव सुसमसुसमाकाले ६।

एगमेगस्स णं भंते! मुहुत्तस्स केवइया उस्सासद्धा वियाहिया?

गोयमा! असंखिज्जाणं समयाणं समुदयसमिइसमागमेणं सा एगा आवलियत्ति वुच्चइ, संखिज्जाओ आवलियाओ ऊसासो, संखिज्जाओ आवलियाओ णीसासो,

हट्ठस्स अणवगल्लस्स, णिरुवकिट्ठस्स जंतुणो।
एगे ऊसासणीसासे, एस पाणुत्ति वुच्चई॥ १॥
सत्त पाणूइं से थोवे, सत्त थोवाइं से लवे।
लवाणं सत्तहत्तरीए, एस मुहुत्तेत्ति आहिए॥ २॥
तिण्णि सहस्सा सत्त य, सयाइं तेवत्तरिं च ऊसासा।
एस मुहुत्तो भणिओ, सव्वेहिं अणंतणाणीहिं॥ ३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एएणं मुहुत्तप्पमाणेणं तीसं मुहुत्ता अहोरत्तो, पण्णरस अहोरत्ता पक्खो, दो पक्खा मासो, दो मासा उऊ, तिण्णि उऊ अयणे, दो अयणा संवच्छरे, पंचसंवच्छरिए जुगे, वीसं जुगाइं वाससए, दस वाससयाइं वाससहस्से, सयं वाससहस्साणं वाससयसहस्से, चउरासीइं वाससयसहस्साइं से एगे पुव्वंगे, चउरासीइ पुव्वंगसयसहस्साइं से एगे पुव्वे, एवं बिगुणं बिगुणं णेयव्वं, तुडियंगे, तुडिए, अडडंगे, अडडे, अववंगे, अववे, हुहुयंगे, हुहुए, उप्पलंगे, उप्पले, पउमंगे, पउमे, णलिणंगे, णलिणे, अत्थणिउरंगे, अत्थणिउरे, अउयंगे, अउए, णउयंगे, णउए, पउयंगे, पउए, चूलियंगे, चूलिए, जाव चउरासीइं सीसपहेलि-यंगसयसहस्साइं सा एगा सीसपहेलिया। एताव ताव गणिए, एताव ताव गणियस्स विसए, तेणं परं ओवमिए।

शब्दार्थ - **ओसप्पिणिकाले** - अवसर्पिणी काल, **उस्सप्पिणिकाले** - उत्सर्पिणी काल, **मुहुत्तस्स** - मुहूर्त के, **उस्सासद्धा** - उच्छ्वास-निःश्वास, **आवलियाओ** - आवलिकाएँ, **अहोरत्तो** - दिन-रात, **पक्ख** - पक्ष, **उऊ** - ऋतु, **अयणे** - अयन-वर्षार्द्ध, **संवच्छरे** - संवत्सर-वर्ष, **पुव्वंगे** - पूर्वांग, **पुव्वे** - पूर्व, **विगुणं (बिगुण)** - विगुणित।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप के अंतर्गत भरत क्षेत्र में कितने प्रकार का काल परिज्ञापित हुआ है?

हे गौतम! अवसर्पिणी एवं उत्सर्पिणी के रूप में दो प्रकार का काल बतलाया गया है।

हे भगवन्! अवसर्पिणी काल कितने प्रकार का कहा गया है?

हे गौतम! अवसर्पिणी काल १. सुषम-सुषमा २. सुषमा ३. सुषम-दुःषमा ४. दुःषम-सुषमा ५. दुःषमा ६. दुःषम-दुःषमा के रूप में छह प्रकार का बतलाया गया है।

हे भगवन्! उत्सर्पिणी काल कितने प्रकार का होता है?

हे गौतम! वह दुःषम-दुःषमा से लेकर यावत् सुषम-सुषमा पर्यन्त छह प्रकार का है।

हे भगवन्! एक मुहूर्त्त में कितने उच्छ्वास-निःश्वास होते हैं?

हे गौतम! इस संदर्भ में यह ज्ञातव्य है कि असंख्यात समयों के समुदयात्मक-सम्मिलित काल को आवलिका कहा गया है। संख्यात आवलिकाओं का एक उच्छ्वास एवं उतनी ही आवलिकाओं का एक निःश्वास होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाथाएँ - हृष्ट-पुष्ट, अग्लान-अपरिश्रांत या अदीन तथा नीरोग व्यक्ति के एक उच्छ्वास-निःश्वास को प्राण कहा जाता है। सात प्राणों का एक स्तोक तथा सात स्तोकों का एक लव होता है। सतत्तर लवों का एक मुहूर्त्त होता है। इस प्रकार एक मुहूर्त्त में तीन हजार सात सौ तिहत्तर उच्छ्वास-निःश्वास होते हैं। समस्त अनन्त ज्ञानी सर्वज्ञ महापुरुषों ने ऐसा आख्यात किया है॥ १-३॥

इस मुहूर्त्त प्रमाण के अनुसार तीस मुहूर्त्तों का एक दिन-रात होता है। पन्द्रह अहोरात्र का एक पक्ष, दो पक्षों का एक मास, दो मासों की एक ऋतु, तीन ऋतुओं का एक अयन-वर्षार्द्ध एवं दो अयनों का एक संवत्सर या वर्ष होता है।

पाँच वर्षों का एक युग, बीस युगों का एक वर्ष शतक - शताब्दी, दस शताब्दियों की एक सहस्राब्दी, सौ शताब्दियों का एक लक्ष वर्ष, चौरासी लक्ष वर्षों का एक पूर्वांग, चौरासी लक्ष पूर्वांगों का एक पूर्व होता है। इसे विगुणित-विगुणित रूप में आगे इस प्रकार जानना चाहिए। चौरासी लक्ष पूर्वों का एक त्रुटितांग, चौरासी लक्ष त्रुटितांगों का एक त्रुटित, चौरासी लक्ष त्रुटितों का एक अडडांग (अततांग), चौरासी लक्ष अडडांगों का एक अडड (अतत), चौरासी लक्ष अडडों का एक अववांग, चौरासी लक्ष अववांगों का एक अवव, चौरासी लाख अववों का एक हुहुकांग, चौरासी लाख हुहुकांगों का एक हुहुक, चौरासी लक्ष हुहुकों का एक उत्पलांग, चौरासी लक्ष उत्पलांगों का एक उत्पल, चौरासी लाख उत्पलों का एक पद्मांग, चौरासी लाख पद्मांगों का एक पद्म, चौरासी लक्ष पद्मों का एक नलिनांग, चौरासी लक्ष नलिनांगों का एक नलिन, चौरासी लक्ष नलिनांगों का एक अर्थनिपुरांग, चौरासी लाख अर्थनिपुरांगों का एक अर्थनिपुर, चौरासी लाख अर्थनिपुरों का एक अयुतांग, चौरासी लक्ष अयुतांगों का एक अयुत, चौरासी लाख अयुतों का एक नयुतांग, चौरासी लक्ष नयुतांगों का एक नयुत, चौरासी लाख नयुतों का एक प्रयुतांग, चौरासी लाख प्रयुतांगों का एक प्रयुत, चौरासी लाख प्रयुतों का एक चूलिकांग, चौरासी लाख चूलिकांगों की एक चूलिका यावत् चौरासी लक्ष शीर्षप्रहेलिकांगों की एक शीर्षप्रहेलिका होती है। यहाँ तक - समय से लेकर शीर्षप्रहेलिका पर्यन्त काल का यह गणित का विषय है। उससे आगे उपमा पर आधारित वर्णन है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काल-विस्तार

(२५)

से किं तं उवमिए?

उवमिए दुविहे पण्णत्ते, तंजहा - पलिओवमे य सागरोवमे य।

से किं तं पलिओवमे?

पलिओवमस्स परूवणं करिस्सामि-परमाणु दुविहे पण्णत्ते, तंजहा - सुहुमे य वावहारिए य, अणंताणं सुहुमपरमाणुपुग्गलाणं समुदयसमिइसमागमेणं वावहारिए परमाणू णिप्फज्जइ, तत्थ णो सत्थं कमइ -

सत्थेण सुतिक्खेणवि, छेत्तुं भित्तुं च जं किर ण सक्का।
तं परमाणुं सिद्धा, वयंति आइं पमाणाणं॥ १॥

अणंताणं वावहारियपरमाणूणं समुदयसमिइसमागमेणं सा एगा उस्सण्हसण्हियाइ वा, सण्हसण्हियाइ वा, उड्ढरेणूइ वा, तसरेणूइ वा, रहरेणूइ वा, वालग्गेइ वा, लिक्खाइ वा, जूयाइ वा, जवमज्झेइ वा, उस्सेहंगुले इ वा, अट्ठ उस्सण्हसण्हियाओ सा एगा सण्हसण्हिया, अट्ठ सण्हसण्हियाओ सा एगा उड्ढरेणू, अट्ठ उड्ढरेणूओ सा एगा तसरेणू, अट्ठ तसरेणूओ सा एगा रहरेणू, अट्ठ रहरेणूओ से एगे देवकुरूत्तरकुराण मणुस्साणं वालग्गे, अट्ठ देवकुरूत्तरकुराण मणुस्साणं वालग्गा, से एगे हरिवासरम्मयवासाण मणुस्साणं वालग्गे, एवं हेमवयहेरण्णवयाण मणुस्साणं, पुव्वविदेहअवरविदेहाणं मणुस्साणं वालग्गा सा एगा लिक्खा, अट्ठ लिक्खाओ सा एगा जूया, अट्ठ जूयाओ से एगे जवमज्झे, अट्ठ जवमज्झा से एगे अंगुले, एएणं अंगुलप्पमाणेणं छ अंगुलाइं पाओ, बारस अंगुलाइं विहत्थी, चउवीसं अंगुलाइं रयणी, अडयालीसं अंगुलाइं कुच्छी, छण्णउइ अंगुलाइं से एगे अक्खेइ वा, दंडेइ वा, धणूइ वा, जुगेइ वा, मुसलेइ वा, णालियाइ वा। एएणं धणुप्पमाणेणं दो धणुसहस्साइं गाउयं, चत्तारि गाउयाइं जोयणं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एएणं जोयणप्पमाणेणं जे पल्ले, जोयणं आयामविक्खंभेणं, जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं से णं पल्ले एगाहियबेहियतेहिय उक्कोसेणं सत्तरत्तपरूढाणं संमट्ठे, सण्णिचिए, भरिए वालग्गकोडीणं। ते णं वालग्गा णो कुत्थेज्जा, णो परिविद्धंसेज्जा, णो अग्गी डहेज्जा, णो वाए हरेज्जा, णो पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। तओ णं वाससए वाससए एगमेगं वालग्गं अवहाय जावइएणं कालेणं से पल्ले खीणे, णीरए, णिल्लेवे णिट्ठिए भवइ, से तं पलिओवमे।

एएसिं पल्लाणं, कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया।
तं सागरोवमस्स उ, एगस्स भवे परीमाणं॥ १॥

एएणं सागरोवमप्पमाणेणं चत्तारि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमसुसमा १, तिण्णि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमा २, दो सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमदुस्समा ३, एगा सागरोवमकोडाकोडीओ बायालीसाए वाससहस्सेहिं ऊणिओ कालो दुस्समसुसमा ४, एक्कवीसं वाससहस्साइं कालो दुस्समा ५, एक्कवीसं वाससहस्साइं कालो दुस्समदुस्समा ६, पुणरवि उस्सप्पिणीए एक्कवीसं वाससहस्साइं कालो दुस्समदुस्समा १ एवं पडिलोमं णेयव्वं जाव चत्तारि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमसुसमा ६, दससागरोवमकोडाकोडीओ कालो ओसप्पिणी, दससागरोवमकोडाकोडीओ कालो उस्सप्पिणी, वीसं सागरोवम-कोडाकोडीओ कालो ओसप्पिणी-उस्सप्पिणी।

शब्दार्थ - **सुहुम** - सूक्ष्म, **समुदयसमिइसमागमेणं** - एकीभावापन्न समुदाय, **वावहारिए**-व्यावहारिक, **णिप्फज्जइ** - निष्पन्न होता है, **सत्थं** - शस्त्र, **कमइ**- काट सकता, **छेत्तुं-भित्तुं**- छिन्न-भिन्न करने में, **सुतिक्खेण** - तीखा, **वयंति** - कहते हैं, **आइं** - आदि, **लिक्खाओ** - लीख।

भावार्थ - हे भगवन्! औपमिक काल का क्या स्वरूप है - वह कितने प्रकार का कहा गया है?

हे गौतम! औपमिक काल पल्योपम तथा सागरोपम के रूप में दो प्रकार का है।

हे भगवन्! पल्योपम काल किस प्रकार का होता है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! सुनो, मैं पल्योपम काल की प्ररूपणा कर रहा हूँ, (इस संदर्भ में यह जानने योग्य है) सूक्ष्म एवं व्यावहारिक के रूप में परमाणु दो प्रकार का होता है। अनंत सूक्ष्म परमाणु पुद्गलों के एकीभावापन्न समुदाय से व्यावहारिक परमाणु की निष्पत्ति होती है। उसे शास्त्र काट नहीं सकता (इस संदर्भ में प्राप्य गाथा)

कोई भी व्यक्ति उसका तीक्ष्ण शास्त्र द्वारा छेदन-भेदन नहीं कर सकता। सर्वज्ञों ने उसे परमाणु कहा है। वह सभी परमाणुओं का मूल कारण है।

अनंत व्यावहारिक परमाणुओं के संयोग से एक उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका होती है। श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका, ऊर्ध्वरेणु, त्रसरेणु, रथरेणु●, बालाग्र, लीख, यूका-जूं, यवमध्यभाग, उत्सेधांगुल के रूप में उसके क्रमशः स्थूल रूप हैं। इनका विस्तार इस प्रकार है -

आठ उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिकाओं की एक श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका, आठ श्लक्ष्णश्लक्ष्णिकाओं का एक ऊर्ध्वरेणु, आठ ऊर्ध्वरेणुओं का एक त्रसरेणु, आठ त्रसरेणुओं का एक रथरेणु, आठ रथरेणुओं का देवकुरु तथा उत्तरकुरु निवासियों का एक बालाग्र, आठ बालाग्रों का हरिवर्ष एवं रम्यकवर्ष के निवासी मानवों का एक बालाग्र, इन आठ बालाग्रों का पूर्व विदेह एवं अपरविदेह निवासी मनुष्यों का एक बालाग्र, इन आठ बालाग्रों की एक लीख होती है, आठ लीखों की एक यूका-जूं होती है। आठ जूओं का एक यवमध्य (जौ के बीच का भाग) होता है। आठ यवमध्यों का एक अंगुल होता है। छह अंगुलों का एक पाद-पैर का मध्य भाग होता है। बारह अंगुलों की एक वितस्ती (कनिष्ठिका से अंगुष्ठ पर्यन्त पंजे का विस्तीर्ण रूप) होती है। चौबीस अंगुलियों की एक रत्नी (भुजा का कोहनी से अंगुलाग्र पर्यन्त भाग) होती है। अड़तालीस अंगुलों की एक कुक्षि होती है। छियानवे अंगुलों की एक अक्ष (शकट का भाग विशेष) होता है। इसी प्रकार एक दण्ड, धनुष, जुआ, मूसल तथा नलिका का विस्तार भी ज्ञातव्य है। दो सहस्र धनुषों का एक गव्यूत-कोस होता है। चार कोसों का एक योजन होता है।

इस योजन परिमाण के अनुसार एक योजन लम्बा-चौड़ा, एक योजन ऊँचा तथा इससे तीन गुनी परिधि युक्त पल्य-धान रखने का कोठा हो। देवकुरु तथा उत्तरकुरु में जन्मे एक दिन, दो दिन, तीन दिन-इसी क्रम में अधिकाधिक सात दिन-रात के यौगलिक के प्ररूढ - उगे हुए बालाग्रों-बालों के अग्रभाग से उस पल्य को इतने सघन, ठोस, निचित-ठसाठस, निबिड रूप में इस प्रकार भरा

● रथरेणु - रथ के चलते समय उड़ने वाले रज कण।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाए कि वे बालाग्र कुरेदे न जा सकें, परिविद्ध न किए जा सकें - उनमें सूई भी चुभोई ना जा सके, आग से जलाए न जा सकें, वायु द्वारा उड़ाए न जा सकें, सड़ गल न सकें। तत्पश्चात् सौ-सौ वर्ष के अनंतर एक-एक बाल के अग्रभाग को निकाले जाते रहने पर जब वह कोठा सर्वथा रिक्त-खाली, रजकण रहित-धूल के कणों के समान छोटे-छोटे बालाग्रों से सर्वथा शून्य हो जाए, निर्लेप हो जाए-कहीं कोई सटा हुआ, चिपका हुआ बालाग्र न रह जाए, सर्वथा खाली हो जाने की इस प्रक्रिया में जितना समय लगे, उसे एक पल्योपम कहा जाता है।

इस प्रकार के कोटानुकोटि पल्योपमों का दस गुणित एक सागरोपम होता है।

सुषम-सुषमा काल का परिमाण चार कोड़ाकोड़ी सागरोपम, सुषमा का काल प्रमाण तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपम, सुषम-दुःषमा का काल प्रमाण दो कोड़ाकोड़ी सागरोपम, दुःषम-सुषमा का काल प्रमाण एक कोड़ाकोड़ी सागरोपम से बयालीस हजार वर्ष कम, दुःषमा का काल प्रमाण इक्कीस हजार वर्ष तथा दुःषम-दुःषमा का काल प्रमाण इक्कीस हजार वर्ष है।

उत्सर्पिणी का काल प्रमाण इससे विपरीत–उल्टा होता है। उसमें दुःषम-दुःषमा का काल प्रमाण इक्कीस हजार वर्ष होता है यावत् सुषम-सुषमा का काल प्रमाण चार कोड़ाकोड़ी सागरोपम है। इस प्रकार अवसर्पिणी का काल प्रमाण दस सागरोपम कोटानुकोटि एवं उत्सर्पिणी का कालक्रम भी दस कोटानुकोटि सागरोपम होता है। उत्सर्पिणी एवं अवसर्पिणी का सम्मिलित काल प्रमाण बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम है।

अवसर्पिणी का प्रथम आरक : सुषम-सुषमा

(२६)

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भरहे वासे इमीसे ओस्सप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए उत्तमकट्ठपत्ताए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे होत्था?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे होत्था, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा जाव णाणामणिपंचवण्णेहिं तणेहि य मणीहि य उवसोभिए, तंजहा - किण्हेहिं जाव सुक्किल्लेहिं। एवं वण्णो, गंधो, रसो, फासो, सद्दो य तणाण य मणीण य भाणियव्वो जाव तत्थ णं बहवे मणुस्सा मणुस्सीओ य आसयंति, सयंति, चिट्ठंति, णिसीयंति, तुयट्टंति, हसंति, रमंति, ललंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसे णं समाए भरहे वासे बहवे उद्दाला कुद्दाला मुद्दाला कयमाला णट्टमाला दंतमाला णागमाला सिंगमाला संखमाला सेयमाला णामं दुमगणा पण्णत्ता, कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूला, मूलमंतो, कंदमंतो, बीयमंतो, पत्तेहि य पुप्फेहि य फलेहि य उच्छण्णपडिच्छण्णा सिरीए अईव २ उवसोभेमाणा चिट्ठंति।

तीसे णं समाए भरहे वासे तत्थ तत्थ बहवे भेरुतालवणाइं हेरुतालवणाइं मेरुतालवणाइं पभयालवणाइं सालवणाइं सरलवणाइं सत्तिवण्णवणाइं पूयफलिवणाइं खज्जूरीवणाइं णालिएरीवणाइं कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूलाइं जाव चिट्ठंति।

तीसे णं समाए भरहे वासे तत्थ तत्थ बहवे सेरियागुम्मा णोमालियागुम्मा कोरंटयगुम्मा बंधुजीवगगुम्मा मणोज्जगुम्मा बीयगुम्मा बाणगुम्मा कणइरगुम्मा कुज्जायगुम्मा सिंदुवारगुम्मा मोग्गरगुम्मा जूहियागुम्मा मल्लियागुम्मा वासंतियागुम्मा वत्थुलगुम्मा कत्थुलगुम्मा सेवालगुम्मा अगत्थिगुम्मा मगदंतियागुम्मा चंपकगुम्मा जाइगुम्मा णवणीइयागुम्मा कुंदगुम्मा महाजाइगुम्मा रम्मा महामेहणिकुरंबभूया दसद्धवण्णं कुसुमं कुसुमेंति, जे णं भरहे वासे बहुसमरमणिज्जं भूमिभागं वायविधुयग्गसाला मुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं करेंति।

तीसे णं समाए भरहे वासे तत्थ तत्थ तहिं तहिं बहुईओ पउमलयाओ जाव सामलयाओ णिच्चं कुसुमियाओ, जाव लयावण्णओ।

तीसे णं समाए भरहे वासे तत्थ तत्थ तहिं तहिं बहुईओ वणराईओ पण्णत्ताओ-किण्हाओ, किण्होभासाओ जाव मणोहराओ, रयमत्तगछप्पयकोरंग-भिंगारग-कोंडलग-जीवंजीवग-णंदीमुह-कविल-पिंगलक्खग-कारंडव-चक्कवायग-कलहंस-हंस-सारस-अणेगसउणगण-मिहुणविअरिआओ, सद्दुण्ण-इयमहुरसरणाइयाओ, संपिंडियदरियभमरमहुयरिपहकरपरिलिंतमत्त-छप्पयकुसुमासवलोल-महुरगुमगुमंतगुंजंतदेसभागाओ, अब्भिंतरपुप्फ-फलाओ, बाहिरपत्तोच्छण्णाओ, पत्तेहि य पुप्फेहि य ओच्छण्णवलिच्छत्ताओ, साउफलाओ, णिरोययाओ, अकंटयाओ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णाणाविहगुच्छगुम्ममंडवगसोहियाओ, विचित्तसुह-केउभूयाओ, वावी-पुक्खरिणी-दीहियासुणिवेसियरम्मजालहरयाओ, पिंडिम-णीहारिमसुगंधि-सुहसुरभिमणहरं च महयागंधद्धाणिं मुयंताओ, सव्वोउयपुप्फ-फलसमिद्धाओ, सुरम्माओ पासाईयाओ, दरिसणिज्जाओ, अभिरूवाओ, पडिरूवाओ।

शब्दार्थ - **उत्तमकट्ठपत्ताए** - उत्कर्ष की पराकाष्ठा में, **उच्छण्णपडिच्छण्णा** - छाए हुए-फैले हुए, **सेरिआ** - सेरिका, **गुम्मा** - गुल्म, **णोमालिआ** - नवमालिका, **वायविधुयग्गसाला** - वायु से प्रकंपित अपनी शाखाओं के अग्रभाग से, **मुक्क**- मुक्त-गिरते हुए, **वणराइओ**- वनराजियाँ-वनपक्तियाँ, **सद्दुणइय**- प्रतिध्वनित, **छप्पय** - भौंरा, **अकंटयाओ**- कंटकरहित, **णिरोययाओ** - स्वास्थ्यकर, **जीवंजीवग** - चकोर, **कलहंस** - बतख।

भावार्थ - गौतम स्वामी ने भगवान् महावीर स्वामी से जिज्ञासा की -

हे भगवन्! जंबूद्वीप के अंतर्गत भरत क्षेत्र में जब इस अवसर्पिणी काल का सुषम-सुषमा नामक प्रथम आरक अपने उत्कर्ष की पराकाष्ठा में था, भरत क्षेत्र का आकार-प्रकार-स्वरूप या अवस्थिति किस प्रकार की थी? कृपया फरमाएँ।

भगवान् ने प्रतिपादित किया -

हे गौतम! तब भरत क्षेत्र का भूमिभाग बहुत ही समतल एवं रमणीय था। वह मुरज-ढोलक के ऊपर के चर्मनद्ध चमड़े से मढे हुए ऊपरी भाग की तरह था यावत् भिन्न-भिन्न प्रकार की पंचरंगी मणियों के जैसे वर्णयुक्त तृणों से, मणियों से वह सुशोभित था। वे कृष्ण यावत् शुक्ल-सफेद रंग के थे। उन तृणों एवं मणियों के वर्ण, गंध, स्पर्श, शब्द पूर्व वर्णन के अनुरूप कथनीय हैं। वहाँ बहुत से मनुष्य एवं स्त्रियाँ आश्रय लेते, सोते, खड़े होते, बैठते, करवट बदलते या देह को मोड़ते, हंसते, रमण करते थे।

ऐसा कहा गया है, भरतक्षेत्र में तब उद्दाल, कुद्दाल, मुद्दाल, कृन्तमाल, नृत्तमाल, दंतमाल, नागमाल, शृंगमाल, शंखमाल तथा श्वेतमाल संज्ञक वृक्ष थे। उनके मूल-जड़ें डाभ तथा अन्य प्रकार के तृणों से रहित थीं। वे उत्तम कंद, उत्तम मूल एवं उत्तम बीज युक्त थे। वे पत्र, पुष्प एवं फलों से आच्छादित रहते थे। अत्यंत कांति - आभामय थे।

तब भरतक्षेत्र में यत्र-तत्र अनेकानेक भेरूताल, हेरूताल, मेरूताल, प्रभताल, साल, सरल, सप्तपर्ण, पूगीफल-सुपारी, खजूर तथा नारियल के वृक्षों के वन थे। उनकी जड़ें कुश एवं अन्य प्रकार के तृणों से रहित थीं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भरतक्षेत्र में उस समय भिन्न-भिन्न स्थानों में अनेक सेरिका, नवमालिका, कोरंटक, बंधुजीवक, मनोऽवद्य, बीज, बाण, कर्णिकार, कुब्जक, सिंदुवार, मोगरे, यूथिका, मल्लिका, वासंतिका, वस्तुल, कस्तुल, सेवाल, अगस्ति, मगदंतिका, चंपक, जाती, नवनीतिका, कुंद, महाजाती - एतत संज्ञक वृक्षों और लताओं के गुल्म-समूह थे। वे रमणीय मेघ घटाओं की ज्यों गहरे तथा पाँच रंगों के पुष्पों से युक्त थे। वायु से हिलने के कारण उनकी शाखाओं के अग्रभाग से गिरते हुए पुष्प अत्यंत समतल तथा सुंदर भू भाग को सुगंधित बनाते थे।

उस समय भरतक्षेत्र में अनेकानेक पद्मलताएँ यावत् श्यामलताएँ आदि बेलें थीं, जो सदैव नित्य फूलों से युक्त रहती थीं यावत् लताओं का वर्णन पूर्ववत् ग्राह्य है।

तब भरतक्षेत्र में यत्र-तत्र बहुत सी वनों की कतारें थीं। वे कृष्ण आभायुक्त यावत् मनोहर थीं। पुष्पों के मकरंद की सुगंधि से मत्त बने भ्रमर, कोरंक, भृंगारक, कुंडलक, चकोर, नंदीमुख, कपिल, पिंगलाक्षक, करंडक, चक्रवाल, बतख, हंस, सारस आदि अनेक पक्षियों के युगल उनमें विहरण करते थे। वे वन पंक्तियाँ पक्षियों की कर्णप्रिय ध्वनि से सदा प्रतिध्वनित रहती थीं। उन वनपंक्तियों के प्रदेश फूलों के आसवपान हेतु उत्सुक मधुर गुंजन करते हुए भ्रमरी समूह से परिवृत, दृप्त, मत्त, भ्रमरों के मधुर शब्द से मुखरित थे। वे वनपंक्तियाँ भीतर की ओर फलों तथा पुष्पों से तथा बाहर की ओर पत्तों से आच्छन्न थीं। इस प्रकार पत्तों और पुष्पों से सर्वथा-चारों ओर से परिव्याप्त थीं। वहाँ के फल स्वादिष्ट थे। पर्यावरण स्वास्थ्यप्रद था। वे वनराजियाँ निष्कंटक-कांटों से रहित थीं। वे भिन्न-भिन्न प्रकार के पुष्पों के गुच्छों, लताओं के गुल्मों एवं मंडपों से सुशोभित थीं। ऐसा प्रतीत होता था, मानों वे उन वनपंक्तियों की सुंदर ध्वजाएँ हों। वहाँ विद्यमान वापी, पुष्पकरिणी तथा दीर्घिका - इन जलाशयों के ऊपर सुंदर गवाक्ष-झरोखे बने थे। उन वनपंक्तियों से निकलती हुई सुगंध पुंजीभूत होकर बहुत दूर तक फैल जाती थीं, बड़ी मनोज्ञ थी, चित्त को प्रसन्न करती थी। उन वनराजियों में समस्त ऋतुओं में विकसित होने वाले पुष्प तथा निष्पन्न होने वाले फल विपुल मात्रा में उत्पन्न होते थे। वे वनराजियाँ अत्यंत रमणीय, चित्ताह्लादक, दर्शनीय, अभिरूप - मन को अपने में रमा लेने वाली तथा प्रतिरूप - मन को वशंगत करने वाली थीं।

विवेचन - इस सूत्र में जलाशयों का जो वर्णन आया है, वह प्राचीन भारतीय शिल्प की विशेषताओं का सूचन करता है। वापियों का प्रयोग उन जलाशयों के लिए होता रहा है, जो चतुष्कोण हों। पुष्पकरिणी उन जलाशयों के लिए प्रयुक्त होता रहा है, जो गोलाकार हो। दीर्घिका उन जलाशयों का द्योतक रहा है, जो सीधे-लम्बे हो, चौड़ाई में कम हो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२७)

तीसे णं समाए भरहे वासे तत्थ तत्थ तहिं तहिं मत्तंगा णामं दुमगणा पण्णत्ता, जहा से चंदप्पभा जाव छण्णपडिच्छण्णा चिट्ठंति, एवं जाव अणिगणा णामं दुमगणा पण्णत्ता।

शब्दार्थ - दुमगणा - वृक्ष समूह।

भावार्थ - उस समय भरतक्षेत्र में अनेक स्थानों पर मत्तांग नामक वृक्ष समूह थे, ऐसा बतलाया गया है। वे चन्द्र की प्रभा के समान यावत् छायित-प्रतिच्छायित-सघन रूप में छाए हुए एवं विस्तार से फैले हुए थे यावत् अनग्न पर्यन्त (सभी दस प्रकार के) वृक्ष वहाँ प्रतिपादित हुए हैं।

विवेचन - प्राचीन, प्रागेतिहासिक भारतीय वाङ्मय की वैदिक, जैन आदि परंपराओं में वृक्षों का विशेष रूप से उल्लेख होता रहा है। यहाँ वर्णित वृक्ष उन विशिष्ट दिव्य शक्ति से संपन्न पादपों के सूचक रहे हैं, जो सभी अभीप्सित वस्तुओं को प्रदान करने में सक्षम थे। जैनागम सम्मत, यौगलिक काल में सभी मनुष्यों की आवश्यकताएँ ऐसे वृक्षों से पूर्ण होती थीं। आवश्यकता पूर्ति के लिए मनुष्यों को कोई उद्यम नहीं करना होता था। उसे अकर्मभूमि काल कहा गया है।

वृक्षों के दस प्रकार बतलाए गए हैं। यहाँ प्रथम मत्तांग तथा अन्तिम अनग्न का ही उल्लेख हुआ है। इन सभी के नाम एवं विशेषताएँ निम्नांकित हैं -

१. **मत्तांग** - मादक रस प्रदायक।

२. **भृत्तांग** - विविध भोजन एवं पात्र प्रदान करने वाले।

३. **त्रुटितांग** - अनेक प्रकार के वाद्य यंत्रप्रद।

४. **दीपशिखा** - प्रकाश देने वाले।

५. **ज्योतिषिक** - उद्योत प्रदायक।

६. **चित्रांग** - माला आदि देने वाले।

७. **चित्ररस** - विभिन्न प्रकार के रस प्रदान करने वाले।

८. **मण्यंग** - मणियाँ एवं आभूषण देने वाले।

९. **अनग्न** - नग्नता को ढांपने वाले-वस्त्र संबंधी आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाले।

१०. **गेहाकार** - आवास स्थान प्रदान करने वाले।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२८)

तीसे णं भंते! समाए भरहे वासे मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! ते णं मणुया सुपइट्ठियकुम्मचारुचलणा जाव लक्खणवंजण-गुणोववेया सुजायसुविभत्तसंगयंगा पासादीया जाव पडिरूवा।

तीसे णं भंते! समाए भरहे वासे मणुईणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! ताओ णं मणुईओ सुजायसव्वंग-सुंदरीओ, पहाणमहिलागुणेहिं जुत्ताओ, अइक्कंत-विसप्प-माणमउयाओ, सुकुमाल-कुम्मसंठियविसिट्ठचलणा, उज्जुमउयपीवरसुसाहयंगुलीओ, अब्भुण्णय-रइय-तलिण-तंब-सूइ-णिद्ध-णक्खाओ, रोमरहिय-वट्ट-लट्ठ-संठियअजहण्ण-पसत्थलक्खणअकोप्पजंघ-जुयलाओ, सुणिम्मियसुगूढजाणुमंसलसुबद्धसंधीओ, कयलीखंभाइरेग-संठिय-णिव्वण-सुकुमाल-मउय-मंसल-अविरल-समसंहिय-सुजाय-वट्ट-पीवरणिरं-तरोरुओ, अट्ठावयवीइयपट्ठसंठियपसत्थविच्छिण्णपिहुलसोणीओ वयणायामप्प-माणदुगुणि-अविसाल-मंसलसुबद्धजहणवरधारिणीओ, वज्जविराइयप्पसत्थ-लक्खण-णिरोदरतिवलियवलियतणुणयमज्झिमाओ, उज्जुयसमसहियजच्च-तणुकसिण-णिद्धआइज्ज-लडहसुजायसुविभत्त-कंतसोभंतरुइलरमणिज्जरोम-राईओ, गंगावत्त-पयाहिणावत्ततरंग-भंगुर-रविकिरण-तरुणबोहिय-अकोसायंत-पउमगंभीर-वियडणाभीओ, अणुब्भडपसत्थपीणकुच्छीओ, सण्णयपासाओ, संगयपासाओ, सुजाय-पासाओ, मियमाइयपीणरइयपासाओ, अकरंडुयकणग-रुयगणिम्मलसुजायणिरुवहयगायलट्ठीओ, कंचणकलसप्पमाणसमसहियलट्ठ-चुच्चुयामेलगजमल-जुयलवट्टियअब्भुण्णय-पीणरइय-पीवर-पओहराओ, भुयंगअणुपुव्वतणुय-पुच्छवट्ट-संहियणमियआइज्जललियबाहाओ, तंबणहाओ, मंसलग्गहत्थाओ, पीवरकोमलवरंगुलियाओ, णिद्धपाणिलेहाओ, रविससिसंख-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चक्कसोत्थिय-सुविभत्त-सुविरइयपाणिलेहाओ, पीणुण्णयकरकक्खवक्ख-वत्थिप्पएसाओ, पडिपुण्णगलकवोलाओ, चउरंगुल-सुप्पमाणकंबुवरसरिस-गीवाओ, मंसलसंठिय-पसत्थहणुगाओ, दाडिमपुप्फप्पगासपीवर-पलंबकुंचिय-वराधराओ, सुंदरुत्त-रोट्ठाओ, दहिदगरयचंदकुंदवासंतिमउलधवलअच्छिद्दविमल-दसणाओ, रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहाओ, कणवीरमउलाकुडिल-अब्भुग्गयउज्जुतुंग-णासाओ, सारयणवकमलकुमुय-कुवलयविमलदलणियर-सरिसलक्खण-पसत्थअजिम्हकंत-णयणाओ, पत्तलधवलाययआतंबलोयणाओ, आणामिय-चावरुइलकिण्हब्भराइसंगयसुजायभुमगाओ, अल्लीणपमाणजुत्त-सवणाओ, सुसवणाओ, पीणमट्ठगंडलेहाओ, चउरंसपसत्थसमणिडालाओ, कोमुईरयणियर-विमलपडिपुण्णसोमवयणाओ, छत्तुण्णयउत्तमंगाओ, अकविलसुसिणिद्ध-सुगंधदीह-सिरयाओ, छत्त १. ज्झय २. जूय ३. थूभ-दामणि ४. कमंडलु ५. कलस ६. वावि ७. सोत्थिय ८. पडाग ९. जव १०. मच्छ ११. कुम्म १२. रहवर १३. मगरज्झय १४. अंक १५. सुय १६. थाल १७. अंकुस १८. अट्ठावय १९. सुपइट्ठग २०. मऊर २१. सिरिअभिसेअ २२. तोरण २३. मेइणि २४. उदहि २५. वरभवण २६. गिरि २७. वरआयंस २८. सलीलगय २९. उसभ ३०. सीह ३१. चामर ३२. उत्तमपसत्थबत्तीसलक्खणधरीओ, हंससरिसगईओ, कोइल-महुरगिरसुस्सराओ, कंताओ, सव्वस्स अणुमयाओ, ववगयवलिपलियवंग-दुव्वण्णवाहिदोहग्गसोग-मुक्काओ, उच्चत्तेण य णराण थोवूणमुस्सियाओ, सभावसिंगारचारुवेसाओ, संगयगयहसियभणिय-चिट्ठिय-विलास-संलाव-णिउणजुत्तोवयारकुसलाओ, सुंदरथणजहणवयणकर-चलण-णयण-लावण्णवण्ण-रूवजोव्वण-विलासकलिआओ, णंदणवणविवर-चारिणीउव्व अच्छराओ, भरहवासमाणुसच्छराओ, अच्छेरगपेच्छणिज्जाओ, पासाईयाओ जाव पडिरूवाओ।

ते णं मणुआ ओहस्सरा, हंसस्सरा, कोंचस्सरा, णंदिस्सरा, णंदिघोसा, सीहस्सरा, सीहघोसा, सुस्सरा, सूसरणिग्घोसा, छायाउज्जोवियंगमंगा, वज्जरिसहणारायसंघयणा, समचउरसंठाण संठिया, छविणिरायंका, अणुलोम-वाउवेगा, कंकग्गहणी, कवोयपरिणामा, सउणिपोसपिट्ठंतरोरुपरिणया, छद्धणुसहस्समूसिया।

तेसि णं मणुआणं बे छप्पण्णा पिट्ठकरंडगसया पण्णत्ता समणाउओ! पउमुप्पलगंधसरिसणीसाससुरभिवयणा, ते णं मणुया पगईउवसंता, पगईपयणु-कोहमाणमायालोभा, मिउमद्दवसंपण्णा, अल्लीणा, भद्दगा, विणीया, अप्पिच्छा, असण्णिहिसंचया, विडिमंतरपरिवसणा, जहिच्छियकामकामिणो।

शब्दार्थ - **मणुईणं** - नारियों का, **पहाण** - प्रधान-उत्तम, **अइक्कंत** - अत्यंत कांत, **विसप्प** - विस्तृत, **माणमउया** - समुचित प्रमाण युक्त, **उज्जु** - ऋतु-सीधी, **मउय** - मृदुल, **लुसाह** - ससंगत, **अब्भुण्णय** - अभ्युन्नत-ऊँची उठी हुई, **तलिण** - पतले, **वट्ट** - गोल, **लट्ठ** - सुश्लिष्ठ, **अजहण्ण** - उत्कृष्ट (अजघन्य), **पसत्थ** - प्रशस्त, **अकोप्प** - सर्वथा प्रिय, **सुणिम्मिय** - सुनिर्मित, **कयली खंभाइरेक** - केले के स्तंभ के आकार से भी अधिक सुंदर, **णिव्वण** - निर्व्रण-घावों के चिह्नों से रहित, **अट्ठावय** - अष्टापद-द्यूत क्रीड़ा का पट, **सोणिओ** - उरू स्थल के पृष्ठवर्ती परिपुष्ट अंग, **पिहुल** - पृथक्, **वयण** - शरीर, **जहण** - जघन प्रदेश, **जच्च** - जात्य-उत्तम, **सहिअ** - सघन-परस्पर मिले हुए, **कसिण** - काले, **आइज्ज** - आदेय-चाहने योग्य, **लडह** - लालित्य युक्त, **रूइल** - रुचिकर, **णिरोदर** - विकृत उदर रहित, **तिवलि** - तीन वलय-रेखाएँ, **गंगावत्त** - गंगानदी का जल भंवर, **पयाहिणावत्त** - दाहिनी और घूमती हुई (दक्षिणावर्त्त), **भंगुर** - सुंदर, **बोहिय** - विकसित होते हुए, **वियड** - विकट-गहरी, **आकोसायंत** - कमल कोश, **अणुब्भड** - अनुद्भट-अस्पष्ट, **सण्णय** - क्रमशः संकड़े, **अकरंदुय** - उपयुक्त आकार सहित, **चुच्चु** - स्तनाग्र, **आमेलग** - परस्पर मिले हुए, **पओहराओ** - पयोधर-स्तन, **भुयंग** - सर्प, **अणुपुव्व** - क्रमशः, **गोपुच्छवट्ट**-गाय के पूंछ की तरह गोल, **णमिय** - झुकी हुई, **वक्ख** - वक्ष स्थल, **वत्थि** - वस्तिप्रदेश, **गल** - गला, **कपोल** - गाल, **कंबु** - शंख, **हणु**- ठुड्डी, **दगं** - जलकण, **कणवीर** - कनेर, **अजिम्ह** - सीधे, **पत्तल** - पलक, **भुमगाओ** - भौंहे, **आणामिय**- आनामित-खींचे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हुए, **अब्भ** - बादल, **गंडलेहा** - कपोल पाली, **णिडाल** - ललाट, **रयणियर**- चंद्रमा (रजनीकर), **उत्तमांग**- मस्तक, **सिरयाओ** - केश, **दीह** - दीर्घ-लम्बे, **वलि** - झुर्री, **ववगय**- व्यपगत-रहित, **पलिय** - श्वेत बाल, **दोहग्ग** - दुर्भाग्य, **ओहस्सरा** - ओघस्वर-गंभीर स्वर युक्त, **छाया** - प्रभा, **गहणी** - गुदाशय, **पगइय** - प्रकृति।

भावार्थ - हे भगवन्! उस काल में भरत क्षेत्र के मनुष्यों का आकार, भाव, स्वरूप किस प्रकार का बतलाया गया है?

हे गौतम! उस समय के मनुष्य बड़े मनोहर थे। उनके पैरों की रचना बड़ी सुंदर थी। ये कच्छप की ज्यों ऊँचे उठे हुए थे, यावत् उनके अंगोपांग उत्तम लक्षण, शुभ चिह्न आदि श्रेष्ठ गुणयुक्त थे। वे बड़े ही मनोरम और चेतःप्रसादक थे यावत् सुंदर रूप युक्त थे।

हे भगवन्! उस समय भरत क्षेत्र में नारियों का आकार-प्रकार कैसा था?

हे गौतम! उस काल की नारियों की देह के सभी अंग सुंदर एवं सौष्ठव युक्त होते थे। उनमें उत्तम स्त्रियों के सभी गुण प्राप्त होते थे। उनके पैर बड़े ही सुन्दर, समुचित प्रमाण युक्त, सुकोमल, सुकुमार एवं कच्छप के आकार की ज्यों सुप्रतिष्ठित थे। उनके पैरों की अंगुलियाँ सीधी, कोमल, परिपुष्ट एवं सुसंगत थीं। अंगुलियों के नख समुन्नत, देखने में सुखप्रद, पतले तथा ताँबे के रंग के हलके लाल, निर्मल तथा चिकने थे। उनकी दोनों पिण्डलियाँ रोम रहित, गोल, रमणीय संस्थान युक्त, उत्तम तथा प्रशस्त लक्षण युक्त, सुगूढ-मांसलता के कारण अभीप्सित थीं। उनके घुटने सुनिर्मित, सुंदर रूप में रचित, मांसल, सुदृढ़ स्नायु बंधन सहित थे। उनके उरू स्थल केले के तने जैसे आकार से भी अधिक मनोहर, घावों से रहित, परस्पर सटे हुए, समान प्रमाण युक्त, सुगठित, सुजात-स्वभावतः सुंदर रूप युक्त, गोलाकार, मांसल, अन्तर रहित थे। उनके श्रोणिप्रदेश द्यूतक्रीड़ा के काष्ठ फलक की ज्यों सुव्यवस्थित, परिपुष्ट, उत्तम, पृथक्-पृथक्, स्थूल, शरीर के विस्तार के प्रमाण की दृष्टि से दुगुने विशाल, मांसल, सुगठित, जघन प्रदेश युक्त थे। उनकी देह के मध्य भाग हीरे के समान सुहावने, श्रेष्ठ लक्षण युक्त, विकृत-बैडोल उदर रहित, तीन रेखाओं से युक्त, गोलाकृतिमय एवं तनुक या पतले थे। उनकी रोमराजि सरल, एक समान, सघन, उत्तम, पतले, काले, आदेय, लालित्य युक्त, सुरचित, सुविभक्त-सुलझी हुई, कांतियुक्त, शोभामय, रुचिकर थी।

उनकी नाभि गंगा के भंवर की ज्यों वर्तुल, दाहिनी ओर चक्कर काटती हुई तरंगों की ज्यों घुमाव लिए हुए, सुंदर, उदीयमान सूर्य की किरणों से विकासोन्मुख कमलों के सदृश गंभीर एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गहरी थी। उनके कुक्षि प्रदेश-उदर के दोनों पार्श्व मांसलता के कारण अस्पष्ट, उत्तम लक्षण युक्त, शरीर के परिमाण के अनुरूप सुंदर, सुनिष्पन्न, समुचित परिमाण में परिपुष्ट तथा मनोहर थे। उनकी देहयष्टि उपयुक्त, सुसंगत आकार एवं परिपुष्टि लिए थी, जिससे उनके नीचे की अस्थियाँ दृश्यमान नहीं थीं। वे स्वर्ण की ज्यों उद्दीप्त, निर्मल, सुरचित, रुग्णता आदि रहित थीं। उनके स्तन स्वर्णघट के समान, परस्पर समान, मिले हुए तथा सुंदर अग्रभाग युक्त, समश्रेणिक, गोल, उभरे हुए, कठोर एवं स्थूल थे। उनकी भुजाएँ साँप की तरह क्रमशः नीचे की ओर पतली, गोपुच्छ की ज्यों गोल, परस्पर एक समान झुकी हुई, देखने में रुचिकर तथा लालित्यमय थीं। उनके नाखून ताँबे की ज्यों लालिमा लिए थे। हस्ताग्र-हथेलियाँ मांसलता लिए थीं। अंगुलियाँ परिपुष्ट, कोमल और प्रशस्त थीं। उनकी हस्तरेखाएँ स्निग्धता लिए थीं। उनके हथेलियों में सूर्य, चंद्र, शंख, चक्र एवं स्वस्तिक के स्पष्ट चिह्न थे। उनके कक्ष प्रदेश-काँख, वक्षस्थल तथा वस्तिप्रदेश परिपुष्ट एवं उन्नत थे। उनके गले एवं गाल परिपूर्ण-भरे हुए थे। उनकी गर्दन चार अंगुल प्रमाणयुक्त तथा उत्तम शंख के सदृश होती थीं। उनकी ठुड्डी मांसल, सुंदर गठन युक्त तथा सुप्रशस्त थीं। उनके अधरोष्ठ अनार के कुसुम के समान लालिमामय, ऊपर के होठ की अपेक्षा कुछ लंबे, कुंचित-नीचे की ओर कुछ मुड़े हुए थे। उनके दाँत दही, ओस बिंदु, चन्द्रमा, कुंद के फूल, वासन्तिक कलिका के सदृश उजले परस्पर सटे हुए, निर्मल थे। उनके तालु एवं जिह्वा लाल वर्ण के कमल के पत्र के समान मृदुल एवं सुकोमल थे। उनकी नासिका कनेर की कली के समान, अकुटिल-सीधी, आगे निकली हुई, ऊँची थी। उनके नेत्र शरद् ऋतु के सूर्यविकासी लाल कमल, चंद्र विकासी श्वेत कमल तथा कुवलय-नीलकमल के निर्मल पत्र समूह जैसे प्रशस्त, सीधे तथा कमनीय थे। उनके लोचन-नेत्रों के बहिर्वर्ती भाग सुंदर पलयुक्त, उज्ज्वल, विस्तृत, हल्के लाल रंग युक्त थे। उनकी भौंहे खींचे हुए धनुष के समान टेढी, सुंदर, काले मेघ की रेखा के समान सुसंगत, सुनिर्मित (पतली) थीं। उनके कर्ण सुसंगत रूप में स्थित और समुचित प्रमाण-आकृति युक्त थे, इसलिए वे बड़े ही सुंदर प्रतीत होते थे। उनकी कपोल पाली सुंदर सुपुष्ट तथा सुकोमल थी। उनका ललाट चौकोर, प्रशस्त तथा समतल था। उनके मुख (वदन) शरद् ऋतु की पूर्णिमा के सदृश निर्मल, परिपूर्ण चंद्र के समान सौम्य थे। उनके मस्तक छाते की तरह ऊपर उठे हुए थे। उनके केश कृष्ण वर्ण युक्त, चिकने, सुरभित, लंबे थे। वे नारियाँ छत्र, ध्वजा, यूप-यज्ञ स्तंभ, स्तूपवर्ती माला, कमंडलु, कलश, वापी, स्वस्तिक, पताका, यव-जौ, मत्स्य, कछुआ, श्रेष्ठ रथ, मकरध्वज, अंक-काले तिल, सूत्र, थाल, अंकुश,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अष्टापद-द्यूतपट्ट, सुप्रतिष्ठक, मयूर, लक्ष्मी, अभिषेक, तोरण, पृथ्वी, समुद्र, उत्तम भवन, पर्वत, श्रेष्ठ दर्पण, लीलोत्सुक हाथी, बैल, सिंह तथा चंवर - इन उत्तम, श्रेष्ठ बत्तीस लक्षणों को धारण करती थीं। उनकी चाल हंस के समान थी। उनका स्वर कोयल की मधुर वाणी के समान था। वे कांतिमय थीं, सबके द्वारा स्पृहणीय थीं। न उनके शरीर में कभी झुर्रियाँ ही पड़ती थीं, न उनके बाल कभी सफेद ही होते थे। उनके अंगोपांगों में कोई विकार, न्यूनता या अधिकता (न्यूनाधिक्य) नहीं होती थी तथा उनके शरीर का वर्ण किसी भी प्रकार से विकृत या दूषित नहीं था। वे वैधव्य, दारिद्र्य आदि दुःखों से रहित थीं। उनकी ऊँचाई पुरुषों से कुछ कम होती थी। उनका वेश स्वाभाविक रूप में तथा सुंदर था। वे उचित गति, हंसी, बोली, चेष्टा, विलास तथा आलाप-संलाप में निष्णात तथा व्यवहार निपुण थी। उनके कुच, जघन, मुख, हस्त, चरण, नयन सुंदर होते थे। वे लावण्य, सुंदर वर्ण, रूप यौवन एवं विलास—नारीवृंदोचित उल्लासमय, नयन चेष्टा युक्त हाव-भाव से युक्त थीं। वे नंदनवन में विहरणशील अप्सराओं के सदृश भारतवर्ष में नारियों के रूप में मानों अप्सराएँ ही थीं। उन्हें देखकर उनका सौन्दर्य आदि निहार कर दर्शकों को बड़ा आश्चर्य होता था। इस प्रकार चित्त को प्रसन्न करने वाली यावत् प्रतिरूप थीं।

इस प्रकार भरतक्षेत्र के मनुष्य ओघस्वर-गांभीर्य एवं लययुक्त, स्वरान्वित, हंस की ज्यों मधुर, क्रौंच की ज्यों दूर देशगामी, नंदी—बारह प्रकार के वाद्यों के सम्मिलित नाद के सदृश स्वर एवं घोष (गर्जन) युक्त, सिंह जैसे स्वर एवं गर्जना युक्त, उत्तम स्वर एवं घोष युक्त थे। उनके अंग-अंग प्रभा से उद्योतमय थे। वे वज्रऋषभनाराच संहनन तथा समचतुरस्र संस्थान संस्थित-सर्वोत्तम दैहिक आकार युक्त थे। उनकी त्वचा में किसी भी प्रकार के रोग, घाव नहीं थे। वे देह के अन्तवर्ती पवन-अपान वायु (अधोवायु) के उचित वेग से युक्त थे। वे कंक पक्षी की तरह निर्दोष गुदाशय युक्त एवं कबूतर की तरह प्रबल पाचन शक्ति युक्त थे। उनके अपान स्थान पक्षी की ज्यों मललेप रहित थे। उनकी देह के पृष्ठ भाग, पार्श्व भाग तथा उरू स्थल सुदृढ थे। वे ऊँचाई में छह सहस्र धनुष थे।

आयुष्मन् श्रमण गौतम! उन मनुष्यों की पसलियों में दो सौ छप्पन अस्थियाँ होती थीं। उनके श्वास की सौरभ पद्म एवं उत्पल या पद्म तथा कुष्ठ नामक गंध द्रव्यों जैसी होती थी, जिससे उनके मुँह सदा सुरभिमय रहते थे। प्रकृति से ही वे मनुष्य शांत थे। उनके व्यवहार में क्रोध, मान, माया, लोभ—कषाय चतुष्ट्य की मात्रा अतिमंद थी। उनका जीवन मृदुतापूर्ण था। वे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आलीन-सम्यक् रूप से क्रियाशील, स्वभाव से भद्र, विनीत, स्वल्प आकांक्षा युक्त पर्युषित खाद्य आदि के संग्रह में अरुचिशील, भवनाकार वृक्षों में वास करने वाले तथा यथेच्छ काम-भोगों का सेवन करने वाले थे।

(२९)

तेसि णं भंते! मणुयाणं केवइकालस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ?

गोयमा! अट्ठमभत्तस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ, पुढवीपुप्फफलाहरा णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

तीसे णं भंते! पुढवीए केरिसए आसाए पण्णत्ते?

गोयमा! से जहाणामए गुलेइ वा, खंडेइ वा, सक्कराइ वा, मच्छंडिआइ वा, पप्पडमोयएइ वा, भिसेइ वा, पुप्फुत्तराइ वा, पउमुत्तराइ वा, विजयाइ वा, महाविजयाइ वा, आकासियाइ वा, आदंसियाइ वा, आगासफलोवमाइ वा, उवमाइ वा, अणोवमाइ वा इमेए अज्झोववण्णाए।

भवे एयारूवे?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, सा णं पुढवी इत्तो इट्ठतरिया चेव जाव मणामतरिया चेव आसाएणं पण्णत्ता।

तेसि णं भंते! पुप्फफलाणं केरिसए आसाए पण्णत्ते?

गोयमा! से जहाणामए रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स कल्लाणे भोयणजाए सयसहस्सणिप्फण्णे वण्णेणुववेए जाव फासेणं उववेए, आसायणिज्जे, विसायणिज्जे, दिप्पणिज्जे, दप्पणिज्जे, मयणिज्जे, बिंहणिज्जे, सव्विंदियगायपल्हायणिज्जे, भवे एयारूवे?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, तेसि णं पुप्फफलाणं एत्तो इट्ठतराए चेव जाव आसाए पण्णत्ते।

शब्दार्थ - **केवइ** - कितने, **आहारट्ठे** - आहार की इच्छा, **समुप्पज्जइ** - समुत्पन्न होती थी, **आसाए** - आस्वाद, **गुलेइ** - गुड़, **भिसेइ** - मृणाल।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! उस काल के मनुष्यों में कितने समय पश्चात् आहार की इच्छा पैदा होती है? आयुष्मन् श्रमण गौतम! उनमें आठ भक्तों-तीन दिन के पश्चात् आहार की इच्छा उत्पन्न होती है। वे पृथ्वी तथा पुष्प-फलों का आहार करते हैं।

हे भगवन्! उस समय पृथ्वी का आस्वाद कैसा बतलाया गया है?

हे गौतम! गुड़, खांड, शक्कर, मत्स्यंडिका-विशेष प्रकार की शर्करा, पर्पट, मोदक, मृणाल, पुष्पोत्तर, पद्मोत्तर आदि शर्करा विशेष तथा विजया, महाविजया, आकाशिका, आदर्शिका, आकाशफलोपमा, उपमा एवं अनुपमा - ये उस समय उपलब्ध विशिष्ट स्वाद्य पदार्थ होते हैं।

हे भगवन्! क्या पृथ्वी का स्वाद इन खाद्य पदार्थों जैसा होता है?

हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है - ऐसा नहीं होता वरन् वह तो इनसे भी कहीं अधिक इष्टतर, मनोज्ञ और स्वाद्य होता है।

हे भगवन्! उन पुष्पों और फलों का स्वाद कैसा बतलाया गया है?

हे गौतम! चक्रवर्ती सम्राट के लिए कल्याणप्रद-सुखकर भोजन एक लाख स्वर्ण मुद्राओं के व्यय से होता है। वह उत्तम वर्णोपेत यावत् सुखद स्पर्श युक्त, आस्वादनीय, विस्वादनीय, दीपनीय (जठराग्नि बढ़ाने वाला), दर्पनीय (उत्साह एवं संस्फूर्तिवर्धक), मदनीय, बृंहणीय-शरीर के अंगोपांगों को संवर्धित एवं समृद्ध बनाने वाला, सभी इन्द्रियों एवं शरीर को आह्लादित करने वाला बतलाया गया है।

हे भगवन्! क्या उन पुष्पों और फलों का स्वाद इस भोजन जैसा जानना चाहिए?

हे गौतम! ऐसा नहीं है। उन पुष्पों एवं फलों का स्वाद तो उस भोजन से भी कहीं अधिक इष्टतर यावत् आस्वाद्य-स्वादनीय प्ररूपित हुआ है।

(३०)

ते णं भंते! मणुया तमाहारमाहारेत्ता कहिं वसहिं उवेंति?

गोयमा! रुक्खगेहालया णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

तेसि णं भंते! रुक्खाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! कूडागारसंठिया, पेच्छाच्छत्त-झय-थूभ-तोरण-गोयर-वेइया-चोप्फालग-अट्टालगपासाय-हम्मिय-गवक्ख-वालग्गपोइया-वलभीघरसंठिया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्थण्णे इत्थ बहवे वरभवणविसिट्ठसंठाणसंठिया दुमगणा सुहसीयलच्छाया पण्णत्ता समणाउसो!।

शब्दार्थ - **रुक्ख** - वृक्ष, **कूट** - शिखर, **पेच्छा** - प्रेक्षागृह, **थूभ** - स्तूप-चबूतरा।

भावार्थ - हे भगवन्! वे मनुष्य किस प्रकार के आहार का सेवन करते हुए वहाँ रहते हैं?

आयुष्मन् श्रमण गौतम! वे वृक्ष रूप घरों में रहते हैं।

हे भगवन्! उन वृक्षों का आकार-प्रकार कैसा होता है?

हे गौतम! वे वृक्ष उच्च शिखर, नाट्यगृह, छत्र, ध्वजा, स्तूप, तोरण, गोपुर, वेदिका-बैठने योग्य भूमि, बरामदा, अट्टालिका, प्रासाद, हर्म्य-शिखर रहित श्रेष्ठिगृह, गवाक्ष, बालाग्रपोतिका-जल में बने घर तथा वलभीग्रह-ढालु छत युक्त भवन-इस प्रकार के विविध आकार-प्रकार युक्त है।

इस भरत क्षेत्र में और भी ऐसे विविध प्रकार के भवनों के सदृश वृक्षसमूह हैं, जो सुखप्रद, शीतल छायामय हैं।

(३१)

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे गेहाइ वा गेहावणाइ वा?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, रुक्ख-गेहालया णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! उस समय भरत क्षेत्र में क्या गेह (गृह) होते हैं? क्या गेहायतन होते हैं?

आयुष्मन् गौतम! वहाँ ऐसा नहीं होता। वृक्ष ही उन मनुष्यों के घर होते हैं, ऐसा प्रतिपादित हुआ है।

विवेचन - प्राकृत के **"गेहावण"** शब्द के संस्कृत में गेहायतन, गेहापतन या गेहापण रूप बनते हैं।

आयतन का अर्थ उपयोग हेतु गृहवर्ती प्रकोष्ठ आदि स्थान, आयतन या आगमन का हेतु उनमें आना, रहना तथा गेहापण का अर्थ गृहयुक्त पण्य स्थान, दूकानें या बाजार होता है। मनुष्य निर्मित आवासों में ऐसी बातें होती हैं किन्तु यौगलिक काल में तो कोई भी अपने लिए घरों का निर्माण नहीं करते। विविध आकार के गृहों में स्थित वृक्ष ही उनके निवास स्थान होते हैं तथा उन्हीं से उन्हें खाद्य, पेय परिधेय वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। अतः वहाँ पण्यगृह आदि की कोई आवश्यकता ही नहीं होती। क्योंकि यौगलिकों को न किसी से कुछ लेना होता है और न किसी को कुछ देना होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे गामाइ वा जाव संणिवेसाइ वा?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, जहिच्छिय-कामगामिणो णं ते मणुया पण्णत्ता।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे असीइ वा, मसीइ वा, किसीइ वा, वणिएत्ति वा, पणिएत्ति वा, वाणिज्जेइ वा?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, ववगय-असि-मसि-किसि-वणिय-पणिय-वाणिज्जा णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे हिरण्णेइ वा, सुवण्णेइ वा, कंसेइ वा, दूसेइ वा, मणि-मोत्तिय-संख-सिलप्पवालरत्तरयणसावइज्जेइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं परिभोगत्ताए हव्वमागच्छइ।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में ग्राम-राजस्वकर देय छोटी बस्तियाँ यावत् सन्निवेश-व्यापार हेतु यात्रा करने वाले सार्थवाहों आदि के लिए ठहरने के स्थान होते हैं।

हे गौतम! ऐसा नहीं है। उस काल के मनुष्य स्वभाव से ही स्वेच्छापूर्वक भ्रमण करने वाले होते हैं, ऐसा बतलाया गया है।

हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में लोग शास्त्रजीवी, लेखिनीजीवी या कृषिजीवी, वणिक् कलाजीवी, क्रय-विक्रय जीवी एवं विविध व्यापार जीव होते हैं?

हे गौतम! वे ऐसे नहीं होते। वे मनुष्य असि, मसि, कृषि, पण्य एवं वाणिज्य कला से, तदाधारित जीविका से रहित होते हैं।

हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में रजत, स्वर्ण, कांस्य, दूष्य-वस्त्र, मणि, मुक्ता, शंख, स्फटिक - ये बहुमूल्य पदार्थ होते हैं?

हाँ गौतम! ये सभी पदार्थ वहाँ होते हैं किन्तु उन मनुष्यों के परिभोग में - उपभोग में नहीं आते।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे रायाइ वा, जुवरायाइ वा, ईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाहाइ वा?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, ववगयइड्डिसक्कारा णं ते मणुया पण्णत्ता।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में राजा, युवराज, ईश्वर, तलवर, माडंबिक, कौटुंबिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति एवं सार्थवाह होते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! ऐसा नहीं होता। क्योंकि उस समय के मनुष्य समृद्धि, सत्कार की अपेक्षा नहीं रखते।

विवेचन - इस सूत्र में प्रयुक्त विभिन्न पद अधिकार, सामर्थ्य एवं वैभव आदि के द्योतक हैं। किसी प्रदेश विशेष पर शासन करने वाला राजा, उसका ज्येष्ठ पुत्र युवराज, विपुल ऐश्वर्य एवं प्रभावापन्न पुरुष 'ईश्वर' परितुष्ट राजा द्वारा दिए गए स्वर्णपट्ट से अलंकृत पुरुष 'तलवर' भूस्वामी या जागीरदार माडंबिक, विशाल परिवारों के प्रमुख पुरुष कौटुंबिक, जिनके धन वैभव पुंज के पीछे हाथी भी छिप जाए, वैसे अति धनाढ्य जन-'इभ्य', वैभव और सद्व्यवहार से प्रतिष्ठापन्न पुरुष-'श्रेष्ठी', राजा की चतुरंगिणी सेना के नियामक 'सेनापति', अनेक छोटे-बड़े व्यापारियों के साथ व्यवसाय करने में समर्थ बड़े व्यापारी-सार्थवाह कहे जाते थे।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे दासेइ वा, पेसेइ वा, सिस्सेइ वा, भयगेइ वा, भाइल्लएइ वा, कम्मयरएइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, ववगयआभिओगा णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में दास, प्रेष्य, शिष्य, भृतक, परिचारक, भागिक, निकटतम सहचर, कर्मकर होते हैं?

हे गौतम! ऐसा नहीं होता। वे व्यपगत अभियोग-स्वामी-सेवक भाव रहित होते हैं।

विवेचन - खरीदे हुए, मृत्यु पर्यन्त स्वामी की सेवा में रहने वाले स्त्री-पुरुष, दास-दासी, दूत्य, संदेश प्रेषण आदि में कार्यरत सेवक-प्रेष्य, अनुशासन में चलने वाले-शिष्य कहे जाते थे। जो सहभागिता में कार्य करते थे, उन्हें भागिक तथा जो आजीवन निकट सहचर होते थे, उन्हें भाईल्ल कहा जाता था। जो विशिष्टजनों, भूमिपतियों आदि के यहाँ पारिश्रमिक पर कार्य करते थे, उन्हें कर्मकर कहा जाता था।

'दास' और स्त्रियाँ माल-असवाब की तरह खरीदे-बेचे जाते थे। खरीददार का जीवन भर के लिए उन पर सर्वाधिकार होता था।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे मायाइ वा, पियाइ वा, भायाइ वा, भगिणीइ वा, भज्जाइ वा, पुत्ताइ वा, धूआइ वा, सुण्हाइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं तिव्वे पेम्मबंधणे समुप्पज्जइ।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में माता-पिता, भाई-बहिन, पत्नी, पुत्र, पुत्री, स्नूषा-पुत्रवधू (पतोहू) ये संबंधीजन होते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! वे सब वहाँ होते हैं परंतु उस काल के मनुष्यों का उनमें तीव्र प्रेम बंधन-स्नेहात्मक संबंध नहीं होता।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे अरीइ वा, वेरिएइ वा, घायएइ वा, वहएइ वा, पडिणीयए वा, पच्चामित्तेइ वा?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, ववगयवेराणुसया णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में अरि, वैरी, घाति, बंधक, प्रत्यनीक तथा प्रत्यमित्र होते हैं?

हे गौतम! वहाँ वे नहीं होते, क्योंकि उस काल के मनुष्य वैरानुबंध तथा पश्चात्ताप से रहित होते हैं।

विवेचन - 'अरि' शब्द ऋ धातु के आगे इन् प्रत्यय लगाने से बनता है। 'ऋ' धातु चोट पहुँचाने, पीड़ित करने या आहत करने के अर्थ में है। बैरी-जन्मजात वैरानुभाव युक्त व्यक्ति, घातक-अन्यों के द्वारा वध करवाने वाले व्यक्ति, वधक-स्वयं हत्या करने वाले, प्रत्यनीक-कार्यों में विघ्न करने वाले, प्रत्यमित्र—पहले मित्र रूप में रहकर पश्चात् शत्रु बन जाने वाले व्यक्ति से अभिहित हुए हैं।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे मित्ताइ वा, वयंसाइ वा, णायएइ वा, संघाडिएइ वा, सहाइ वा, सुहीइ वा, संगइएइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं तिव्वे राग-बंधणे समुप्पज्जइ।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में मित्र, वयस्क, ज्ञातक, संघाटिक, सखा, सुहृद एवं सांगतिक होते हैं?

हे गौतम! ये सब यद्यपि वहाँ होते हैं किन्तु उन मनुष्यों का उनमें तीव्र रागानुबंध-स्नेह या राग उत्पन्न नहीं होता।

विवेचन - अनुरागी जन-मित्र, समवयस्क साथी-वयस्य, प्रगाढ स्नेहयुक्त स्वजातीय जन-ज्ञातक, हर समय साथ रहने वाले संघाटिक, एक साथ खाना-पीना करने वाले सखा, प्रगाढतम स्नेह युक्त पुरुष-सुहृद, हर समय साथ रहने वाले हितचिंतक-सांगतिक-इन संज्ञाओं द्वारा अभिहित किए जाते रहे हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे आवाहाइ वा, विवाहाइ वा, जण्णाइ वा, सद्धाइ वा, थालीपागाइ वा, मियपिंड-निवेयणाइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, ववगय-आवाह-विवाह-जण्ण-सद्ध-थालीपाग-मियपिंड-णिवेयणाइ वा णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में आवाहर, विवाह, यज्ञ, श्राद्ध, स्थालीपाक, मृतपिण्डनिवेदन होते हैं?

हे गौतम! ये सब नहीं होते क्योंकि वे मनुष्य आवाह, विवाह, यज्ञ, श्राद्ध, स्थालीपाक तथा मृतपिण्डनिवेदन से निरपेक्ष होते हैं।

विवेचन - विवाह से पूर्व वाग्दान समारोह (सगाई)-आवाह, पाणिग्रहण संस्कार-विवाह, प्रतिदिन अपने इष्ट देव का पूजन अर्चन-यज्ञ, पितृक्रिया-श्राद्ध, लोक प्रचलित मृतक क्रिया विशेष-स्थालीपाक तथा मृत पुरुषों के लिए श्मशान आदि में पिण्ड समर्पण-मृत पिण्ड निवेदन संज्ञाओं से अभिहित होते रहे हैं।

यहाँ विवाह संस्कार से लेकर मृत्यु पर्यन्त क्रिया-प्रक्रियाओं का संकेत है, जिनका संभवतः भगवान् महावीर के युग में प्रचलन रहा हो। यदि ऐसा नहीं होता तो गौतम को इस प्रकार की जिज्ञासा कैसे होती?

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे इंदमहाइ वा, खंदमहाइ वा, णागमहाइ वा, जक्खमहाइ वा, भूयमहाइ वा, अगडमहाइ वा, तडागमहाइ वा, दहमहाइ वा, णइमहाइ वा, रुक्खमहाइ वा, पव्वयमहाइ वा, थूभमहाइ वा, चेइयमहाइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, ववगय-महिमा णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में इन्द्रोत्सव, स्कंदोत्सव, नागोत्सव, यक्षोत्सव, भूतोत्सव, कूपोत्सव, तड़ागोत्सव, ह्रदोत्सव, नद्युत्सव, वृक्षोत्सव, पर्वतोत्सव, स्तूपोत्सव तथा चैत्योत्सव - ये विविध प्रकार के उत्सव होते हैं?

आयुष्मन् श्रमण गौतम! ये उत्सव वहाँ नहीं होते क्योंकि वे मनुष्य उनसे निरपेक्ष होते हैं, वैसे उत्सवों की अपेक्षा नहीं रखते।

विवेचन - प्राचीनकाल में लौकिक आनंदोल्लास, मांग-मनौति आदि के लिए इन्द्र-जो

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

वर्षा के देव माने जाते हैं, स्कंद-जो शिव पुत्र कार्तिकेय के रूप में प्रसिद्ध है, भूत-प्रेत आदि को उद्दिष्ट कर तथा कूप, सरोवर, झील, नदी, वृक्ष, पर्वत आदि प्राकृतिक स्थानों को लक्षित कर स्तूप, चैत्य आदि मानव निर्मित स्थानों को उद्दिष्ट कर विविध प्रकार के उत्सव आयोजित होते रहते थे।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए णड-पेच्छाइ वा, णट्ट-पेच्छाइ वा, जल्ल-पेच्छाइ वा, मल्ल-पेच्छाइ वा, मुट्ठिय-पेच्छाइ वा, वेलंबग-पेच्छाइ वा, कहग-पेच्छाइ वा, पवग-पेच्छाइ वा, लासग-पेच्छाइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, ववगय-कोउहल्ला णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में नाटक दिखाने वालों, नाचने वालों, रस्सी आदि पर कलाबाजियाँ दिखाने वालों, कुश्ती का प्रदर्शन करने वालों, मुष्टि प्रहार (मुक्केबाजी) प्रदर्शकों, हँसी-मसखरी का प्रदर्शन करने वालों, कथाएँ कहने वालों, प्लावन-जल में तैराकी आदि का प्रदर्शन करने वालों, वीररस की गाथाओं द्वारा मनोरंजन करने वालों द्वारा दिखाए जाने वाले कौतुक को देखने हेतु लोग इकट्ठे होते हैं?

आयुष्मान् श्रमण गौतम! ऐसा नहीं होता। क्योंकि उन मनुष्यों के मन में इस प्रकार के कौतूहल, खेल-तमाशे देखने की इच्छा ही नहीं होती।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे सगडाइ वा, रहाइ वा, जाणाइ वा, जुग्गाइ वा, गिल्लीइ वा, थिल्लीइ वा, सीयाइ वा, संदमाणियाइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, पायचार-विहारा णं ते मणुआ पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस काल में, भरत क्षेत्र में बैलों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी, रथ या अन्य वाहन, युग्य, गिल्ली, थिल्ली, शिविका, स्यंदमानिका - ये यान-वाहन होते हैं?

आयुष्मन् श्रमण गौतम! ये सब नहीं होते, क्योंकि उन मनुष्यों में पैदल चलने की ही प्रवृत्ति होती है।

विवेचन - इस सूत्र में भगवान् महावीर के समय में प्रयुक्त होने वाले यान-वाहनों का यहाँ संकेत हुआ है। शकट-बैलगाड़ी, रथ-घोड़ा गाड़ी, युग्य-गोल्ल देश में प्रसिद्ध दो हाथ लंबे-चौड़े डोली जैसे यान, गिल्ली-दो पुरुषों द्वारा उठाई जाने वाली डोली, थिल्ली-दो घोड़ों या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खच्चरों द्वारा वहनीय बग्घी, शिविका-पर्देदार पालखी, स्यंदमानिका-पुरुष प्रमाण पालखी - इनका प्रयोग होता था।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे गावीइ वा, महिसीइ वा, अयाइ वा, एलगाइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।

भावार्थ - हे भगवन्! उस समय में क्या भरत क्षेत्र में गाय, भैंस, बकरी, भेड़ - ये घरेलू पशु होते हैं?

हाँ गौतम! ये पशु होते तो हैं, किन्तु उन मनुष्यों के उपयोग में नहीं आते।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे आसाइ वा, हत्थीइ वा, उट्टाइ वा, गोणाइ वा, गवयाइ वा, अयाइ वा, एलगाइ वा, पसयाइ वा, मियाइ वा, वराहाइ वा, रुरुत्ति वा, सरभाइ वा, चमराइ वा, सबराइ वा, कुरंगाइ वा, गोकण्णाइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में अश्व, उष्ट्र, हस्ती, गाय, गवय-नील गाय, बकरी, भेड़, प्रश्रय, मृग, शूकर, रूरू, संज्ञक मृग विशेष, अष्टापद (शरभ), चमरीगाय-सघन, कोमल पुच्छ युक्त पशु, सांभर, कुरंग तथा गोकर्ण होते हैं?

हाँ गौतम! ये होते तो हैं किन्तु वे मनुष्य उनको उपयोग में नहीं लेते।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे सीहाइ वा, वग्घाइ वा, विगदीविग-अच्छतरच्छसियालबिडालसुणगकोकंतियकोलसुणगाइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेयं वा उप्पाएंति, पगइभद्दया णं ते सावयगणा पण्णत्ता समणाउसो!।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में शेर, बाघ, भेड़िये, चीते, रींछ, तरक्ष-व्याघ्रविशेष, गीदड़, बिलाव, कुत्ते, लोमड़ी, कोलशुनक-जंगली कुत्ते या सूअर - ये श्वापद होते हैं?

आयुष्मन् श्रमण गौतम! ये सब होते तो हैं किन्तु उस काल के मनुष्यों को न थोड़ी ही और न अधिक बाधा ही पहुँचाते हैं और न उनका अंगभंग ही करते हैं और न चमड़ी को नोचकर उन्हें विकृत ही बनाते हैं क्योंकि वे प्रकृति से भद्र होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे सालीइ वा, वीहिगोहूमजवजवजवाइ वा, कलायमसूर-मग्गमासतिलकुलत्थणिप्फाव-आलिसंदगअयसिकुसुंभकोद्दव-कंगुवरगरालगसणसरिसवमूलगबीआइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरतक्षेत्र में शालि, ब्रीहि संज्ञक उच्च जाति के चावल, गेहूँ, जौ, विशेष जाति के जौ, कलाय-गोलाकार चने, मसूर, मूंग, उड़द, तिल, कुलथी, निष्पाव, आलिसंदक-चवले, असली, कुसुंभ, कोद्रव, पीतवर्ण के मोटे चावल, वरक, शलक, संज्ञक छोटे चावल, सण, सरसों, मूली आदि जमीकंदों के बीज ये सब होते हैं?

हाँ गौतम! ये होते तो है, पर उन मनुष्यों के उपयोग-प्रयोग में नहीं आते।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे गड्डाइ वा, दरीओवायपवायविसम-विज्जलाइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, तीसे समाए भरहे वासे बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा०।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरतक्षेत्र में गड्ढे, कंदराएं, घोर अंधकाराच्छन्न विशेष खड्डे, प्रपात - ऐसे स्थान जहाँ से व्यक्ति मन में कोई भावी कामना लिए भृगुपतन करे (आत्म हत्या करे) विषम - जिन पर चढ़ना-उतरना कठिन हो, ऐसे दुर्गम स्थान, विज्जल-कीचड़ युक्त फिसलन वाले स्थान-ये सब होते हैं?

गौतम! ऐसा नहीं होता, क्योंकि उस समय भरतक्षेत्र में बहुत ही समतल एवं रमणीय भूमि होती है। वह ढोलक के चर्म निर्मित ऊपरी भाग ज्यों समान होती है।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे खाणूइ वा, कंटगतणयकयवराइ वा, पत्तकयवराइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, ववगयखाणुकंटगतणकयवरपत्तकयवरा णं सा समा पण्णत्ता।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरतक्षेत्र में सूखे, ऊँचे ठूंठ, कांटे, तृणों का कचरा तथा सूखे पत्तों का कचरा-ये होते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आयुष्मन् गौतम! ऐसा नहीं होता, क्योंकि वह भूमि स्थाणु, कंटक, तृण, पत्ते आदि के कचरे से रहित होती है।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे डंसाइ वा, मसगाइ वा, जूयाइ वा, लिक्खाइ वा, ढिंकुणाइ वा, पिसुयाइ वा?

णो इणट्ठे समट्ठे, ववगयडंसमसगजूयलिक्खढिंकुणपिसूया उवद्दवविरहिया णं सा समा पण्णत्ता।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस काल में, भरत क्षेत्र में डांस, मशक, यूका, लीख, खटमल तथा पिस्सू होते हैं?

हे गौतम! ये नहीं होते। वह भूमि इन सबसे विरहित होती है।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे अहीइ वा अयगराइ वा?

हंता अत्थि, णो चेव णं तेसिं मणुयाणं आबाहं वा, (वाबाहं वा, छविच्छेअं वा उप्पायेंति,) जाव पगइभद्दया णं ते वालगगणा पण्णत्ता।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरत क्षेत्र में सांप और अजगर होते हैं?

आयुष्मान् गौतम! हाँ होते हैं, पर वे मनुष्यों के लिए बाधा जनक नहीं होते यावत् वे सर्पगण स्वभाव से ही भद्र होते हैं।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे डिंबाइ वा, डमराइ वा, कलहबोलखारवइरमहाजुद्धाइ वा, महासंगामाइ वा, महासत्थपडणाइ वा, महापुरिसपडणाइ वा, महारुहिरणिवडणाइ वा?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, ववगयवेराणुबंधा णं ते मणुया पण्णत्ता स०।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरतक्षेत्र में डिम्ब, डमर, कलह, बोल, क्षार, वैर, महायुद्ध, महासंग्राम, महाशास्त्रपतन, महापुरुष पतन, महारुधिर निपतन-ये उपद्रव होते हैं?

गौतम! वे नहीं होते, क्योंकि वे मनुष्य वैरानुबंध से रहित होते हैं, ऐसा प्रतिपादित हुआ है।

विवेचन - इस सूत्र में प्रयुक्त शब्दों का भावार्थ निम्नांकित है -

डिम्ब - भयानक स्थिति।

डमर - राष्ट्र में भीतरी-बाहरी उपद्रव।

कलह - वाक्युद्ध।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बोल - दुःखी व्यक्तियों का सामूहिक क्रंदन।

क्षार - एक दूसरे के प्रति खार-पारस्परिक ईर्ष्या जनित विद्वेष।

वैर - असहिष्णुता के कारण हिंसक भाव।

महासंग्राम - व्यूह रचना एवं युद्धविषयक व्यवस्था के साथ होने वाला महारण।

महायुद्ध - व्यूह रचना एवं सुव्यवस्थित मोर्चाबंदी के बिना होने वाला युद्ध।

महाशस्त्रपतन - विनाशकारी, दिव्य, घोर-अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग।

महापुरुषपतन - छत्रधारी राजा एवं सम्राट आदि विशिष्ट पुरुषों का वध।

महारुधिरनिपतन - छत्रधारी सम्राट आदि विशिष्ट अधिकार संपन्नजनों आदि का खून बहे, ऐसे उपद्रव।

अत्थि णं भंते! तीसे समाए भरहे वासे दुब्भूयाणि वा, कुलरोगाइ वा, गामरोगाइ वा, मंडलरोगाइ वा, पोट्टरोगाइ वा, सीसवेयणाइ वा, कण्णोट्ठ-अच्छिणहदंतवेयणाइ वा, कासाइ वा, सासाइ वा, सोसाइ वा, जरा इ वा दाहाइ वा, अरिसाइ वा, अजीरगाइ वा, दओदराइ वा, पंडुरोगाइ वा, भगंदराइ वा, एगाहियाइ वा, बेयाहियाइ वा, तेयाहियाइ वा, चउत्थाहियाइ वा, इंदग्गहाइ वा, धणुग्गहाइ वा, खंदग्गहाइ वा, कुमारग्गहाइ वा, जक्खग्गहाइ वा, भूअग्गहाइ वा, मत्थसूलाइ वा, हिययसूलाइ वा, पोट्टसूलाइ वा, कुच्छिसूलाइ वा, जोणिसूलाइ वा, गाममारीइ वा, जाव सण्णिवेसमारीइ वा, पाणिक्खया, जणक्खया, वसणब्भूयमणारिआ?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, ववगयरोगायंका णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!

भावार्थ - हे भगवन्! क्या उस समय भरतक्षेत्र में दुर्भूत, कुलरोग, ग्रामरोग, मंडलरोग, पोट्टरोग, शीर्षवेदना, कर्ण-ओष्ठ-नेत्र-नख-दंत वेदना, खांसी, श्वास, शोष-क्षय, दाह-जलन, अर्श-बवासीर, अजीर्ण, जलोदर, पांडुरोग-पीलिया, भगदर-नासूर, एक दिन, दो दिन, तीन दिन तथा चार दिन के अंतर से आने वाला ज्वर, इन्द्र, धनुः स्कन्द-कुमार, यक्ष, शूल आदि ग्रह जनित बाधा, मस्तक, हृदय, कुक्षि, योनि गत शूल तथा ग्राम यावत् सन्निवेश में व्याप्त महामारी, इनसे बहुत से प्राणियों की मृत्यु, जन जन में विपत्ति, अनार्यजनों से होने वाले संकट ये सब होते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे आयुष्मन् गौतम! वे मनुष्य इन प्रकार के संकटों से रहित होते हैं।

विवेचन - इस सूत्र में आए कुछ विशिष्ट शब्दों का भावार्थ यह है -

दुर्भूत - धान्य आदि के विनाश हेतु चूहे, टिड्डी आदि के उपद्रव।

कुलरोग - आनुवंशिक रोग।

ग्रामरोग - गाँव भर में फैली बीमारी।

मंडलरोग - ग्राम समूह में व्याप्त बीमारी।

मानवों की आयु

(३२)

तीसे णं भंते! समाए भारहे वासे मणुयाणं केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता?

गोयमा! जहण्णेणं देसूणाइं तिण्णि पलिओवमाइं, उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं।

तीसे णं भंते! समाए भारहे वासे मणुयाणं सरीरा केवइयं उच्चत्तेणं पण्णत्ता?

गोयमा! जहण्णेणं देसूणाइं तिण्णि गाउयाइं, उक्कोसेणं तिण्णि गाउयाइं।

ते णं भंते! मणुया किंसंघयणी पण्णत्ता?

गोयमा! वइरोसभणारायसंघयणी पण्णत्ता।

तेसि णं भंते! मणुयाणं सरीरा किंसंठिया पण्णत्ता?

गोयमा! समचउरंससंठाणसंठिया पण्णत्ता। तेसि णं मणुयाणं बेछप्पण्णा पिट्ठकरंडयसया पण्णत्ता समणाउसो!।

ते णं भंते! मणुया कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छन्ति, कहिं उववज्जंति?

गोयमा! छम्मासावसेसाउ जुयलगं पसवंति, एगूणपण्णं राइंदियाइं सारक्खंति, संगोवेंति, संगोवेत्ता, कासित्ता, छीइत्ता, जंभाइत्ता, अक्किट्ठा, अव्वहिया, अपरियाविया कालमासे कालं किच्चा देवलोएसु उववज्जंति, देवलोयपरिग्गहा णं ते मणुया पण्णत्ता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसे णं भंते! समाए भारहे वासे कइविहा मणुस्सा अणुसज्जित्था?

गोयमा! छव्विहा पण्णत्ता, तंजहा - पम्हगंधा १, मियगंधा २, अममा ३, तेयतली ४, सहा ५, सणिचरी ६।

भावार्थ - हे भगवन्! उस समय के मनुष्यों की आयु कितने काल की होती है?

उत्तर - हे गौतम! उस समय मनुष्यों का आयुष्य जघन्य न्यूनतम तीन पल्योपम से कुछ कम तथा अधिकतम तीन पल्योपम होता है।

हे भगवन्! उस समय भरत क्षेत्र के मनुष्यों के शरीर कितनी ऊँचाई के होते हैं?

हे गौतम! उनके शरीर जघन्यतः तीन कोस से कुछ कम तथा अधिकतम तीन कोस तक ऊँचे होते हैं।

हे भगवन्! उन मनुष्यों का दैहिक संहनन किस प्रकार का होता है?

हे गौतम! वे वज्रऋषभनाराच संहनन के होते हैं, ऐसा कहा गया है।

हे भगवन्! उन मनुष्यों का दैहिक संस्थान किस प्रकार का होता है?

हे आयुष्मन् गौतम! वे समचतुरस्र संस्थान युक्त होते हैं। उनकी पसलियों की दो सौ छप्पन हड्डियाँ होती हैं।

हे भगवन्! वे मनुष्य अपनी आयु पूर्ण कर, मृत्यु प्राप्त कर कहाँ जाते हैं, कहाँ जन्म लेते हैं?

हे गौतम! जब उनकी आयु छह महीने बाकी रहती है, तब उन युगलों के एक बालक एवं बालिका का जन्म होता है। वे उनपचास दिन-रात पर्यन्त उनका लालन-पालन संरक्षण करते हैं। इसके पश्चात् वे खांसी, छींक और जम्हाई लेकर, दैहिक कष्ट या परिताप का अनुभव न कर कालधर्म को प्राप्त होते हैं, स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं। उनका जन्म स्वर्ग में ही होता है, अन्यत्र नहीं।

हे भगवन्! उस समय भरतक्षेत्र में कितने प्रकार के मनुष्य होते हैं?

हे गौतम! उस काल में छह प्रकार के मनुष्य बतलाए गए हैं, यथा - **१. पद्मगंध** - कमल के सदृश गंध युक्त। **२. मृगगंध** - कस्तूरी तुल्य सौरभमय। **३. अमम** - ममत्व वर्जित। **४. तेजस्वी** - तेजयुक्त। **५. सह-सहिष्णु** तथा **६. शनैश्चारी**-धीरे-धीरे चलने वाले।

विवेचन - इस सूत्र में यौगलिकों की आयु के संदर्भ में जो वर्णन आया है, उस संबंध में ज्ञातव्य है कि उनकी जघन्यतः तीन पल्योपम से कुछ कम आयु बतलाई गई है, वह स्त्रियों से संबंधित है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रत्येक युगल में से स्त्री की मृत्यु पहले होती है। उसे वैधव्य नहीं देखना पड़ता। पुरुष की मृत्यु उसके पश्चात् होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ यह भी स्मरणीय है कि यौगलिकों के आगामी भव का आयुबंध उनके मरण से छह मास पूर्व होता है, जब वे युगल को जन्म देते हैं।

अवसर्पिणी : सुषमा काल

(३३)

तीसे णं समाए चउहिं सागरोवम-कोडाकोडीहिं काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं, अणंतेहिं गंधपज्जवेहिं, अणंतेहिं रसपज्जवेहिं, अणंतेहिं फासपज्जवेहिं, अणंतेहिं संघयणपज्जवेहिं, अणंतेहिं संठाणपज्जवेहिं, अणंतेहिं उच्चत्तपज्जवेहिं, अणंतेहिं आउपज्जवेहिं, अणंतेहिं गुरुलहुपज्जवेहिं, अणंतेहिं अगुरुलहुपज्जवेहिं, अणंतेहिं उट्ठाणकम्मबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमपज्जवेहिं, अणंतगुणपरिहाणीए परिहायमाणे परिहायमाणे एत्थ णं सुसमा णामं समाकाले पडिवज्जिंसु समणाउसो!।

जंबूद्दीवे णं भंते! दीवे इमीसे ओसप्पिणीए सुसमाए समाए उत्तम-कट्ठपत्ताए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे होत्था?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे होत्था, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा तं चेव जं सुसमसुसमाए पुव्ववण्णियं, णवरं णाणत्तं चउधणुसहस्समूसिया, एगे अट्ठावीसे पिट्ठकरंडयसए, छट्ठभत्तस्स आहारट्ठे, चउसट्ठिं राइंदियाइं सारक्खंति, दो पलिओवमाइं आऊ सेसं तं चेव।

तीसे णं समाए चउव्विहा मणुस्सा अणुसज्जित्था, तंजहा-एका १, पउरजंघा २, कुसुमा ३, सुसमणा ४।

शब्दार्थ - **छट्ठभत्त** - दो दिन, **राइंदियाइं** - रात्रि-दिवस, **अणुसज्जित्था** - कहे गए हैं।

भावार्थ - हे आयुष्मन् गौतम! अवसर्पिणी के प्रथम आरक का जब चार सागर कोड़ाकोड़ी काल बीत जाता है, तब अवसर्पिणी काल का सुषमा संज्ञक दूसरा आरक शुरू होता है। उसमें अनंत वर्ण-गंध-रस-स्पर्श-पर्याय, अनंत संहनन-संस्थान-उच्चत्व-आयु पर्याय, अनंत गुरु-लघु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अगुरुलघु, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम, पर्याय - इन सबकी अनंतगुण परिहान-क्रमशः ह्रास होता जाता है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में इस अवसर्पिणी के सुषमा संज्ञक आरक के अन्तर्गत उत्कृष्टता के पराकाष्ठा प्राप्त काल में भरत क्षेत्र का आकार-प्रकार किस प्रकार का होता है?

हे गौतम! उसका भूमिभाग अत्यंत समतल एवं रमणीय होता है। ढोलक के चमड़े से मढे हुए ऊपरी भाग के सदृश वह समतल होता है। सुषम-सुषमा का जिस प्रकार वर्णन किया गया है, यहाँ वैसा ही ज्ञातव्य है, उससे इतना अन्तर है - सुषम-सुषमा काल के मनुष्य चार सहस्र धनुष होते हैं। उनके पसलियों की संख्या एक सौ अट्ठाईस होती है। दो दिन व्यतीत होने पर इन्हें भोजन की इच्छा होती है। वे अपने यौगलिक पुत्र-पुत्रियों का चौसठ दिन-पर्यन्त लालन-पालन करते हैं। उनका आयुष्य दो पल्योपम का होता है। अवशिष्ट वर्णन सुषम-सुषमा जैसा ही है। इस आरक में चार प्रकार के मनुष्य होते हैं -

१. **एका** - परमोत्कृष्ट २. **प्रचुरजंघ** - परिपुष्ट जंघा युक्त ३. **कुसुम** - पुष्प सदृश सुकोमल ४. **सुष्टुमना** - प्रशान्तचेता।

(३४)

तीसे णं समाए तिहिं सागरोवमकोडाकोडीहिं काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं जाव अणंतगुण-परिहाणीए परिहायमाणे परिहायमाणे, एत्थ णं सुसमदुस्समा णामं समा पडिवज्जिंसु। समणाउसो! सा णं समा तिहा विभज्जइ-पढमे तिभाए १, मज्झिमे तिभाए २, पच्छिमे तिभाए ३।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे, इमीसे ओसप्पिणीए सुसमदुस्समाए समाए पढममज्झिमेसु तिभाएसु भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे? पुच्छा।

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे होत्था, सो चेव गमो णेयव्वो णाणत्तं दो धणुसहस्साइं उड्ढं उच्चत्तेणं। तेसिं च मणुआणं चउसट्ठिपिट्ठकरंडगा, चउत्थभत्तस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ, ठिई पलिओवमं, एगूणासीइं राइंदियाइं सारक्खंति, संगोवेंति जाव देवलोगपरिग्गहिया णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो!

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसे णं भंते! समाए पच्छिमे तिभाए भरहस्स वासस्स केरिसए आयार-भावपडोयारे होत्था?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे होत्था, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा जाव मणीहिं उवसोभिए, तंजहा - कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।

तीसे णं भंते! समाए पच्छिमे तिभागे भरहे वासे मणुयाणं केरिसए आयार-भावपडोयारे होत्था?

गोयमा! तेसिं मणुयाणं छव्विहे संघयणे, छव्विहे संठाणे, बहूणि धणुसयाणि उड्ढं उच्चत्तेणं, जहण्णेणं संखिज्जाणि वासाणि, उक्कोसेणं असंखिज्जाणि वासाणि आउयं पालेंति, पालित्ता अप्पेगइया णिरयगामी, अप्पेगइया तिरिय-गामी, अप्पेगइया मणुस्सगामी, अप्पेगइया देवगामी, अप्पेगइया सिज्झंति, जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।

शब्दार्थ - **विभज्जइ** - विभाजित किया गया है, **जहण्णेणं** - जघन्य, **संखिज्जाणि** - संख्यात।

भावार्थ - हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! द्वितीय आरक के तीन सागरोपम कोड़ाकोड़ी काल बीत जाने पर अवसर्पिणी काल का सुषम-सुषमा नामक तीसरा आरक प्रारंभ होता है। उसमें अनंत वर्ण पर्याय यावत् अनंत उत्थान-कर्म-बल-वीर्य-पुरुषकार-पराक्रम-पर्याय - इनका अनंत गुण हानिक्रम से ह्रास होता जाता है।

यह आरक तीन भागों में विभक्त है - १. प्रथम त्रिभाग २. मध्यम त्रिभाग ३. अन्तिम त्रिभाग।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में इस अवसर्पिणी के सुषम-सुषमा आरक के प्रथम और मध्यम त्रिभाग का आकार-प्रकार या स्वरूप कैसा होता है?

हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! उस समय भूमिभाग अत्यंत समतल एवं रम्य होता है। उसका वर्णन पहले की ज्यों योजनीय है। इतना अन्तर है - उस समय के मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई दो हजार धनुष परिमित होती है। उनमें पसलियों की संख्या चौसठ होती है। एक-एक दिन के अंतर के पश्चात् उनमें आहार की इच्छा पैदा होती है। उनकी स्थिति-आयु एक पल्योपम की होती है। वे उन्नासी रात्रि-दिवस पर्यन्त अपने यौगलिक शिशुओं का लालन पालन एवं संरक्षण करते हैं यावत् देहत्याग कर स्वर्गगामी होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! उस आरक के अंतिम-तीसरे भाग में भरत क्षेत्र का स्वरूप कैसा होता है?

हे गौतम! इसका भूमिभाग बहुत ही समतल तथा रम्य होता है। वह ढोलक के ऊपर मढे हुए चमड़े के पुट जैसा समतल होता है यावत् कृत्रिम-मनुष्य निर्मित तथा अकृत्रिम-नैसर्गिक मणियों से शोभायमान होता है।

हे भगवन्! उस आरक के आखिरी-तीसरे भाग में भरत क्षेत्र के मनुष्यों का स्वरूप कैसा होता है?

हे गौतम! मनुष्य छओं प्रकार के संहनन धारण करते हैं। छओं ही प्रकार के उनके संस्थान होते हैं। उनका शरीर सैकड़ों धनुष परिमित ऊँचा होता है। उनकी आयु जघन्य रूप में संख्यात वर्षों की तथा उत्कृष्ट रूप में असंख्यात वर्षों की होती है। आयु पूरी होने पर उनमें से कई नरक गति में उत्पन्न होते हैं तथा कतिपय सिद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का नाश करते हैं।

(३५)

तीसे णं समाए पच्छिमे तिभाए पलिओवमट्ठभागावसेसे एत्थ णं इमे पण्णरस कुलगरा समुप्पज्जित्था, तंजहा - सुमई १, पडिस्सुई २, सीमंकरे ३, सीमंधरे ४, खेमंकरे ५, खेमंधरे ६, विमलवाहणे ७, चक्खुमं ८, जसमं ९, अभिचंदे १०, चंदाभे ११, पसेणई १२, मरुदेवे १३, णाभी १४, उसभे १५, त्ति।

भावार्थ - उस आरक के अन्तिम भाग के समाप्त होने में जब एक पल्योपम का अष्टमांश ($\frac{1}{8}$) अवशिष्ट रहता है तो पन्द्रह कुलकर - विशिष्ट प्रतिभाशील, कुल-समुदाय नियामक पुरुष उत्पन्न होते हैं -

१. सुमति २. प्रतिश्रुति ३. सीमंकर ४. सीमंधर ५. क्षेमंकर ६. क्षेमंधर ७. विमलवाहन ८. चक्षुष्मान् ९. यशस्वान् १०. अभिचंद्र ११. चन्द्राभ १२. प्रसेनजित् १३. मरूदेव १४. नाभि १५. ऋषभ।

(३६)

तत्थ णं सुमई १, पडिस्सुई २, सीमंकरे ३, सीमंधरे ४, खेमंकरे ५ - णं एएसिं पंचण्हं कुलगराणं हक्कारे णामं दंडणीई होत्था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ते णं मणुया हक्कारेणं दंडेणं हया समाणा लज्जिया, विलज्जिया, वेड्डा, भीया, तुसिणीया, विणओणया चिट्ठति।

तत्थ णं खेमंधर ६, विमलवाहण ७, चक्खुमं ८, जसमं ९, अभिचंदाणं १० - एएसिं पंचण्हं कुलगराणं मक्कारे णामं दंडणीई होत्था।

ते णं मणुया मक्कारेणं दंडेणं हया समाणा (लज्जिया, विलज्जिया, वेड्डा, भीया, तुसिणीया, विणओणया) जाव चिट्ठंति।

तत्थ णं चंदाभ ११, पसेणइ १२, मरुदेव १३, णाभि १४, उसभाणं १५ - एएसिं णं पंचण्हं कुलगराणं धिक्कारे णामं दंडणीई होत्था।

ते णं मणुया धिक्कारेणं दंडेणं हया समाणा जाव चिट्ठंति।

भावार्थ - उन पन्द्रह कुलकरों में से सुमति, प्रतिश्रुति, सीमंकर, सीमंधर तथा क्षेमंकर नामक पाँच कुलकरों की हकार संज्ञक दण्डनीति होती है।

उस समय के मनुष्य हकार मात्र - 'हा', यह क्या किया - इतने कथन रूपी दण्ड से अपने को आहत मानते हैं। वे स्वयं ही क्रमशः लज्जित, विशेष रूप से लज्जित, अतिशय रूप से लज्जित अनुभव करते हैं। भीति मानते हैं, चुप हो जाते हैं, विनयाभिनत हो जाते हैं।

कुलकरों में से क्षेमंधर, विमलवाहन, चक्षुष्मान्, यशस्वान् तथा अभिचंद्र नामक पांच कुलकरों की मकार संज्ञक दण्डनीति होती है। उस काल के मनुष्य मकार - 'मा कुरू' - ऐसा मत करो, इतने कथन मात्र से ही अपने आपको दण्डित मानते हुए यावत् विनयाभिनत हो जाते हैं।

चंद्राभ, प्रसेनजित, मरूदेव, नाभि एवं ऋषभ - इन अंतिम पाँच कुलकरों की धिक्कार नामक दण्डनीति होती है। उस समय के मनुष्य 'हा, धिक' - इस कर्म के लिए तुम्हें धिक्कार है, इतना कहने मात्र से ही अपने आपको दण्डाभिहत मानते हैं यावत् विनयाभिनत हो जाते हैं।

भगवान् ऋषभ : गृहवास : श्रमण-दीक्षा

(३७)

णाभिस्स णं कुलगरस्स मरुदेवाए भारियाए कुच्छिंसि एत्थ णं उसहे णामं अरहा कोसलिए पढमराया, पढमजिणे, पढमकेवली, पढमतित्थयरे, पढमधम्म-वरचाउरंत-चक्कवट्टी समुप्पज्जित्था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं उसभे अरहा कोसलिए वीसं पुव्व-सयसहस्साइं कुमारवासमज्झे वसइ, वसित्ता तेवट्ठिं पुव्वसयसहस्साइं महारायवास-मज्झे वसइ। तेवट्ठिं पुव्वसयसहस्साइं महारायवासमज्झे वसमाणे लेहाइयाओ, गणियप्पहाणाओ, सउणरुयपज्जव-साणाओ बावत्तरिं कलाओ चोसट्ठिं महिलागुणे सिप्पसयं च कम्माणं तिण्णिवि पयाहियाए उवदिसइ। उवदिसित्ता पुत्तसयं रज्जसए अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता तेसीइं पुव्वसयसहस्साइं महारायवास-मज्झे वसइ। वसित्ता जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चित्तबहुले, तस्स णं चित्तबहुलस्स णवमीपक्खेणं दिवसस्स पच्छिमे भागे चइत्ता हिरण्णं, चइत्ता सुवण्णं, चइत्ता कोसं, कोट्ठागारं, चइत्ता बलं, चइत्ता वाहणं, चइत्ता पुरं, चइत्ता अंतेउरं, चइत्ता विउलधणकणगरयण-मणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणसंत-सारसावइज्जं विच्छड्डइत्ता, विगोवइत्ता दायं दाइयाणं परिभाएत्ता सुदंसणाए सीयाए सदेवमणुयासुराए परिसाए समणुगम्ममाणमग्गे संखिय-चक्किय-णंगलिय-मुहमंगलिय-पूसमाणव-वद्धमाणग-आइक्खग-लंख-मंख-घंटियगणेहिं ताहिं इट्ठाहिं, कंताहिं, पियाहिं, मणुण्णाहिं, मणामाहिं, उरालाहिं, कल्लाणाहिं, सिवाहिं, धण्णाहिं, मंगल्लाहिं, सस्सिरियाहिं, हिययगमणिज्जाहिं, हिययपल्हायणिज्जाहिं, कण्णमणणिव्वुइ-कराहिं, अपुणरुत्ताहिं अट्ठसइयाहिं वग्गूहिं अणवरयं अभिणंदंता य अभिथुणंता य एवं वयासी - जय जय णंदा! जय जय भद्दा! धम्मेणं अभीए परीसहोव-सग्गाणं, खंतिखमे भयभेरवाणं, धम्मे ते अविग्घं भवउ त्ति कट्टु अभिणंदंति य अभिथुणंति य।

तए णं उसभे अरहा कोसलिए णयणमालासहस्सेहिं पिच्छिज्जमाणे पिच्छिज्जमाणे एवं जाव (हिययमालासहस्सेहिं अभिणंदिज्जमाणे अभिणंदिज्जमाणे उण्णइज्जमाणे मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे २, वयणमालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे अभिथुव्वमाणे, कंति-सोहग्गगुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्जमाणे, बहूणं नरनारिसहस्साणं दाहिणहत्थेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छमाणे पडिच्छमाणे, मंजुमंजुणा घोसेणं पडिबुज्झमाणे पडिबुज्झमाणे, भवणपंतिसहस्साइं समइच्छमाणे समइच्छमाणे, समइच्छमाणे) आउलबोलबहुलं णभं करंते विणीयाए रायहाणीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ। आसिय-संमज्जिय-सित्त-सुइक-पुप्फोवयारकलियं सिद्धत्थवण-विउलरायमग्गं करेमाणे हय-गय-रह-पहकरेण पाइक्कचडकरेण य मंदं २ उद्धूयरेणुयं करेमाणे २ जेणेव सिद्धत्थवणे उज्जाणे, जेणेव असोगवरपायवे, तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे सीयं ठावेइ, ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता सयमेवाभरणालंकारं ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव चउहिं अट्ठाहिं लोयं करइ, करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं आसाढाहिं णक्खत्तेणं जोगमुवागएणं उग्गाणं, भोगाणं, राइण्णाणं, खत्तियाणं चउहिं सहस्सेहिं सद्धिं एगं देवदूसमादाय मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए।

शब्दार्थ - **विगोवइत्ता** - अपने को बचाकर, **बहुले** - कृष्ण पक्ष, **णंगलिए** - लांगलिक-हलधारी, **आइक्खग** - आख्यापक, **मणुण्णाहि** - मनोरम, **उराल** - उदार, **णयणमाला** - नेत्रों की कतार, **आउल** - आकुल, **अट्ठाहिं** - आस्थापूर्वक।

भावार्थ - चवदहवें कुलकर श्री नाभि की भार्या मरूदेवी से उत्पन्न, जो कौशल में अवतीर्ण प्रथम राजा, प्रथम अर्हत्, प्रथम जिन, प्रथम केवली, प्रथम तीर्थंकर, प्रथम धर्मवर-चातुरंत चक्रवर्ती ऋषभ हुए। अर्हत् ऋषभ ने बीस लाख पूर्व कुमारावस्था में व्यतीत किए। वे तिरेसठ लाख पूर्व महाराजावस्था में रहे। उस काल में उन्होंने लेखन से लेकर पक्षियों की वाणी की पहचान तक, जिनमें गणित आदि मुख्य थीं, विविध कलाओं का उपदेश दिया। इनमें पुरुषों की बहत्तर कलाओं एवं स्त्रियों की चौसठ कलाओं तथा सौ प्रकार के कर्म विज्ञान का, त्रिपदी की प्रधानता के साथ आख्यान किया। यों कला एवं शिल्प का उपदेश-शिक्षण प्रदान कर उन्होंने अपने सौ पुत्रों का सौ राज्यों में अभिषेक किया। इस प्रकार पुत्रों को राज्याभिषिक्त करने तक वे तिरासी लाख पूर्व पर्यन्त गृहस्थावास में रहे।

इस प्रकार गृहस्थ जीवन में रहने के उपरांत ग्रीष्म ऋतु के प्रथम मास-चैत्र के महीने में, कृष्ण पक्ष में, नवमी तिथि के मध्यानोत्तर काल के अनंतर चांदी, सोना, राजकोष, कोष्ठागार-धान्यागार, चतुरंगिणी सेना, गज, अश्व आदि वाहन, नगर, अंतःपुर, विपुल धन, रत्न, मुक्ता,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंख, स्फटिक, प्रवाल-मूंगे, माणिक्य आदि लोक के सारभूत पदार्थों का परित्याग कर, अस्थिर होने के ये पदार्थ वस्तुतः जुगुप्सनीय एवं त्याज्य हैं, ऐसा सोचते हुए उनसे ममत्व हटाकर, उनका अपने गौत्र एवं पारिवारिकजनों में बंटवारा कर सुदर्शन नामक पालखी में आरूढ़ हुए।

देव-मानव-असुर परिषदें उनके साथ चली। शांखिक – शंखवादक, चाक्रिक – चक्र घुमाने वाले, लांगलिक, मुख – मांगलिक-मंगलोपचारक, पुष्यमानव-मागध, चारण, भाट आदि प्रशस्तिगायक, वर्द्धमानक – औरों के कंधों पर बैठे हुए मनुष्य, आख्यायक - शुभाशुभ कथन करने वाले, लंख – बास पर चढ़कर क्रीड़ा-कौतुक दिखाने वाले, मंख–चित्रपट प्रदर्शित कर जीवन निर्वाह करने वाले, घांटिक - घंटे बजाने वाले पुरुष उनके पीछे-पीछे चले। वे अनुगामी जन अभीप्सित कमनीय, प्रिय, मनोरम, मनोज्ञ, उदार शब्द एवं अर्थापेक्षया विशद, कल्याणसूचक, शिव - उपद्रव शून्य, धन्य-स्पृहणीय, मंगलकारी, सश्रीक-अनुप्रास आदि अलंकारों की शोभा से समायुक्त एवं मन के, लिए शांतिप्रद, पुनरुक्ति दोष वर्जित, सैकड़ों प्रकार के अर्थों से समायुक्त वाणी द्वारा निरंतर उनका अभिनंदन तथा संस्तवन करने लगे, नंद! – वैराग्य के वैभव से समानंदित अथवा जगत् को उल्लसित करने वाले, भद्र! – जन-जन के कल्याण-विधायक प्रभुवर! आपकी जय हो। आप धर्म प्रभाव से परिषहों उपसर्गों से सर्वथा निर्भय रहें। आकस्मिक भय-संकट आदि, विपत्ति, भैरव-सिंह आदि हिंस्र जनित भीति अथवा भयंकर भय एवं परिस्थितियों का सहिष्णुतापूर्वक सामना करने में समर्थ रहें। आपकी अध्यात्म साधना निर्बाध, निर्विघ्न गतिशील रहे।

सैंकड़ों नर-नारी अपने नेत्रों से पुनः-पुनः उनके दर्शन कर रहे थे। यावत् आकुल नागरिकों के शब्दों से गगन मंडल परिव्याप्त था। उस स्थिति में भगवान् ऋषभ राजधानी के बीचों-बीच निकले यावत् सहस्रों नर-नारी उनका दर्शन कर रहे थे यावत् वे भवनों की सहस्रों पंक्तियों का लंघन करते हुए आगे बढ़े।

वे सिद्धार्थवन की ओर गमनोद्यत थे। उस ओर जाने वाले राजमार्ग में पानी छिड़का हुआ था, वह झाड़-बुहार कर साफ कराया हुआ था। वह सुगंधित जल से संसिक्त था। जगह-जगह उसे फूलों से सजाया गया था। अश्वों, गजों तथा रथों एवं पदाति सैनिकों के पदाघात से भूमि पर जमी हुई धूल धीरे-धीरे ऊपर की ओर उड़ रही थी। यों वे चलते-चलते सिद्धार्थ उद्यान में स्थित उत्तम अशोकवृक्ष के निकट आए। वृक्ष के नीचे पालखी को रखवाया। उससे नीचे उतरे। स्वयं अपने आभूषण उतारे। फिर उन्होंने स्वयं आस्थापूर्वक केशों का चातुर्मुष्टिक लोच किया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैसा कर दो दिनों का चौविहार-निर्जल उपवास किया। पुनश्च, चन्द्रमा का उत्तराषाढा नक्षत्र के साथ योग होने पर-उत्तम मुहूर्त में अपने चार-सहस्र उग्र, भोग, राजन्य एवं क्षत्रिय - इन विशिष्ट पुरुषों के साथ एवं देव दूष्य-दिव्य वस्त्र ग्रहण कर मंडित होकर अगार-गृहस्थावस्था से, अनगार-मुनिधर्म में दीक्षित हो गए।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में "त्रिपदी की प्रधानता के साथ आख्यान" करने का उल्लेख हुआ है, उस संदर्भ में यह ज्ञातव्य है कि जैन दर्शन के समस्त पदार्थ विषयक विवेचन का मूल **"उपन्ने वा विगमे वा धुवे वा"** - इन तीन पदों में अन्तर्गर्भित है। प्रत्येक पदार्थ उत्पाद, व्यय एवं ध्रौव्य - इन तीन स्थितियों से संबद्ध है। पर्यायात्मक दृष्टि से जब अभिनव पर्याय की उत्पत्ति होती है तब विगत पर्याय नष्ट हो जाता है किन्तु पदार्थ का मूल स्वरूप सर्वदा विद्यमान रहता है। इसलिए पदार्थ ध्रुव-शाश्वत है। इसे जैन दर्शन का परिणामी नित्यत्ववाद कहा जाता है, जो पदार्थ के नित्यत्व के साथ-२ उसके परिणामित्व-पर्यायात्मक अपेक्षा से परिणमनशीलता का द्योतक है। तीर्थंकरों के उपदेश का मुख्य आधार त्रिपदी है।

पुरुष की बहत्तर कलाएँ - बहत्तर कलाएं निम्नांकित हैं - १. लेख-लिपिज्ञान २. चित्रांकन ३. अंक गणित, रेखा गणित, बीज गणित आदि का अध्ययन ४. नाट्य ५. गान-विद्या ६. वाद्य वादन ७. संगीत के षड्ज, ऋषभ आदि स्वरों का ज्ञान ८. मृदंग विषयक ज्ञान ९. गीतानुरूप ताल प्रयोग का बोध १०. द्यूत ११. लोगों के साथ हार-जीत मूलक वाद-विवाद १२. पासा-द्यूत क्रीड़ा का उपकरण विशेष १३. चौपड़ १४. नगर-रक्षा मूलक कार्य १५. जल एवं मिट्टी के संयोग से निर्माण १६. अन्नोत्पादन एवं पाकविधि का ज्ञान १७. पानी को उत्पन्न संस्कारित और शुद्ध करने का ज्ञान १८. वस्त्र विषयक ज्ञान १९. चंदनादि चर्चनीय पदार्थों का ज्ञान २०. शैय्या एवं शयन विषयक ज्ञान २१. आर्या या मात्रिक छंदों का बोध २२. प्रहेलिका बनाना, सुलझाना २३. मागधी भाषा में पद-रचना २४. प्राकृत में गाथा आदि छंदों में पद्य निर्माण २५. गीतिका २६. अनुष्टुप आदि छंदों में श्लोक बनाना २७. रजत निर्माण २८. स्वर्ण निर्माण २९. काष्ठादि वनौषधियों के समुचित संयोजन से विविध रसायनात्मक निर्माण ३०. आभरण विषयक ज्ञान ३१. तरुणी-परिकर्म-युवा स्त्री के सौन्दर्य वर्द्धन एवं प्रसाधन का ज्ञान ३२. स्त्री के सामुद्रिक शास्त्रोक्त शुभाशुभ लक्षणों का ज्ञान ३३. पुरुष के शुभाशुभ लक्षणों का बोध ३४. अश्व लक्षण ३५. गज लक्षण ३६. गो लक्षण ३७ कुक्कुट लक्षण ३८. छत्र लक्षण ३९. दण्ड लक्षण ४०. खडग लक्षण ४१. मणि लक्षण ४२. चक्रवर्ती के काकणि नामक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्न विशेष के लक्षण ४३. वास्तु विद्या–भवन निर्माण संज्ञक विद्या ४४. सेना की छावनी (पड़ाव) का बोध ४५. नगर निर्माण ज्ञान ४६. व्यूह-सेना का विशेष आकार में परिस्थापन ४७. प्रतिद्वंद्वियों के व्यूह से रक्षा हेतु व्यूह रचना ४८. सैन्य-संचालन ४९. शत्रु सेना के प्रतिरोधार्थ सैन्य सज्जा ५०. चक्रव्यूह–चक्र के आकार में सैन्य संस्थापन ५१. गरुड़ के आकार में सैन्य व्यवस्थापन ५२. गाड़े के आकार में स्थापना ५३. युद्ध कला ५४. मल्लवत विशेष युद्ध ५५. आमने-सामने शस्त्रास्त्रों से लड़ना ५६. शरीर के अस्थि प्रधान बलिष्ठ भागों से टक्कर मारना ५७. मुष्टि प्रहार पूर्वक लड़ना ५८. भुजाओं से आघात पूर्ण युद्ध ५९. यथावसर कंटीली तीक्ष्ण लताओं से लड़ना ६०. इषुशास्त्र–दिव्य बाण विद्या का ज्ञान ६१. आवश्यक होने पर खड्ग की मूठ से प्रहार करना ६२. धनुर्विद्या का ज्ञान ६३. चांदी विषयक रासायनिक ज्ञान ६४. स्वर्ण विषयक रासायनिक ज्ञान ६५. धागों से विशेष प्रकार की क्रीड़ा का बोध ६६. गोलाकार घूमने के खेल विशेष का ज्ञान ६७. द्यूत में हारने की स्थिति में पासों के विपरीत प्रयोग का ज्ञान ६८. पत्तों के बीच स्थित किसी एक पत्ते का छेदन ६९. कटक, कुण्डल आदि का छेदन ७०. मृत को जीवित के समान दिखला देना ७१. जीवित को मृत के समान दिखला देने का कौशल ७२. पक्षियों की बोली शुभाशुभ रूप में पहचानना।

स्त्रियों की चौसठ कलाएँ - १. नृत्य २. औचित्य ३. चित्र ४. वादित ५. मंत्र ६. तन्त्र ७. ज्ञान ८. विज्ञान ९. दम्भ १०. जल स्तम्भ ११. गीत-मान १२. ताल-मान १३. मेघ वृष्टि १४. जल-वृष्टि १५. आराम-रोपण १६. आकार-गोपन १७. धर्म-विचार १८. शकुन-विचार १९. क्रिया-कल्प २०. संस्कृत-जल्प २१. प्रासाद-नीति २२. धर्म-रीति २३. वर्णिका-वृद्धि २४. स्वर्ण-सिद्धि २५. सुरभि-तैलकरण २६. लीला-संचरण २७. हय-गज-परिक्षण २८. पुरुष-स्त्री-लक्षण २९. हेम-रत्न-भेद ३०. अष्टादश-लिपि-परिच्छेद ३१. काम-विक्रिया ३२. वास्तु-सिद्धि ३३. तत्काल-बुद्धि-प्रत्युत्पन्नमति ३४. वैद्यक-क्रिया ३५. कुंभ-भ्रम ३६. सारिश्रम ३७. अंजन-योग ३८. चूर्ण-योग ३९. हस्त-लाघव ४०. वचन-पाटव ४१. भोज्य-विधि ४२. वाणिज्य-विधि ४३. मुख-मंडन ४४. शालि-खंडन ४५. कथा-कथन ४६. पुष्प-ग्रथन ४७. वक्रोक्ति ४८. काव्य शक्ति ४९. स्फारविधिवेश ५०. सर्वभाषा-विशेष ५१. अभिधान-ज्ञान ५२. भूषण-परिधान ५३. भृत्योपचार ५४. गृहोपचार ५५. व्याकरण ५६. परनिराकरण ५७. रन्धन ५८. केश-बन्धन ५९. वीणा-नाद ६०. वितंडावाद ६१. अंक-विचार ६२. लोक व्यवहार ६३. अन्त्याक्षरिका ६४. प्रश्न-प्रहेलिका।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत सूत्र में सौ शिल्पों की ओर संकेत किया गया है। इस संदर्भ में ज्ञातव्य है कि शिल्प के मूलतः पांच भेद हैं -

१. **कुंभकृत** - शिल्प-घट आदि बर्तन बनाने की कला,

२. **चित्र कृत** - शिल्प-चित्रकला,

३. **लोहकृत-शिल्प** - शस्त्र आदि लोहे की वस्तुएँ बनाने की कला,

४. **तन्तुवाय-शिल्प** - वस्त्र बुनने की कला तथा

५. **नापित-शिल्प** - क्षौरकर्म-कला। प्रत्येक के बीस-बीस भेद माने गये हैं, यों सब मिला कर सौ होते हैं।

कैवल्य : संघ-स्थापना

(३८)

उसभे णं अरहा कोसलिए संवच्छरसाहियं चीवरधारी होत्था, तेण परं अचेलए। जप्पभिइं च णं उसभे अरहा कोसलिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए, तप्पभिइं च णं उसभे अरहा कोसलिए णिच्चं वोसट्ठकाए, चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति, तंजहा - दिव्वा वा जाव पडिलोमा वा, अणुलोमा वा, तत्थ पडिलोमा वित्तेण वा, जाव कसेण वा काए आउट्टेज्जा, अणुलोमा वंदेज्ज वा णमंसेज्ज वा जाव पज्जुवासेज्ज वा, ते सव्वे सम्मं सहइ जाव अहियासेइ।

तए णं से भगवं समणे जाए, ईरियासमिए जाव पारिट्ठावणियासमिए, मणसमिए, वयसमिए, कायसमिए, मणगुत्ते, जाव गुत्तबंभयारी, अकोहे, जाव अलोहे, संते, पसंते, उवसंते, परिणिव्वुडे, छिण्णसोए, णिरुवलेवे, संखमिव णिरंजणे, जच्चकणगं व जायरूवे, आदरिसपडिभागे इव पागडभावे, कुम्मो इव गुत्तिंदिए, पुक्खरपत्तमिव णिरुवलेवे, गगणमिव णिरालंबणे, अणिले इव णिरालए, चंदो इव सोमदंसणे, सूरो इव तेयंसी, विहगो इव अपडिबद्धगामी, सागरो इव गंभीरे, मंदरो इव अकंपे, पुढवीविव सव्वफासविसहे, जीवो विव अप्पडिहयग-इत्ति। णत्थि णं तस्स भगवंतस्स कत्थइ पडिबंधे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से पडिबंधे चउव्विहे भवइ, तंजहा - दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ। दव्वओ इह खलु माया मे, पिया मे, भाया मे, भगिणी मे जाव संगंथसंथुया मे, हिरण्णं मे, सुवण्णं मे, जाव उवगरणं मे, अहवा समासओ सच्चित्ते वा अचित्ते वा, मीसए वा, दव्वजाए, सेवं तस्स ण भवइ।

खित्तओ-गामे वा, णयरे वा, अरण्णे वा, खेत्ते वा, खले वा, गेहे वा, अंगणे वा, एवं तस्स ण भवइ।

कालओ-थोवे वा, लवे वा, मुहुत्ते वा, अहोरत्ते वा, पक्खे वा, मासे वा, उऊए वा, अयणे वा, संवच्छरे वा, अण्णयरे वा दीहकालपडिबंधे, एवं तस्स ण भवइ।

भावओ-कोहे वा जाव लोहे वा, भए वा, हासे वा, एवं तस्स ण भवइ।

से णं भगवं वासावासवज्जं हेमंतगिम्हासु गामे एगराइए, णगरे पंचराइए, ववगयहाससोग-अरइ-भय-परित्तासे, णिम्ममे, णिरहंकारे, लहुभूए, अगंथे, वासीतच्छणे अदुट्ठे, चंदणाणुलेवणे अरत्ते, लेट्ठुंमि कंचणंमि य समे, इह लोए परलोए अ अपडिबद्धे, जीवियमरणे णिरवकंखे, संसारपारगामी, कम्मसंग-णिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिए विहरइ।

तस्स णं भगवंतस्स एएणं विहारेणं विहरमाणस्स एगे वाससहस्से विइक्कंते समाणे पुरिमतालस्स णयरस्स बहिया सगडमुहंसि उज्जाणंसि णिग्गोहवरपायवस्स अहे झाणंतरियाए वट्टमाणस्स फग्गुणबहुलस्स इक्कारसीए पुव्वण्हकालसमयंसि अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं उत्तरासाढाणक्खत्तेणं जोगमुवागएणं अणुत्तरेणं णाणेणं जाव चरित्तेणं, अणुत्तरेणं तवेणं बलेणं वीरिएणं आलएणं, विहारेणं, भावणाए, खंतीए, गुत्तीए, मुत्तीए, तुट्ठीए, अज्जवेणं, मद्दवेणं, लाघवेणं, सुचरियसोवचिय-फलणिव्वाणमग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स अणंते, अणुत्तरे, णिव्वाघाए, णिरावरणे, कसिणे, पडिपुण्णे केवलवरणाणदंसणे समुप्पण्णे, जिणे जाए केवली, सव्वण्णू, सव्वदरिसी, सणेरइय-तिरिय-णरामरस्स लोगस्स पज्जवे जाणइ पासइ, तंजहा - आगइं, गइं, ठिइं, उववायं, भुत्तं, कडं, पडिसेवियं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आवीकम्मं, रहोकम्मं, तं तं कालं मणवयकाए जोगे एवमाई जीवाण वि सव्वभावे, अजीवाण वि सव्वभावे, मोक्खमग्गस्स विसुद्धतराए भावे जाणमाणे पासमाणे, एस खलु मोक्खमग्गे मम अण्णेसिं च जीवाणं हियसुहणिस्सेयसकरे, सव्वदुक्खविमोक्खणे, परमसुहसमाणणे भविस्सइ।

तए णं से भगवं समणाणं णिग्गंथाण य, णिग्गंथीण य पंच महव्वयाइं सभावणगाइं, छच्च जीवणिकाए धम्मं देसमाणे विहरइ, तंजहा - पुढविकाइए भावणागमेणं पंच महव्वयाइं सभावणगाइं भाणियव्वाइं इति।

उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स चउरासी गणा गणहरा होत्था, उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स उसभसेणपामोक्खाओ चुलसीइं समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपया होत्था, उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स बंभीसुंदरी-पामोक्खाओ तिण्णि अज्जियासयसाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जियासंपया होत्था, उसभस्स णं अरहओ कोसलिअस्स सेज्जंसपामोक्खाओ तिण्णि समणोवासगसय-साहस्सीओ पंच य साहस्सीओ उक्कोसिया समणोवासग-संपया होत्था, उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स सुभद्दापामोक्खाओ पंच समणोवासियासयसाहस्सीओ चउपण्णं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासिया-संपया होत्था, उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स अजिणाणं जिणसंकासाणं, सव्वक्खरसण्णिवाईणं, जिणो विव अवितहं वागरमाणाणं चत्तारि चउद्दसपुव्वी-सहस्सा अद्धट्ठमा य सया उक्कोसिया चउदसपुव्वी-संपया होत्था, उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स णव ओहिणाणिसहस्सा उक्कोसिया ओहिणाणि-संपया होत्था, उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स वीसं जिणसहस्सा, वीसं वेउव्विय-सहस्सा छच्च सया उक्कोसिया जिण-संपया वेउव्विय-संपया य होत्था, अरहओ कोसलियस्स बारस विउलमइसहस्सा छच्च सया पण्णासा, बारस वाईसहस्सा छच्च सया पण्णासा, उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स गइकल्लाणाणं, ठिइकल्लाणाणं, आगमेसिभद्दाणं, बावीसं अणुत्तरोववाइयाणं सहस्सा णव य सया० उक्कोसिया अणुत्तरोववाइय-संपया होत्था।

Jain Education International	For Personal & Private Use Only	www.jainelibrary.org

उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स वीसं समणसहस्सा सिद्धा, चत्तालीसं अज्जियासहस्सा सिद्धा - सट्ठि अंतेवासीसहस्सा सिद्धा।

उसभस्स णं अरहओ बहवे अंतेवासी अणगारा भगवंतो-अप्पेगइया मासपरियाया, जहा उववाइए सव्वओ अणगारवण्णओ, जाव उड्ढं जाणू अहोसिरा झाणकोट्ठोवगया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति।

उसभस्स णं अरहओ दुविहा अंतकरभूमी होत्था, तंजहा - जुगंतकरभूमी य परियायंतकरभूमी य, जुगंतकरभूमी जाव असंखेज्जाइं पुरिसजुगाइं, परियायंतकरभूमी अंतोमुहुत्तपरियाए अंतमकासी।

शब्दार्थ - **चीवरधारी** - वस्त्र युक्त, **णिच्चं** - नित्य, **वोसट्ठकाए** - दैहिक आसक्ति से विरहित, **चिअत्तदेहे** - त्यक्तदेह - शरीर के ममत्व से रहित, **आउट्टेज्जा** - सहने लगा, **संगंथ संथुआ** - संग्रथितजन-अन्य पारिवारिकजन, **अहवा** - अथवा, **वासीत** - बढई का वसूला (औजार), **लेट्टु** - पत्थर।

भावार्थ - कौशल देशोत्पन्न अरहंत ऋषभदेव एक वर्ष से कुछ अधिक समय तक वस्त्र युक्त रहे। तत्पश्चात् वे निर्वस्त्र रहे। जब से वे गृहस्थ से मुनिधर्म में दीक्षित हुए तब से वे शारीरिक सज्जा, श्रृंगार आदि से रहित, दैहिक ममत्व से अतीत होते हुए, उपसर्ग और परीषहों को ऐसे उपेक्षा भाव से सहते मानो उनके देह हो ही नहीं। देवों द्वारा यावत् तिर्यंच पशु-पक्षियों द्वारा कृत जो भी अनुकूल-प्रतिकूल उपसर्ग आते, उन्हें वे निडरता पूर्वक सहते। जैसे कोई उन्हें बेंत से यावत् चमड़े के कौड़े से पीटता, अनुकूल परीषह-जैसे कोई उन्हें वंदन करता यावत् उनकी पर्युपासना करता तो भी वे उसे अनासक्त भाव से सहन करते यावत् स्वीकार करते।

भगवान् ऋषभ ऐसे उच्च कोटि के श्रमण थे कि वे ईर्यासमिति यावत् परिष्ठापना समिति से युक्त थे। मन, वचन एवं काय का नियंत्रण किये रहते थे। वे मनोगुप्त यावत् गुप्त ब्रह्मचारी-नियमोपनियम पूर्वक ब्रह्मचर्य के संरक्षक थे। वे क्रोध रहित यावत् लोभ रहित, शांत, प्रशांत, उपशांत, परिनिर्वृत, छिन्न स्रोत-लोक प्रवाह के छेदक-उसमें नहीं बहने वाले, कर्म लेप रहित, शंख की तरह कालिमा रहित, उच्च जातीय स्वर्ण के समान उत्तम, निर्मल चारित्र युक्त, दर्पणगत प्रतिबिंब की तरह स्पष्ट अभिप्राय युक्त, कच्छप की तरह अपनी इन्द्रियों को गुप्त रखने वाले,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कमलपत्र की तरह लेप रहित, आकाश की तरह आलंबन रहित-आत्मावलंबित, वायु की तरह घर रहित, चंद्रमा की तरह देखने में सौम्यभावमय, सूर्य के समान तेजस्वी, पक्षी की तरह उन्मुक्तविहारी, सागर की तरह गांभीर्य युक्त, मंदर पर्वत की तरह अकंपित-स्थिर, धरती के समान सभी स्पर्श को सहने वाले, जीव (आत्मा) की तरह अप्रतिहत-अनवरूद्ध गति थे।

उन भगवान् ऋषभ के किसी भी प्रकार का प्रतिबंध-अवरोध नहीं था। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से प्रतिबंध चार प्रकार का आख्यात हुआ है। द्रव्य की अपेक्षा से प्रतिबंध का ऐसा रूप है, जैसे - ये मेरे माता-पिता, भ्राता-भगिनी यावत् अन्यान्य संबंधी, परिचित जन हैं। ये मेरे रजत, स्वर्ण यावत् उपकरण-अन्य सामान हैं। अथवा सचित्त-द्विपद प्राणी, अचित्त-जड़ पदार्थ स्वर्ण, चाँदी आदि निर्जीव पदार्थ, मिश्र-सोने के आभूषणों से सज्जित द्विपद आदि प्राणी, इस प्रकार इन पदार्थों में भगवान् का जरा भी प्रतिबंध, ममत्व, आसंग नहीं था।

क्षेत्र की अपेक्षा से भगवान् ऋषभ अप्रतिबंध थे - गाँव, नगर, वन, क्षेत्र, खलिहान, घर, प्रांगण, इत्यादि में उनका जरा भी आसक्त भाव नहीं था।

काल की अपेक्षा से वे इस प्रकार अप्रतिबद्ध थे - स्तोक, लव, मुहूर्त्त, दिन-रात, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर या और भी दीर्घकाल विषयक आसक्त भाव नहीं था।

भाव की अपेक्षा से इस प्रकार प्रतिबंध रहित थे - क्रोध यावत् लोभ तथा हास्य से उनकी कोई संलग्नता नहीं थी। भगवान् ऋषभ वर्षावास-चातुर्मास्य के सिवाय हेमंत ऋतु के महीनों में तथा ग्रीष्म ऋतु के महीनों में किसी भी गाँव में एक रात, नगर में पाँच रात परिमित प्रवास करते हुए हास्य, शोक, रति, भय तथा परित्रास वर्जित, ममत्व रहित, अहंकार शून्य, लघुभूत–किसी प्रकार के आत्मपरिपंथी भाव से विमुक्त, अतएव हलके, निर्ग्रन्थ - बाहरी-भीतरी ग्रंथियों (कुटिलताओं) से विवर्जित, वसूले द्वारा शरीर की त्वचा को छीले जाने पर भी वैसा करने वाले के प्रति विद्वेष शून्य एवं किसी के द्वारा चंदन का लेप किए जाने पर भी उसके प्रति अनुराग वर्जित, पत्थर और सोने में एक जैसे भाव से युक्त, इस लोक और परलोक में अप्रतिबद्ध–ऐहिक और पारलौकिक - स्वर्गिक सुख की लिप्सा से रहित, जीवन और मृत्यु की आकांक्षा से रहित, संसार-सागर को पार करने हेतु सन्नद्ध, आत्मप्रदेशों के साथ संश्लिष्ट कर्मप्रदेशों को विच्छिन्न करने में अभ्युत्थित, तत्पर रहते हुए, विहरणशील थे।

इस प्रकार विहार करते हुए एक सहस्र वर्ष बीत जाने पर भगवान् ऋषभ पुरिमताल नामक नगर के बाहर अवस्थित शकटमुख नामक उद्यान में एक वट वृक्ष के नीचे ध्यानांतरिका–शुरू

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किए गए ध्यान की समाप्ति तथा अपूर्व ध्यानारंभ की स्थिति में अर्थात् शुक्लध्यान के पृथक्त्ववितर्क सविचार एवं एकत्व वितर्क अविचार - इन दो चरणों को स्वायत्त कर लेने तथा सूक्ष्म क्रिय-अप्रतिपाति एवं विच्छिन्नक्रिय अनिवृत्ति–इन दो चरणों की अप्रतिपन्नावस्था में अवस्थित रहते हुए, फाल्गुन महीने के कृष्ण पक्ष की एकादशी के पहले प्रहर के समय, निर्जल, त्रिदिवसीय तपस्या की स्थिति में, चन्द्र संयोग प्राप्त उत्तराषाढा नक्षत्र में, सर्वोत्तम तप, बल, वीर्य, आलय-दोष रहित स्थान में आवास, विहार, महाव्रतों से संबद्ध भावना, क्षांति, गुप्ति, मुक्ति, तुष्टि, आर्जव, मार्दव, लाघव के कारण सभी प्रकार से निर्भरता, सच्चारित्र में सार्वदिक संलग्नता के निर्वाण मार्गरूप उत्तम फल से आत्मा को भावित करते हुए उनके अनंत, अनुत्तर-सर्वोत्तम, व्याघात रहित, आवरण-शून्य, कृत्स्न-संपूर्ण, प्रतिपूर्ण, केवलज्ञान, केवलदर्शन उत्पन्न हुए। वे जिन केवली, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी पद को प्राप्त हुए। नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य तथा देवलोक के पर्यायों के ज्ञाता हुए, आगति–नरक तथा देवगति से च्यवन कर मनुष्य या तिर्यंच गति में, आगमन गति-मनुष्य या तिर्यंच गति से मरकर देवगति या नरकगति में गमन, स्थिति–कायस्थिति, भवस्थिति, उपपात, भुक्त, कृत, प्रतिसेवित, आविष्कर्म-प्रकट कर्म, रह कर्म-गुप्त कर्म, उन-उन समयों में उत्पन्न मानसिक, वाचिक तथा कायिक योग आदि के जीवों तथा अजीवों के समस्त भावों के मोक्षमार्ग विषयक विशुद्ध भाव–यह मोक्ष मार्ग मेरे लिए तथा अन्य प्राणियों के लिए हितप्रद, सुखप्रद तथा निःश्रेयस्कर है, सब दुःखों से मुक्त कराने वाला तथा आध्यात्मिक परमानंदप्रद होगा, इन सबके ज्ञाता, द्रष्टा हो गए।

भगवान् ऋषभ निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थिनियों को पांच महाव्रतों, उनकी भावनाओं एवं छह जीवनिकायों का उपदेश प्रदान करते हुए विचरण करते। पृथ्वीकाय आदि जीवनिकाय तथा भावनायुक्त पांच महाव्रतों का विस्तृत वर्णन अन्यत्र द्रष्टव्य है।

अर्हत् ऋषभ के चौरासी गण एवं चौरासी गणधर थे। उनके ऋषभसेन आदि चौरासी सहस्र उत्कृष्ट श्रमण संपदा थी। उनके ब्राह्मी, सुंदरी आदि तीन लाख आर्यिकाएँ-श्रमणियाँ-उत्कृष्ट श्रमणी संपदा थी। उनके श्रेयांस आदि तीन लाख पांच हजार उत्कृष्ट श्रमणोपासक संपदा थी। उनके सुभद्रा आदि पांच लाख चौवन हजार उत्कृष्ट श्रमणोपासिका संपदा थी। जिन न होने पर भी जिन सदृश, सर्वाक्षर-संबोधवेत्ता, जिनवत् सत्य अर्थ निरूपक चार हजार सात सौ पचास चतुर्दश पूर्वधर-श्रुत केवली, नौ सहस्र अवधिज्ञानी, बीस सहस्र सर्वज्ञ, बीस हजार छह सौ वैक्रिय लब्धिधारी, बारह हजार छह सौ पचास विपुलमति मनः पर्यवज्ञानी, बारह हजार छह सौ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पचास वादी तथा गतिकल्याणक–देवगति में दिव्य सातोदय रूप कल्याण युक्त, स्थितिकल्याणक-देवायु रूप स्थितिगत सुख स्वामित्वयुक्त आगामी भव में सिद्धत्व प्राप्त करने वाले, अनुत्तर विमानों में उत्पन्न होने वाले बाईस हजार नौ सौ उत्कृष्ट मुनि संपदा थी। कौशलिक अर्हत् ऋषभ के बीस सहस्र श्रमणों तथा चालीस सहस्र श्रमणियों ने–कुल साठ हजार अन्तेवासी-अन्तेवासिनियों ने सिद्धत्व प्राप्त किया।

भगवान् ऋषभ के अनेक अंतेवासी अनगार थे। उनमें कतिपय एक मास पर्याय यावत् अनेक वर्ष दीक्षा पर्याय के थे। इनका विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र से ग्राह्य है। उनमें अनेक अनगार अपने दोनों घुटनों को ऊँचा उठाए, मस्तक को नीचा किए-यों एक विशेष आसन में अवस्थित हो, ध्यान रूप कोष्ठ में संलग्न थे, अपने आपको ध्यान में सर्वथा निरत किए हुए थे, इस प्रकार वे आत्मानुभावित होते हुए जीवनयात्रा में गतिशील थे।

भगवान् ऋषभ के समय में युगान्तकर एवं पर्यायान्तकर के रूप में दो प्रकार की भूमि थी। युगान्तर भूमि गुरु शिष्य क्रमानुबद्ध यावत् असंख्यात पुरुष परंपरा परिमित थी तथा पर्यायान्तकर भूमि अन्तर्मुहूर्त्त परिमित थी।

(३९)

उसभे णं अरहा पंचउत्तरासाढे अभीइछट्ठे होत्था, तंजहा - उत्तरासाढाहिं चुए, चइत्ता गब्भं वक्कंते, उत्तरासाढाहिं जाए, उत्तरासाढाहिं रायाभिसेयं पत्ते, उत्तरासाढाहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए, उत्तरासाढाहिं अणंते जाव समुप्पण्णे, अभीइणा परिणिव्वुए।

भावार्थ - भगवान् ऋषभ की जीवन विषयक घटनाओं में से पाँच उत्तराषाढा नक्षत्र से तथा एक अभिजित नक्षत्र से संबद्ध है।

चंद्रमा के संयोग से युक्त उत्तराषाढा नक्षत्र में उनका सर्वार्थ सिद्ध नामक महाविमान से निर्गमन हुआ। वहाँ से निर्गत होकर वे माता मरूदेवी की कुक्षि में आए। उसी में - चंद्रमा से संयुक्त उत्तराषाढा नक्षत्र में ही उनका जन्म हुआ, उसी में उनका राज्याभिषेक हुआ, इसी में मुंडित होकर, गृहत्याग कर अनगार बने। उसी में उन्हें अनंत यावत् केवलज्ञान समुत्पन्न हुआ। चन्द्रयुक्त अभिजित मुहूर्त्त में उनका परिनिर्वाण हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिनिर्वाण पर देवकृत महोत्सव

(४०)

उसभे णं अरहा कोसलिए वज्ज-रिसह-णाराय-संघयणे समचउरंस-संठाण-संठिए, पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था।

उसभे णं अरहा वीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासमज्झे वसित्ता, तेवट्ठिं पुव्वसयसहस्साइं महारज्जवासमज्झे वसित्ता, तेसीइं पुव्वसयसहस्साइं अगारवास-मज्झे वसित्ता, मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए। उसभे णं अरहा एगं वाससहस्सं छउमत्थपरियायं पाउणित्ता, एगं पुव्वसयसहस्सं वाससहस्सूणं केवलिपरियायं पाउणित्ता, एगं पुव्वसयसहस्सं बहुपडिपुण्णं सामण्णपरियायं पाउणित्ता, चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता जे से हेमंताणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे माहबहुले, तस्स णं माहबहुलस्स तेरसीपक्खेणं दसहिं अणगारसहस्सेहिं सद्धिं संपरिवुडे अट्ठावय-सेलसिहरंसि चोद्दसमेणं भत्तेणं अपाणएणं संपलियंकणिसण्णे पुव्वण्हकालसमयंसि अभीइणा णक्खत्तेणं जोगमुवागएणं सुसमदूसमाए समाए एगूणणवउईहिं पक्खेहिं सेसेहिं कालगए वीइक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।

भावार्थ - कौशलिक अर्हत् ऋषभ वज्रऋषभ नाराचसंहनन एवं समचतुरस्र संस्थान संस्थित, पाँच सौ धनुष ऊँची देह से युक्त थे।

वे बीस लाख पूर्व पर्यन्त कुमारावस्था में एवं तिरेसठ लाख पूर्व महाराजावस्था में अवस्थित रहे। यों वे कुल तिरासी लाख पूर्व पर्यन्त गार्हस्थ्य में रहे। तदनंतर वे मुंडित होकर गृहवास से अनगार धर्म में दीक्षित हुए। वे एक सहस्र वर्ष पर्यन्त असर्वज्ञावस्था में रहे। वे एक लाख पूर्व से एक हजार वर्ष कम तक सर्वज्ञावस्था में रहे। इस तरह उन्होंने कुल एक लाख पूर्व तक श्रमण पर्याय का पालन कर चौरासी लाख पूर्व का परिपूर्ण आयुष्य भोगकर हेमन्त ऋतु के तीसरे मास के पाँचवें पक्ष में-माघ मास के कृष्ण पक्ष में, त्रयोदशी के दिन दस सहस्र श्रमणों से परिवृत्त अष्टापद पर्वत के शिखर पर छह दिवसीय निर्जल उपवास में पूर्वार्द्धकाल-प्रथम प्रहर में,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पर्यंकासन में स्थित, चंद्रमा से युक्त अभिजित मुहूर्त में, जब सुषम-दुषमा आरक में नवासी पक्ष—तीन वर्ष साढे आठ मास अवशिष्ट थे, वे जन्म, जरा एवं मृत्यु के बंधन का नाश कर, सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, अंतकृत, परिनिर्वृत्त तथा समस्त दुःख विरहित हुए।

(४१)

जं समयं च णं उसभे अरहा कोसलिए कालगए वीइक्कंते समुज्जाए छिण्णजाइजरामरणबंधणे सिद्धे बुद्धे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे तं समयं च णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो आसणे चलिए।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया आसणं चलियं पासइ पासित्ता ओहिं पउंजइ २ त्ता भयवं तित्थयरं ओहिणा आभोएइ २ त्ता एवं वयासी-परिणिव्वुए खलु जंबुद्दीवे दीवे भरहे वासे उसहे अरहा कोसलिए, तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्ण-मणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं तित्थगराणं परिणिव्वाणमहिमं करेत्तए, तं गच्छामि णं अहंपि भगवओ तित्थगरस्स परिणिव्वाणमहिमं करेमि त्तिकट्टु वंदइ णमंसइ वं० २ त्ता चउरासीईए सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसएहिं चउहिं लोगपालेहिं जाव चउहिं चउरासीईहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अण्णेहि य बहूहिं सोहम्मकप्पवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे ताए उक्किट्ठाए जाव तिरियम-संखेज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जेणेव अट्ठावयपव्वए जेणेव भगवओ तित्थगरस्स सरीरए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता विमणे णिराणंदे अंसुपुण्णणयणे तित्थयर सरीरयं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ त्ता पच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे जाव पज्जुवासइ।

शब्दार्थ - **जीयमेयं** - जीताचार-पारंपरिक व्यवहार, **तीय** - अतीत, **पच्चुपण्ण** - वर्तमान काल, **अणागया** - अनागत - भविष्यत्, **विमणे** - अन्य मनस्क।

भावार्थ - जब कौशलदेशीय अरहंत ऋषभ कालगत हुए, जन्म, वार्धक्य तथा मरण के बंधनों को तोड़कर सिद्ध, बुद्ध यावत् सर्व दुःख विनिर्मुक्त हुए, उस समय देवेन्द्र देवराज शक्र का आसन चलायमान हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवेन्द्र देवराज शक्र ने जब ऐसा देखा तब उसने अवधिज्ञान का प्रयोग कर तीर्थंकर अरहंत ऋषभ को देखा। देखकर बोला - जम्बूद्वीप के अन्तर्गत भरतक्षेत्र में कौशलिक भगवान् ऋषभ ने परिनिर्वाण प्राप्त किया है। पूर्वकाल में हुए, वर्तमान काल में विद्यमान तथा भविष्य में होने वाले देवराजों, देवेन्द्रों, शक्रों का यह पारंपरिक व्यवहार है कि वे तीर्थंकरों के परिनिर्वाण के उपलक्ष में महोत्सव आयोजित करें। अतः मैं भी तीर्थंकर भगवान् ऋषभ के परिनिर्वाण का महोत्सव समायोजित करने हेतु वहाँ पहुँचूँ। यों विचार कर देवेन्द्र ने भगवान् को उद्दिष्ट कर वहीं से वंदन, नमन किया। वह अपने चौरासी हजार सामानिक देवों तैतीस हजार त्रायस्त्रिंशक गुरु स्थानवर्ती देवों, चार लोकपालों यावत् चतुर्दिग्वर्ती चौरासी-चौरासी हजार आत्म रक्षक देवों तथा और भी अन्य बहुत से सौधर्म कल्पवासी देवों एवं देवियों से परिवृत उत्तम आकाश गति से यावत् तिर्यक् लोकवर्ती असंख्य द्वीपों एवं समुद्रों के बीच से होता हुआ, अष्टापद पर्वत पर जहाँ भगवान् अरहंत ऋषभ का शरीर था, आया। उसने अन्यमनस्क, आनंद रहित, अश्रुपूर्ण नेत्रों के साथ भगवान् के शरीर की तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की। वैसा कर न अधिक समीप तथा न अधिक दूर स्थित होते हुए, समीचीन स्थानावस्थित होते हुए यावत् पर्युपासना की।

(४२)

तेणं कालेणं तेणं समएणं ईसाणे देविंदे देवराया उत्तरड्ढलोगाहिवई अट्ठावीसविमाणसयसहस्साहिवई सूलपाणी वसहवाहणे सुरिंदे अरयंबरवत्थधरे जाव विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ।

तए णं तस्स ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो आसणं चलइ, तए णं से ईसाणे जाव देवराया आसणं चलियं पासइ २ त्ता ओहिं पउंजइ २ त्ता भगवं तित्थगरं ओहिणा आभोएइ २ त्ता जहा सक्के णियगपरिवारेणं भाणेयव्वो जाव पज्जुवासइ एवं सव्वे देविंदा जाव अच्चुए णियगपरिवारेणं आणेयव्वा, एवं जाव भवणवासीणं वीस इंदा वाणमंतराणं सोलस जोइसियाणं दोण्णि णियगपरिवारा णेयव्वा।

शब्दार्थ - लोगाहिवई - लोकाधिपति, **सूलपाणी** - हाथ में शूल लिए हुए।

भावार्थ - उस काल, उस समय उत्तरार्द्ध लोक के स्वामी, अट्ठाईस लाख विमानों के अधिपति शूलपाणि, वृषभवाहन, आकाश जैसे निर्मल रंग के वस्त्र धारण करने वाले देवराज ईशानेन्द्र यावत् विपुल भोग भोगते विहरणशील थे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ईशानेन्द्र का आसन चलायमान हुआ। ईशानेन्द्र यावत् देवराज ने जब अपने आसन को चलायमान देखा तो अपने अवधिज्ञान का प्रयोग किया। अवधिज्ञान द्वारा भगवान् को देखा। देखकर यावत् शक्रेन्द्र की ज्यों सपरिवार आया, पर्युपासनारत हुआ। इसी प्रकार सभी देवेन्द्र, यावत् अच्युत देवलोकों के अधिपति अपने-अपने देव परिवार के साथ आए यावत् भवनवासी देवों के बीस इन्द्र, वाणव्यंतर देवों के सोलह इन्द्र तथा ज्योतिष्क देवों के दो इन्द्र - सूर्य एवं चन्द्र अपने-अपने परिवारों के साथ अष्टापद पर्वत पर पहुँचे।

(४३)

तए णं सक्के देविंदे देवराया ते बहवे भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिए देवे एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! णंदणवणाओ सरसाइं गोसीसवरचंदण-कट्ठाइं साहरइ २ त्ता तओ चिइगाओ रएह एगं भगवओ तित्थगरस्स एगं गणहराणं एगं अवसेसाणं अणगाराणं।

तए णं ते० भवणवइ जाव वेमाणिया देवा णंदणवणाओ सरसाइं गोसीसवरचंदणकट्ठाइं साहरंति २ त्ता तओ चिइगाओ रएंति, एगं भगवओ तित्थगरस्स एगं गणहराणं एगं अवसेसाणं अणगाराणं, तए णं से सक्के देविंदे देवराया आभिओगे देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वसासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! खीरोदगसमुद्दाओ खीरोदगं साहरह तए णं ते आभिओगा देवा खीरोदगसमुद्दाओ खीरोदगं साहरंति, तए णं से सक्के देविंदे देवराया तित्थगरसरीरगं खीरोदगेणं ण्हाणेइ २ त्ता सरसेणं गोसीसवरचंदणेणं अणुलिंपइ २ त्ता हंसलक्खणं पडसाडयं णियंसेइ २ त्ता सव्वालंकारविभूसियं करेइ, तए णं ते० भवणवइ जाव वेमाणिया० गणहरसरीरगाइं अणगार-सरीरगाइंपि खीरोदगेणं ण्हावेंति २ त्ता सरसेणं गोसीसवरचंदणेणं अणुलिंपंति २ त्ता अहताइं दिव्वाइं देवदूसजुयलाइं णियंसेंति २ त्ता सव्वालंकारविभूसियाइं करेंति, तए णं से सक्के देविंदे देवराया ते बहवे भवणवइ जाव वेमाणिए देवे एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! ईहामिग-उसभ-तुरय जाव वणलयभत्तिचित्ताओ तओ सिवियाओ विउव्वह, एगं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवओ तित्थगरस्स एगं गणहराणं एगं अवसेसाणं अणगाराणं, तए णं ते बहवे भवणवइ जाव वेमाणिया० तओ सिबियाओ विउव्वंति, एगं भगवओ तित्थगरस्स एगं गणहराणं एगं अवसेसाणं अणगाराणं।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया विमणे णिराणंदे अंसुपुण्णणयणे भगवओ तित्थगरस्स विणट्ठजम्मजरामरणस्स सरीरगं सीयं आरुहेइ २ चिइगाए ठवेइ, तए णं ते बहवे भवणवइ जाव वेमाणिया देवा गणहराणं अणगाराण य विणट्ठ-जम्मजरामरणाणं सरीरगाइं सीयं आरुहेंति २ त्ता चिइगाए ठवेंति, तए णं से सक्के देविंदे देवराया अग्गिकुमारे देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी – खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! तित्थगरचिइगाए जाव अणगारचिइगाए अगणिकायं विउव्वह २ त्ता एयमाणत्तियं प्रच्चप्पिणह, तए णं ते अग्गिकुमारा देवा विमणा णिराणंदा अंसुपुण्णणयणा तित्थगरचिइगाए जाव अणगारचिइगाए अगणिकायं विउव्वंति।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया! वाउकुमारे देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! तित्थगरचिइगाए जाव अणगारचिइगाए वाउक्कायं विउव्वह २ अगणिकायं उज्जालेह तित्थगरसरीरगं गणहरसरीरगाइं अणगारसरीरगाइं च झामेह, तएणं ते वाउकुमारा देवा विमणा णिराणंदा अंसुपुण्णणयणा तित्थगरचिइगाए जाव विउव्वंति अगणिकायं उज्जालेंति तित्थगरसरीरगं जाव अणगार सरीरागाणि य झामेंति।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया ते बहवे भवणवइ जाव वेमाणिए देवे एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया तित्थगरचिइगाए जाव अणगारचिइगाए अगुरुतुरुक्कघयमहुं च कुंभग्गसो य भारग्गसो य साहरह। तए णं ते भवणवइ जाव तित्थगरचिइगाए जाव भारग्गसो य साहरंति। तए णं से सक्के देविंदे देवराया मेहकुमारे देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! तित्थंगरचिइगं जाव अणगारचिइगं च खीरोदएणं णिव्वावेह।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं ते मेहकुमारा देवा तित्थगरचिइगं जाव णिव्वावेंति। तए णं से सक्के देविंदे देवराया भगवओ तित्थगरस्स उवरिल्लं दाहिणं सकहं गेण्हइ, ईसाणे देविंदे देवराया उवरिल्लं वामं सकहं गेण्हइ, चमरे असुरिंदे असुरराया हिट्ठिल्लं दाहिणं सकहं गेण्हइ, बली वइरोअणिंदे वइरोअणराया हिट्ठिल्लं वामं सकहं गेण्हइ, अवसेसा भवणवई जाव वेमाणिया देवा जहारिहं अवसेसाइं अंगुवगाइं केइ जिणभत्तीए केइ जीअमेयं तिकट्टु केइ धम्मो तिकट्टु गेण्हंति।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया बहवे भवणवइ जाव वेमाणिए देवे जहारिहं एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सव्वरयणामए महइमहालए तओ चेइयथूभे करेह, एगं भगवओ तित्थगरस्स चिइगाए एगं गणहरचिइगाए एगं अवसेसाणं अणगाराणं चिइगाए, तए णं ते बहवे जाव करेंति। तए णं ते बहवे भवणवइ जाव वेमाणिया देवा तित्थगरस्स परिणिव्वाणमहिमं करेंति २ त्ता जेणेव णंदीसरवरे दीवे तेणेव उवागच्छंति। तए णं से सक्के देविंदे पुरत्थिमिल्ले अंजणगपव्वए अट्ठाहिअं महामहिमं करेंति।

तए णं सक्कस्स देविंदस्स चत्तारि लोगपाला चउसु दहिमुहगपव्वएसु अट्ठाहिअं महामहिमं करेंति, ईसाणे देविंदे देवराया उत्तरिल्ले अंजणगपव्वए अट्ठाहिअं महामहिमं करेंति, तस्स लोगपाला चउसु दहिमुहगपव्वएसु अट्ठाहिअं महामहिमं करेंति, चमरोअ दाहिणिल्ले अंजणगे तस्स लोगपाला चउसु दहिमुहगपव्वएसु बली पच्चत्थिमिल्ले अंजणगे, तस्स लोगपाला दहिमुहगेसु पव्वएसु तए णं ते बहवे भवणवइ वाणमंतर जाव अट्ठाहियाओ महामहिमाओ करेंति २ त्ता जेणेव साइं २ विमाणाइं जेणेव साइं २ भवणाइं जेणेव साओ २ सभाओ सुहम्माओ जेणेव सगासगा माणवगा चेइयखंभा तेणेव उवागच्छंति २ त्ता वइरामएसु गोलसमुग्गएसु जिणसकहाओ पक्खिवंति २ त्ता अग्गेहिं वरेहिं गंधेहि य मल्लेहि य अच्चेंति २ त्ता विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति।

Jain Education International　For Personal & Private Use Only　www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - साहरइ - लाओ, **चिइगाओ** - चिता, **रएंति-रचयंति** - बनाते हैं, **णियंसेइ**- पहनाए (न्यस्त किए), **विणट्ठ** - विनष्ट, **चिइगाए** - चिता, **झामेह** - जलाओ, **सकहं** - दाढ़।

भावार्थ - तब देवराज, देवेन्द्र शक्र ने बहुत से भवनपति, वाणव्यंतर एवं ज्योतिष्क देवों से इस प्रकार कहा - देवानुप्रियो! शीघ्र ही नंदनवन से स्निग्ध, सरस, श्रेष्ठ, गोशीर्षचन्दन का काष्ठ लाओ। उस द्वारा तीन चिताएं बनाओ, जिनमें एक भगवान् तीर्थंकर के लिए हो। यह सुनकर वे भवनपति यावत् वैमानिक देव नंदनवन से सरस, श्रेष्ठ गोशीर्ष चंदन काष्ठ लाए। देवराज शक्र के आदेशानुसार एक भगवान् तीर्थंकर के लिए, दूसरी गणधरों के लिए तथा तीसरी अवशिष्ट अनगारों के लिए यों तीन चिताएं बनाई।

तब देवराज शक्र ने आभियोगिक देवों को बुलाया और उनसे कहा - देवानुप्रियो! क्षीरोदक सागर से अविलंब क्षीरोदक लाओ। आभियोगिक देवों ने वैसा ही किया।

इसके बाद देवराज शक्र ने भगवान् के शरीर को स्नान कराया। वैसा कर स्निग्ध, श्रेष्ठ गोशीर्ष चंदन से उनके शरीर पर लेप किया। हंस के समान श्वेत वस्त्र धारण कराए। सभी अलंकारों से विभूषित किया।

फिर उन भवनपति यावत् वैमानिक देवों ने गणधरों एवं अनगारों के शरीरों को भी क्षीरोदक - दुग्धवत् उज्ज्वल जल से नहलाया। तदनंतर सरस, उत्तम गोशीर्ष चंदन का उन पर लेप किया। लेप कर दो-दो दिव्य वस्त्र धारण करवाए तथा सभी अलंकारों से विभूषित किया। उसके बाद देवराज शक्रेन्द्र ने उन भवनपति यावत् वैमानिक देवों से कहा - देवानुप्रियो! वृक, वृषभ, अश्व यावत् वनलता के चित्रों में अंकित तीन शिविकाओं की विकुर्वणा करो, जिनमें से एक भगवान् तीर्थंकर के लिए, एक गणधरों के लिए तथा एक अवशिष्ट अनगारों के लिए हो। इस पर उन भवनपति यावत् वैमानिक देवों के तीन शिविकाओं की रचना की जो क्रमशः उपर्युक्त तीनों के लिए थीं।

तब उद्विग्न, खेदखिन्न, अश्रुपूर्ण नेत्रयुक्त देवराज, देवेन्द्र शक्र ने भगवान् तीर्थंकर के शरीर को जिन्होंने जन्म, वृद्धावस्था एवं मृत्यु को विनष्ट कर दिया, उनसे अतीत हो गए शिविका पर आरूढ़ किया एवं यथाक्रम चिता पर रखा। भवनपति यावत् वैमानिक देवों ने जन्म, वृद्धावस्था एवं मृत्यु के पारगामी गणधरों तथा (अनगारों के शरीरों के शिविका पर आरूढ़ किया) एवं उन्हें चिताओं पर रखा।

तत्पश्चात् देवराज शक्रेन्द्र ने अग्निकुमारों को बुलाया, उनसे कहा - देवानुप्रियो! तीर्थंकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की चिता में यावत् अनगारों की चिता में वैक्रिय लब्धि द्वारा अग्नि उत्पन्न करो। ऐसा कर मुझे ज्ञापित करो कि मेरे आदेश के अनुसार कार्य हो गया है। इस पर उदास, खेद युक्त, अश्रुपूरित नेत्रों से अग्निकुमार देवों ने तीर्थंकर ऋषभ की यावत् अनगारों की चिता में अग्नि उत्पन्न की फिर देवराज शक्र ने वायुकुमार देवों को बुलाया और आदेश दिया कि तीर्थंकर ऋषभ की यावत् अनगारों की चिता में वायुकाय की विकुर्वणा करो-वायु प्रवाह करो, अग्नि को प्रज्वलित करो। तीर्थंकर के, गणधरों के तथा अनगारों के शरीर को अग्नि युक्त करो। खिन्नमन, शोकान्वित एवं अश्रुपूरित वायुकुमार देवों ने तीर्थंकर की चिता में यावत् वायु प्रवाहित किया, अग्नि प्रज्वलित की, तीर्थंकर के शरीर को यावत् अनगारों के शरीर को ध्मामित किया - सुलगाया।

पुनःश्च, देवराज शक्र ने बहुत से भवनपति एवं वैमानिक आदि देवों को आदेश दिया - देवानुप्रियो! तीर्थंकर यावत् अनगारों की चिता में, प्रचुर प्रमाण में अगर, लोबान तथा अनेक घृत के घड़े तथा मधु डालो। तब उन भवनपति आदि देवों ने यावत् तीर्थंकर की चिता में यावत् सभी पदार्थ प्रचुर प्रमाण में डाले। देवराज शक्र ने मेघकुमार देवों को बुलाया और उनसे कहा - देवानुप्रियो! तीर्थंकर यावत् अनगारों की चिताओं को क्षीरोदक से बुझाओ। तब उन मेघकुमार देवों ने तीर्थंकर चिता को यावत् बुझाया।

तब देवराज शक्र ने भगवान् तीर्थंकर की ऊपरी दाहिनी दाढ़ की अस्थि ली। देवराज ईशानेन्द्र ने ऊपर की बायीं दाढ़ की अस्थि ली। असुरपति चमरेन्द्र ने नीचे की दाहिनी दाढ़ की अस्थि ली। वैरोचनराज बली ने बायीं दाढ़ की नीचे की अस्थि ली। उनके अतिरिक्त भवनपति, वैमानिक आदि देवों ने यथायोग्य अस्थियाँ ग्रहण कीं। कइयों ने जिनेन्द्र भगवान् को भक्ति से, कइयों ने प्राचीन व्यवहार के अनुसार तथा कतिपय ने उसे अपना धर्म मानकर ऐसा किया।

तब देवेन्द्र, देवराज शक्र ने भवनपति तथा वैमानिक आदि देवों को इस प्रकार कहा - देवानुप्रियो! सर्व रत्नमय, विशाल तीन स्तूपों की रचना करो। एक भगवान् ऋषभ के चिता स्थान पर, एक गणधरों के चिता स्थान पर तथा एक अनगारों के चिता स्थान पर। तब उन बहुत से यावत् देवों ने वैसा ही किया।

तत्पश्चात् उन बहुत से भवनपति यावत् वैमानिक देवों ने भगवान् तीर्थंकर का परिनिर्वाण महोत्सव आयोजित किया। वैसा कर वे नंदीश्वर द्वीप में आ गए। देवराज शक्र ने पूर्व दिशा स्थित अंजनक पर्वत पर आठ दिनों का परिनिर्वाण महोत्सव किया। देवराज, देवेन्द्र के चार लोकपालों ने चारों दधिमुख पर्वतों पर अष्ट दिवसीय परिनिर्वाण महोत्सव मनाए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवराज ईशानेन्द्र ने उत्तर दिग्वर्ती अंजनक पर्वत पर आठ दिवस पर्यन्त महोत्सव आयोजित किया। उसके लोकपालों ने चारों दधिमुख पर्वतों पर अष्टदिवसीय परिनिर्वाण महोत्सव मनाया। चमरेन्द्र ने दक्षिण दिग्वर्ती अंजनक पर्वत पर, उसके लोकपालों ने दधिमुख पर्वत पर तथा बली ने पश्चिम दिग्वर्ती अंजनक पर्वत पर तथा उसके लोकपालों ने दधिमुख पर्वत पर परिनिर्वाण महोत्सव आयोजित किया। इस प्रकार बहुत से भवनपति यावत् वाणव्यंतर देवों ने अष्टाह्निक महोत्सव मनाया। ऐसा कर अपने-अपने विमान, भवन, सुधर्मा सभाएं तथा अपने-अपने माणवक संज्ञक चैत्य स्तंभ जहाँ थे, वहाँ आए। वहाँ आकार जिनेश्वर देव की अस्थियों को हीरों से निर्मित गोलाकार डिबियाओं (भाजन विशेष) में रखा। नूतन मालाओं एवं सुरभिमय द्रव्यों से उनकी अर्चना की। अर्चना कर अपने प्रचुर भोगोपभोगमय जीवन में घुल-मिल गए।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में भगवान् ऋषभदेव के परिनिर्वाण के बाद देवकृत महिमा महोत्सव का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत प्रकरण से उठी हुई शंकाओं का समाधान इस प्रकार है -

शंका - प्रस्तुत सूत्र में देवादि द्वारा तीर्थंकरों की दाढाएं जिन भक्ति से, जीताचार से और धर्म जान कर ग्रहण करने का उल्लेख आया है तो फिर अस्थिपूजा की तरह मूर्तिपूजा को आत्म कल्याणकारी मानने में क्या बाधा है?

समाधान - जो इन्द्रादि देव तीर्थंकर की दाढ़ा लेते हैं तथा वंदनादि करते हैं वे आत्म-कल्याणार्थ नहीं, न उनके इस कृत्य को शास्त्रकार ने आत्म कल्याणकारी माना है। आगमकार ने तो इस सूत्र में देवताओं की भावना का निर्देश मात्र किया है, जैसे कि -

केइ जिणभत्तीए, केइ जीअमेयंति कट्टु केइ धम्मातिकट्टु गेण्हंति

इसमें स्पष्ट बताया गया है कि कितने ही देव जिनभक्ति से, कितने ही परम्परागत आचार से और कितने ही धर्म जान कर ग्रहण करते हैं।

जब देवों के भी दाढा लेने मे भिन्न भिन्न विचार हैं तो उसमे एकान्त धर्म ही कैसे बतलाया जा सकता है? वास्तव में दाढ़ा पूजा से धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं है, धर्म नायक-तीर्थंकर देव की दाढ़ा होने मात्र से वे जड़ दाढ़ाएं पूजनीय वंदनीय नहीं हो सकती, इसलिए जिन देवों ने उन दाढ़ाओं को धर्म समझ कर ग्रहण किया हो या जो धर्म मानकर वन्दते पूजते हों, उनकी मान्यता ठीक नहीं पाई जाती। वास्तव में यह भी राग का ही अविवेक है। क्योंकि यदि हड्डियों के ग्रहण करने या वन्दने पूजने में आत्म-कल्याण रहा होता तो प्रभु के अनेकों गणधर, पूर्वधर, श्रुतधर, साधु साध्वियें और लाखों श्रावक-श्राविकायें भी प्रभु की अस्थियें लेकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वन्दना, स्तुति, पूजा आदि करते या उन्हीं हड्डियों के स्थापना तीर्थंकर (स्थापनाचार्य की तरह) बना कर रखते जबकि किसी भी साधु या साध्वी या श्रावक श्राविका ने अस्थि पूजा में धर्म नहीं माना, न गणधरों ने ही धर्म मानने का आदेश किया, तो ये मूर्ति भक्त महानुभाव हड्डी पूजा में धर्म बताकर क्यों भ्रम फैलाते हैं? आश्चर्य नहीं कि ऐसे ही प्रचार से जैन गृहस्थों में भी मरे हुए की हड्डियें तीर्थ के जलाशय में डालने का रिवाज चला हो? जबकि गृहस्थ अपने माता-पिता की हड्डियों को सम्हाल कर अच्छे भाजन में रखे और उन्हें कालान्तर में गङ्गा आदि नदी में डाल कर अपने कर्त्तव्य का पालन होना समझे, उन्हें तो हम मिथ्या क्रिया करने वाले कहें और हम खुद हड्डियों की पूजा में धर्म होना माने यह कहाँ का न्याय है?

वास्तव मे इन्द्रादि देव जीताचार और प्रभु के प्रति अनन्य राग से ही क्रियाएं करते हैं किन्तु आत्म-कल्याण रूप धर्म के निमित्त नहीं। दाढा पूजनादि से मूर्तिपूजा का कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि अस्थि पूजा जैन समाज को मान्य नहीं है। देवताओं द्वारा दाढा पूजनादि क्रिया लौकिक (सांसारिक) व्यवहार की है, लोकोत्तर (आत्म-कल्याण की) नहीं।

शंका - प्रस्तुत सूत्र में बताया गया है कि ऋषभदेव भगवान्, गणधर एवं साधुओं की जहाँ चिता जलाई वहा शक्रेन्द्र ने स्तूप बनाए तो फिर मूर्तिपूजा में क्या बाधा है?

समाधान - शक्रेन्द्र अव्रती होते हैं और अव्रती की क्रिया धर्म नहीं होती। शक्रेन्द्र को भगवान् के वियोग में मोह और राग के कारण, आँसू बहाना, शौक करना आदि भी बताया है। अतः शक्रेन्द्र ने भगवान् का मोह रूप स्मृति चिह्न अर्थात् स्तूप का निर्माण करवाया। परन्तु वहाँ पर भी भगवान् ऋषभ देव की मूर्ति का कोई संकेत नहीं है तथा **उस स्तूप को स्वयं इन्द्र या किसी भी देव ने नमस्कार नहीं किया** और कोई भी साधु या श्रावक उस स्तूप के दर्शन, पूजा आदि करने नहीं गया। **अगर मूर्ति पूजा ही धर्म का प्रमुख अंग होता तो इन्द्र ने विशाल मन्दिर बनवाकर ऋषभदेव की मूर्ति बिठाकर, प्रतिष्ठा क्यों नहीं करवाई? केवल स्तूप बनाकर ही क्यों चला गया?** पीछे से भगवान् के श्रावकों ने भी वहाँ पर मूर्ति या मंदिर क्यों नहीं बनवाया? इन्द्र द्वारा निर्मित स्तूप केवल स्मृति रूप ही होने से उसका धर्म से कोई संबंध नहीं है।

शंका - कुछ इतिहासकार भगवान् ऋषभदेव आदि की चिताओं पर भरत चक्रवर्ती द्वारा मंदिर निर्माण कर मूर्ति पूजा का उल्लेख करते हैं, सो क्या उचित है?

समाधान - अर्वाचीन काल में कुछ कल्पित इतिहासकारों ने भगवान् ऋषभदेव आदि की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चिताओं के ऊपर, भरत चक्रवर्ती के द्वारा मंदिर बनवाने का असत्य लेख लिखकर, मूर्ति-पूजा में धर्म बताने की असफल चेष्टा की है, जो चल नहीं सकी, क्योंकि जम्बूद्वीपपन्नती सूत्र के द्वितीय वक्षस्कार में ऋषभदेव का एवं तृतीय वक्षस्कार में भरत राजा के जीवन का विस्तार से वर्णन किया है। उसी के अंतर्गत इन्द्र के द्वारा स्तूप-निर्माण का वर्णन है, परन्तु यदि भरत ने मंदिर बनाये होते तो उसका उल्लेख शास्त्र में क्यों नहीं? अव्रती इन्द्र के द्वारा साधारण स्तूप निर्माण का उल्लेख तो शास्त्र में कर दिया, परन्तु भगवान् के ज्येष्ठ पुत्र द्वारा मंदिर-निर्माण की बात का कहीं शास्त्र में संकेत भी नहीं है। अतः भरत के द्वारा मंदिर बनाने का कथन सत्य से बहुत दूर है। सुज्ञ बंधु चिंतन करें। इन्द्र द्वारा निर्मित स्तूप केवल स्मृति रूप ही होने से उसका धर्म से कोई संबंध नहीं है और हमारा आत्म-कल्याण तो भगवान् की आज्ञा का पालने करने से होगा, मूर्ति, स्तूप और स्मृति मात्र से नहीं।

शंका - स्तूप (मूर्ति) को देख कर भगवान् की स्मृति होती है तो हमें मूर्ति पूजा क्यों नहीं करना?

समाधान - पति का फोटो देखकर पति की स्मृति आ जाने मात्र से वह औरत सधवा नहीं हो सकती तथा पिता का फोटो देखकर स्मृति करने मात्र से वह सुपुत्र नहीं हो सकता। अगर कोई व्यक्ति, पिता का फोटो देखे बिना ही पिता के द्वारा दी गई शिक्षा एवं आज्ञा का पालन करे तो वह सुपुत्र कहला सकता है। इसी प्रकार हम भी भगवान् के द्वारा दी गई शिक्षा एवं आज्ञा का पालन करें, तो निश्चित ही हमारा कल्याण हो सकता है। मूर्ति को देखने मात्र से कल्याण नहीं हो सकता।

पिता की फोटो से पिता के जीवन-चरित्र और पिता की शिक्षाओं का ज्ञान नहीं होता। इसी तरह भगवान् की मूर्ति से भगवान् का जीवन चरित्र और भगवान् की वाणी का ज्ञान नहीं होता। फोटो और मूर्ति से स्मृति हो जाये तो भी स्मृति मोह का कारण है, मोह से ममत्व पैदा होता है और ममत्व से हमारा कल्याण नहीं हो सकता। अतः **'मोह रूप'** स्मृति नहीं हो कर **'भक्ति रूप श्रद्धा'** होनी चाहिए। अगर पिता पर भक्ति है तो पिता की आज्ञा का पालन होगा और मोह रूप स्मृति है तो आंसू बहायेगा, शोक करेगा। इसी प्रकार भगवान् पर शक्ति रूप श्रद्धा है तो भगवान् की आज्ञा का पालन होगा और मोह रूप स्मृति है तो भगवान् के वियोग में शोक करेगा। अतः भक्ति रूप श्रद्धा से आज्ञा का पालन करे तो उसी से हमारा कल्याण संभव है, मूर्ति को देखने एवं स्मृति मात्र से कल्याण नहीं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंका - स्त्री का चित्र देखने से विचार विकृत बन सकते हैं, तो मूर्ति से शुभ भाव क्यों नहीं?

समाधान - स्त्री चित्र देखकर विकृति आना, उदय भाव में होने के कारण, इन्द्रियाँ अपने-अपने विषय के प्रवाह में जल्दी बह जाती हैं। लेकिन शुभ भावों, विशिष्ट क्षयोपशम और ज्ञान के पुरुषार्थ से उन्हें जबरदस्ती खींचकर जगाना पड़ता है। जैसे नदी के प्रवाह में बहना सरल है और प्रवाह से विपरीत चलना मुश्किल है। इसी प्रकार स्त्री के चित्र से हजारों लोग प्रतिदिन विकृत मानस बना सकते हैं और मूर्ति से वैराग्य की प्राप्ति का कोई उदाहरण, किसी भी शास्त्र में नहीं है। फिर भी कभी कोई विशिष्ट आत्मा, मूर्ति को देखकर वैराग्य प्राप्त कर भी ले, तो भी मूर्ति वंदनीय नहीं है। क्योंकि विशिष्ट ज्ञानी आत्मा के लिए संसार का कोई भी पदार्थ चिंतन करने से वैराग्य का कारण बन सकता है। फिर भी वह पदार्थ वंदनीय नहीं होता। जैसे उत्तराध्ययन सूत्र के २१ वें अध्ययन में समुद्रपाल ने चोर को देखकर वैराग्य पाया। उत्तराध्ययन अध्ययन ६ में नमिराज ने चूड़ियों के शब्दों से वैराग्य पाया। उत्तराध्ययन के अध्ययन १८ में करकंडु राजा ने बैल को देखकर वैराग्य प्राप्त किया। पवन पुत्र हनुमान जी ने डूबते हुए सूर्य को देखकर वैराग्य प्राप्त कर दीक्षा ली। ऐसे अनेक उदाहरण शास्त्रों में भरे पड़े हैं। परन्तु फिर भी जो मूर्ति के पक्षधर हैं वे भी इस चोर, चूड़ी, बैल और सूर्य को वंदनीय नहीं मानते हैं, क्योंकि इनमें ज्ञान, दर्शन, चारित्र के गुण नहीं हैं। अधिक क्या कहा जाय! पदार्थ तो सामान्य है, परन्तु साक्षात् सचेतन अवधिज्ञान से युक्त, तीर्थंकरों का असली शरीर भी, दीक्षा लेने के पहले, किसी साधु और श्रावक के द्वारा वंदनीय नहीं होता है, तो फिर भगवान् का कारीगर द्वारा कल्पित बनाया हुआ नकली जड़ शरीर (मूर्ति) कैसे वंदनीय हो सकता है? बुद्धिमान चिंतन करें।

शंका - मूर्ति को देखकर यदि 'भक्ति रूप श्रद्धा' हो जाये तथा दीक्षा ले कर मोक्ष प्राप्त कर ले तो फिर मूर्ति पूजनीय क्यों नहीं हो सकती?

समाधान - विशिष्ट क्षयोपशम वाले अपवाद स्वरूप चिंतनशील व्यक्ति, मूर्ति को देखकर कदाचित् वैराग्य प्राप्त कर अपना आत्म-कल्याण कर भी ले तो भी मूर्ति पूजनीय नहीं है, जैसे- समुद्रपाल, करकंडू राजा आदि महापुरुषों ने चोर, बैल आदि को देखकर वैराग्य प्राप्त किया, तो भी चोर, बैल आदि पूजनीय नहीं होते हैं। इसी प्रकार मूर्ति भी पूजनीय नहीं हो सकती।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवसर्पिणी : दुःषम-सुषमा आरक

(४४)

तीसे णं समाए दोहिं सागरोवम कोडाकोडीहिं काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं तहेव जाव अणंतेहिं उट्ठाणकम्म जाव परिहायमाणे परिहायमाणे एत्थ णं दूसमसुसमा णामं समाकाले पडिवज्जिंसु समणाउसो!।

तीसे णं भंते! समाए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए - आलिंगपुक्खरेइ वा जाव मणीहिं उवसोभिए, तंजहा- कित्तिमेहिं चेव०।

तीसे णं भंते! समाए भरहे० मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे प०?

गोयमा! तेसिं मणुयाणं छव्विहे संघयणे छव्विहे संठाणे बहूइं धणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउयं पालेंति २ त्ता अप्पेगइया णिरयगामी जाव देवगामी अप्पेगइया सिज्झंति बुज्झंति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, तीसे णं समाए तओ वंसा समुप्पज्जित्था, तंजहा - अरहंतवंसे चक्कवट्टिवंसे दसारवंसे, तीसे णं समाए तेवीसं तित्थयरा एक्कारस चक्कवट्टी णव बलदेवा णव वासुदेवा समुप्पज्जित्था।

भावार्थ - हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! उस समय तीसरे आरक का दो सागरोपम कोड़ाकोड़ी काल बीत जाने पर अनंत वर्ण पर्याय उसी प्रकार यावत् अनंत उत्थान कर्म यावत् इस दुःषम-सुषमा काल में क्रमशः इनकी परिहानि होती रहती है।

हे भगवन्! उस समय भरतक्षेत्र का आकार-प्रकार कैसा होता है?

हे गौतम! उस समय भरतक्षेत्र का भूमिभाग अत्यंत समतल और रम्य होता है। ढोलक के उपरितन चर्मपुट के समान मुलायम यावत् रत्नशोभित होता है। वे रत्न कृत्रिम और अकृत्रिम-नैसर्गिक होते हैं।

हे भगवन्! उस समय के मानवों का आकार-स्वरूप किस प्रकार का होता है?

हे गौतम! उस समय के मनुष्यों के छह प्रकार के संहनन और छह प्रकार के संस्थान होते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। वे ऊँचाई में अनेक धनुष प्रमाण होते हैं। कम से कम पूर्ण कोटि का आयुष्य भोग कर कतिपय नरक गति में यावत् कतिपय देवगति में जाते हैं तथा कतिपय सिद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं यावत् सब दुःखों का अंत करते हैं।

उस काल में अर्हत् वंश, चक्रवर्ती वंश तथा दशार वंश-ये तीन वंश उत्पन्न होते हैं। उस समय तेवीस तीर्थंकर, ग्यारह चक्रवर्ती, नौ बलदेव एवं नौ वासुदेव उत्पन्न होते हैं।

अवसर्पिणी का दुषमा आरक

(४५)

तीसे णं समाए एक्काए सागरोवमकोडाकोडीए बायालीसाए वाससहस्सेहिं ऊणियाए काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं तहेव जाव परिहाणीए परिहायमाणे २ एत्थ णं दूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो!।

तीसे णं भंते! समाए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे भविस्सइ से जहाणामए-आलिंगपुक्खरेइ वा मुइंगपुक्खरेइ वा जाव णाणामणिपंचवण्णेहिं कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।

तीसे णं भंते! समाए भरहस्स वासस्स मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! तेसिं मणुयाणं छव्विहे संघयणे छव्विहे संठाणे बहुईओ रयणीओ उद्धं उच्चत्तेणं जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं साइरेगं वाससयं आउयं पालेंति २ त्ता अप्पेगइया णिरयगामी जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, तीसे णं समाए पच्छिमे तिभागे गणधम्मे पासंडधम्मे रायधम्मे जायतेए धम्मचरणे य वोच्छिज्जिस्सइ।

शब्दार्थ- **उद्धं** - ऊँचाई, **साइरेगं** - अधिकता सहित, **वोच्छिज्जिस्सई** - विच्छिन्न हो जाते हैं।

भावार्थ - हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! उस समय-चौथे आरे के समय बयालीस सहस्त्र वर्ष कम एक सागरोपम कोड़ाकोड़ी काल व्यतीत होने पर अवसर्पिणी काल का दुःषमा संज्ञक आरक शुरू होता है। उस काल में अनन्त वर्ण पर्याय यावत् क्रमशः ह्रासोन्मुख होते जाते हैं।

हे भगवन्! उस काल में भरतक्षेत्र का आकार-प्रकार किस तरह का होता है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! उस समय भरत क्षेत्र का भूमिभाग अत्यंत समतल एवं रम्य होता है। वह ढोलक या मृदंग के चर्मनद्ध के उपरितन भाग के सदृश कोमल स्निग्ध यावत् नाना प्रकार की पंचवर्णी कृत्रिम अकृत्रिम मणियों द्वारा उपशोभित होता है।

हे भगवन्! उस काल के मनुष्यों का स्वरूप कैसा होता है?

हे गौतम! उस समय भरत क्षेत्र के मनुष्य छह प्रकार के संहनन एवं संस्थान युक्त होते हैं। उनकी ऊँचाई अनेक हाथ–सात हाथ होती है। वे कम से कम अन्तर्मुहूर्त्त तथा अधिकतम सौ वर्ष से कुछ अधिक आयुष्य का भोग करते हैं। इनमें से कतिपय नरकगति में यावत् कतिपय सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होते हुए समस्त दुःखों का अंत करते हैं।

उस काल के आखिरी - तीसरे भाग में गण धर्म, पाखंड धर्म, राजधर्म, जाततेज-अग्नि तथा चरित्र धर्म विच्छिन्न हो जाते हैं।

विवेचन - इस सूत्र में प्रयुक्त गणधर धर्म का अभिप्राय किसी समुदाय या जाति के वैवाहिक आदि स्व-स्व प्रवर्तित व्यवहार से है। अर्थात् - जातीय बंधन टूट जाते हैं। विभिन्न जातियों में वैवाहिक संबंध खुले रूप में प्रचलित हो जाते हैं।

'पाखंड धर्म' विशेष रूप से विचारणीय है। भाषा शास्त्र के अनुसार किसी शब्द का एक समय जो अर्थ होता है, आगे चलकर परिवर्तित स्थितियों में वह सर्वथा बदल जाता है। पाखंड या पाखंडी शब्द के अर्थ में प्राचीनकाल में प्रचलित अर्थ में सर्वथा भिन्नता है। भगवान् महावीर के समय में तथा आगे भी कई शताब्दियों तक पाखण्ड शब्द जैन धर्म से इतर मतों के लिए प्रयुक्त होता रहा है, उसके साथ कोई निंदात्मक भाव नहीं रहा। आज पाखण्ड या पाखण्डी शब्द छल एवं प्रवंचना युक्त, छद्मवेशी तथाकथित धर्मोपदेशकों या धार्मिकों के लिए प्रयुक्त होता है। उसमें निंदात्मक तथा घृणात्मक भाव जुड़ा है।

अवसर्पिणी का दुःषम-दुःषमा आरक

(४६)

तीसे णं समाए एक्कवीसाए वाससहस्सेहिं काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं गंधपज्जवेहिं रसपज्जवेहिं फासपज्जवेहिं जाव परिहायमाणे २ एत्थ णं दूसमदूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो!, तीसे णं भंते! समाए उत्तमकट्ठपत्ताए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! काले भविस्सइ हाहाभूए, भंभाभूए, कोलाहलभूए, समाणुभावेण य खरफरुसधूलिमइला, दुव्विसहा, वाउला, भयंकरा य वाया संवट्टगा य वाइंति, इह अभिक्खणं २ धूमाहिंति य दिसा समंता रउस्सला रेणुकलुसतम-पडलणिरालोया, समयलुक्खयाए णं अहियं चंदा सीयं मोच्छिहिंति, अहियं सूरिया तविस्संति, अदुत्तरं च णं गोयमा! अभिक्खणं २ अरसमेहा, विरसमेहा, खारमेहा, खत्तमेहा, अग्गिमेहा, विज्जुमेहा, विसमेहा, अजवणिज्जोदगा, वाहिरोग-वेयणोदीरणपरिणामसलिला, अमणुण्णपाणियगा चंडाणिलपहयतिक्खधारा-णिवायपउरं वासं वासिहिंति, जेणं भरहे वासे गामागरणगरखेडकब्बडमडंबदोण-मुहपट्टणासमगयं जणवयं, चउप्पयगवेलए, खहयरे, पक्खिसंधे गामारण्णप्पयार-णिरए तसे य पाणे, बहुप्पयारे रुक्खगुच्छगुम्मलयवल्लिपवालंकुरमाइए तण-वणस्सइकाइए ओसहीओ य विद्धंसेहिंति, पव्वयगिरिडोंगरुत्थलभट्ठिमाइए य वेयड्ढ गिरिवज्जे विरावेहिंति, सलिलबिलविसमगत्तणिण्णुण्णयाणि य गंगासिंधु-वज्जाइं समीकरेहिंति।

तीसे णं भंते! समाए भरहस्स वासस्स भूमीए केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ ?

गोयमा! भूमी भविस्सइ इंगालभूया, मुम्मुरभूया, छारियभूया, तत्तकवेल्लुय-भूया, तत्तसमजोइभूया, धूलिबहुला, रेणुबहुला, पंकबहुला, पणयबहुला, चलणिबहुला, बहूणं धरणिगोयराणं सत्ताणं दुण्णिक्कमा यावि भविस्सइ।

तीसे णं भंते! समाए भरहे वासे मणुयाणं केरिसए आयार भावपडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! मणुया भविस्संति दुरूवा, दुव्वण्णा, दुगंधा, दुरसा, दुफासा, अणिट्ठा, अकंता, अप्पिया, असुभा, अमणुण्णा, अमणामा, हीणस्सरा, दीणस्सरा, अणिट्ठस्सरा, अकंतस्सरा, अप्पियस्सरा, अमणुण्णस्सरा, अमणामस्सरा, अणादेज्जवयणपच्चायाया, णिल्लज्जा, कूड-कवड-कलह-बंध-वेर-णिरया, मज्जायातिक्कमप्पहाणा, अकज्जणिच्चुज्जुया गुरुणिओगविणयरहिया य,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विकलरूवा, परूढणहकेसमंसुरोमा, काला, खरफरुससमावण्णा, फुट्टसिरा, कविलपलियकेसा, बहुण्हारुणिसंपिणद्धदुद्दंसणिज्जरूवा, संकुडिय-वलीतरंग-परिवेढियंगमंगा, जरापरिणयव्वथेरगणरा, पविरलपरिसडियदंतसेढी, उब्भडघड-मुहा, विसमणयणवंकणासा, वंकवलीविगयभेसणमुहा, दद्दु-विकिटिभ-सिब्भ-फुडिय-फरुसच्छवी, चित्तलंगमंगा, कच्छूखसराभिभूआ, खरतिक्खणक्खकंडूइ-यविक्कयतणू, टोलगइ-विसमसंधिबंधणा, उक्कडुयट्ठियविभत्तदुब्बलकुसंघयण-कुप्पमाणकुसंठिया, कुरूवा, कुट्ठाणासणकुसेज्जकुभोइणो, असुइणो, अणेग-वाहिपीलियंगमंगा, खलंतविब्भलगई, णिरुच्छाहा, सत्तपरिवज्जिया विगयचेट्ठा, णट्ठतेया अभिक्खणं २ सीउण्हखरफरुसवायविज्झडियमलिणपंसुरओगुंडियंगमंगा बहुकोहमाणमायालोभा बहुमोहा असुहदुक्खभागी ओसण्णं धम्मसण्णसम्मत्त-परिभट्ठा उक्कोसेणं रयणिप्पमाणमेत्ता सोलसवीसइवासपरमाउसो बहुपुत्तणत्तु-परियालपणय-बहुला गंगासिंधूओ महाणईओ वेयड्ढं च पव्वयं णीसाए बावत्तरिं णिगोयवीयं वीयमेत्ता बिलवासिणो मणुया भविस्संति।

ते णं भंते! मणुया किमाहारिस्संति?

गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं गंगासिंधूओ महाणईओ रहपहमित्त-वित्थराओ अक्खसोयप्पमाणमेत्तं जलं वोज्झिहिंति, सेविय णं जले बहुमच्छ-कच्छभाइण्णे, णो चेव णं आउबहुले भविस्सइ, तए णं ते मणुया सूरुग्गमणमुहुत्तंसि य सूरत्थमणमुहुत्तंसि य बिलेहिंतो णिद्धाइस्संति बिले० २ त्ता मच्छकच्छभे थलाइं गाहेहिंति मच्छकच्छभे थलाइं गाहेत्ता सीयायवतत्तेहिं मच्छकच्छभेहिं इक्कवीसं वाससहस्साइं वित्तिं कप्पेमाणा विहरिस्संति।

ते णं भंते! मणुया णिस्सीला णिव्वया णिग्गुणा णिम्मेरा णिप्पच्चक्खाण पोसहोववासा ओसण्णं मंसाहारा मच्छाहारा खुड्डाहारा कुणिमाहारा कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिंति कहिं उववज्जिहिंति?

गोयमा! ओसण्णं णरगतिरिक्खजोणिएसुं उववज्जिहिंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसे णं भंते! समाए सीहा वग्घा विगा दीविया अच्छा तरच्छा परस्सरा सरभसियालबिरालसुणगा कोलसुणगा ससगा चित्तगा चिल्ललगा ओसण्णं मंसाहारा मच्छाहारा खुद्दाहारा कुणिमाहारा कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिंति कहिं उववज्जिहिंति?

गोयमा! ओसण्णं णरगतिरिक्खजोणिएसुं उववज्जिहिंति।

ते णं भंते! ढंका कंका पीलगा मग्गुगा सिही ओसण्णं मंसाहारा जाव कहिं उच्छिहिंति कहिं उववज्जिहिंति?

गोयमा! ओसण्णं णरगतिरिक्ख-जोणिएसुं उववज्जिहिंति।

शब्दार्थ - उत्तमकट्ठपत्ताए - उत्कर्ष की पराकाष्ठा, **भंभाभूय** - दुःख युक्त चीत्कार, **लुक्खयाए** - रूक्षता के कारण, **अजवणिज्जोदगा** - दूषित जल युक्त, **विद्धसेहिंति** - विध्वंस कर देंगे, **भट्टि** - भ्राष्ट्र-धूल रहित पठार, **विरावेहिंति** - तहस-नहस कर देंगे, **समी करेहिंति**- एक समान कर देंगे, **इंगालभूया** - अंगारभूता-अंगारों का समूह, **केवल्लुय** - कड़ाहा, **सत्ताणं**- प्राणियों का, **दुण्णिकम्मा** - चलने-फिरने में कठिनता युक्त, **कूड** - कूट भ्रमोत्पादक, **ण्हारु**- स्नायु, **दद्दु** - दाद, **विकिटिभ** - खाज, **सिब्भ** - सेहुआ-फोड़े, **चिंत्तल** - चित कबरे, **कच्छू** - पांव-विशेष प्रकार की खुजली, **टोलगई** - ऊँटों की जैसी गति, **खलंत** - डगमगाते हुए, **पंसुर** - धूल, **विज्झडिय** - चिपकी हुई, **सण्ण** - संज्ञा, **रयणि** - रजनी-एक हाथ, **पणय** - मोह, **आउबहुले** - सजातीय अप्काय के जीव, **णिद्धाइत्ता** - तेजी से दौड़कर, **तरच्छ** - बाघ जाति का हिंसक प्राणी, **परस्सरा** - गेंडा, **सिही** - मोर।

भावार्थ - हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! पांचवें आरे के इक्कीस सहस्त्र वर्ष बीत जाने पर अवसर्पिणी काल का दुःषम-दुःषमा नामक छठा आरा शुरू होगा। उसमें अनन्त वर्ण पर्याय, गंध पर्याय, रस पर्याय एवं स्पर्श पर्याय यावत् उत्तरोत्तर क्रमशः ह्रासोन्मुख होते जायेंगे।

हे भगवन्! जब वह आरक उत्कर्ष की पराकाष्ठा पर पहुँचेगा तो भरत क्षेत्र का आकार प्रकार कैसा होगा?

हे गौतम! उस समय लोग दुःखों से आर्त्त होंगे। उनमें हाहाकार मच जायेगा। गाय आदि पशु दुःख से चीत्कार कर उठेंगे। अथवा भंशा या भेरी के भीतर के शून्य या रिक्त भाग के समान वह समय विपुल जनक्षय के कारण जन रहित हो जायेगा। उस काल का ऐसा ही प्रभाव होगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तब कठोर, धूलिमलिन, दुस्सह, भयंकर संवर्त्तक - चक्रवत् तीव्र गति से वर्तित होने वाली वायु चलेगी। उस काल में दिशाएं प्रतिक्षण धूमिल रहेंगी। वे रजकणों से सर्वथा भरी होंगी। कुछ भी दिखाई नहीं देगा। ये अंधकार के कारण प्रकाश शून्य हो जायेंगी। काल की रूक्षता के कारण चन्द्रमा अहितकर, अपथ्यकर, शीत हिम छोड़ेंगे। सूरज अत्यंत असह्य रूप में तपेंगे।

हे गौतम! तत्पश्चात् अमनोज्ञ, रसवर्जित, जलयुक्त मेघ, विपरीत रस युक्त मेघ, क्षारमेघ-क्षार के समान जल वाले मेघ, खात्रमेघ - करीष के समान अम्ल या खट्टे जलयुक्त मेघ, अग्निमेघ - आग बरसाने वाले मेघ, विषमेघ - जहरीले पानी के मेघ, दूषित जल युक्त मेघ, व्याधि - कोढ, रोग, शूल आदि सद्यः घाति बीमारी से प्राण लेने वाले वेदनोत्पादक जलयुक्त मेघ, अप्रिय जलयुक्त - प्रचुर बौछार छोड़ने वाले मेघ निरंतर वर्षा करेंगे।

भरतक्षेत्र में ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्वट, मडंब, द्रोणमुख, पट्टन, आश्रमगत जनपद, मनुष्य वृंद, गाय आदि चौपाए प्राणी, खेचर-गगनधारी विद्याधर, पक्षी समूह, गाँवों एवं अरण्यों में विद्यमान द्वीन्द्रिय आदि जीव, बहुत प्रकार के वृक्ष, वृक्षों के समूह, लताओं के झुरमुट, बेलों के अंकुर, घास आदि वनस्पतियों और जड़ी-बूंटियों का वे विनाश कर डालेंगे।

वैताढ्य आदि शाश्वत पर्वतों के अलावा अन्य पर्वत, गिरि, डूंगर-पथरीले टीले, धूल रहित पथरीली भूमि-पठार-इन सबको नष्ट-मृष्ट कर डालेंगे। गंगा तथा सिंधु महानदी के सिवाय जलस्रोत, निर्झर, विषमगर्त, उबड़-खाबड़ खड्डे, ऊँचे-नीचे स्थान - इन सभी को एक समान कर देंगे।

हे भगवन्! उस काल में भरतक्षेत्र की भूमि का स्वरूप कैसा होगा?

हे गौतम! उस काल में भूमि अंगार समूहमय मुर्मुरभूत—तुषाग्नि के सदृश विरल अग्निकणयुक्त, छारियभूया-भस्मरूप या राखमय, तपे हुए कड़ाहे के तुल्य एक सदृश तप्त ज्वालामय होगी। उसमें धूलि, रेणु, बालु, पंक-कर्दम, पतला कीचड़, घोर कीचड़—दलदल का बाहुल्य होगा। बहुत से प्राणियों का पृथ्वी पर चलना कठिन होगा।

हे भगवन्! उस समय में भरतक्षेत्र में मानवों का आकार-प्रकार किस प्रकार का होगा?

हे गौतम! उस समय मनुष्य कुरूप, दूषित वर्ण युक्त, दुर्गंधयुक्त एवं दूषित स्पर्श युक्त, अप्रिय, कांतिवर्जित, अनिष्ट, अशुभ, अमनोज्ञ, अमनोगम्य-अरुचिकर लगने वाले होंगे। उनका स्वर हीन, दीन, अनिष्ट, अकांत, अप्रिय, अमनोज्ञ एवं अमनोगम्य होगा। उनका वचन अनादेय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होगा। वे लज्जा रहित, भ्रमोत्पादक, कपट, कलह-झगड़े, बंधन-रस्सी आदि द्वारा बांधना, वैरनिरत-शत्रुभाव में संलग्न होंगे। मर्यादाओं के लंघन और उच्छेदन में विशेष रूप से लगे रहने वाले, अकार्य में नित्य उद्यत, गुरुजन की आज्ञा और विनय से रहित होंगे। वे असंपूर्ण देह युक्त-विकलांग, बढे हुए नाखून, बाल और दाढी-मूंछ युक्त होंगे। काले-कलूटे, कठोर स्पर्शयुक्त, श्यामवर्ण वाले, गहरी रेखाओं के कारण फूटे हुए से मस्तक से युक्त, धूम जैसे रंग एवं श्वेत केशों वाले, अत्यधिक स्नायु-नाड़ियों से युक्त, देखने में कुत्सित रूप युक्त, देह में पास-पास पड़ी झुर्रियों, सलवटों से वेष्टित-छाए हुए अंगोपांग वाले, वृद्धावस्था परिणत देह के कारण बूढों के समान, दूर-दूर संस्थित दंतपक्ति वाले, घड़े के विकार युक्त मुख के समान मुँह वाले, असमाननेत्र, टेढी नासिका तथा झुर्रियों से घृणास्पद प्रतीत होने वले, भयावह मुखयुक्त, दाद, खाज, फोड़े आदि से विकृत त्वचायुक्त चितकबरे अंगयुक्त, पाँव, खसरे नामक चर्मरोग से पीड़ित, कठोर एवं तीखे नखों से खुजलाने के कारण वर्ण या खरोच सहित देहयुक्त, ऊँटों जैसी चाल और विषम शारीरिक बंधन युक्त, अव्यवस्थित अस्थियुक्त, दूषित भोजन युक्त, दुर्बल, कुत्सित संघनन, परिमाण तथा रूपयुक्त, कुत्सित स्थान, आसन, शय्या एवं भोजन सेवी, अशुचि अथवा अश्रुति-ज्ञान रहित, अनेक रोगों से पीड़ित अंगोपांग युक्त, लड़खड़ाते हुए चलने वाले, उत्साहहीन, सत्वहीन, चेष्टाहीन, तेजहीन, निरंतर शीतल, गर्म, तेज, कठोर वायु से व्याप्त शरीर युक्त, मैली धूल से भरे हुए शरीर वाले, अत्यंत क्रोध, घमंड, छल-कपट और मोहयुक्त, अशुभ कर्मों के परिणाम स्वरूप दुःखित, धार्मिक श्रद्धा और सम्यक्त्व से भ्रष्ट होंगे।

उनके शरीर का परिमाण या ऊँचाई अधिक से अधिक एक हाथ-चौबीस अंगुल की होगी। उनमें से स्त्रियों की आयु सोलह वर्ष तथा पुरुषों की बीस होगी। अपने पुत्र-पौत्रों से भरे-पूरे परिवार में इनका अत्यधिक मोह रहेगा।

वे गंगा महानदी एवं सिन्धु महानदी के तट एवं वैताढ्य पर्वत के आश्रय में, बिलों में रहेंगे। वे बिलवासी मनुष्य संख्या में बहत्तर होंगे।

हे भगवन्! वे मनुष्य कैसा आहार करेंगे?

हे गौतम! उस समय गंगा महानदी तथा सिंधु महानदी - ये दो नदियाँ रहेंगी। उनका विस्तार केवल उस पथ जितना होगा, जिस पर रथ चल सके। जल की गहराई रथ के चक्र के छेद जितनी होगी। उनमें अनेक मछलियाँ तथा कछुए रहेंगे। उनमें सजातीय अपूकाय के जीव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नहीं होंगे। वे मनुष्य सूरज उगने के समय तथा छिपने के समय अपने बिलों से तेजी से दौड़कर बाहर निकलेंगे। मछलियों और कछुओं को जमीन पर लायेंगे। किनारे पर लाकर रात में शीत द्वारा तथा दिन में आतप द्वारा उनको रसरहित-शुष्क बनायेंगे, भोजन में उपयोग करेंगे। इस प्रकार इक्कीस हजार वर्ष पर्यन्त वे अपना निर्वाह करेंगे।

हे भगवन्! शील या आचार रहित, व्रतरहित, गुणरहित, मर्यादा रहित, प्रत्याख्यान, त्याग, पौषध एवं उपवास आदि से रहित प्रायः मांसभोजी, मत्स्यभोजी तथा अवशिष्ट क्षुद्र-तुच्छ धान्य आदि खाने वाले, वसा या चर्बी पदार्थों का आहार करने वाले, वे मनुष्य अपना आयुष्य पूर्ण कर कहाँ जायेंगे, कहाँ उत्पन्न होंगे?

हे गौतम! वे प्रायः नरकगति एवं तिर्यंचगति में उत्पन्न होंगे।

हे भगवन्! उस समय में विद्यमान शेर, बाघ, भेड़िये, चीते, रीछ, तरक्ष-बाघ की जाति का हिंसक प्राणी, गेंडे, शरभ (अष्टापद), गीदड़, बिलाव, कुत्ते, जंगली कुत्ते या सूअर, शशक, चीतल, चिल्ललग-जन्तु विशेष, जो प्रायः मांस, मछली, अवशिष्ट तुच्छ धान्य आदि तथा वसा, चर्बी आदि का आहार करते हैं, मरकर कहाँ जन्म लेंगे, कहाँ जायेंगे?

हे गौतम! वे प्रायः नरकगति एवं तिर्यंचगति में पैदा होंगे।

हे भगवन्! ढंक-विशेष प्रकार के कौवे, कंक-कठफोड़े, पीलक-जन्तु विशेष, मद्गुक-जल काक, शिखी-मोर, जो प्रायः मांसाहारी यावत् चर्बी आदि का आहार करते हैं, मर कर कहाँ जायेंगे?

हे गौतम! वे प्रायः नरकगति एवं तिर्यंचगति में जायेंगे, उत्पन्न होंगे।

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में अवसर्पिणी काल के छठे आरे का वर्णन करते हुए भरत क्षेत्र का आकार-स्वरूप का कथन किया गया है।

शंका - यहाँ कुछ टीकाकारों ने शत्रुंजय तथा कुछ ने शिखरजी, अष्टापद आदि पर्वतों को शाश्वत बता कर जैन धर्म में जड़ तीर्थों की सिद्धि करनी चाही है सो क्या सत्य है?

समाधान - उपरोक्त मूल पाठ में वैताढ्य गिरि आदि एवं गंगा सिंधु महानदी के अलावा सारे पर्वत, पठार, नदियों को नष्ट होना बताया है। अतः शत्रुंजय, शिखर जी, अष्टापद आदि पर्वतों को शाश्वत कहना मिथ्या है। जैन इतिहास के प्रखर विद्वान् पन्यास श्री कल्याण विजय जी ने अपने पुस्तक **'निबंध निचय'** में भी इसका प्रबल प्रमाणों से खंडन किया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावी उत्सर्पिणी के दुःषम-दुःषमा एवं दुःषमा आरक

(४७)

तीसे णं समाए इक्कवीसाए वाससहस्सेहिं काले वीइक्कंते आगमिस्साए उस्सप्पिणीए सावणबहुलपडिवए बालवकरणंसि अभीइणक्खत्ते चोद्दसपढमसमए अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं जाव अणंतगुणपरिवुड्ढीए परिवुड्ढेमाणे २ एत्थ णं दूसमदूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो! तीसे णं भंते! समाए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! काले भविस्सइ हाहाभूए भंभाभूए एवं सो चेव दूसमदूसमा वेढओ णेयव्वो, तीसे णं समाए एक्कवीसाए वाससहस्सेहिं काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं जाव अणंतगुणपरिवुड्ढीए परिवुड्ढेमाणे २ एत्थ णं दूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो!।

भावार्थ - हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! उस काल के - अवसर्पिणी काल के छठे आरक के इक्कीस हजार वर्ष बीत जाने पर आने वाले उत्सर्पिणी काल के, श्रावण मास, कृष्णपक्ष प्रतिपदा के दिन, बालव नामक करण में, चन्द्र के साथ अभिजित नक्षत्र का योग होने पर, चतुर्दशविध काल के प्रथम समय में दुःषम-दुःषमा आरक शुरू होगा। उसमें अनंतवर्ण पर्याय यावत् अनंत गुण पर्याय क्रमशः परिवृद्धित होते जायेंगे।

हे भगवन्! उस काल में भरतक्षेत्र का आकार-प्रकार किस तरह का होगा?

हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! उस समय हाहाकार एवं चीत्कार पूर्ण वैसी ही स्थिति होगी, जैसी अवसर्पिणी काल के छठे आरक के संदर्भ में वर्णित हुई है। उस उत्सर्पिणी काल के प्रथम आरक दुःषम-दुःषमा के इक्कीस सहस्र वर्ष व्यतीत हो जाने पर दुःषमा नामक दूसरा आरक शुरू होगा। उसमें अनन्त वर्ण पर्याय यावत् परिवृद्धिक्रम से उत्तरोत्तर वर्द्धनशील होंगे।

विवेचन - चतुर्दशविध काल के अन्तर्गत -

१. निःश्वास-उच्छ्वास २. प्राण ३. स्तोक ४. लव ५. मुहूर्त्त ६. अहोरात्र ७. पक्ष ८. मास ९. ऋतु १०. अयन ११. संवत्सर १२. युग १३. करण १४. नक्षत्र - ये माने गए हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पानी, दूध, घी और अमृत की वर्षा

(४८)

तेणं कालेणं तेणं समएणं पुक्खलसंवट्टए णामं पाउब्भविस्सइ भरहप्पमाणं मित्ते आयामेणं तयणुरूवं च णं विक्खंभबाहल्लेणं, तए णं से पुक्खलसंवट्टए महामेहे खिप्पामेव पतणतणाइस्सइ खिप्पामेव पतणतणाइत्ता खिप्पामेव पविज्जुयाइस्सइ खिप्पामेव पविज्जुयाइत्ता खिप्पामेव जुगमुसलमुट्ठिप्पमाणमित्ताहिं धाराहिं ओघमेघं सत्तरत्तं वासं वासिस्सइ, जेणं भरहस्स वासस्स भूमिभागं इंगालभूयं मुम्मुरभूयं छारियभूयं तत्तकवेल्लुगभूयं तत्तसमजोइभूयं णिव्वाविस्सइ।

तंसि च णं पुक्खलसंवट्टगंसि महामेहंसि सत्तरत्तं णिवइयंसि समाणंसि एत्थ णं खीरमेहे णामं महामेहे पाउब्भविस्सइ भरहप्पमाणमेत्ते आयामेणं तयणुरूवं च णं विक्खंभबाहल्लेणं, तए णं से खीरमेहे णामं महामेहे खिप्पामेव पतणतणाइस्सइ जाव खिप्पामेव जुगमुसलमुट्ठिं जाव सत्तरत्तं वासं वासिस्सइ, जेणं भरहवासस्स भूमीए वण्णं गंधं रसं फासं च जणइस्सइ।

तंसि च णं खीरमेहंसि सत्तरत्तं णिवइयंसि समाणंसि एत्थ णं घयमेहे णामं महामेहे पाउब्भविस्सइ, भरहप्पमाणमेत्ते आयामेणं, तयणुरूवं च णं विक्खंभबाहल्लेणं, तए णं से घयमेहे० महामेहे खिप्पामेव पतणतणाइस्सइ जाव वासं वासिस्सइ, जेणं भरहस्स वासस्स भूमीए सिणेहभावं जणइस्सइ।

तंसि च णं घयमेहंसि सत्तरत्तं णिवइयंसि समाणंसि एत्थ णं अमयमेहे णामं महामेहे पाउब्भविस्सइ भरहप्पमाणमित्तं आयामेणं जाव वासं वासिस्सइ, जेणं भरहे वासे रुक्खगुच्छगुम्मलय-वल्लितण-पव्वग-हरियग-ओसहि-पवलंकुरमाइए तणवणस्सइकाइए जणइस्सइ।

तंसि च णं अमयमेहंसि सत्तरत्तं णिवइयंसि समाणंसि एत्थ णं रसमेहे णामं महामेहे पाउब्भविस्सइ भरहप्पमाणमित्ते आयामेणं जाव वासं वासिस्सइ, जेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेसिं बहूणं रुक्खगुच्छगुम्मलयवल्लितण-पव्वयगहरियगओसहिपवालंकुरमाईणं तित्तकडुयकसायअंबिलमहुरे पंचविहे रसविसेसे जणइस्सइ, तए णं भरहे वासे भविस्सइ परूढरुक्खगुच्छगुम्मलय-वल्लितणपव्वयगहरियगओसहिए, उवचियत-यपत्तपवालपल्लवंकुरपुप्फफलसमुइए सुहोवभोगे यावि भविस्सइ।

शब्दार्थ - पतणतणाइस्सइ - गरजेगा, **जुग** - युग-रथ का अवयव विशेष-घोड़ों पर रथ को टिकाने वाला अवयव विशेष, **कवेल्लुग** - कड़ाहा, **पव्वग** - गन्ना।

भावार्थ - उस उत्सर्पिणी काल के दुःषमा नामक दूसरे आरक के प्रथम समय में पुष्करसंवर्त्तक संज्ञक महामेघ प्रादुर्भूत होगा। वह लंबाई-चौड़ाई तथा विस्तार में भरतक्षेत्र के प्रमाण जितना होगा। वह शीघ्र ही गर्जन करेगा। उसमें से बिजलियाँ चमकने लगेंगी। बिजलियों से युक्त वह मेघ युग, मूसल तथा मुट्ठी जैसी मोटी-मोटी धाराओं से सात-दिन रात पर्यन्त सर्वत्र एक जैसी वृष्टि करेगा। यह भरतक्षेत्र में अंगारमय, मुर्मुरमय, क्षारमय एवं तपे हुए कड़ाहे के समान सब ओर परितप्त एवं धधकते हुए भूमिभाग को शीतल करेगा।

इस प्रकार सात-दिन रात पर्यंत पुष्करसंवर्त्तक महामेघ के बरस जाने के अनंतर क्षीरमेघ नामक महामेघ प्रादुर्भूत होगा। वह लंबाई-चौड़ाई तथा विस्तार में भरतक्षेत्र जितना होगा। वह विशाल क्षीरमेघ शीघ्र ही गर्जन करेगा यावत् विद्युत युक्त होगा एवं शीघ्र ही युग, मूसल एवं मुष्टि की ज्यों मोटी जलधाराओं के साथ बरसेगा, भरतक्षेत्र की भूमि में शुभ वर्ण, गंध, रस तथा स्पर्श पैदा करेगा। उस क्षीरमेघ के सात-दिन रात पर्यन्त बरस जाने पर घृतमेघ संज्ञक विशाल बादल प्रकट होगा। उसकी लंबाई-चौड़ाई और विस्तार भरतक्षेत्र जितना होगा। वह घृतमेघ संज्ञक बड़ा बादल शीघ्र ही गरजेगा, यावत् बरसेगा। इस प्रकार वह भरतक्षेत्र की भूमि में स्निग्धता उत्पन्न करेगा।

उस घृतमेघ के सात दिन-रात पर्यन्त बरस जाने पर अमृत मेघ प्रादुर्भूत होगा। वह लंबाई-चौड़ाई और विस्तार में भरतक्षेत्र जितना होगा यावत् वर्षा करेगा। इस प्रकार भरतक्षेत्र में वह वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता, बेल, घास, गन्ने, हरित (दूब), औषधि, कोमल पत्ते, अंकुर आदि वनस्पति काय जीवों को उत्पन्न करेगा। उस अमृतमेघ द्वारा सात दिन रात पर्यन्त वर्षा किए जाने के अनंतर रसमेघ नामक महामेघ उत्पन्न होगा। वह लंबाई-चौड़ाई और विस्तार में भरत क्षेत्र जितना होगा यावत् रस की वर्षा करेगा। इस प्रकार वह बहुत से वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बेल, हरियाली, औषधि, कोमल पत्ते तथा अंकुर आदि में तिक्त-तीखा, कडुय-कडुआ, कषाय-कसैला, अम्ल-खट्टा, मधुर-मीठा - इन पंचविध रसों का उनमें संचार करेगा।

तब भरतक्षेत्र में वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता, बेल, हरियाली, औषधि, पत्र, अंकुर आदि उगेंगे। क्रमशः छाल, त्वचा, पत्र, कोंपल, अंकुर, पुष्प, फल के रूप में वे परिपुष्ट होंगे, भलीभांति विकसित होंगे तथा सुखपूर्वक सेवन करने योग्य होंगे।

क्रमशः सुखमय स्थितियाँ

(४९)

तए णं ते मणुया भरहं वासं परूढरुक्खगुच्छगुम्मलयवल्लितणपव्वयग-हरियगओसहियं उवचियतयपत्तपवालपल्लवंकुरपुप्फफलसमुइयं सुहोवभोगं जायं २ चावि पासिहिंति पासित्ता बिलेहिंतो णिद्धाइस्संति णिद्धाइत्ता हट्ठतुट्ठा अण्णमण्णं सद्दाविस्संति २ त्ता एवं वइस्संति-जाए णं देवाणुप्पिया! भरहे वासे परूढरुक्ख-गुच्छगुम्मलयवल्लितणपव्वयगहरियग जाव सुहोवभोगे, तं जे णं देवाणुप्पिया! अम्हं केइ अज्जप्पभिइ असुभं कुणिमं आहारं आहारिस्सइ से णं अणेगाहिं छायाहिं वज्जणिज्जेत्तिकट्टु संठिइं ठवेस्संति २ त्ता भरहे वासे सुहंसुहेणं अभिरममाणा २ विहरिस्संति।

शब्दार्थ- अम्हं - हममें से, **अज्जप्पभिइ** - अद्यप्रभृति-आज से लेकर, **कट्टु** - करके।

भावार्थ - तब वे बिलों में रहने वाले मनुष्य भरतक्षेत्र में वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता, बेल, तृण, गन्ने, हरियाली, औषधि-ये सब उग रहे हैं तथा छाल, पत्र, प्रवाल, पल्लव, अंकुर, पुष्प एवं फल समुदित तथा सुखपूर्वक उपभोग योग्य हो रहे हैं, ऐसा देखेंगे, तब बिलों से बाहर आयेंगे। हर्षयुक्त एवं प्रसन्न होकर परस्पर एक-दूसरे को पुकारेंगे, ऐसा कहेंगे -

हे देवानुप्रियो! भरतक्षेत्र में वृक्ष, गुच्छ यावत् फल परिपुष्ट, समुदित एवं उपयोग योग्य हो गए हैं। अतः देवानुप्रियो! आज से हम में से जो कोई अपवित्र, मांस आदि कुत्सित आहार करेगा, उसकी छाया तक वर्जनीय होगी। ऐसा कर निश्चय कर वे संस्थिति-सुव्यवस्था स्थापित करेंगे तथा भरतक्षेत्र में सुख एवं उल्लास के साथ रहेंगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्सर्पिणी : अवशेष आरक

(५०)

तीसे णं भंते! समाए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे भविस्सइ जाव कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।

तीसे णं भंते! समाए मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! तेसि णं मणुयाणं छव्विहे संघयणे छव्विहे संठाणे बहुईओ रयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं साइरेगं वाससयं आउयं पालेहिंति २ त्ता अप्पेगइया णिरयगामी जाव अप्पेगइया देवगामी, ण सिज्झंहिंति।

तीसे णं समाए एक्कवीसाए वाससहस्सेहिं काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं जाव परिवुड्ढेमाणे २ एत्थ णं दुसमसूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो! तीसे णं भंते! समाए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे जाव अकित्तिमेहिं चेव।

तेसि णं भंते! मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! तेसि णं मणुयाणं छव्विहे संघयणे छव्विहे संठाणे बहूइं धणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउयं पालिहिंति २ त्ता अप्पेगइया णिरयगामी जाव अंतं करेहिंति, तीसे णं समाए तओ वंसा समुप्पज्जिस्संति, तंजहा - तित्थयरवंसे चक्कवट्टिवंसे दसारवंसे, तीसे णं समाए तेवीसं तित्थयरा एक्कारस चक्कवट्टी णव बलदेवा णव वासुदेवा समुप्पज्जिस्संति, तीसे णं समाए सागरोवमकोडाकोडीए बायालीसाए वाससहस्सेहिं ऊणियाए काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं जाव अणंतगुण परिवुड्ढीए परिवुड्ढेमाणे २ एत्थ णं सुसमदूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो! सा णं समा तिहा विभजिस्सइ, पढमे तिभागे मज्झिमे तिभागे पच्छिमे तिभागे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसे णं भंते! समाए पढमे तिभाए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभाव-पडोयारे भविस्सइ?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे जाव भविस्सइ, मणुयाणं जा चेव ओसप्पिणीए पच्छिमे तिभागे वत्तव्वया सा भाणियव्वा, कुलगरवज्जा उसभसामिवज्जा, अण्णे पढंति-तीसे णं समाए पढमे तिभाए इमे पण्णरस कुलगरा समुप्पज्जिस्संति, तंजहा-सुमई जाव उसभे, सेसं तं चेव, दंडणीईओ पडिलोमाओ णेयव्वाओ, तीसे णं समाए पढमे तिभाए रायधम्मे जाव धम्मचरणे य वोच्छिज्जिस्सइ, तीसे णं समाए मज्झिमपच्छिमेसु तिभागेसु जा पढममज्झिमेसु वत्तव्वया ओसप्पिणीए सा भाणियव्वा, सुसमा तहेव सुसमासुसमावि तहेव जाव छव्विहा मणुस्सा अणुसज्जिस्संति जाव सणिच्चारी।

॥ बीओ वक्खारो समत्तो॥

शब्दार्थ - वोच्छिज्जिस्सइ - विच्छिन्न हो जायेंगे, **अणुसज्जिस्संति** - अनुसरण करेंगे, **सणिच्चारी** - तदनुसार चलने वाला।

भावार्थ - हे भगवन्! उस काल में-उत्सर्पिणी काल के दुःषमा संज्ञक दूसरे आरक में भरतक्षेत्र का आकार-प्रकार कैसा होगा?

हे गौतम! उस समय भूमिभाग अत्यंत समतल एवं रमणीय होगा यावत् वह कृत्रिम-अकृत्रिम रत्नों से सुशोभित होगा।

हे भगवन्! उस समय मानवों का आकार या स्वरूप किस प्रकार का होगा?

हे गौतम! मानव छह प्रकार के संहनन एवं संस्थान युक्त होंगे। ऊँचाई में अनेक हाथ-सात हाथ के होंगे। उनका कम से कम आयुष्य अन्तर्मुहूर्त्त का तथा अधिकतम एक सौ से कुछ अधिक वर्ष का होगा। अपने आयुष्य का भोग कर उनमें से कतिपय नरकगति में यावत् कुछ देवगति में जायेंगे किन्तु सिद्धत्व प्राप्त नहीं करेंगे।

हे आयुष्यमन् श्रमण गौतम! उस आरक के इक्कीस सहस्र वर्ष व्यतीत हो जाने पर उत्सर्पिणी काल का दुःषम-सुषमा नामक तीसरा आरक शुरू होगा। उसमें अनंत वर्ण पर्याय यावत् क्रमशः उत्तरोत्तर परिवर्धनशील होंगे।

हे भगवन्! उस काल में भरतक्षेत्र का स्वरूप कैसा होगा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! उसका भूमिभाग अत्यंत समतल एवं रमणीय यावत् स्वाभाविक तथा नैसर्गिक पंचवर्णी मणियों से सुशोभित होगा।

हे भगवन्! उन मनुष्यों का आकार प्रकार किस तरह का होगा?

हे गौतम! वे मनुष्य छह प्रकार के संहनन एवं संस्थान युक्त होंगे। शारीरिक ऊँचाई अनेक धनुष परिमित होगी। उनका आयुष्य अन्तर्मुहूर्त्त तथा अधिकतम एक पूर्व कोटि तक होगा। अपने आयुष्य को भोगकर उनमें कतिपय नरकगति यावत् मुक्तिगामी होंगे, समस्त दुःखों का अंत करेंगे। उस काल में तीर्थंकर, चक्रवर्तीवंश एवं दशारवंश-ये तीन वंश उत्पन्न होंगे। तेबीस तीर्थंकर, ग्यारह चक्रवर्ती, नौ बलदेव एवं नौ वासुदेव होंगे।

हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! उस काल के बयालीस सहस्र वर्ष कम एक सागरोपम कोड़ा-कोड़ी काल बीत जाने पर उत्सर्पिणी काल का सुषम-दुःषमा नामक चौथा आरक शुरू होगा। उसमें अनंत वर्ण पर्याय यावत् अनंतगुण क्रमशः परिवर्द्धनशील होते जायेंगे।

इस काल का तीन भागों में विभाजन होगा - प्रथम तृतीय भाग, मध्यम तृतीय भाग तथा अंतिम तृतीय भाग।

हे भगवन्! उस काल के प्रथम तृतीय भाग में भरतक्षेत्र का आकार-प्रकार किस तरह का होगा?

हे गौतम! उसका भूमिभाग अत्यंत समतल तथा रमणीय यावत् कृत्रिम-अकृत्रिम पंचवर्णी मणियों से सुशोभित होगा। अवसर्पिणी काल के अंतिम तृतीय भाग में जिस प्रकार के मनुष्यों का कथन किया गया है, वैसे ही मनुष्य इसमें बतलाए गए हैं। केवल इतना अंतर होगा-इसमें कुलकर नहीं होंगे तथा भगवान् ऋषभ नहीं होंगे।

इस संदर्भ में अन्यत्र जैसा पाठ आया है, उसके अनुसार उस काल के प्रथम भाग में पन्द्रह कुलकर होंगे। उसमें सुमति यावत् ऋषभ कुलकर होंगे। अवशिष्ट वर्णन उसी प्रकार का है। दण्डनीतियाँ अवसर्पिणी क्रम से विपरीत क्रम में - धकार-मकार और हकार रूप होंगी।

उस काल के प्रथम तृतीयांश भाग में राजधर्म यावत् धर्माचरण-चरित्र धर्म विच्छिन्न होगा।

उस काल के मध्यम तथा अंतिम तृतीय भाग के संदर्भ में अवसर्पिणी काल के प्रथम और मध्यम तृतीय भाग में जो वर्णन आया है, वह यहाँ ग्राह्य है। सुषमा एवं सुषम-सुषमा - ये दोनों काल भी उसी के सदृश हैं यावत् उसी तरह छह प्रकार के संहनन-संस्थान युक्त मनुष्यों का वर्णन भी यावत् तदनुरूप है।

॥ द्वितीय वक्षस्कार समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तइओ वक्खारो-तृतीय वक्षस्कार

राजधानी विनीता

(५१)

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-भरहे वासे भरहे वासे ?

गोयमा! भरहे णं वासे वेयड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेणं चोद्दसुत्तरं जोयणसयं एक्कारस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स अबाहाए दाहिणलवणसमुद्दस्स उत्तरेणं चोद्दसुत्तरं जोयणसयं एक्कारस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स अबाहाए गंगाए महाणईए पच्चत्थिमेणं सिंधूए महाणईए पुरत्थिमेणं दाहिणड्ढभरहमज्झिल्लतिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं विणीया णामं रायहाणी पण्णत्ता, पाईणपडीणायया उदीणदाहिणविच्छिण्णा दुवालसजोयणायामा णवजोयणविच्छिण्णा धणवइमइ-णिम्माया चामीयरपागारा णाणामणि-पंचवण्ण-कविसीसगपरिमंडियाभिरामा अलकापुरीसंकासा पमुइयपक्कीलिया पच्चक्खं देवलोगभूया रिद्धित्थि-मियसमिद्धा पमुइयजणजाणवया जाव पडिरूवा।

शब्दार्थ - **धणवइ** - धनपति-कुबेर, **णिम्माया** - निर्मित, **चामीयर** - चामीकर-स्वर्ण, **पागार** - प्राकारा-परकोटा, **कविसीसग** - कपिशीर्षक-कंगूरे, **पमुइय** - प्रमुदित, **पक्कीलिया**-प्रक्रीड़ित-आनंदोत्साह संलग्न, **पच्चक्खं** - प्रत्यक्ष, **थिमिय** - सुरक्षा, **जाणवया** - जनपद के अन्यस्थानवर्ती लोग।

भावार्थ - हे भगवन्! भरतक्षेत्र को इस नाम से किस कारण पुकारा जाता है?

हे गौतम! भरतक्षेत्र में विद्यमान वैताढ्य पर्वत के दक्षिण में ११४ $\frac{११}{६}$ योजन तथा लवण समुद्र के उत्तर में ११४ $\frac{११}{१९}$ योजन की दूरी पर, गंगा महानदी के पश्चिम में तथा सिंधु महानदी के पूर्व में, दक्षिणार्ध भरत के मध्यवर्ती तीसरे भाग के ठीक बीचोंबीच विनीता (अयोध्या) नामक राजधानी है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वह पूर्व-पश्चिम में लम्बी एवं उत्तर-दक्षिण में चौड़ी है। उसकी लम्बाई बारह योजन तथा चौड़ाई नौ योजन है। वह नगरी ऐसी है, मानो अपने बुद्धि कौशल से इसका निर्माण किया हो। उसके परकोटे सोने से बने हैं। उनमें विविध प्रकार की पंचरंगी मणियों से बने हुए कंगूरे लगे हैं, जिससे वह सुशोभित हो रही है। वह स्वर्ग की राजधानी अलकापुरी जैसी प्रतीत होती है। लोग वहाँ आनंदोत्साह में लगे रहते हैं। वह प्रत्यक्ष स्वर्ग के सदृश है। वह वैभव, सुरक्षा तथा समृद्धि युक्त है। वहाँ के नागरिक एवं अन्य स्थानों से आये हुए लोग वहाँ आमोद-प्रमोद पूर्वक - यावत् वह प्रतिरूप-मन में बस जाने वाली है।

चक्रवर्ती सम्राट भरत

(५२)

तत्थ णं विणीयाए रायहाणीए भरहे णामं राया चाउरंतचक्कवट्टी समुप्पज्जित्था, महयाहिमवंतमहंतमलयमंदर जाव रज्जं पसासेमाणे विहरइ। बिइओ गमो राय-वण्णगस्स इमो-तत्थ असंखेज्जकालवासंतरेण उप्पज्जए जसंसी उत्तमे अभीजाए सत्तवीरियपरक्कमगुणे पसत्थवण्णसरसारसंघयणतणुगबुद्धिधारणमेहासंठाणसीलप्प-गई पहाणगारवच्छायागईए अणेगवयणप्पहाणे तेयआउबलवीरियजुत्ते अझुसिर-घणणिचियलोहसंकलणारायवइरउसहसंघयणदेहधारी झस १ जुग २ भिंगार ३ वद्धमाणग ४ भद्दासण ५ संख ६ छत्त ७ वीयणि ८ पडाग ९ चक्क १० णंगल ११ मुसल १२ रह १३ सोत्थिय १४ अंकुस १५ चंदाइच्च १६-१७ अग्गि १८ जूय १९ सागर २० इंदज्झय २१ पुहवि २२ पउम २३ कुंजर २४ सीहासण २५ दंड २६ कुम्म २७ गिरिवर २८ तुरगवर २९ वरमउड ३० कुंडल ३१ णंदावत्त ३२ धणु ३३ कोंत ३४ गागर ३५ भवणविमाण ३६ - अणेगलक्खणपसत्थसुविभत्तचित्तकर-चरणदेसभाए उड्ढामुहलोमजाल-सुकुमाल-णिद्धमउआवत्त-पसत्थलोमविरइय-सिरिवच्छच्छण्णविउलवच्छे देसखेत्तसुविभत्तदेहधारी तरुणरविरस्सिबोहियवर-कमलविबुद्धगब्भवण्णे हयपोसणकोससण्णिभपसत्थपिट्ठंतणिरुवलेवे पउमुप्पल-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुंदजाइजूहियवरचंपगणागपुप्फसारंगतुल्लगंधी छत्तीसाहियपसत्थपत्थिवगुणेहिं जुत्ते अव्वोच्छिण्णायवत्ते पागडउभयजोणी विसुद्धणियगकुलगयणपुण्णचंदे चंदे इव सोमयाए णयणमणणिव्वुइकरे अक्खोभे सागरो व थिमिए धणवइव्व भोगसमुदय-सद्दव्वयाए समरे अपराइए परमविक्कमगुणे अमरवइसमाणसरिसरूवे मणुयवई भरहचक्कवट्टी भरहं भुंजइ पण्णट्ठसत्तू।

शब्दार्थ - **चाउरंतचक्कवट्टी** - चातुरंत चक्रवर्ती - पूर्व-पश्चिम तथा दक्षिण, तीन ओर समुद्र तथा उत्तर में हिमवान तक-यों चारों ओर विस्तृत, विशाल राज्य का अधिपति, **जसंसी**-यशस्वी, **अभिजाए** - अभिजात-श्रेष्ठ कुलोत्पन्न, **तणुग** - तीक्ष्ण, **गारव** - गौरव, **अझुसिर**-छिद्ररहित, **वीयणि** - व्यंजन-पंखा, **णंगल** - हल, **आइच्च** - सूर्य, **अमरवइ** - इन्द्र।

भावार्थ - वहाँ विनीता राजधानी में भरत नामक चातुरंत चक्रवर्ती सम्राट उत्पन्न हुआ। वह महाहिमवान् पर्वत के सदृश महत्ता एवं मलय तथा मंदर पर्वत के सदृश विशिष्टता लिए हुए था यावत् वह अपने राज्य का सम्यक् प्रशासन, परिपालन करता था।

भरत चक्रवर्ती के विषय में अन्य पाठ (गम) इस प्रकार है - वहाँ (विनीता राजधानी में) असंख्यात वर्ष पश्चात् भरत नामक चक्रवर्ती उत्पन्न हुआ। वह कीर्तिशाली, उत्तम, श्रेष्ठ, कुलीन, सत्त्व, वीर्य एवं पराक्रम आदि गुणों से विभूषित, प्रशस्त वर्ण, स्वर, सशक्त दैहिक संहनन, तीक्ष्ण बुद्धि, धारणा, प्रतिभा, संस्थान, शील, उत्तम प्रकृति तथा उत्कृष्ट गौरव, कांति एवं गति युक्त, अनेक प्रकार के वचन बोलने में निष्णात, तेज, आयुष्य, बल, वीर्य युक्त, छिद्ररहित, सघन, निश्चित, लोह शृंखला की तरह सबल, वज्रऋषभ नाराच संहनन युक्त था।

उसके करतल एवं पादतल पर मत्स्य, युग, झारी, वर्द्धमानक, भद्रासन, शंख, छत्र, पंखा, पताका, चक्र, हल, मूसल, रथ, स्वस्तिक, अंकुस, चंद्र, सूर्य, अग्नि, यूप-यज्ञ स्तंभ, समुद्र, इन्द्रध्वज, पृथ्वी, कमल, हस्ती, सिंहासन, दण्ड, कछुआ, श्रेष्ठ पर्वत, उत्तम अश्व, प्रशस्त मुकुट, कुंडल, नन्दावर्त्त, धनुष, भाला, स्त्री परिधान विशेष-घाघरा तथा भवन-विमान-ये शुभ, प्रशान्त चिह्न पृथक्-पृथक् थे।

उसके विशाल वक्षस्थल पर ऊर्ध्वमुखी, कोमल, मुलायम, मृदु एवं प्रशस्त केश थे, जिनसे सहज रूप में श्रीवत्स का चिह्न, आकार अंकित था। देश एवं क्षेत्र के अनुरूप उसका शरीर उत्तम गठनयुक्त एवं सुंदरता युक्त था। बाल सूर्य-उगते हुए सूर्य की किरणों से खिले हुए उत्तम कमल के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मध्य भाग के वर्ण जैसा उसका रंग था। उसका गुदा भाग घोड़े की ज्यों मलत्याग की तरह पुरीष से अलिप्त रहता था। उसके शरीर से पद्म उत्पल, चमेली, जूही, चंपक, केशर, कस्तूरी के समान उत्तम गंध आती थी। वह छत्तीस से अधिक श्रेष्ठ राजगुणों से अथवा उत्तम, शुभ राजोचित्त गुणों से युक्त था। वह अविच्छिन्न छत्र-प्रभाव से युक्त था। उसके मातृ-पितृ वंश-उभयकुल उत्तम थे। अपने विशुद्ध कुल रूपी गगन में वह चंद्रमा के समान उद्योतमय था। वह सौम्यता में चांद जैसा था, आँखों एवं मन के लिए शांतिदायक था। वह समुद्र के समान अक्षोभ्य-स्थिर एवं निश्चल था। कुबेर की तरह भोगोपभोग में धन का एवं द्रव्य का सदुपयोग करता था। युद्ध में सदैव अपराजित था, परम पराक्रमी था। इन्द्र के सदृश उसका रूप था। वह सुखपूर्वक भरतक्षेत्र के साम्राज्य का भोग करता था, उसके शत्रु ध्वस्त हो गए थे।

चक्ररत्न का उद्‌भव एवं उत्सव

(५३)

तए णं तस्स भरहस्स रण्णो अण्णया कयाइ आउहघरसालाए दिव्वे चक्करयणे समुप्पज्जित्था, तए णं से आउहघरिए भरहस्स रण्णो आउहघरसालाए दिव्वं चक्करयणं समुप्पण्णं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए णंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए जेणामेव दिव्वे चक्करयणे तेणामेव उवागच्छइ २ त्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ त्ता करयल० जाव कट्टु चक्करयणस्स पणामं करेइ २ त्ता आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणामेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणामेव भरहे राया तेणामेव उवागच्छइ २ त्ता करयल जाव जएणं विजएणं वद्धावेइ २ त्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! आउहघरसालाए दिव्वे चक्करयणे समुप्पण्णे तं एयण्णं देवाणुप्पियाणं पियट्ठयाए पियं णिवेएमो पियं भे भवउ।

तए णं से भरहे राया तस्स आउहघरियस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ० जाव सोमणस्सिए वियसियवरकमलणयणवयणे पयलिअवरकडगतुडिअ-केऊरमउड-कुंडलहारविरायंतरइअवच्छे पालंबपलंबमाणघोलंतभूसणधरे ससंभमं तुरिअं चवलं णरिंदे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ २ त्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ २ त्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाउआओ ओमुअइ २ त्ता एगसाडिअं उत्तरासंगं करेइ २ त्ता अंजलिमउलिअग्गहत्थे चक्करयणाभिमुहे सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ २ त्ता वामं जाणुं अंचेइ २ त्ता दाहिणं जाणु धरणितलंसि णिहट्टु करयल० जाव अंजलिं कट्टु चक्करयणस्स पणामं करेइ २ त्ता तस्स आउहघरियस्स अहामालियं मउडवज्जं ओमोअं दलइ दलइत्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइ दलइत्ता सक्कारेइ सम्माणेइ सम्माणेइत्ता पडिविसज्जेइ, पडिविसज्जेइत्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे।

भावार्थ - किसी समय राजा भरत की आयुधशाला–शस्त्रागार में दिव्य चक्ररत्न समुत्पन्न हुआ। उसे देखकर आयुधशाला का अधिकारी बहुत ही परितुष्ट, आनंदित, प्रसन्न हुआ। अत्यंत सौम्य मानसिक भाव और हर्षातिरेक से उसका हृदय खिल उठा। जहाँ दिव्य चक्ररत्न था, वहाँ आया। चक्ररत्न की तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की। हाथ जोड़कर, उन्हें मस्तक के चारों ओर घुमाते हुए यावत् चक्ररत्न को प्रणाम किया। वैसा कर शस्त्रागार से बाहर निकला। बाहरी राजसभागार में आया। हाथ जोड़कर, मस्तक के चारों ओर हाथों को घुमाते हुए यावत् राजा को जय-विजय शब्दों द्वारा वर्धापित किया।

इस प्रकार बोला - देवानुप्रिय की - आपश्री की आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है। आपकी प्रसन्नता हेतु यह हर्षोत्पादक संवाद आपको मैं निवेदित करता हूँ। आपके लिए यह शुभ हो।

राजा भरत शस्त्रागार के अधिकारी से यह सुनकर हर्षित हुआ यावत् अत्यंत सौमनस्य और हर्ष के कारण उसका हृदय खिल उठा। उसके प्रशस्त, कमल सदृश नेत्र विकसित हो उठे। उसके हाथों में पहने हुए कड़े, त्रुटित-आभरण विशेष, केयूर-बाजूबंद, मुकुट, कानों के कुण्डल हिल उठे। अत्यंत हर्ष से हिलते हुए हार से उसका वक्षस्थल बहुत ही सुंदर लगने लगा।

लंबे लटकते आभूषणों को धारण किए हुए राजा एकाएक अत्यंत तेजी से, चपलता से अपने सिंहासन से उठा। पादपीठ पर अपना पैर रखा, नीचे उतरा। नीचे उतर कर पादरक्षिकाएँ उतारीं। वस्त्र का उत्तरासंग किया। हाथों को अंजलिबद्ध करते हुए यावत् चक्ररत्न को प्रणाम किया। वैसा कर शस्त्रागार के अधिकारी को अपने मुकुट के अतिरिक्त समस्त आभूषण पुरस्कार स्वरूप दे दिए। जीवन पर्यन्त के लिए भरणपोषणोपयोगी आजीविका की व्यवस्था बांधी। उसका सत्कार सम्मान कर वहाँ से विदा किया। तदनंतर राजा पूर्व की ओर मुख कर सिंहासनासीन हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजधानी की सुसज्जा

(५४)

तए णं से भरहे राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! विणीयं रायहाणिं सब्भिंतरबाहिरियं आसियसंमज्जियसित्त-सुइगरत्थंतरवीहियं मंचाइमंचकलियं णाणाविहरागवसणऊसियझयपडागाइपडाग-मंडियं लाउल्लोइयमहियं गोसीससरसरत्तचंदणकलसं चंदणघडसुकय जाव गंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं करेह कारवेह, करेत्ता कारवेत्ता य एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा भरहेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठ० करयल जाव एवं सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति २ त्ता भरहस्स० अंतियाओ पडिणिक्खमंति २ त्ता विणीयं रायहाणिं जाव करेत्ता कारवेत्ता य तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

शब्दार्थ - **सब्भिंतरबाहिरियं** - भीतर और बाहर के भागों को, **आसिय** - आसिक्त-छिड़का, **रत्थ** - सड़क, **वीहियं** - गली।

भावार्थ - तदनंतर राजा भरत ने कौटुंबिक पुरुषों—व्यवस्था करने वाले अधिकारियों को बुलाया और उनसे कहा - देवानुप्रियो! शीघ्र ही विनीता नगरी के भीतर और बाहर के भाग की सफाई कराओ। उसे जल से धुलवा कर सम्मार्जित कर, सुगंधित जल से संसिक्त कराओ-सुगंधित जल का उस पर छिड़काव करो। मंच-अतिमंच-विशिष्ट ऊँचे मंच तैयार कराओ। विविध रंगों से रंगी हुई ध्वजाओं, पताकाओं से मंच को सुशोभित करो। धरती पर गोबर का लेप कराओ, गोशीर्ष (गोरोचन) तथा सरस, लाल चंदन से कलशों को चर्चित कराओ। चंदन चर्चित मंगल घटों यावत् सुगंधित धुएँ के प्राचुर्य से वहाँ गोल-गोल धूम के छल्ले से बनते दिखाई दें, ऐसा सजाओ। कार्य हो जाने पर मुझे सूचना दो।

राजा भरत द्वारा इस प्रकार आदिष्ट किए जाने पर कौटुंबिक पुरुष अत्यंत हर्षित, प्रसन्न हुए, हाथ जोड़कर यावत् "स्वामी की जैसी आज्ञा" यों विनयपूर्वक इसे शिरोधार्य किया। राजा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भरत के यहाँ से प्रस्थान किया। विनीता राजधानी को यावत् राजा के आदेशानुरूप सुसज्जित करके करवाके राजा को सूचित किया - उनकी आज्ञानुसार सब कार्य हो गया है।

(५५)

तए णं से भरहे राया जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता समुत्तजालाकुलाभिरामे विचित्तमणिरयणकुट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहणिसण्णे सुहोदएहिं गंधोदएहिं पुप्फोदएहिं सुद्धोदएहि य पुण्णे कल्लाणगपवरमज्जणविहीए मज्जिए तत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हलसुकुमालगंधकासा-इयलूहियंगे सरससुरहिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते अहयसुमहग्घदूसरयणसुसवुंडे सुइमालावण्णगविलेवणे आविद्धमणिसुवण्णे कप्पियहारद्धहारतिसरिया पालंब-पलंबमाणकडिसुत्तसुकयसोहे पिणद्धगेविज्जगअंगुलिज्जगललियगयललियकयाभरणे णाणामणिकडगतुडियथंभियभूए अहियसस्सिरीए कुंडलउज्जोइयाणणे मउडदित्त-सिरए हारोत्थयसुकयरइयवच्छे पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जे मुद्दियापिंग-लंगुलीए णाणामणिकणगविमलमहरिहणिउणोयवियमिसिमिसिंत-विरइय-सुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठियपसत्थआविद्धवीरबलए, किं बहुणा?, कप्परुक्खए चेव अलंकियविभूसिए णरिंदे सकोरंट जाव चउचामरवालवीइयंगे मंगलजयजय-सद्दकयालोए अणेगगणणायगदंडणायग जाव दूयसंधिवालसद्धिं संपरिवुडे धवलमहामेहणिग्गए इव जाव ससिव्व पियदंसणे णरवई धूवपुप्फगंध-मल्लहत्थगए मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव आउहघरसाला जेणेव चक्करयणे तेणामेव पहारेत्थ गमणाए।

शब्दार्थ - **पम्हल** - रोंएदार, **सुकुमाल** - कोमल, **कासाइय** - कसैली त्रिफलादि वनौषधियों से रंजित अथवा लाल या गेरुएं रंग का वस्त्र, **कडिसुत्त** - कटिसूत्र, **गेविज्ज** - गले में, **पिणद्ध** - धारण किए, **णिउण** - निपुण, **मिसिमिसिंत** - चमकते हुए, **ससिव्व** - चंद्रमा के समान।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - तदनंतर राजा भरत स्नानघर की ओर आया, उसमें प्रविष्ट हुआ। वह स्नानघर मोतियों की अनेक लड़ों से सजे हुए झरोखों के कारण बड़ा ही रमणीय था। उसका आंगन तरह-तरह की मणियों एवं रत्नों से जड़ा था। उसमें सुंदर स्नान मंडप था। स्नान मंडप में तरह-तरह के चित्रों के रूप में रचित मणियों तथा रत्नों से सुशोभित स्नानपीठ था। राजा सुखपूर्वक उस पर बैठा। उसने शुभ, सुगंधित, पुष्पमिश्रित, शुद्धजल द्वारा उत्तम, आनंदप्रद, श्रेष्ठ मार्जनविधि से स्नान किया। नहाने के पश्चात् राजा ने मंगलोपचार के रूप में सैकड़ों विधि-विधान संपादित किए। रौंएदार, मुलायम काषाय वस्त्र से शरीर का प्रोंछन किया। आर्द्र, सुगंधित गोरोचन तथा चंदन का अपने शरीर पर लेप किया। अहत-अदूषित (चूहों आदि द्वारा नहीं कुतरे हुए), बहुमूल्य, उत्तम वस्त्र समीचीन रूप में धारण किए। पवित्र माला धारण कर केशर आदि का लेप किया। मणियों से जड़े हुए सोने के गहने धारण किए। अठारह लड़ियों के हार, नौ लड़ों के अर्द्धहार तथा तीन लड़ों के हार एवं लंबे लटकते कटि सूत्र से भलीभांति शोभित किया।

गले में आभूषण पहने, अंगुलियों में अंगूठियाँ धारण कीं। इस प्रकार अपने मनोज्ञ अंगों को मनोहर आभूषणों से अलंकृत किया। भिन्न-भिन्न प्रकार की मणियों से मढे हुए कंकण पहने भुजबंद बांधे। यों राजा की शोभा और अधिक वृद्धिंगत हुई। कुण्डलों से राजा का मुख उद्योतमय था। मुकुट से मस्तक दीप्यमान था। हारों से आवृत उसका वक्षस्थल सुंदर प्रतीत हो रहा था। राजा ने एक लंबे लटकते हुए वस्त्र को उत्तरीय के रूप में धारण किया। स्वर्ण की अंगूठियाँ धारण करने के कारण राजा की अंगुलियाँ पीतवर्ण की सी प्रतीत हो रही थीं। सुयोग्य कारीगरों द्वारा अनेक प्रकार की मणियों, स्वर्ण एवं रत्नों के मेल से सुनिर्मित, महापुरुषों द्वारा धारण किए जाने योग्य, विशिष्ट, प्रशस्त, उत्तम संरचना युक्त विजयपट्ट-कमरबंद या विजय-कंकण धारण किया। अधिक क्या कहा जाय? इस प्रकार अलंकारों से सुशोभित, विशिष्ट वेशभूषा से सज्जित राजा कल्पवृक्ष जैसा प्रतीत होता था। अपने ऊपर ताने गए कोरंट पुष्पों की मालाओं से युक्त छत्र यावत् अपने दोनों ओर डुलाए जाते चार चंवर देखते ही लोगों द्वारा किए जाते जय सूचक शब्दों के साथ राजा अनेक गणनायकों, दंडनायकों के साथ यावत् दूतों, संधिपालों से घिरा हुआ, उज्ज्वल, विशाल मेघ से निकलते चंद्र के समान प्रियदर्शन-देखने में प्रीतिकर यावत् राजा धूप, पुष्प, माला तथा सुगंधित द्रव्यों को हाथ में लिए हुए स्नानागार से बाहर निकला और जहाँ शस्त्रागार और चक्ररत्न था, वहाँ आया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(५६)

तए णं तस्स भरहस्स रण्णो बहवे ईसरपभिइओ अप्पेगइया पउमहत्थगया अप्पेगइया उप्पलहत्थगया०जाव अप्पेगइया सयसहस्सपत्तहत्थगया भरहं रायाणं पिट्ठओ पिट्ठओ अणुगच्छंति। तए णं तस्स भरहस्स रण्णो बहूईओ

गाहा - खुज्जा चिलाइ वामणिवडभीओ बब्बरी बउसियाओ।
जोणियपल्हवियाओ ईसिणिय-थारुगिणियाओ।। १।।
लासिय-लउसिय-दमिली सिंहलि तह आरबी पुलिंदी य।
पक्कणि बहलि मुरुंडी सबरीओ पारसीओ य।। २।।

अप्पेगइया चंदणकलस-हत्थगयाओ चंगेरीपुप्फपडलहत्थगयाओ भिंगार-आदंसथालपाइसुपइट्ठग-वाय-करगरयणकरंडपुप्फचंगेरी-मल्लवण्णचुण्णगंध-हत्थगयाओ वत्थआभरणलोमहत्थय-चंगेरीपुप्फपडलहत्थगयाओ जाव लोम-हत्थगयाओ अप्पेगइयाओ सीहासण-हत्थगयाओ छत्तचामर हत्थगयाओ तेल्लसमुग्गयहत्थगयाओ

तेल्ले कोट्ठसमुग्गे पत्ते चोए य तगरमेला य।
हरिआले हिंगुलए मणोसिला सासवसमुग्गे।। १।।

अप्पेगइयाओ तालिअंटहत्थगयाओ अप्पेगइयाओ धूवकडुच्छुअहत्थगयाओ भरहं रायाणं पिट्ठओ पिट्ठओ अणुगच्छंति।

तए णं से भरहे राया सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वायरेणं सव्वविभूसाए सव्वविभूईए सव्ववत्थ-पुप्फ-गंधमल्लालंकार-विभूसाए सव्वतुडियसद्दसण्णिणाएणं महया इड्ढीए जाव महया वरतुडियजमगसमगप्पवाइएणं संखपणवपडह-भेरिझल्लरि-खरमुहि-मुरय-मुइंग-दुंदुहिणिग्घोसणाइएणं जेणेव आउहघरसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आलोए चक्करयणस्स पणामं करेइ, करित्ता जेणेव चक्करयणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता लोमहत्थयं परामुसइ, परामुसित्ता चक्करयणं पमज्जइ, पमज्जित्ता दिव्वाए उदगधाराए अब्भुक्खेइ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अब्भुक्खित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं अणुलिंपइ २ त्ता अग्गेहिं वरेहिं गंधेहिं मल्लेहि य अच्चिणणइ पुप्फारुहणं मल्लगंधवण्णचुण्ण-वत्थारुहणं आभरणारुहणं करेइ २ त्ता अच्छेहिं सण्णेहिं सेएहिं रययामएहिं अच्छरसातंडुलेहिं चक्करयणस्स पुरओ अट्ठऽट्ठमंगलए आलिहइ, तंजहा - सोत्थिय सिरिवच्छ णंदिआवत्त, वद्धमाणग, भद्दासण, मच्छ, कलस, दप्पण अट्ठ मंगलए आलिहित्ता काऊणं करेइ उवयारंति, किं ते? पाडल-मल्लिय-चंपग-असोग-पुण्णाग-चूअ-मंजरि-णवमालिअ-बकुल-तिलग-कणवीर-कुंद-कोज्जय-कोरंटय-पत्तदमणय-वर-सुरहि-सुगंध-गंधियस्स कयग्गहगहिअ-करयलपब्भट्ठ-विप्पमुक्कस्स दसद्धवण्णस्स कुसुमणिगरस्स तत्थ चित्तं जाणुस्सेहप्पमाणमित्तं ओहिणिगरं करेत्ता चंदप्पभवइर वेरुलियविमलदंडं कंचणमणिरयणभत्तिचित्तं कालागुरुपवरकुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूव-गंधुत्तमाणुविद्धं च धूमवट्टिं विणिम्मुअंतं वेरुलिअमयं कडुच्छुअं पग्गहेत्तु पयए धूवं दहइ २ त्ता सतट्ठपयाइं पच्चोसक्कइ २ त्ता वामं जाणुं अंचेइ जाव पणामं करेइ २ त्ता आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसीयइ २ त्ता अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! उस्सुक्कं उक्करं उक्किट्ठं अदिज्जं अमिज्जं अभडप्पवेसं अदंडकोदंडिमं अधरिमं गणियावरणाडइज्जकलियं अणेगतालाय-राणुचरियं अणुद्धुयमुइंगं अमिलायमल्लदामं पमुइयपक्कीलिय-सपुरजणजाणवयं विजयवेजइयं चक्करयणस्स अट्ठाहियं महामहिमं करेइ, करेत्ता ममेयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह।

तए णं ताओ अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ भरहेणं रण्णा एवं वुत्ताओ समाणीओ हट्ठाओ जाव विणएणं वयणं पडिसुणेंति २ त्ता भरहस्स रण्णो अंतियाओ पडिणिक्खमेंति २ त्ता उस्सुक्कं उक्करं जाव करेंति य कारवेंति य करेत्ता कारवेत्ता जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - चंगेरी - डलिया, **आदंस** - आदर्श-दर्पण, **सुपइट्ठग** - सुप्रतिष्ठक-धूपदान, **वायकरग** - करवे, **समुग्गय** - समुद्गमक-पात्र, **अब्भुक्खेइ** - प्रक्षालित, **आलिहइ** - आलेखन, **काऊणं** - कृत्य, **पाडल** - गुलाब, **ओहिणिगरं** - बड़ा ढेर, **पग्गहेत्तु** - प्रग्रहितुं-ग्रहण करने का, **पयते** - प्रयतते-प्रयास करता है, **अणुद्ध** - अनवरत, **अमिलाय** - अम्लान-ताजे।

भावार्थ - राजा भरत के पीछे अनेक ऐश्वर्यशाली विशिष्ट पुरुष चल रहे थे। उन अनुगामी पुरुषों में से किन्हीं के हाथों में पद्म तथा किन्हीं के हाथों में उत्पल यावत् कईयों के हाथों में शतपत्र, सहस्रपत्र कमल थे।

राजा भरत की बहुत सी दासियाँ भी पीछे-पीछे चल रही थीं -

गाथा - झुकी हुई कमर वाली, उनमें से अनेक कुबड़ी, चिलात–किरात देशोत्पन्न, बौनी तथा अनेक बर्बर, बकुस, यूनान, पह्लव, इसित, थारुकिनिक, ह्लासक, लकुस, द्रविड़, सिंहल, अरब, पुलिंद, पक्कण, बहल, मुरुंड, शबर तथा पारस देशोत्पन्न थीं॥ १,२॥

उनमें से कई, अपने हाथों में चंदन चर्चित मंगल कलश, फूलों की छोटी डलिया, झारी, दर्पण, थाल, छोटी-छोटी थाली-तश्तरी, सुप्रतिष्ठक, करवे, रत्नमंजूषा, माला, वर्ण, गंध, चूर्ण, वस्त्र, अलंकार, मयूर की पांखों से निर्मित फूलों के गुलदस्तों से परिपूर्ण टोकरी यावत् मयूर पिच्छिका हाथ में लिए हुए थीं। कुछेक सिंहासन, छत्र, चँवर, तिलों से भरे हुए पात्र हाथ में लिए थीं।

गाथा - इनके अतिरिक्त कतिपय दासियाँ तेल, कोष्ठ–सुगंधित द्रव्य, पत्ते, चोच-टपका-टपका कर निकाला हुआ सुगंधित द्रव्य विशेष, तगर, हरिताल, हिंगलु, मैनसिल–औषधि विशेष तथा सरसों से भरे हुए पात्र विशेष अपने हाथों में लिए हुए थीं॥ १॥

कतिपय दासियाँ ताड़पत्र के पंखे, कुछेक धूप के कुड़छे हाथ में लिए राजा के पीछे-पीछे चल रही थीं।

इस प्रकार वह राजा भरत समस्त प्रकार की ऋद्धि, द्युति, शक्ति, समुदय, आदर, शोभा, वैभव, वस्त्र पुष्प, गंध, माला, अलंकार-उनकी शोभा से समायुक्त, कलात्मक रूप में एक साथ बजाए गए वाद्यों के साथ अत्यंत ऋद्धि यावत् शंख, प्रणव, पटह-ढोल, भेरी, झल्लरि-झालर, खरमुखी (वीणा), मुर्ज-ढोलक, मृदंग, दुंदुभि-नगाड़े के महान् उद्घोष के साथ शस्त्रागार में आया। वहाँ चक्ररत्न को देखते ही प्रणाम किया। चक्ररत्न के समीप आया। मयूर पिच्छिका द्वारा चक्ररत्न का प्रमार्जन किया। उसे पवित्र जल धारा से प्रक्षालित किया। सरस गोरोचन एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चंदन का उस पर लेप किया। उत्तम, श्रेष्ठ, सुगंधित द्रव्यों तथा मालाओं से उसकी अर्चना की। पुष्प समर्पित किए। माला, सुगंधित द्रव्य, वर्णक, सुगंधित चूर्ण तथा वस्त्र आभूषण चढाए। फिर चक्ररत्न के सामने उसने स्वच्छ, स्निग्ध, श्वेत, रत्नमय, अत्रुटित चावलों से स्वस्तिक, श्रीवत्स, नंदावर्त्त, वर्द्धमानक, भद्रासन, मत्स्य, कलश, दर्पण-इन आठ-आठ मांगलिक चिह्नों का आलेखन किया। आलेखन कर करणीय अर्चोपचार किए। गुलाब, मल्लिका, चंपक, अशोक, पुन्नाग, आम्र-मंजरी, नवमल्लिका, बकुल, तिलक, कनेर, कुंद, कुब्जक, कोरंटक, पत्र, दमनक- इन सुरभिमय कुसुमों को राजा ने हाथ में लिया तथा चक्ररत्न के आगे हाथों से चढाए। वे इतने अधिक थे कि उन पंचरंगे पुष्पों का चक्ररत्न के सामने घुटनों तक ऊँचा ढेर लग गया। तत्पश्चात् राजा ने धूपदान हाथ में लिया, जो चंद्रकांत, हीरक, नीलम रत्न निर्मित उज्ज्वल दंड से युक्त, तरह-तरह के चित्रांकनों से संयोजित, स्वर्ण, मणि तथा रत्नयुक्त, काले अगर, उत्तम कुंदरुक्क, लोबान एवं दीपक की वर्तिका के सदृश धुएँ की धारा छोड़ते हुए, वैडूर्यमणि निर्मित कुड़छे को हाथ में लिया, धूप जलाया। फिर सात-आठ कदम पीछे हटा। बाएँ घुटने को ऊँचा किया यावत् चक्ररत्न को प्रणाम किया। प्रणाम कर शस्त्रागार से निकला। बाहरी सभाभवन में सिंहासन के समीप आया। पूर्वाभिमुख होकर विधिवत् आसीन हुआ। अठारह श्रेणी-प्रश्रेणी-विभिन्न जाति-उपजाति के लोगों को आहूत कर, इस प्रकार कहा - देवानुप्रियो! चक्ररत्न के उत्पन्न होने के उपलक्ष में तुम सभी महान् विजय का द्योतक आठ दिनों का विशाल उत्सव-समारोह आयोजित करो। इन दिनों राज्य में खरीद-फरोख्त से संबंधित शुल्क, संपत्ति आदि पर दिया जाने वाला राज्य कर नहीं लिया जाएगा। किसी को किसी से कुछ लेना हो तो तकाजा न किया जाय। आदान-प्रदान, माप-तौल का लेन-देन बंद रहे। राज्य के कर्मकर, अधिकारी किसी के घर में प्रवेश न करें। दण्ड-यथापराध राजग्राह्य द्रव्य-जुर्माना, कुदंड-बड़े अपराध के लिए दण्ड रूप में लिया जाने वाला बड़ा जुर्माना, अल्प रूप में लिया जाय, ऋण या गिरवी के संबंध में कोई विवाद न हो, ऋणी का ऋण राज-कोष से चुका दिया जाय, स्वर वाद्य, ताल वाद्य से अनुसृत नृत्य आयोजित किए जाएँ, अनवरत मृदंगों के निनाद से महोत्सव को गूंजा दिया जाय, नगर सज्जा हेतु प्रयुक्त मालाएँ कुम्हलाई हुई न हों। नगरवासी, जनपदवासी प्रमुदित हो आनंदोत्सव मनाएँ (मैं ऐसी घोषणा करता हूँ)। मेरे आदेशानुसार संपादित कर लिए जाने पर मुझे अवगत कराया जाए।

राजा भरत द्वारा इस प्रकार आदिष्ट होकर अठारह श्रेणी-प्रश्रेणी के लोग हर्षित हुए यावत्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विनयपूर्वक उन्होंने राजा के वचन को अंगीकार किया। ऐसा कर उन्होंने राजा के यहाँ से प्रस्थान किया। राजा की आज्ञानुरूप यथानिर्दिष्ट सभी कार्यों के साथ यावत् आठ दिनों का महोत्सव आयोजित करने की व्यवस्था की, करवाई। वैसा कर राजा भरत के पास आए और उन्हें आज्ञानुसार व्यवस्था किए जाने की सूचना दी।

भरत का मागध तीर्थ की दिशा में प्रस्थान

(५६)

तए णं से दिव्वे चक्करयणे अट्ठाहिआए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता अंतलिक्खपडिवण्णे, जक्खसहस्स-संपरिवुडे, दिव्वतुडिअ सद्दसण्णिणाएणं आपूरेंते चेव अंबरतलं विणीआए रायहाणीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ २ त्ता गंगाए महांणईए दाहिणिल्लेणं कूलेणं पुरत्थिमं दिसिं मागहतित्थाभिमुहे पयाए यावि होत्था।

तए णं से भरहे राया तं दिव्वं चक्करयणं गंगाए महाणईए दाहिणिल्लेणं कूलेणं पुरत्थिमं दिसिं मागहतित्थाभिमुहं पयायं पासइ पासित्ता हट्ठतुट्ठ जाव हियए कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेह, हयगयरहपवरजोहकलियं चाउरंगिणिं सेण्णं सण्णाहेह, एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबिय जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से भरहे राया जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता समुत्तजालाकुलाभिरामे तहेव जाव धवलमहामेहणिग्गए इव जाव ससिव्व पियदंसणे णरवई मज्जणघराओ पडिणिक्खमई २ त्ता हयगयरह-पवरवाहण-भडचडगरपहगर-संकुलाए सेणाए पहियकित्ती जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव आभिसेक्के हत्थिरयणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अंजणगिरिकूडसण्णिभं गयवइं णरवई दुरूढे।

तए णं से भरहाहिवे णरिंदे हारोत्थयसुकयरइयवच्छे कुंडलउज्जोइयाणणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मउडदित्तसिरए णरसीहे णरवई णरिंदे णरवसहे मरुयरायवसभ-कप्पे अब्भहियरायतेयलच्छीए दिप्पमाणे पसत्थमंगलसएहिं संथुव्वमाणे जय २ सद्दकयालोए हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचा-मराहिं उद्धुव्वमाणीहिं २ जक्खसहस्ससंपरिवुडे वेसमणे चेव धणवई अमरवइ-सण्णिभाए इड्ढीए पहियकित्ती गंगाए महाणईए दाहिणिल्लेणं कूलेणं गामागर-णगर-खेडकब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-संबाह-सहस्समंडियं थिमियमेइणीयं वसुहं अभिजिणमाणे २ अग्गाइं वराइं रयणाइं पडिच्छमाणे २ तं दिव्वं चक्करयणं अणुगच्छमाणे २ जोयणंतरियाहिं वसहीहिं वसमाणे २ जेणेव मागहतित्थे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता मागहतित्थस्स अदूरसामंते दुवालसजोयणायामं णवजोयण-विच्छिण्णं वरणगरसरिच्छं विजयखंधावारणिवेसं करेइ २ त्ता वड्डइरयणं सद्दावेइ सद्दावइत्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! ममं आवासं पोसहसालं च करेहि करेत्ता ममेयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि।

तए णं से वड्डइरयणे भरहेणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए पीइमणे जाव अंजलिं कट्टु एवं सामी तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ २ त्ता भरहस्स रण्णो आवसहं पोसहसालं च करेइ २ त्ता एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणइ।

तए णं से भरहे राया आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ २ त्ता जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता पोसहसालं अणुपविसइ २ त्ता पोसहसालं पमज्जइ २ त्ता दब्भसंथारगं संथरइ २ त्ता दब्भसंथारगं दुरूहइ २ त्ता मागहतित्थकुमारस्स देवस्स अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी उम्मुक्कमणिसुवण्णे ववगयमालावण्णगविलेवणे णिक्खित्तसत्थमुसले दब्भसंथारोवगए एगे अबीए अट्ठमभत्तं पडिजागरमाणे २ विहरइ।

तए णं से भरहे राया अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी- खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हयगयरहपवरजोहकलियं चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेह चाउग्घंटं आसरहं पडिकप्पेहत्तिकट्टु मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता समुत्त तहेव जाव धवलमहामेह णिग्गए जाव मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता हयगयरह-पवरवाहण जाव सेणाए पहियकित्ती जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूढे।

शब्दार्थ - **पडिकप्पेह** - सुसज्जित करो, **पहियकित्ती** - प्रथित-कीर्ति-प्रसृत यशस्वी, **वड्ढइ** - वर्धकी शिल्पकार, **अबीए** - अद्वितीय-अकेला।

भावार्थ - आठ दिनों का महोत्सव जब परिसंपन्न हो गया तब वह दिव्य चक्ररत्न शस्त्रागार से बाहर निकला। आकाश में आधा स्थित हुआ। वह एक हजार यक्षों से घिरा था। दिव्य वाद्य-ध्वनि और गर्जन से आकाश परिव्याप्त था। विनीता राजधानी के बीच से होता हुआ निकला, गंगा महानदी के दक्षिणी तट से होता हुआ, पूर्व दिशा में मागध तीर्थ की ओर प्रस्थान किया।

राजा भरत ने उस चक्ररत्न को गंगा महानदी के दक्षिणी किनारे से होते हुए पूर्व दिशा में मागध तीर्थ की ओर अग्रसर होते हुए देखा तो वह बहुत हर्ष एवं परितोषयुक्त हुआ यावत् उसने अपने कार्य व्यवस्थापकों को बुलाया और उनको आदेश दिया - देवानुप्रियो! आभिषेक्य - अभिषेक योग्य प्रधान हस्तिरत्न को शीघ्र सुसज्जित करो। अश्व, गज, रथ तथा उत्तम पदाति योद्धाओं से सज्जित चातुरंगिणी सेना को तैयार करो। मेरे आज्ञानुरूप कार्य संपादित कर वापस सूचित करो। कौटुम्बिक पुरुषों ने यावत् वैसा कर अवगत कराया।

तदनंतर राजा भरत स्नानागार में प्रविष्ट हुआ। वह स्नानगृह मोतियों की लड़ों से युक्त गवाक्ष से सुशोभित था यावत् स्नान संपन्न कर धवल यावत् विशाल मेघ से निकलते चन्द्र की ज्यों बाहर निकला। स्नानागार से निकल कर अश्व, गज, रथ, अन्यान्य श्रेष्ठ वाहन एवं योद्धाओं के समूह से युक्त, सेना से सुशोभित राजा बाह्य सभा भवन में आया। वहाँ प्रधान हस्तिरत्न के पास पहुँचा तथा अंजनगिरि की चोटी के समान विशाल गजराज पर सवार हुआ।

भरतक्षेत्र के अधिनायक नरपति भरत का वक्षस्थल हारों से विभूषित तथा प्रीतिकर प्रतीत होता था। उसका मुख कुण्डलों से उद्योतित था। मुकुट से उसका मस्तक दीप्तिमान था। नृसिंह-मनुष्यों में सिंह के तुल्य, नरपति-मनुष्यों का स्वामी, मनुष्यों का इन्द्र-परम ऐश्वर्यशाली, मनुष्यों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में वृषभ के तुल्य-स्वीकृत दायित्व भार का निर्वाहक, मरुद्राज वृषभकल्प - व्यंतर आदि देवों के मध्य वृषभकल्प-प्रमुख सौधर्मेन्द्र के सदृश, राजोचित तेजस्वितामयी लक्ष्मी से अत्यंत ज्योतिर्मय, मंगलपाठकों या वंदिजनों द्वारा किए गए प्रशस्त संस्तवन से युक्त, देखते ही लोगों द्वारा उच्चारित जयनाद के शब्दों से सुशोभित, हाथी पर सवार, कोरंट पुष्पों के छत्र से युक्त डुलाए जाते चँवरों से सज्जित, जयघोष करते सहस्रों यक्षों से घिरे हुए यक्षाधिपति कुबेर के सदृश राजा भरत दिखलाई देता था। देवराज इन्द्र के सदृश वह समृद्धिशाली था। सर्वत्र उसकी कीर्ति विश्रुत थी। राजा भरत गंगा महानदी के दक्षिणी किनारे से होता हुआ हजारों गाँव, आकर, नगर, खेट, कर्वट, मडंब, द्रोणमुख, पट्टन, आश्रम तथा संबाध - इन विविध स्थानों से सुशोभित, प्रजाननयुक्त पृथ्वी को-शासकों को जीतता हुआ, उत्तम, श्रेष्ठ रत्नों को उपहार के रूप में स्वीकार करता हुआ, दिव्य चक्ररत्न का अनुसरण करता हुआ, एक-एक योजन के अंतर पर अपना पड़ाव डालता हुआ, मागध तीर्थ पर पहुँचा। मागध तीर्थ से न अधिक दूर, न अधिक समीप, बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी, उत्तम नगर के सदृश अपनी विजय छावनी डाली। फिर राजा ने वर्धकीरत्न-चक्रवर्ती के चतुर्दश रत्नों-विशिष्टतम साधनों में से एक अतिश्रेष्ठ सूत्रधार या शिल्पकार को बुलाया। उसे आदेश दिया - देवानुप्रिय! शीघ्र ही मेरे आवास स्थान एवं पौषधशाला की संरचना करो। ऐसा होने पर मुझे पुनः सूचित करो। राजा द्वारा यों आदिष्ट किए जाने पर वह शिल्पकार हर्ष तथा परितोषयुक्त हुआ, मन के आनंदित होते हुए यावत् हाथ जोड़ कर बोला - स्वामी! जो आज्ञा - कहकर राजा का आदेश अंगीकार किया। उसने राजा के लिए शीघ्र ही आवास स्थान एवं पौषधशाला की रचना की। वैसा कर शीघ्र ही राजा को आज्ञानुरूप कार्य हो जाने की सूचना दी।

राजा भरत आभिषेक्य हस्तिरत्न से नीचे उतर कर जहाँ पौषधशाला थी, वहाँ आया। उसमें प्रविष्ट होकर उसका प्रमार्जन किया, डाभ का बिछौना लगाया तथा उस पर स्थित हुआ। उसने मागधतीर्थ कुमारदेव को उद्दिष्ट कर तीन दिनों के उपवास का तप अंगीकार किया। वैसा कर पौषधशाला में पौषध स्वीकार किया। ब्रह्मचर्य स्वीकार करते हुए स्वर्ण एवं रत्न निर्मित आभूषण उतारे तथा माला, वर्णक, विलेप आदि दूर किए। शस्त्र, मूसल, दंड, गदा आदि हथियार एक तरफ किए। यों सर्वथा एकाकी, तेले की तपस्या में निरत होता हुआ तत्पर रहा।

तेले की तपस्या के परिसंपन्न हो जाने पर राजा भरत पौषधशाला से बाहर आया। बाह्य सभा भवन में आकर अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उन्हें इस प्रकार आदेश दिया -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवानुप्रियो! अश्व, गज, रथ एवं श्रेष्ठ योद्धाओं से विभूषित चतुरंगिणी सेना को शीघ्र ही तैयार करो। चारों ओर घंटाओं से निनादित चातुर्घण्ट अश्व रथ को तैयार करो। यों कहकर राजा स्नानगृह में प्रविष्ट हुआ यावत् विशाल मेघ से निकलते हुए चन्द्र के सदृश देखने में सौम्य राजा स्नानगृह से बाहर निकला। बाहर निकलकर अश्व, रथ, गज, अन्यान्य, उत्तम वाहन यावत् सेना से सुशोभित (परिकीर्तित) वह राजा बाहरी सभा भवन में आया। जहाँ चातुर्घण्ट अश्वरथ था, वहाँ आया, उस पर आरूढ हुआ।

(५८)

तए णं से भरहे राया चाउग्घंटं आसरहं दुरूढे समाणे हयगयरहपवर-जोहकलियाए सद्धिं संपरिवुडे महयाभडचडगरपहगरवंदपरिक्खित्ते चक्करयण-देसियमग्गे अणेगरायवरसहस्साणुयायमग्गे महया उक्किट्ठ-सीहणायबोल-कलकल-रवेणं पक्खुभियमहासमुद्दरवभूयं पिव करेमाणे पुरत्थिमदिसाभिमुहे मागहतित्थेणं लवणसमुद्दं ओगाहइ जाव से रहवरस्स कुप्परा उल्ला।

तए णं से भरहे राया तुरगे णिगिण्हइ २ त्ता रहं ठवेइ २ त्ता धणुं परामुसइ, तए णं तं अइरुग्गयबालचंद-इंदधणुसंकासं वरमहिसदरियदप्पियदढघण-सिंगरइयसारं उरगवरपवरगवलपवर-परहुयभमरकुलणीलिणिद्धधंतधोयपट्टं णिउणोविय-मिसिमिसिंत-मणिरयण-घंटियाजालपरिक्खित्तं तडितरुणकिरणतव-णिज्जबद्धचिंधं दद्दरमलयगिरिसिहरकेसरचामरवालद्धचंदचिंधं कालहरियरत्तपीय-सुक्किल्लबहुण्हारुणिसंपिणद्धजीवं जीवियंतकरणं चलजीवं धणुं गहिऊण से णरवई उसुं च वरवइरकोडियं वइरसारतोंडं कंचणमणिकणगरयणधोइट्ठसुकयपुंखं अणेगमणिरयणविविह-सुविरइयणामचिंधं वइसाहं ठाइऊण ठाणं आययकण्णाययं च काऊण उसुमुदारं इमाइं वयणाइं तत्थ भाणिअ से णरवई

गाहाओ- हंदि सुणंतु भवंतो बाहिरओ खलु सरस्स जे देवा।

णागासुरा सुवण्णा तेसिं खु णमो पणिवयामि॥ १॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हंदि सुणंतु भवंतो अब्भिंतरओ सरस्स जे देवा।
णागासुरा सुवण्णा सव्वे मे ते विसयवासी।। २।।
इतिकट्टु उसुं णिसिरइत्ति-
परिगरणिगरियमज्झो वाउद्धूय-सोभमाणकोसेज्जो।
चित्तेण सोभए धणुवरेण इंदोव्व पच्चक्खं।। ३।।
तं चंचलायमाणं पंचमि चंदोवमं महाचावं।
छज्जइ वामे हत्थे णरवइणो तंमि विजयंमि।। ४।।

तए णं से सरे भरहेणं रण्णा णिसट्ठे समाणे खिप्पामेव दुवालस जोयणाइं गंता मागहतित्थाहिवइस्स देवस्स भवणंसि णिवइए, तए णं से मागहतित्थाहिवई देवे भवणंसि सरं णिवइयं पासइ २ त्ता आसुरुत्ते रुट्ठे चंडिक्किए कुविए मिसिमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं णिडाले साहरइ २ त्ता एवं वयासी - केस णं भो! एस अपत्थियपत्थए दुरंतपंतलक्खणे हीणपुण्णचाउद्दसे हिरिसिरिपरिवज्जिए जे णं मम इमाए एयाणुरूवाए दिव्वाए देविड्ढीए दिव्वाए देवजुईए दिव्वेणं देवाणुभावेणं लद्धाए पत्ताए अभिसमण्णागयाए उप्पिं अप्पुस्सुए भवणंसि सरं णिसिरइत्तिकट्टु सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ २ त्ता जेणेव से णामाहयंके सरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता तं णामाहयंकं सरं गेण्हइ णामंकं अणुप्पवाएइ णामंकं अणुप्पवाएमाणस्स इमे एयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था - उप्पण्णे खलु भो! जंबुद्दीवे दीवे भरहे वासे भरहे णामं राया चाउरंतचक्कवट्टी तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्णमणागयाणं मागहतित्थकुमाराणं देवाणं राईणमुवत्थाणियं करेत्तए, तं गच्छामि णं अहंपि भरहस्स रण्णो उवत्थाणियं करेमि त्तिकट्टु एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता हारं मउडं कुंडलाणि य कडगाणि य तुडियाणि य वत्थाणि य आभरणाणि य सरं च णामाहयंकं मागहतित्थोदगं च गेण्हइ गिण्हित्ता ताए उक्किट्ठाए तुरियाए चवलाए चंडाए जयणाए सीहाए सिग्घाए उद्धुयाए दिव्वाए देवगईए वीईवयमाणे २ जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छइ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उवागच्छित्ता अंतलिक्खपडिवण्णे सखिंखिणियाइं पंचवण्णाइं वत्थाइं पवरपरिहिए करयलपरिग्गहियं दसणहं सिर जाव अंजलिं कट्टु भरहं रायं जएणं विजएणं वद्धावेइ २ त्ता एवं वयासी - अभिजिए णं देवाणुप्पिएहिं केवलकप्पे भरहे वासे पुरत्थिमेणं मागहतित्थमेराए तं अहण्णं देवाणुप्पियाणं विसयवासी अहण्णं देवाणुप्पियाणं आणत्तीकिंकरे अहण्णं देवाणुप्पियाणं पुरत्थिमिल्ले अंतवाले तं पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया! ममं इमेयारूवं पीइदाणं तिकट्टु हारं मउडं कुंडलाणि य कडगाणि य जाव मागहतित्थोदगं च उवणेइ।

तए णं से भरहे राया मागहतित्थकुमारस्स देवस्स इमेयारूवं पीइदाणं पडिच्छइ २ त्ता मागहतित्थकुमारं देवं सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता पडिविसज्जेइ, तए णं से भरहे राया रहं परावत्तेइ २ त्ता मागहतित्थेणं लवणसमुद्दाओ पच्चुत्तरइ २ त्ता जेणेव विजयखंधावारणिवेसे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता तुरए णिगिण्हइ २ त्ता रहं ठवेइ २ त्ता रहाओ पच्चोरुहइ २ त्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता जाव ससिव्व पियदंसणे णरवई मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव भोयणमंडवे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए अट्ठमभत्तं पारेइ २ त्ता भोयणमंडवाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ २ त्ता अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी- खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! उस्सुक्कं उक्करं जाव मागहतित्थकुमारस्स देवस्स अट्ठाहियं महामहिमं करेह २ त्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ताओ अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ भरहेणं रण्णा एवं वुत्ताओ समाणीओ हट्ठ जाव करेंति २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

तए णं से दिव्वे चक्करयणे वइरामयतुंबे लोहियक्खामयारए जंबूणयणेमीए णाणामणिखुरप्पथालपरिगए मणिमुत्ताजाल-भूसिए सणंदिघोसे सखिंखिणीए दिव्वे तरुणरविमंडल-णिभे णाणामणिरयण-घंटियाजालपरिक्खित्ते सव्वोउय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुरभिकुसुमआसत्तमल्लदामे अंतलिक्खपडिवण्णे जक्खसहस्ससंपरिवुडे दिव्वतुडिय-सद्दसण्णिणाएणं पूरेंते चेव अंबरतलं णामेण य सुदंसणे णरवइस्स पढमे चक्करयणे मागहतित्थकुमारस्स देवस्स अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता दाहिणपच्चत्थिमं दिसिं वरदामतित्थाभिमुहे पयाए यावि होत्था।

शब्दार्थ - **उल्ला** - भीगे हुए, **कुप्परा** - रथ के पहिए, **परामुसइ** - उठाया, **अइरुग्गय**-तत्काल उगे हुए, **महिस** - भैंसा, **सिंगरइ** - सींगों की तरह, **उरग** - सर्प, **गवल** - सींग की गुलिका का ऊपरी भाग, **परहुय** - कोयल, **चिंधं** - चिह्नित, **जीवं** - चाप-प्रत्यंचा, **गहिऊण**-ग्रहण कर, **तोंड** - मुख, **पुंखं** - पीछे का हिस्सा, **धोइट्ठ** - अधिष्ठित, **वइसाहं** - वैशाख-धनुष चढाते समय पैरों का विशेष संस्थापन, **उसुं** - बाण, **परिगर** - कमरबंद, **छज्जइ** - शोभायमान, **णिसट्ठे** - छोड़े जाते ही, **अप्पुस्सुए** - अल्पश्रुत-अज्ञानी, **उवत्थाणीयं** - उपहार, **किंकर** - सेवक, **अंतवाल** - अंतपाल, **परावत्तेइ** - प्रत्यावर्तित-वापस मोड़ा।

भावार्थ - उसके पश्चात् राजा भरत चातुर्घण्ट अश्वरथ पर आरूढ हुआ। वह अश्व, गज, रथ तथा उत्तम योद्धाओं-चतुरंगिणी सेना से घिरा हुआ था। चक्ररत्न द्वारा निर्देशित मार्ग पर वह बड़े-बड़े योद्धाओं एवं सहस्रों राजाओं से घिरा हुआ चल रहा था। उस द्वारा किए गए सिंहनाद के गंभीर स्वर से ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वायु द्वारा विक्षोभित महासागर गरज रहा हो। उसने पूर्व दिशा की ओर आगे बढ़ते हुए, मागध तीर्थ होते हुए लवण समुद्र में अवगाहन किया यावत् उसके रथ के पहिए आर्द्र हुए।

तदनंतर राजा भरत ने अपने अश्वों को नियंत्रित कर रथ को ठहराया। धनुष उठाया। वह धनुष तत्काल उगे हुए शुक्ल पक्ष की द्वितीया के चन्द्र का जैसा एवं इन्द्रधनुष जैसा उत्कृष्ट भैंसे की ज्यों दर्प से उद्यत, सुदृढ़, सघन सींगों की ज्यों ठोस था। उस धनुष का पृष्ठ भाग उत्तम सर्प, भैंसे की सींग की गुलिका, श्रेष्ठ कोयल, भ्रमर समुदाय एवं नील के सदृश स्निग्ध, कृष्ण कांति से युक्त एवं प्रक्षालित वस्त्र की तरह निर्मल था।

सुयोग्य शिल्पी द्वारा चमकाई गई देदीप्यमान मणियों एवं रत्नों से निर्मित घंटियों के समूह से वह आवृत्त था। विद्युत की तरह जगमगाती किरणों से युक्त, तपनीय-उत्तम स्वर्ण से परिबद्ध एवं चिह्नित था। दर्दर एवं मलय पर्वत की चोटी पर रहने वाले सिंह के अयाल एवं चँवरी गाय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की पूँछ के केशों के उस पर आधे चंद्र के आकार के बंध लगे थे। कृष्ण, हरित, पीत, रक्त एवं श्वेत नाड़ी तन्तुओं से उसकी प्रत्यंचा बंधी थी। वह शत्रु के जीवन का विनाश करने वाला था, उसकी प्रत्यंचा चपल थी। राजा ने धनुष ग्रहण कर उस पर बाण चढ़ाया। बाण की दोनों कोटियाँ वज्ररत्न से निर्मित थीं। उसका सिरा वज्र की भाँति अभेद्य था। उसका पुंख-पीछे का मुलायम हिस्सा स्वर्ण, मणि तथा रत्नों के समुचित रूप से बना हुआ था। उस पर अनेक मणियों तथा रत्नों द्वारा सुंदर रूप में राजा भरत का नाम अंकित था। राजा भरत ने धनुष पर बाण चढ़ाने के लिए अपने पैरों को विशेष स्थिति में जमा कर श्रेष्ठ बाण को कान तक खींचा और इस प्रकार के वचन बोला -

गाथा - मेरे बाण के बहिर्भाग में तथा अन्तर्भाग में संप्रतिष्ठित नागकुमार, असुरकुमार, सुपर्णकुमार आदि देवों - मैं आपको प्रणाम करता हूँ। आप मेरे प्रणाम को सुनें और उसे स्वीकार करें॥ १,२॥ यों कहकर राजा भरत ने बाण छोड़ा।

गाथा - कमरबंद द्वारा अपने देह के मध्य भाग को बांधे हुए, हवा द्वारा उड़ाए जाते हुए कौशेय नामक वस्त्र विशेष से सुशोभित राजा भरत अपने धनुष द्वारा इन्द्र की तरह शोभा पा रहा था। बिजली की ज्यों देदीप्यमान वह धनुष पंचमी के चाँद के समान राजा के विजयोद्धत हाथ में सुशोभित हो रहा था॥ ३,४॥

राजा भरत द्वारा छोड़े जाते ही वह बाण बारह योजन तक जाकर मागध तीर्थ के अधिष्ठायक देव के भवन में गिरा। मागध तीर्थ के अधिनायक देव ने जैसे ही बाण को अपने भवन में पड़ा हुआ देखा तो वह तत्काल क्रोध से आग-बबूला हो गया। रोषयुक्त, कोपाविष्ट होता हुआ, गुस्से में तमतमाते हुए उसके ललाट पर तीन रेखाएँ उभर आई उसकी भृकुटी तन गई। वह बोला- मृत्यु को चाहने वाले! अशुभ लक्षण वाले! हीन-असंपूर्ण चतुर्दशी को जन्मे! लज्जा एवं कांति रहित! वह कौन अज्ञानी है, जिसने उत्तम देव प्रभाव से प्राप्त मेरी दिव्य ऋद्धि, द्युति पर प्रहार करते हुए मेरे भवन में बाण गिराया है। यों कह कर वह अपने सिंहासन से अभ्युत्थित हुआ तथा वहाँ आया जहाँ नामांकित बाण पड़ा था। उस पर अंकित नाम देखा, देखकर उसके मन में ऐसा भाव, मनोगत संकल्प उठा—जंबूद्वीप के अंतर्गत भरत क्षेत्र में भरत नामक चातुरंत चक्रवर्ती राजा प्रादुर्भूत हुआ है, अतः भूत, वर्तमान एवं भविष्यवर्ती मागधतीर्थ के अधिष्ठायक देवकुमारों के लिए यह समुचित एवं परंपरानुगत व्यवहार के अनुरूप है कि वे राजा को उपहार अर्पित करें। इसलिए मेरे लिए यह समुचित है कि मैं राजा के समक्ष जाऊँ और उपहार समर्पित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करूँ। ऐसा विचार कर मागधाधिपति देव ने हार, मुकुट, कुंडल, कंकण, भुजबंद, वस्त्र, आभूषण, नामांकित बाण तथा मागधतीर्थ का जल लिया। उन्हें लेकर वह उत्कृष्ट तीव्र, चपल, सिंह जैसी गति से, दिव्य देवगति से चलता-चलता राजा भरत के समीप आया। छोटे-छोटे घुंघुरुओं से युक्त पाँच रंगों के उत्तम कपड़े धारण किए हुए, आकाश में स्थित होते हुए अपने दोनों हाथ जोड़े यावत् उनको मस्तक पर से घुमाते हुए राजा भरत को जय-विजय शब्दों द्वारा वर्धापित किया एवं कहा - आपने पूर्व दिशा में मागधतीर्थ पर्यन्त समस्त भरतक्षेत्र को भलीभांति विजित कर लिया है। मैं आप द्वारा विजित देश का वासी हूँ। आपका आदेशानुवर्ती सेवक हूँ, देवानुप्रिय! आपका पूर्व दिशा का अंतपाल-विघ्न निवारक हूँ। अतः आप मेरे द्वारा उपस्थापित यह प्रीतिदान-प्रसन्नता पूर्वक प्रस्तुत उपहार स्वीकार करें। यह कह कर उसने हार, मुकुट, कुंडल, बाजूबंद यावत् मागध तीर्थोदक उपहृत किया।

राजा भरत ने मागधतीर्थ कुमार द्वारा इस प्रकार प्रदत्त स्नेहोपहार अंगीकार किया। राजा भरत ने मागधतीर्थ कुमार को सत्कृत सम्मानित कर विदा किया। फिर राजा भरत ने अपना रथ वापस मोड़ कर मागधतीर्थ से होते हुए लवण समुद्र को पार किया एवं उसकी सेना की विजयोन्मुख छावनी जहाँ लगी थी, वहाँ आया। वहाँ स्थित बाह्य सभा भवन में पहुँचा। घोड़ों को रोककर रथ से नीचे उतरा, स्नानागार में प्रविष्ट हुआ यावत् उज्ज्वल, विशाल बादल को चीरकर निकलते चंद्रमा के समान सुंदर, सौम्य राजा स्नानगृह से बाहर निकला। वहाँ से भोजन मंडप में आया एवं सुखासन में स्थित हुआ, तेले की तपस्या का पारणा किया। पारणा कर भोजन मंडप से बाहर निकला और बाहरी उपस्थान शाला में पूर्वाभिमुख होकर बैठा। उसने अठारह श्रेणी-प्रश्रेणी के लोगों को आहूत किया और कहा - देवानुप्रियो! मागधतीर्थ कुमार देव को जीत लेने के उपलक्ष में आठ दिनों का विशाल महोत्सव आयोजित करो, इस बीच कोई भी क्रय-विक्रय संबंधी शुल्क यावत् अपराध के लिए भी अल्प दंडराशि न ली जाय ऐसी घोषणा करो। ऐसा कर मेरे आदेश की क्रियान्विति की सूचना दो। राजा द्वारा ऐसा आदेश दिए जाने पर उन्होंने तदनुरूप प्रसन्नता पूर्वक किया, करवाया यावत् राजा के पास आकर आज्ञानुरूप किए जाने की सूचना दी।

मागधतीर्थ देवकुमार के विजयोपलक्ष में आयोजित अष्टदिवसीय विशाल महोत्सव के परिपूर्ण हो जाने पर राजा भरत का दिव्य चक्ररत्न शस्त्रागार से पुनः बाहर निकला। उस चक्र रत्न का अरकनिवेश स्थान-आरों का संयोजन स्थान हीरों से जड़ा था। उसके आरक लाल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्न-माणिक्यमय थे। उसकी नेमी जंबूनद संज्ञक पीत स्वर्णमय थी। उसका अंतवर्ती परिधि भाग अनेक मणियों से निर्मित था। वह चक्ररत्न मणियों एवं मुक्तासमूह से अलंकृत था। वह वाद्यों के घोष से निनादित था। उसमें छोटे-छोटे घुंघुरू लगे थे। वह दिव्य प्रभाव युक्त, मध्याह्न के सूरज की तरह तेजयुक्त, गोलाकार, अनेक प्रकार की मणियों, घंटियों से परिवृत था। समस्त ऋतुओं में विकसित होने वाले सुरभिमय फूलों की मालाओं से समायुक्त था। एक हजार यक्षों के नाद से गगन मण्डल को मानो भर रहा था, गुंजित कर रहा था। उसका नाम सुदर्शन था। राजा भरत के उस प्रधान चक्ररत्न ने इस प्रकार आयुधशाला से निकलकर, दक्षिण-पश्चिम दिशा में-नैर्ऋत्य कोण में स्थित वरदाम तीर्थ की ओर प्रयाण किया।

वरदाम तीर्थ पर विजय

(५६)

तए णं से भरहे राया तं दिव्वं चक्करयणं दाहिणपच्चत्थिमं दिसिं वरदामतित्थाभिमुहं पयायं चावि पासइ २ त्ता हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हयगयरहपवर० चाउरंगिणीं सेण्णं सण्णाहेह आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेह त्तिकट्टु मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता तेणेव कमेणं जाव धवलमहामेहणिग्गए जाव सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं २ माइयवरफलयपवरपरिगरखेडयवरवम्मकवयमाढीसहस्सकलिए उक्कडवरमउड-तिरीडपडागझयवेजयंतिचामरचलंतछत्तंधयारकलिए असिखेवणिखग्गचाव-णारायकणयकप्पणिसूललउडभिंडिमालधणुहतोणसरपहरणेहि य कालणील-रुहिरपीयसुक्किल्लअणेगचिंधसयसण्णिविट्ठे अप्फोडियसीहणायछेलियहय-हेसियहत्थिगुलुगुलाइय-अणेगरहसयसहस्स-घणघणेंतणीहम्ममाणसद्दसहिएण जमगसमगभंभाहोरंभकिणितखरमुहिमुगुंदसंखियपरिलिवच्चगपरिवाइणि-वंसवेणुविपंचिमहइकच्छभिरिगिसिगियकलतालकंसतालकरधाणुत्थिएण महया सद्दसण्णिणाएण सयलमवि जीवलोगं पूरयंते बलवाहणसमुदएणं एवं जक्खसहस्स-परिवुडे वेसमणे चेव धणवई अमरवइसण्णिभाए इड्ढीए पहियकित्ती गामागरणगर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खेडकब्बड तहेव सेसं जाव विजयखंधावारणिवेसं करेइ २ त्ता वड्ढइरयणं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! मम आवसहं पोसहसालं च करेहि, ममेयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

शब्दार्थ - **कमेण** - क्रमेण-क्रम से, **लउड** - लकुट-लाठी, **कोण** - तरकस, **अप्फोडिय**- भुजाओं को ठोंकते हुए, **गुलगुलाइय** - चिंघाड़ रहे थे, **किणिंत** - क्वणित-वीणा।

भावार्थ - राजा भरत ने जब दिव्य चक्ररत्न को नैऋत्य कोण में, वरदाम तीर्थ की ओर गमनोद्यत देखा तो वह अत्यंत हर्षित और परितुष्ट हुआ। उसने कौटुंबिक पुरुषों को आह्वान किया और कहा - देवानुप्रियो! अश्व, गज, रथ एवं उत्तम योद्धाओं से परिगठित चतुरंगिणी सेना को शीघ्र ही सुसज्ज करो। प्रधान हस्तिरत्न को भी तैयार करो। इस प्रकार आदेश देकर राजा स्नानगृह में प्रविष्ट हुआ, उसी क्रम से श्वेत, विशाल बादल को चीरकर निकलते हुए चंद्रमा के समान यावत् श्वेत, उत्तम डुलाए जाते चँवरों से युक्त था। अपने हाथों में ढालें लिए हुए, कमर कसे हुए, उत्तम कवच धारण किए हुए, सहस्रों योद्धाओं के साथ वह विजयोदिष्ट अभियान में उद्यत था। उन्नत, उत्तम मुकुट, छोटी-छोटी पताकाएँ बड़ी-बड़ी ध्वजाएँ, विजय वैजयन्ती, चँवर तथा साथ चलते छत्र - इन सबकी इतनी सघनता थी कि अंधेरा छा रहा था। तलवार, क्षेपणी-प्रहार हेतु पत्थर आदि फैंकने का अस्त्र, खड्ग, धनुष, नाराच-सर्वथा लौह निर्मित बाण, कनक-बाण विशेष, कल्पनी-कृपाण, शूल, यष्टिका, भिंदीपाल-भाले, धनुष, तरकश, बाण आदि शस्त्रों से, जो काले, नीले, लाल, पीले तथा सफेद रंग के सैकड़ों चिह्नों से युक्त यह विजय अभियान व्याप्त था। भुजाएँ ठोकते हुए, सिंहनाद करते हुए योद्धा राजा भरत के साथ चल रहे थे। अश्व हर्षपूर्वक हिनहिना रहे थे, हस्ति चिंघाड़ रहे थे। हजारों, लाखों रथों के चलने से उत्पन्न ध्वनि, अश्वों को ताड़ने हेतु प्रयुक्त चाबुकों की आवाज, भंभा—सामान्य ढोल, होरंभ—बड़े ढोल, वीणा, खरमुखी-वीणा विशेष, मृदंग, छोटे शंख, परिलि तथा वच्चक—घास के तृणों से बना हुआ विशेष वाद्य, परिवादिनि-सप्ततंतुमय वीणा, दंस-अलगोजा, वेणु-बांसुरी, विपंचि-वीणा विशेष, महती कच्छपी-कछुए के आकार में निर्मित बड़ी वीणा, रिगिसिगिका-सारंगी, करताल, कंसताल-कांस्यताल, परस्पर ताली बजाने से जनित प्रचुर ध्वनि से मानो समस्त जगत् शब्दायमान हो रहा था। इन सबके मध्य राजा भरत अपनी चतुरंगिणी सेना तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के वाहनों सहित, हजार यक्षों से घिरे हुए कुबेर के समान समृद्धि में तथा इन्द्र के समान ऐश्वर्यशाली प्रतीत होता था। ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट आदि पूर्व वर्णित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्यान्य स्थानों को विजय करते हुए यावत् उसने अपनी छावनी डाली। ऐसा कर वर्द्धकिरत्न को बुलाया और कहा - हे देवानुप्रिय! मेरे लिए निवास स्थान एवं पौषधशाला की शीघ्र ही रचना करो एवं आज्ञानुरूप कार्य हो जाने की सूचना दो।

वर्द्धकिरत्न का बहुमुखी वास्तु नैपुण्य

(६०)

तए णं से आसमदोणमुहगामपट्टणपुरवर-खंधावारगिहावणविभागकुसले एगासीइपएसु सव्वेसु चेव वत्थूसु णेगगुणजाणए पंडिए विहिण्णू पणयालीसाए देवयाणं वत्थुपरिच्छाए णेमिपासेसु भत्तसालासु कोट्टणिसु य आवासघरेसु य विभागकुसले छेज्जे वेज्झे य दाणकम्मे पहाणबुद्धी जलयाणं भूमियाण य भायणे जलथलगुहासु जंतेसु परिहासु य कालणाणे तहेव सद्दे वत्थुप्पएसे पहाणे गब्भिणिकण्णरुक्खवल्लिवेढियगुणदोसवियाणए गुणड्ढे सोलसपासायकरणकुसले चउसट्ठिविकप्पवित्थियमई णंदावत्ते य वद्धमाणे सोत्थियरुयग तह सव्वओभद्द-सण्णिवेसे य बहुविसेसे उद्दंडियदेवकोट्ठदारुगिरिखायवाहणविभागकुसले-

इय तस्स बहुगुणड्ढे थवई रयणे णरिंदचंदस्स।
तवसंजमणिव्विट्ठे किं करवाणीतुवट्ठाई॥ १॥
सो देवकम्मविहिणा खंधावारं णरिंदवयणेणं।
आवसहभवणकलियं करेइ सव्वं मुहुत्तेणं॥ २॥

करेत्ता पवरपोसहघरं करेइ २ त्ता जेणेव भरहे राया जाव एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणइ, सेसं तहेव जाव मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता।

शब्दार्थ - विहि - विधि, णू - जानकार, कोट्ट - परकोटा, **पहाण** - प्रधान-कुशाग्र, **तह** - तथा, **उद्दंडिय** - ध्वजाओं, **करवाणी** - करूँ, **तुवट्ठाई** - आपके लिए।

भावार्थ - शिल्पनिष्णात कारीगर आश्रम, द्रोणमुख, ग्राम, पट्टन, नगर, शैन्य शिविर, गृह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आपण-पण्य स्थान आदि की रचना में कुशल था। इकासी प्रकार के वास्तुक्षेत्र का विशेषज्ञ था। उनके गुणों का ज्ञाता एवं विधिवेत्ता था। शिल्पशास्त्र में प्रतिपादित पैंतालीस देवताओं के उचित स्थान, सन्निवेश के विधिक्रम (वास्तु परिज्ञा) का ज्ञाता था। विविध प्रकार के भवनों, भोजनशालाओं, दुर्गों की भित्तियों, वासगृह-शयनागार के विधिवत निर्माण में कुशल था। काष्ठ आदि को काटने-छांटने में, नाप-जोख में कुशाग्र बुद्धि युक्त था। जलयान, भूमियान तथा जमीन एवं पानी के भीतर सुरंग बनाने, विभिन्न प्रकार के यंत्र, खाइयाँ आदि के शुभ-अशुभ समय में निर्माण में निपुण था। शब्द शास्त्र में, वास्तु प्रदेश-विविध दिशाओं में बनाने योग्य भवनों में कुशल था। वह निर्माणोचित भूमि में उत्पन्न फलवती बेलों (गर्भिणी) कन्या-निष्फल या भविष्य में फल देने वाली बेलों, वृक्षों तथा उन पर छाई हुई लताओं के गुण दोषों को आकलित करने में समर्थ था। गुणाढ्य-प्रज्ञा, हस्तलाघव आदि में निपुण था। सोलह प्रकार के प्रासादों के निर्माण में कुशल था। शिल्पशास्त्र में प्रतिपादित चौसठ प्रकार के भवनों की रचना में निपुण था। नद्यावर्त, वर्द्धमान, स्वस्तिक, रुचक तथा सर्वतोभद्र आदि विशिष्ट प्रकार के भवनों ध्वजाओं, देव स्थानों, अनाज के कोष्ठागारों की रचना में, उपयोग में आने वाले अपेक्षित काष्ठ, गिरि-दुर्ग आदि के निर्माण में चयन हेतु उपयुक्त पर्वतीय ग्रह, खात-सरोवर (गड्ढा), वाहन आदि के समुचित निर्माण में कुशल था।

गाथा - वह शिल्पी अनेक गुणों से युक्त था। राजा भरत को अपने पूर्व संचित तप एवं संयम के परिणाम स्वरूप प्राप्त उस वर्धकिरत्न ने कहा - स्वामी! मैं आपके लिए क्या रचना करूं?॥ १॥

राजा के आदेशानुसार उसने देव कर्मविधि से-दिव्य क्षमता से मुहूर्त्तभर में छावनी एवं आवासगृह की रचना की॥ २॥

उसने ऐसा कर पौषधशाला का निर्माण किया तथा राजा के पास उपस्थित हुआ यावत् उसके आज्ञानुरूप कार्य हो जाने की सूचना दी। इससे आगे का वर्णन पहले की तरह है यावत् वह स्नानागार से निष्क्रांत हुआ, बाहरी सभाभवन में चातुर्घण्ट अश्वरथ के पास आया।

(६१)

तए णं तं धरणितलगमणलहुं तओ बहुलक्खणपसत्थं हिमवंतकंदरंतर-णिवायसंवड्ढियचित्ततिणिसदलियं जंबूणयसुकयकूबरं कणयदंडियारं पुलयवरिंद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णीलसासगपवालफलिहवररयणलेट्ठुमणिविद्दुमविभूसियं अडयालीसाररइयतवणिज्जपट्टसंगहियजुत्ततुंबं पघसियपसियणिम्मिय णवपट्टपुट्ठपरिणिट्ठियं विसिट्ठलट्ठणवलोहबद्धकम्मं हरिपहरणरयणसरिसचक्कं कक्केयणइंदणीलसासगसुसमाहियबद्धजालकडगं पसत्थविच्छिण्णसमधुरं पुरवरं च गुत्तं सुकिरणतवणिज्जजुत्तकलियं कंकटयणिजुत्तकप्पणं पहरणाणुजायं खेडगकणगधणुमंडलग्गवरसत्तिकोंततोमरसरसयबत्तीसतोणपरिमंडियं कणगरयणचित्तं जुत्तं हलीमुहबलागगयदंतचंदमोत्तियतणसोल्लियकुंदकुडयवरसिंदुवारकंदलवरफेणणिगरहार-कासप्पगासधवलेहिं अमरमणपवणजइणचवलसिग्घगामीहिं चउहिं चामराकणगविभूसियंगेहिं तुरगेहिं सच्छत्तं सज्झयं सघंटं सपडागं सुकयसंधिकम्मं सुसमाहियसमरकणगगंभीरतुल्लघोसं वरकुप्परं सुचक्कं वरणेमीमंडलं वरधारातोंडं वरवइरबद्धतुंबं वरकंचणभूसियं वरायरियणिम्मियं वरतुरगसंपउत्तं वरसारहिसुसंपग्गहियं वरपुरिसे वरमहारहं दुरूढे आरूढे पवररयणपरिमंडियं कणयखिंखिणीजालसोभियं अउज्झं सोयामणिकणगतवियपंकयजासुयणजलणजलियसुयतोंडरागं गुंजद्धबंधुजीवगरत्तहिंगुलगणिगर-सिंदूररुइलकुंकुमपारेवयचलणणयणकोइलदसणावरण-रइयाइरेगरत्तासोगकणग-केसुय-गयतालुसुरिंदगोवगसमप्पभप्पगासं बिंबफलसिलप्पवालउट्ठिंतसूरसरिसं सव्वोउयसुरहिकुसुमआसत्तमल्लदामं ऊसियसेयज्झयं महामेहरसियगंभीरणिद्धघोसं सत्तुहिययकंपणं पभाए य सस्सिरीयं णामेणं पुहविविजयलंभंति विस्सुयं लोगविस्सुयजसोऽहयं चाउग्घंटं आसरहं पोसहिए णरवई दुरूढे।

तए णं से भरहे राया चाउग्घंटं आसरहं दुरूढे समाणे सेसं तहेव जाव दाहिणाभिमुहे वरदामतित्थेणं लवणसमुद्दं ओगाहइ जाव से रहवरस्स कुप्परा उल्ला जाव पीइदाणं से, णवरं चूडामणिं च दिव्वं उरत्थजेविज्जगं सोणियसुत्तगं कडगाणि य तुडियाणि य जाव दाहिणिल्ले अंतवाले जाव अट्ठाहियं महामहिमं करेंति २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

तए णं से दिव्वे चक्करयणे वरदामतित्थकुमारस्स देवस्स अट्ठाहियाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता अंतलिक्खपडिवण्णे जाव पूरंते चेव अंबरतलं उत्तरपच्चत्थिमं दिसिं पभास-तित्थाभिमुहे पयाए यावि होत्था।

शब्दार्थ - **गमनलहु** - शीघ्रता से चलने वाला, **णिवाय** - निर्वात-वायुरहित, **तिणिस-** तिनिश-काष्ठ विशेष, **कूबरं** - जूआ, **पघसिय** - प्रघर्षित-दृढता से बंधी हुई, **पसिय** - सटी हुई, हरि - वासुदेव, **पहरण-रयण** - प्रहरण रत्न-शस्त्र रत्न, **कंकटय** - कवच, **णिजुत्त** - स्थापित, **खेड** - ढाल, **बलाग** - बगुले, **तणसोल्लिय** - मल्लिका, **तोंड** - जुआ-युग, **वरायरिय** - उत्तम शिल्पाचार्यों द्वारा, **सारहि** - सारथि, **अउज्झं** - किसी के द्वारा सामना न किए जाने योग्य, **सोयामणि** - सौदामिनि, **पारेवय** - कबूतर, **उद्दिंत** - उगते हुए।

भावार्थ - वह रथ भूमि पर तीव्र गति से चलने वाला, अनेक उत्तमोत्तम लक्षणयुक्त था। हिमालय पर्वत की निर्वात कंदराओं में संवर्द्धित विविध प्रकार के तिनिश संज्ञक, रथ निर्माणोचित वृक्षों के काष्ठ से वह निर्मित था। उसका जूआ जंबूनद स्वर्ण से निर्मित था। उसके आरे सोने की ताड़ियों से बने थे। वह पुलक, वरेन्द्र, नीलसासक, मूंगा, स्फटिक, उत्तम रत्न, लेष्टु संज्ञक रत्न, विद्रुम से विभूषित था। उसके अड़तालीस आरे थे, उनके दोनों तुंब स्वर्ण निर्मित पट्टों से मजबूती से बंधे थे। उसका पीछे का भाग विशेष रूप से बंधी हुई, सटी हुई पट्टियों से सुनिष्पन्न था। अत्यंत सुंदर लौह श्रृंखला तथा चर्म रज्जु से उसके अवयव परिबद्ध थे। उसके दोनों पहिए वासुदेव के चक्ररत्न के सदृश थे। उसकी जाली चंद्रकांत, इन्द्रनील तथा सासक रत्नों से बनी हुई एवं सजी हुई थी। उसकी धुरा सुंदर, विस्तृत तथा एक समान थी। वह उत्तम नगर की ज्यों गुप्त, सुरक्षित, सुदृढ़ था। उसके अश्वों के गले में पड़ी रस्सी तपनीय स्वर्ण निर्मित थी। उसमें कवच रखे थे। वह अस्त्रों से युक्त था। ढाल, विशेष बाण, धनुष, विशेष प्रकार की तलवारें (मण्डलाग्र), त्रिशूल, भाले, तोमर, सैकड़ों बाणों से युक्त बत्तीस प्रकार के तरकसों से वह सुशोभित था। उस पर स्वर्ण एवं रत्नमय चित्रांकन था। हलीमुख, बगुले, गजदंत, चंद्रमा, मोती, मल्लिका, कुंद, कुटज, निर्गुण्डी तथा सिंदुबार, कंदल के फूल, उत्तम फेनराशि, हार, कास के सदृश श्वेत तथा देव, मन एवं वायु की गति से भी तीव्र, चपल, शीघ्र गमनशील, चारों ओर चँवरों एवं स्वर्णनिर्मित आभूषणों से विभूषित चार अश्व उसमें जुते थे। रथ पर छत्र तथा ध्वजाएँ घंटियाँ एवं पताकाएँ लगी थीं। उसका संधि योजन सुंदर रूप में निष्पादित था। समीचीन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रूप में सुनियोजित, युद्ध में बजाए जाने वाले विशेष वाद्य के समान उस रथ के चलने से आवाज उत्पन्न होती थी। उसके कूर्पर-पिञ्जनक संज्ञक अवयव उत्तम थे। वह सुंदर पहियों तथा उत्कृष्ट नेमिमंडल युक्त था। उसके जुए के दोनों किनारे बड़े ही सुंदर थे। उसके तुम्बे की ज्यों उठे हुए भाग वज्ररत्न निर्मित थे। वह उत्तम कोटि के स्वर्णाभूषणों से शोभित था। वह उत्तम शिल्पाचार्यों द्वारा निर्मित था। उसमें श्रेष्ठ घोड़े जुते थे। उत्तम सारथि द्वारा वह सुचालित था। वह उत्तम, श्रेष्ठ, महनीय पुरुष द्वारा आरोहरण योग्य, श्रेष्ठ रत्नों से परिमंडित, अपने में लगे छोटे-छोटे घुंघरुओं से शोभित, किसी के द्वारा भी सामना न किए जाने योग्य (अपराभवनीय) था। उसका रंग विद्युत, तपाए हुए स्वर्ण, कमल, जपापुष्प, प्रदीप्त अग्नि तथा तोते की चोंच, गुंजा की अर्द्धचोंच, बंधुजीवक के पुष्प, हिंगलु राशि, सिंदुर, उत्तम कुंकुम, कबूतर के पैर, कोकिला के नेत्र, ओष्ठ, अतिमनोज्ञ लाल अशोक, स्वर्ण, पलाश पुष्प, गज तालु, इन्द्रगोप-बीरबहूटी (वर्षा में होने वाला लाल कीट)-इनके समान प्रभा युक्त था। उसकी कांति बिंबफल, शिलाप्रवाल-मूंगा तथा उगते हुए सूरज के सदृश थी। समस्त ऋतुओं में खिलने वाले फूलों की मालाओं से वह सज्जित था। उस पर ऊँची, श्वेत ध्वजा फहरा रही थी। उसकी गड़गड़ाहट-विशाल बादल की गर्जना के तुल्य अत्यंत गंभीर थी, जिससे शत्रु का हृदय दहल उठता था। अपनी प्रभा, कांति एवं नाम से ही वह पृथ्वी की विजय का संसूचक था। लोकविश्रुत, यशस्वी राजा भरत पौषध का पारणा कर इस पर आरूढ़ हुआ। वरदाम तीर्थ पर

राजा भरत के अश्वरथ पर आरूढ़ होने के बाद का वर्णन पूर्ववत् है। राजा भरत ने दक्षिण दिशा की ओर बढ़ते हुए, वरदाम तीर्थ की ओर जाने के लिए लवणसमुद्र में अवगाहन किया यावत् उत्तम रथ के पहिए भीग गए यावत् वरदाम तीर्थ के देवकुमार ने प्रीतिदान दिया। यहाँ इतना अंतर है - उसने चूड़ामणि-शिरोभूषण, वक्षःस्थल पर धारण करने योग्य गले का हार, करधनी (कमर के नीचे का आभूषण विशेष), कड़े, भुजबंद भेंट किए यावत् उसने कहा - मैं दक्षिण दिशावर्ती अंतवाल-विघ्न नाशक, सीमारक्षक सेवक हूँ यावत् इस विजय के उपलक्ष में राजाज्ञा अनुसार अष्टदिवसीय महोत्सव मनाया गया एवं राजा को इसकी संपन्नता की सूचना दी गई।

वरदाम तीर्थकुमार को विजित कर लेने के उपलक्ष में मनाए गए अष्टदिवसीय महोत्सव के पूर्ण होने के पश्चात् वह दिव्य चक्ररत्न आयुधशाला से निष्क्रांत हुआ, अंतरिक्ष में अवस्थित हो गया यावत् आकाश वाद्य ध्वनि से पूरित था। वह चक्ररत्न उत्तर-पश्चिम-वायव्य कोण में स्थित प्रभासतीर्थ की ओर चल पड़ा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रभासतीर्थ विजय

(६२)

तए णं से भरहे राया तं दिव्वं चक्करयणं जाव उत्तरपच्चत्थिमं दिसिं तहेव जाव पच्चत्थिमदिसाभिमुहे पभासतित्थेणं लवणसमुद्दं ओगाहेइ २ त्ता जाव से रहवरस्स कुप्परा उल्ला जाव पीइदाणं से णवरं मालं मउडिं मुत्ताजालं हेमजालं कडगाणि य तुडियाणि य आभरणाणि य सरं च णामाहयंकं पभासतित्थोदगं च गिण्हइ २ त्ता जाव पच्चत्थिमेणं पभासतित्थमेराए अहण्णं देवाणुप्पियाणं विसयवासी जाव पच्चत्थिमिल्ले अंतवाले, सेसं तहेव जाव अट्ठाहिया णिव्वत्ता ॥ ४८-४९॥

भावार्थ - तत्पश्चात् राजा भरत उस दिव्य चक्र का अनुसरण, अनुगमन करता हुआ वायव्य कोण की ओर होता हुआ पूर्ववत् यावत् पश्चिम दिशाभिमुख होता हुआ, प्रभासतीर्थ की ओर अग्रसर होता हुआ, लवण समुद्र में प्रविष्ट हुआ यावत् उसके रथ के पहिए आर्द्र हो गए यावत् प्रभासतीर्थाधिपति देव ने उसे स्नेहोपहार भेंट किए। पूर्व वर्णन से यहाँ विशेषता यह है - उसने राजा भरत को रत्नमाला, मुकुट, मोतियों की राशि, स्वर्णराशि, कंटक, त्रुटित, अन्य आभूषण, नामांकित बाण एवं प्रभासतीर्थ का जल उपहृत किया और कहा - मैं आप द्वारा जीते गए देश का वासी हूँ यावत् पश्चिम दिशावर्ती अंतपाल हूँ। शेष वर्णन पूर्व की तरह है। इस विजय के उपलक्ष में अष्टदिवसीय विशाल महोत्सव संपादित हुआ।

सिंधुदेवी पर विजय

(६३)

तए णं से दिव्वे चक्करयणे पभासतित्थकुमारस्स देवस्स अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जाव पूरेंते चेव अंबरतलं सिंधूए महाणईए दाहिणिल्लेणं कूलेणं पुरत्थिमं दिसिं सिंधुदेवीभवणाभिमुहे पयाए यावि होत्था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से भरहे राया तं दिव्वं चक्करयणं सिंधूए महाणईए दाहिणिल्लेणं कूलेणं पुरत्थिमं दिसिं सिंधुदेवी भवणाभिमुहं पयायं पासइ २ त्ता हट्ठतुट्ठचित्त तहेव जाव जेणेव सिंधूए देवीए भवणं तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सिंधूए देवीए भवणस्स अदूरसामंते दुवालसजोयणायामं णवजोयणविच्छिण्णं वरणगरसारिच्छं विजयखंधावारणिवेसं करेइ जाव सिंधुदेवीए अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव दब्भसंथारोवगए अट्ठमभत्तिए सिंधुदेविं मणसि करेमाणे २ चिट्ठइ। तए णं तस्स भरहस्स रण्णो अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि सिंधूए देवीए आसणं चलइ, तए णं सा सिंधुदेवी आसणं चलियं पासइ २ त्ता ओहिं पउंजइ २ त्ता भरहं रायं ओहिणा आभोएइ २ त्ता इमे एयारूवे अब्भत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था - उप्पण्णे खलु भो! जंबुद्दीवे दीवे भरहे वासे भरहे णामं राया चाउरंतचक्कवट्टी, तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्णमणागयाणं सिंधूणं देवीणं भरहाणं राईणं उवत्थाणियं करेत्तए, तं गच्छामि णं अहंपि भरहस्स रण्णो उवत्थाणियं करेमित्तिकट्टु कुंभट्ठसहस्सं रयणचित्तं णाणामणिकणग-रयणभत्तिचित्ताणि य दुवे कणगभद्दासणाणि य कडगाणि य तुडियाणि य जाव आभरणाणि य गेण्हइ २ त्ता ताए उक्किट्ठाए जाव एवं वयासी - अभिजिए णं देवाणुप्पिएहिं केवलकप्पे भरहे वासे अहण्णं देवाणुप्पियाणं विसयवासिणी अहण्णं देवाणुप्पियाणं आणत्तिकिंकरी तं पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया! मम इमं एयारूवं पीइदाणं-तिकट्टु कुंभट्ठसहस्सं रयणचित्तं णाणामणिकणगकडगाणि य जाव सो चेव गमो जाव पडिविसज्जेइ, तए णं से भरहे राया पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता ण्हाए कयबलिकम्मे जाव जेणेव भोयणमंडवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए अट्ठमभत्तं परियादियइ जाव सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ २ त्ता अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ सद्दावेइ २ त्ता जाव अट्ठाहियाए महामहिमाए तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - प्रभास तीर्थ कुमार को जीत लेने के उपलक्ष में रचे गए आठ दिनों के विशाल समारोह के परिपूर्ण हो जाने पर वह दिव्य चक्ररत्न आयुधशाला से प्रतिनिष्क्रांत हुआ यावत् वाद्य ध्वनि के मध्य अंतरिक्ष में अवस्थित हुआ। सिंधु महानदी के दाहिने तट से होता हुआ पूर्व दिशा में विद्यमान सिंधु देवी के भवन की ओर चला।

राजा भरत ने दिव्य चक्ररत्न को सिंधु महानदी के दाहिने तट से होते हुए पूर्व दिशा में स्थित सिंधुदेवी के भवन की ओर गमनशील देखा तो उसके मन में बड़ा ही हर्ष और परितोष हुआ यावत् वह जहाँ सिंधु देवी का भवन था, वहाँ आया। उससे न अधिक दूर और न अधिक निकट थोड़ी दूरी पर बारह योजन लम्बी तथा नौ योजन चौड़ी, उत्तम नगर के सदृश विजय स्कंधावार—सैन्य छावनी लगवाई यावत् वर्धकिरत्न द्वारा बनाई गई पौषधशाला में ब्रह्मचर्य पूर्वक पौषध स्वीकार करते हुए डाभ का आसन बिछाया।

यहाँ उसने सिंधुदेवी को उद्दिष्ट कर - उसे साधने, जीतने हेतु तेले की तपस्या स्वीकार की। राजा भरत के तेले की तपस्या पूर्ण हो जाने पर सिंधुदेवी का आसन चलित हुआ। सिंधुदेवी ने जब अपने आसन को चलायमान देखा तो उसने अवधिज्ञान को प्रयुक्त किया। उस द्वारा उसने राजा भरत को तपस्यारत जाना। देवी के मन में ऐसा मनोगत संकल्प, मानसिक उद्वेलन, चिंतन, विचार उत्पन्न हुआ - जंबूद्वीप के अन्तर्गत भरत संज्ञक, चातुरंत चक्रवर्ती का प्रादुर्भाव हुआ है। भूत, वर्तमान और भविष्य - तीनों ही कालों की सिंधु देवियों के लिए यह परंपरानुगत, समुचित एवं व्यवहारानुमोदित है कि वे चक्रवर्ती राजा को उपहार भेंट करें। इसलिए में भी जाकर उसे उपहार अर्पित करूं। ऐसा विचार कर देवी आठ हजार रत्नांचित कंबल, विविधमणि, स्वर्ण, रत्न द्वारा चित्रित दो स्वर्णनिर्मित श्रेष्ठ आसन, कड़े, भुजबंद, यावत् अन्यान्य आभूषण लेकर - तेजगति से यावत् राजा के पास आई और बोली - देवानुप्रिय! आपने भरत क्षेत्र को जीत लिया है। मैं आपके राज्य में बसने वाली, आपकी आदेशानुवर्तिनी सेविका हूँ। देवानुप्रिय! मेरे द्वारा उपहृत आठ हजार रत्न कंबल, भिन्न-भिन्न प्रकार की मणियों तथा स्वर्ण को स्वीकार करो यावत् यहाँ पूर्व पाठ ग्राह्य है यावत् राजा भरत ने भेंट स्वीकार कर देवी को बिदा किया। वैसा कर राजा पौषधशाला से प्रतिनिष्क्रांत हुआ, स्नानघर में आया, नित्य-नैमित्तिक बलि-पूजा आदि मांगलिक कृत्य (कृत बलिकर्म) किए यावत् भोजन मंडप में आया। सुखासन में स्थित हुआ तथा उसने तेले की तपस्या का पारणा किया यावत् बाह्य उपस्थान शाला में आया, पूर्वाभिमुख होकर उत्तम सिंहासन पर समासीन हुआ। अठारह श्रेणी-प्रश्रेणी के लोगों को बुलाया यावत् अष्टदिवसीय महोत्सव की संपन्नता-पर इन्होंने राजा को ज्ञापित किया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैताढ्य - विजय

(६४)

तए णं से दिव्वे चक्करयणे सिंधूए देवीए अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए आउहघरसालाओ तहेव जाव उत्तरपुरच्छिमं दिसिं वेयड्ढपव्वयाभिमुहे पयाए यावि होत्था।

तए णं से भरहे राया जाव जेणेव वेयड्ढपव्वए जेणेव वेयड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणिल्ले णियंबे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता वेयड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणिल्ले णियंबे दुवालसजोयणायामं णवजोयणविच्छिण्णं वरणगरसरिच्छं विजय-खंधावारणिवेसं करेइ २ त्ता जाव वेयड्ढगिरिकुमारस्स देवस्स अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता पोसहसालाए जाव अट्ठमभत्तिए वेयड्ढगिरिकुमारं देवं मणसि करेमाणे २ चिट्ठइ, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि वेयड्ढगिरिकुमारस्स देवस्स आसणं चलइ, एवं सिंधुगमो णेयव्वो पीइदाणं आभिसेक्कं रयणालंकारं कडगाणि य तुडियाणि य वत्थाणि य आभरणाणि य गेण्हइ २ त्ता ताए उक्किट्ठाए जाव अट्ठाहियं जाव पच्चप्पिणंति।

शब्दार्थ - **णितंब** - पर्वत की तलहटी, **आभिसेक्क** - धारण करने योग्य।

भावार्थ - सिंधुदेवी को विजित करने के उपलक्ष में आयोजित आठ दिवस का महोत्सव परिपूर्ण हो जाने पर वह दिव्य चक्ररत्न पहले की तरह आयुधशाला से निकला यावत् उत्तर-पूर्व दिशा भाग में - ईशान कोण में स्थित वैताढ्य पर्वत की ओर चला।

राजा भरत यावत् जहाँ वैताढ्य पर्वत की तलहटी थी, वहाँ आया। वैताढ्य पर्वत की दाहिनी ओर की तलहटी में उत्तम नगर सदृश बारह योजन लंबी और नौ योजन चौड़ी फौज की छावनी लगाई यावत् वैताढ्य कुमार देव को जीतने के उद्देश्य से पौषधशाला में तेले की तपस्या अंगीकार की यावत् तेले की तपस्या में स्थित राजा वैताढ्य गिरिकुमार के संदर्भ में चिंतन करता हुआ स्थित रहा। राजा भरत के तेले की तपस्या पूर्ण होने पर वैताढ्य गिरिकुमार का आसन चलित हुआ। आगे वर्णन सिंधुदेवी के प्रसंग जैसा है। वैताढ्य गिरिकुमार ने राजा भरत द्वारा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धारण करने योग्य रत्नों के आभूषण, कड़े, भुजबंद, वस्त्र तथा अन्यान्य आभरण लेकर वह तेज गति से राजा के निकट पहुँचा, उपहार भेंट किए यावत् राजा के आदेशानुसार श्रेणी-प्रश्रेणी जनों ने अष्टदिवसीय महोत्सव संपन्न कर राजा को सूचित किया।

तमिस्रा - विजय

(६५)

तए णं से दिव्वे चक्करयणे अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए जाव पच्चत्थिमं दिसिं तिमिसगुहाभिमुहे पयाए यावि होत्था, तए णं से भरहे राया तं दिव्वं चक्करयणं जाव पच्चत्थिमं दिसिं तिमिसगुहाभिमुहं पयायं पासइ २ त्ता हट्ठतुट्ठचित्त जाव तिमिसगुहाए अदूरसामंते दुवालसजोयणायामं णवणोयण-विच्छिण्णं जाव कयमालस्स देवस्स अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव कयमालगं देवं मणसि करेमाणे २ चिट्ठइ, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि कयमालस्स देवस्स आसणं चलइ तहेव जाव वेयड्ढगिरिकुमारस्स णवरं पीइदाणं इत्थीरयणस्स तिलगचोद्दसं भंडालंकारं कडगाणि य जाव आभरणाणि य गेण्हइ २ त्ता ताए उक्किट्ठाए जाव सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता पडिविसज्जेइ जाव भोयणमंडवे, तहेव महामहिमा कयमालस्स पच्चप्पिणंति।

शब्दार्थ - **कवए** - कवच, **सरासण** - धनुष, **पट्टिए** - प्रत्यंचा, **उप्पीलिए** - आरोपित की-चढाई, **पिणद्ध** - धारण किया, **आउह** - आयुध, **पहरण** - शस्त्र।

भावार्थ - आठ दिनों के महोत्सव की संपन्नता के अनंतर वह दिव्य चक्ररत्न यावत् आयुधशाला से बाहर निकलकर पश्चिम दिशा में तमिस्रा गुफा की ओर अग्रसर हुआ। जब राजा भरत ने उस दिव्य चक्ररत्न को यावत् पश्चिम दिशा में बढते हुए देखा तो उसके मन में बड़ा हर्ष और परितोष हुआ यावत् उसके न अधिक पास न अधिक दूर बारह योजन लम्बी तथा नौ योजन चौड़ी सैन्य छावनी लगाई यावत् कृतमाल देव को उद्दिष्ट कर राजा ने पौषधशाला में ब्रह्मचर्य पूर्वक तेले की तपस्या स्वीकार की यावत् कृतमाल के संबंध में चिंतन निरत रहा। राजा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भरत के तैले की तपस्या पूर्ण होने पर कृतमाल देव का आसन चलित हुआ जैसे वैताढ्यगिरिकुमार का हुआ था यावत् अन्तर इतना है - कृतमाल देव ने राजा भरत को प्रीतिदान देने हेतु स्त्रीरत्न-पटरानी के लिए रत्ननिर्मित चतुर्दश तिलक-ललाट के आभूषण एवं कड़े सहित मंजूषा यावत् अन्यान्य आभरण लिए तथा उत्कृष्ट गति से राजा के पास आया, उपहार भेंट किए यावत् राजा ने सत्कृत-सम्मानित कर उसे विदा किया यावत् राजा भोजन मंडप में आया। शेष वर्णन पूर्ववत् है। श्रेणी-प्रश्रेणी जनों ने राजाज्ञा से कृतमाल देव को विजित करने के उपलक्ष में मनाए गए महोत्सव की संपन्नता की राजा को सूचना दी।

सेनापति द्वारा निष्कुट प्रदेश के विजय की तैयारी

(६६)

तए णं से भरहे राया कयमालस्स० अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए सुसेणं सेणावइं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - गच्छाहि णं भो देवाणुप्पिया! सिंधूए महाणईए पच्चत्थिमिल्लं णिक्खुडं ससिंधुसागरगिरिमेरागं समविसमणिक्खुडाणि य ओअवेहि ओअवेत्ता अग्गाइं वराइं रयणाइं पडिच्छाहि अग्गाइं० पडिच्छित्ता ममेयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि।

तए णं से सेणावई बलस्स णेया भरहे वासंमि विस्सुयजसे महाबलपरक्कमे महप्पा ओयंसी तेयलक्खणजुत्ते मिलक्खुभासाविसारए चित्तचारुभासी भरहे वासंमि णिक्खुडाणं णिण्णाण य दुग्गमाण य दुप्पवेसाण य वियाणए अत्थसत्थकुसले रयणं सेणावई सुसेणे भरहेणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए जाव करयलपरिग्गहियं दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं सामी! तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ २ त्ता भरहस्स रण्णो अंतियाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव सए आवासे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेह हयगयरहपवर जाव चाउरंगिणिं सेण्णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सण्णाहेहत्तिकट्टु जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगल-पायच्छित्ते सण्णद्धबद्धवम्मियकवए उप्पीलियसरासणपट्टिए पिणद्धगेविज्जबद्धआविद्धविमल-वरचिंधपट्टे गहियाउहप्प-हरणे अणेगगणणायगदंडणायग जाव सद्धिं संपरिवुडे सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं मंगलजय २ सद्दकयालोए मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव आभिसेक्के हत्थिरयणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता आभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरूढे।

भावार्थ - कृतमाल देव को जीत लेने के उपलक्ष में अष्टदिवसीय महोत्सव पूर्ण हो जाने पर राजा भरत ने अपने सुषेण नामक सेनापति को बुलाया और कहा - देवानुप्रिय! सिंधु महानदी की पश्चिम दिशा में विद्यमान पूर्व दिशा एवं दक्षिण दिशा में सिंधु महानदी द्वारा तथा पश्चिम दिशा में पश्चिम समुद्र से एवं उत्तर में वैताढ्य पर्वत द्वारा मर्यादित भरत क्षेत्र के कोणवर्ती, खण्ड रूप निष्कुट प्रदेशों को उसके समतल, उबड़-खाबड़ अवांतर क्षेत्रों को मेरे अधीन बनाओ। उनको अधिकृत कर उनसे उत्तम, श्रेष्ठ जाति के रत्न प्राप्त करो, यह सब हो जाने की मुझे सूचना दो।

भरत द्वारा यों आदेश दिए जाने पर सुषेण मन में बहुत हर्षित, परितुष्ट और मन में आनंदित हुआ यावत् दोनों हाथों से अंजली बांधे उन्हें मस्तक पर घुमाते हुए कहा - स्वामिन्! जैसी आपकी आज्ञा - इस प्रकार विनय पूर्वक राजा का आदेश स्वीकार किया एवं राजा भरत के यहाँ से प्रतिनिष्क्रांत हुआ, अपने घर लौटा एवं अपने कौटुंबिक पुरुषों को बुलाया और कहा-देवानुप्रियो! शीघ्र ही प्रधान हस्तिरत्न को तैयार करो। अश्व, गज, रथ एवं पदातियों से युक्त यावत् चतुरंगिणी सेना को तैयार करो। ऐसी आज्ञा देकर वह स्नानागार में गया। स्नान किया, नित्य नैमित्तिक पूजोपचार एवं मंगल प्रायश्चित्त आदि संपन्न किए। उसने अपने शरीर पर कवच धारण किए, धनुष पर प्रत्यंचा आरोपित की। गले में हार धारण किया। उत्तम, स्वच्छ वस्त्र कमर में बांधा। शस्त्रास्त्र धारण किए। अनेक गणनायकों, दंडनायकों से घिरा हुआ यावत् कोरंट पुष्पों की माला से निर्मित छत्र धारण किए हुए, देखते ही लोगों द्वारा जय सूचक शब्दों से वर्धापित होता हुआ स्नानघर से बाहर निकला। बाह्य उपस्थानशाला में जहाँ प्रधान हस्ती तैयार खड़ा था, आया और उस पर आरूढ हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चर्मरत्न द्वारा सिंधु महानदी पार

(६७)

तए णं से सुसेणे सेणावई हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं हयगयरहपवरजोहकलियाए चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे महयाभडचडगरपहगरवंदपरिक्खित्ते महया उक्किट्ठिसीहणायबोलकलकलसद्देणं समुद्दरवभूयं पिव करेमाणे सव्विड्ढीए सव्वज्जुईए सव्वबलेणं जाव णिग्घोसणाइएणं जेणेव सिंधू महाणई तेणेव उवागच्छइ २ त्ता चम्मरयणं परामुसइ, तए णं तं सिरिवच्छसरिसरूवं मुत्ततारद्धचंदचित्तं अयलमकंपं अभेज्जकवयं जंतं सलिलासु सागरेसु य उत्तरणं दिव्वं चम्मरयणं सणसत्तरसाइं सव्वधण्णाइं जत्थ रोहंति, एगदिवसेण वावियाइं, वासं णाऊण चक्कवट्टिणा परामुट्ठे दिव्वे चम्मरयणे दुवालस ज़ोयणाइं तिरियं पवित्थरइ तत्थ साहियाइं, तए णं से दिव्वे चम्मरयणे सुसेणसेणावइणा परामुट्ठे समाणे खिप्पामेव णावाभूए जाए यावि होत्था, तए णं से सुसेणे सेणावई सखंधावारबलवाहणे णावाभूयं चम्मरयणं दुरूहइ २ त्ता सिंधूं महाणइं विमलजलतुंगवीइं णावाभूएणं चम्मरयणेणं सबलवाहणे ससेणे समुत्तिण्णे।

शब्दार्थ - **परामुसह** - स्पर्श किया, **अभेज्ज** - अभेद्य, **सलिलासु** - नदियाँ, **जंतं** - यत्र, **उत्तरणं** - पार करने का, **णाऊण** - अधिक, **पवित्थरह** - विस्तृत, **णावाभूयं** - नौकाभूत।

भावार्थ - गजारूढ सेनापति सुषेण पर कोरंट पुष्पों की मालाओं का छत्र तना था। अश्व, गज, रथ और श्रेष्ठ पदातियों से युक्त चतुरंगिणी सेना से घिरा था। बड़े-बड़े योद्धाओं एवं परिजन समुदाय से समवेत था। उस द्वारा किए गए गंभीर, उत्तम, सिंहनाद की गरजती हुई ध्वनि से ऐसा लगता था मानों समुद्र गरज रहा हो। सर्वविध समृद्धि, द्युति, सैन्यशक्ति से यावत् निर्घोषपूर्वक-युद्धोन्मादजनित कोलाहल के साथ जहाँ सिंधु महानदी थी वहाँ आया। वहाँ पहुँचकर उसने चर्मरत्न का स्पर्श किया। वह चर्मरत्न श्रीवत्स नामक स्वास्तिक विशेष के रूप युक्त था। उस पर मोतियों, तारिकाओं तथा अर्द्धचंद्र का चित्रांकन था। वह अचल एवं कंपन रहित था। वह अभेद्य क़वच के सदृश था। नदियों तथा सागरों को लांघने का यंत्र रूप अनन्य साधन था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वह दैवी प्रभाव युक्त था। उस पर उप्त सतरह प्रकार के धान्य एक ही दिन में परिपक्व हो सके, ऐसी विशेषता युक्त था। चक्रवर्ती द्वारा परामृष्ट, संप्रदत्त वह चर्मरत्न बारह योजन से कुछ अधिक विस्तार लिए हुए था। सेनापति सुषेण द्वारा समादिष्ट चर्मरत्न शीघ्र ही विशाल नौका के रूप में परिणत हो गया। सेनापति सुषेण एवं सैन्य-शिविर में स्थित सेना, वाहनों सहित उस चर्मरत्न में आरूढ हुए। निर्मल जल की उछलती हुई तरंगों से आपूर्ण सिंधु महानदी को सेनापति सुषेण ने दल-बल सहित पार किया।

सेनापति द्वारा विशाल विजयाभियान

(६८)

तओ महाणईमुत्तरित्तु सिंधुं अप्पडिहयसासणे सेणावई कहिंचि गामागर-णगरपव्वयाणि खेडकब्बडमडंबाणि पट्टणाणि सिंहलए बब्बरए य सव्वं च अंगलोयं बलायालोयं च परमरम्मं जवणदीवं च पवरमणिरयणकणग-कोसागारसमिद्धं आरबए रोमए य अलसंडविसयवासी य पिक्खुरे कालमुहे जोणए य उत्तरवेयड्ढसंसियाओ य मेच्छजाई बहुप्पगारा दाहिणअवरेण जाव सिंधुसागरंतोत्ति सव्वपवरकच्छं च ओअवेऊण पडिणियत्तो बहुसमरमणिज्जे य भूमिभागे तस्स कच्छस्स सुहणिसण्णे, ताहे ते जणवयाण णगराण पट्टणाण य जे य तहिं सामिया पभूया आगरवई य मंडलवई य पट्टणवई य सव्वे घेत्तूण पाहुडाइं आभरणाणि य भूसणाणि य रयणाणि य वत्थाणि य महरिहाणि अण्णं च जं वरिट्ठं रायारिहं जं च इच्छियव्वं एयं सेणावइस्स उवणेंति मत्थय-कयंजलिपुडा, पुणरवि काऊण अंजलिं मत्थयंमि पणया तुब्भे अम्हेऽत्थ सामिया देवयं व सरणागया भो तुब्भं विसयवासिणोत्ति विजयं जंपमाणा सेणावइणा जहारिहं ठविय पूइय विसज्जिया णियत्ता सगाणि णगराणि पट्टणाणि अणुपविट्ठा, ताहे सेणावई सविणओ घेत्तूण पाहुडाइं आभरणाणि भूसणाणि रयणाणि य पुणरवि तं सिंधुणामधेज्जं उत्तिण्णे अणहसासणबले, तहेव भरहस्स रण्णो णिवेएइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिवेइत्ता य अप्पिणित्ता य पाहुडाइं सक्कारियसम्माणिए सहरिसे विसज्जिए सगं पडमंडवमइगए।

तए णं सुसेणे सेणावई ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगल पायच्छित्ते जिमियभुत्तुत्तरागए समाणे जाव सरसगोसीसचंद-णुक्खित्तगायसरीरे उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसइबद्धेहिं णाडएहिं वरतरुणीसंपउत्तेहिं उवणच्चिज्जमाणे २ उवगिज्जमाणे २ उवलालि(लभि)ज्जमाणे २ महया हयणट्ट-गीयवाइयतंतीतलताल-तुडिय-घणमुइंग-पडुप्पवाइयरवेणं इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे भुंजमाणे विहरइ।

शब्दार्थ - **उत्तररित्तु** - पारकर, **अप्पडिहयसासणे** - जिसकी आज्ञा कोई उल्लंघन न कर सके, **संसियाओ** - संस्थित, **घेत्तूण** - लेकर, **पडमंडव** - पटमंडप-कपड़ा, **उक्खित्त** - लेप किया।

भावार्थ - सिंधु महानदी को पार कर सेनापति सुषेण, जिसकी आज्ञा का प्रतिरोध करने में कोई भी समर्थ नहीं था, गाँव, आकर, नगर, पर्वत, खेट, कर्बट, मडंब, पट्टण आदि विजय करता हुआ, सिंघल देशीय, श्रेष्ठ मणियों एवं रत्नों के भण्डारों से समृद्ध यवन द्वीप-यूनान को, अरब देश तथा रोम देश के लोगों को, अलसंड देशवासियों को पिक्खुरों, कालमुखों, जोनकों - इन विभिन्न लोगों को तथा उत्तर वैताढ्य पर्वत की तलहटी में संस्थित अनेक म्लेच्छ जाति के जनों को; दक्षिण पश्चिम नैर्ऋत्य कोण से लेकर सिंधु नदी तथा समुद्र के संगम तक के, सभी में श्रेष्ठ कच्छ देश को अधिकृत कर वह वापस मुड़ा। कच्छ देश के बहुत ही सुंदर भूमिभाग में रुका। तब अनेक देशों, प्रदेशों, नगरों तथा पत्तनों के अधिपति, आकरपति-स्वर्ण, रजत आदि खानों के स्वामी, मंडलपति, पट्टणपति आदि ने सभी अंगों पर धारण करने योग्य आभरण, उपांगों पर धारण करने योग्य भूषण, रत्न, वस्त्र, अन्यान्य उत्तम, राजोचित वस्तुएँ, मस्तक पर अंजलि बाँधे सेनापति सुषेण को समर्पित कीं। वहाँ से वापस लौटते हुए उन्होंने पुनः हाथ जोड़कर मस्तक से लगाया और प्रणाम कर कहा - आप हमारे स्वामी हैं। हम देव की ज्यों आपकी शरण में हैं। आपके द्वारा अधिकृत देशों के निवासी हैं। सेनापति ने उनको यथायोग्य स्थानों एवं अधिकारों से सम्मानित कर विदा किया। वे अपने-अपने नगर, पट्टन आदि स्थानों में लौट आए। जिसकी आज्ञा सर्वमान्य थी, उस सेनापति ने सविनय गृहीत आभरण, भूषण, रत्नों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

को लिए हुए सिंधु नामक महानदी को पार किया। वैसा कर राजा भरत के सम्मुख उपस्थित हुआ एवं विजयाभियान का सारा वर्णन राजा को बतलाया। ऐसा निवेदित कर सभी भेंट स्वरूप प्राप्त वस्तुएँ राजाओं को अर्पित की। राजा ने सेनापति को सत्कृत, सम्मानित कर सहर्ष विदा किया। सेनापति तंबू में अपने ठहरने की जगह आया।

तत्पश्चात् सेनापति सुषेण नहाया, नित्यनैमित्तिक पूजा-बलिकर्म आदि मांगलिक कृत्य किए। भोजन के पश्चात् यावत् आर्द्र गोशीर्ष जातीय श्रेष्ठ चंदन का जल शरीर पर छिड़का फिर अपने प्रासाद की ऊपरी मंजिल में गया। वहाँ मृदंग बज रहे थे, सुंदर तरुणियाँ बत्तीस प्रकार के अभिनयों द्वारा नाटक प्रस्तुत कर रही थी। सेनापति की इच्छानुरूप नृत्य एवं गान द्वारा वे उसके मन को अनुरंजित कर रही थीं। नाटक में गाए जाते गीतों के अनुसार वीणा, तबले, ढोलक, त्रुटित, मृदंग आदि वाद्यों से बादलों जैसी गंभीर ध्वनि निकल रही थीं। ऐसे संगीत नृत्यमय वातावरण में वह इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध आदि पंचविध मनुष्य भव संबंधी कामभोगों का सेवन करता हुआ सुखपूर्वक रहने लगा।

तमिस्रागुहा : दक्षिणी कपाटोद्घाटन

(६६)

तए णं से भरहे राया अण्णया कयाई सुसेणं सेणावइं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - गच्छ णं खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडे विहाडेहि २ त्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहित्ति।

तए णं से सुसेणे सेणावई भरहेणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ चित्तमाणंदिए जाव करयलपरिग्गहियं० सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जाव पडिसुणेइ २ त्ता भरहस्स रण्णो अंतियाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव सए आवासे जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता दब्भसंथारगं संथरइ जाव कयमालस्स देवस्स अट्ठमभत्तं पगिण्हइ पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगल-पायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मंगलाइं वत्थाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे धूवपुप्फगंधमल्लहत्थगए मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडा तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तए णं तस्स सुसेणस्स सेणावइस्स बहवे राईसरतलवरमाडंबिय जाव सत्थवाहप्पभियओ अप्पेगइया उप्पलहत्थगया जाव सुसेणं सेणावइं पिट्ठओ २ अणुगच्छंति, तए णं तस्स सुसेणस्स सेणावइस्स बहुईओ खुज्जाओ चिलाइयाओ जाव इंगियचिंतियपत्थियवियाणियाओ णिउणकुसलाओ विणियाओ अप्पेगइयाओ कलसहत्थगयाओ जाव अणुगच्छंति।

तए णं से सुसेणे सेणावई सव्विड्डीए सव्वजुईए जाव णिग्घोसणाइएणं जेणेव तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडा तेणेव उवागच्छइ २ त्ता आलोए कवाडाणं पणामं करेइ २ त्ता लोमहत्थगं परामुसइ २ त्ता तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडे लोमहत्थेणं पमज्जइ २ त्ता दिव्वाए उदगधाराए अब्भुक्खेइ २ त्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं पंचंगुलितले चच्चए दलइ २ त्ता अग्गेहिं वरेहिं गंधेहि य मल्लेहि य अच्चिणेइ, अच्चिणित्ता पुप्फारुहणं जाव वत्थारुहणं करेइ, करित्ता आसत्तोसत्तविउलवट्ट जाव करेइ, करित्ता अच्छेहिं सण्णेहिं रययामएहिं अच्छरसातंडुलेहिं तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडाणं पुरओ अट्ठट्ठ मंगलए आलिहइ, तंजहा - सोत्थिय सिरिवच्छ जाव कयग्गहग्गहिय-करयल-पब्भट्ठ-चंदप्पह-वइर-वेरुलिय-विमलदंडं जाव धूवं दलयइ, दलयित्ता वामं जाणु अंचेइ, अंचेत्ता करयल जाव मत्थए अंजलिं कट्टु कवाडाणं पणामं करेइ, करित्ता दंडरयणं परामुसइ, तए णं तं दंडरयणं पंचलइयं वइरसारमइयं विणासणं सव्वसत्तुसेण्णाणं खंधावारे णरवइस्स गड्डदरिविसमपब्भार-गिरिवरपवायाणं समीकरणं संतिकरं सुभकरं हियकरं रण्णो हियइच्छियमणोरहपूरगं दिव्वमप्पडिहयं दंडरयणं गहाय सत्तट्ठ पयाइं पच्चोसक्कइ, पच्चोसक्कित्ता तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडे दंडरयणेणं महया २ सद्देणं तिक्खुत्तो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आउडेइ, तए णं तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडा सुसेणसेणावइणा दंडरयणेणं महया २ सद्देणं तिक्खुत्तो आउडिया समाणा महया २ सद्देणं कोंचारवं करेमाणा सरसरस्स सगाइं २ ठाणाइं पच्चोसक्कित्था, तए णं से सुसेणे सेणावई तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडे विहाडेइ २ त्ता जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छइ २ त्ता जाव भरहं रायं करयलपरिग्गहियं जएणं विजएणं वद्धावेइ २ त्ता एवं वयासी - विहाडिया णं देवाणुप्पिया! तिमिसगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडा एयण्णं देवाणुप्पियाणं पियं णिवेएमो पियं मे भवउ।

तए णं से भरहे राया सुसेणस्स सेणावइस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए जाव हियए सुसेणं सेणावइं सक्कारेइ सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता कोडुंबिय-पुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेह हयगयरहपवर तहेव जाव अंजणगिरिकूडसण्णिभं गयवरं णरवई दुरूढे।

शब्दार्थ - **दुवारस्स** - द्वारों के, **कवाडे** - कपाटों को, **विहाडेइ** - विघाटित करो-खोलो, **पावेसाइ** - प्रवेश्य-राजसभा आदि में धारण करने योग्य, **आसत्तोसत्त** - ऊपर से नीचे तक, **कयग्गह** - कचग्रह-केशों को पकड़ना, **पंचलइयं** - पाँच शाखाओं से युक्त, **तिक्खुत्तो**-तीन बार।

भावार्थ - राजा भरत ने किसी एक दिन सेनापति सुषेण को बुलाया और कहा - देवानुप्रिय! तमिस्रा गुफा के दक्षिणी द्वार के दोनों कपाटों का उद्घाटन करो-उन्हें खोलो। वैसा कर मुझे अवगत कराओ।

राजा भरत द्वारा इस प्रकार आदेश दिए जाने पर सेनापति सुषेण बड़ा ही हर्षित, परितुष्ट और मन में प्रसन्न हुआ यावत् अंजलिबद्ध हाथों को मस्तक से लगाया और मस्तक पर घुमाते हुए यावत् राजा के आदेश को अंगीकार किया और राजा के यहाँ से रवाना होकर अपने आवासग्रह में स्थित पौषधशाला में आया। वहाँ डाभ का बिछौना लगाया यावत् कृतमाल देव को उद्दिष्ट कर पौषधशाला में ब्रह्मचर्य पूर्वक तेले की तपस्या स्वीकार की, पौषध स्वीकार किया। तेले की तपस्या पूर्ण हो जाने पर पौषधशाला से प्रतिनिष्क्रांत होकर, जहाँ स्नानघर था,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वहाँ आया। स्नान कर नित्यनैमित्तिक बलि-पूजा, प्रायश्चित्त आदि मांगलिक कृत्य संपादित किए। राजसभा आदि विशिष्ट स्थानों में पहनने योग्य, उत्तम मांगलिक वस्त्र धारण किए। संख्या में कम किन्तु बहुमूल्य आभूषणों से शरीर को विभूषित किया। धूप, पुष्प, सुगंधित वस्तुएँ हाथ में लेकर स्नानघर से प्रतिनिष्क्रांत हुआ। जिस ओर तमिस्रा गुफा के कपाट थे, उस ओर गया।

तब उस सुषेण सेनापति के बहुत से राज सम्मानित विशिष्टजन, ईश्वर-प्रभावशाली पुरुष, माडंबिक-जागीरदार यावत् सार्थवाह प्रभृति अनेकजन सेनापति के पीछे-पीछे चले। उनमें से कई अपने हाथों में कमल लिए हुए चले। उनमें बहुत सी कुबड़ी, चिलात-किरात देशोत्पन्न यावत् जो इंगित मात्र से चिंतित तथा अभिलषित भाव को समझने में निष्णात थीं प्रत्येक कार्य में कुशल थीं, विनयशील थीं, सेनापति के पीछे-पीछे चलीं यावत् कुछ अपने हाथों में कलश लिए थीं।

सेनापति सुषेण सब प्रकार की समृद्धि द्युति यावत् वाद्य ध्वनि के साथ तमिस्रा गुहा के दक्षिणी द्वार के कपाटों के पास पहुँचा। दृष्टि पड़ते ही उनको प्रणाम किया। मोरपंखों से बनी प्रमार्जनिका ग्रहण की। दक्षिणी द्वार के कपाटों को उससे स्वच्छ किया। उन्हें पवित्र जल की धारा से प्रक्षालित किया। सरस गोशीर्ष चंदन के घोल से पांचों अंगुलियों सहित करतल के थापे लगाए। फिर श्रेष्ठ, उत्तम, सुगंधित फूलों की मालाओं से उनकी अर्चना की। फूलों को चढ़ाया यावत् वस्त्र समर्पित किए। ऐसा कर इन सबके ऊपर से नीचे तक बड़ी, गोलाकार मालाएं लटकाईं यावत् स्वच्छ, चिकने रजत निर्मित अक्षत चावलों से तमिस्रा गुफा के दाहिने द्वार के कपाटों के आगे स्वस्तिक, श्रीवत्स यावत् आठ-आठ मंगल प्रतीक आलेखित किए। केशों को पकड़ने की ज्यों कोमलता से अपने द्वारा गृहीत पंचरंगे फूल उसने अपनी हथेली से चढ़ाए। चन्द्रमा की कांति के समान द्युतिमय, वैडूर्य रत्न एवं वज्ररत्न विर्मित धूपदान के हत्थे को पकड़ा यावत् धूप खेया। धूप देकर बाएं घुटने को ऊँचा किया। हाथ जोड़कर यावत् सिर पर से अंजलिबद्ध हाथों को घुमाते हुए कपाटों को प्रणाम किया। ऐसा कर दण्ड रत्न को ग्रहण किया। वह दण्ड रत्न तिरछे, पाँच अवयव युक्त था। ठोस हीरों से निर्मित था। शत्रुसेना का विनाशक था। राजा की सैन्य छावनी में गड्ढों, कदराओ, सम-विषम स्थानों, पर्वतों के ढलानों को समतल करने वाला, शांतिप्रद और शुभकर तथा हृद्यकर- प्रिय लगने वाला था, राजा के मनोरथ को पूर्ण करने वाला था। दिव्य एवं अप्रतिहत-किसी भी प्रतिघात से अबाधित था। सेनापति सुषेण ने उस दण्ड रत्न को ग्रहण किया। वेग प्राप्त करने हेतु सात-आठ कदम पीछे हटा और तमिस्रागुफा के दाहिने द्वार के कपाटों पर तीन बार चोट की, जिसके परिणाम स्वरूप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उच्च शब्द हुआ। इस प्रकार सेनापति सुषेण द्वारा दण्डरत्न से चोट किए जाने पर कपाट क्रौंच पक्षी की तरह, आवाज कर सरसराहट के साथ अपने स्थान से सरक गए। इस प्रकार सेनापति सुषेण ने तमिस्रा गुहा के दक्षिणी द्वार के कपाट उद्घाटित किए। ऐसा कर वह राजा भरत की सेवा में उपस्थित हुआ यावत् अंजलिबद्ध हाथों को मस्तक पर घुमाते हुए राजा को जय विजय शब्दों से वर्धापित किया। ऐसा कर राजा से निवेदन किया - हे देवानुप्रिय! मैंने तमिस्रा गुफा के दक्षिणी द्वार के कपाट उद्घाटित कर दिए हैं। हे देवानुप्रिय! मैं और मेरे साथी आपको यह प्रिय संवाद निवेदित करते हैं। आपके लिए यह प्रियकर हो।

राजा भरत सेनापति सुषेण से यह संवाद सुनकर हृष्ट, तुष्ट और चित्त में आनंदित हुआ यावत् सुषेण सेनापति को सत्कृत-सम्मानित किया और कौटुंबिक पुरुषों को बुलाया और कहा - हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही प्रधान हस्ति रत्न को तैयार करो। अश्व, गज, रथ और पदाति परिगठित चतुरंगिणी सेना को उसी प्रकार तैयार करो यावत् वह राजा अजंनगिरि के शिखर के समान हाथी पर आरूढ़ हुआ।

तमिस्रागुहा में काकणी रत्न द्वारा मंडल आलेखन

(७०)

तए णं से भरहे राया मणिरयणं परामुसइ तोतं चउरंगुलप्पमाणमित्तं च अणग्घं तंसियं छलंसं अणोवमजुइं दिव्वं मणिरयणपइसमं वेरुलियं सव्वभूयकंतं जेण य मुद्धागएणं दुक्खं ण किंचि जाव हवइ आरोग्गे य सव्वकालं तेरिच्छियदेव-माणुसकया य उवसग्गा सव्वे ण करेंति तस्स दुक्खं, संगामेऽवि असत्थवज्झो होइ णरो मणिवरं धरेंतो ठियजोव्वणकेसअवट्ठियणहो हवइ य सव्वभयविप्पमुक्को, तं मणिरयणं गहाय से णरवई हत्थिरयणस्स दाहिणिल्लाए कुंभीए णिक्खिवइ।

तए णं से भरहाहिवे णरिंदे हारोत्थयसुकयरइयवच्छे जाव अमरवइसण्णिभाए इड्ढीए पहियकित्ती मणिरयणकउज्जोए चक्करयणदेसियमग्गे अणेगराय-सहस्साणुयायमग्गे महया उक्किट्ठिसीहणायबोलकलकलरवेणं समुद्दरवभूयं पिव करेमाणे जेणेव तिमिसगुहाए दाहिणिल्ले दुवारे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता तिमिसगुहं दाहिणिल्लेणं दुवारेणं अईइ ससिव्व मेहंधयारणिवहं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से भरहे राया छत्तलं दुवालसंसियं अट्ठकण्णियं अहिगरणिसंठियं अट्ठसोवण्णियं कागणिरयणं परामुसइ। तए णं तं चउरंगुलप्पमाणमित्तं अट्ठसुवण्णं च विसहरणं अउलं चउरंससंठाणसंठियं समतलं माणुम्माणजोगा जओ लोगे चरंति सव्वजणपण्णवगा, ण इव चंदो ण इव तत्थ सूरे ण इव अग्गी ण इव तत्थ मणिणो तिमिरं णासेंति अंधयारे जत्थ तयं दिव्वं भावजुत्तं दुवालसजोयणाइं तस्स लेसाउ विवड्ढंति तिमिरणिगर-पडिसेहियाओ, रत्तिं च सव्वकालं खंधावारे करेइ आलोयं दिवसभूयं जस्स पभावेण चक्कवट्टी, तिमिसगुहं अईइ सेण्णसहिए अभिजेत्तुं बिइयमद्धभरहं रायवरे कागणिं गहाय तिमिसगुहाए पुरत्थिमिल्ल-पच्चत्थिमिल्लेसुं कडएसुं जोयणंतरियाइं पंचधणुसय-विक्खंभाइं जोयणुज्जोयकराइं चक्कणेमीसंठियाइं चंदमंडलपडिणिगासाइं एगूणपण्णं मंडलाइं आलिहमाणे २ अणुप्पविसइ, तए णं सा तिमिसगुहा भरहेणं रण्णा तेहिं जोयणंतरिएहिं जाव जोयणुज्जोय-करेहिं एगूणपण्णाए मंडलेहिं आलिहिज्जमाणेहिं २ खिप्पामेव आलोगभूया उज्जोयभूया दिवसभूया जाया यावि होत्था।

शब्दार्थ - **तोतं** - तीक्ष्ण, **तंसियं** - तिकोना, **छलंसं** - ऊपर-नीचे षट्कोण युक्त, **कुंभीए** - मस्तक पर, **अईइ** - प्रविष्ट होता है, **तिमिर** - अंधकार।

भावार्थ - तदनंतर राजा भरत ने मणिरत्न को परामृष्ट किया, संस्पृष्ट किया। वह रत्न तीक्ष्ण, विशिष्ट आकार युक्त, सुंदर चार अंगुल प्रमाण था। वह अमूल्य था-उसकी कीमत आंकना संभव नहीं था। वह तिकोना था, ऊपर एवं नीचे षट्कोणीय था। अनुपम द्युतियुक्त था, मणिरत्नों में सर्वश्रेष्ठ था। उसे मस्तक पर धारण करने से किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं रह जाता था। यों वह सर्व दुःख निवारक था। सर्वकाल में आरोग्य प्रदायक था। उसके प्रभाव से तिर्यंच, मनुष्य एवं देवकृत उपसर्ग, संकट या विघ्न कभी भी दुःख उत्पन्न नहीं कर सकते थे। जो इस रत्न को धारण करता वह संग्राम में भी किसी रत्न द्वारा वध्य नहीं होता था। उसको धारण करने से चिरयौवनता रहती थी। इसे धारण करने से न बाल बढ़ते तथा न नाखून ही। इसे धारण करने से मनुष्य में किसी भी प्रकार का भय उत्पन्न नहीं होता।

राजा भरत ने इन असाधारण विशेषताओं से युक्त मणिरत्न को ग्रहण कर आभिषेक्य हस्तिरत्न के मस्तक के दाहिनी ओर बांधा। भरत क्षेत्र के अधिपति राजा भरत के हृदय पर हार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुशोभित थे यावत् वह इन्द्र के समान ऋद्धिशाली प्रथितकीर्ति-यशस्वी, मणिरत्न से फैलते हुए उद्योत से युक्त था। चक्ररत्न द्वारा निर्देशित किए जाते मार्ग का अवलबंन कर आगे बढ़ता हुआ राजा भरत सहस्त्रों नरेशों सहित समुद्र की ज्यों सिंहनाद करता हुआ, बादलों से उत्पन्न अंधकार में जिस प्रकार चन्द्रमा प्रविष्ट होता है, उस प्रकार राजा तमिस्रा गुहा के दक्षिणी द्वार में प्रविष्ट हुआ।

तत्पश्चात् राजा भरत ने काकणि रत्न को ग्रहण किया। वह रत्न छह तल, बारह कोटि एवं आठ कणिका युक्त था। वह अधिकरणी-स्वर्णकार के लौह निर्मित एहरन (लोहपिण्डी) जैसा था। वह आठ सौवर्णिक-तत्कालीन माप के अनुसार वह आठ तौले वजन का था। चार अंगुल प्रमाण वह काकणिरत्न विषनाशक, अनुपम, चतुरस्र संस्थान संस्थित समुचित मानोन्मान युक्त था। वह सब लोगों के लिए मानोन्मान का प्रज्ञापक-प्रमाणभूत था। जिस प्रकार वह अंधकार का नाश करने में सक्षम था, वैसा न चन्द्र, न सूर्य तथा न अग्नि ही अपने तेज से वैसा करने में सक्षम थे। जिस गुफा के अंधकार समूह को न चन्द्र, न सूर्य और न अग्नि और न कोई अन्य मणि ही नष्ट करने में सक्षम थी, उस अंधकार को वह काकणिरत्न नष्ट करता जाता था। उसकी दिव्य प्रभा बारह योजन तक फैली थी। चक्रवर्ती की सेना की छावनी में रात्रि में भी दिन जैसा प्रकाश बनाए रखना उस मणिरत्न की अपनी विशेषता थी। द्वितीय - उत्तर अर्द्ध भरत क्षेत्र को विजित करने हेतु काकणिरत्न को हाथ में लिए हुए राजा भरत ने सेना सहित तमिस्रा गुहा में प्रवेश किया। भरत ने उस रत्न के प्रकाश में तमिस्रा गुहा के पूर्व दिग्वर्तिनी तथा पश्चिम दिग्वर्तिनी भित्तियों पर एक-एक योजन के अंतर में पांच सौ धनुष प्रमाण विस्तृत एक योजन क्षेत्र को उद्योतमय बनाने वाले रथ के पहिए की परिधि के समान गोल, चन्द्र मण्डल की तरह ज्योतिर्मय उन पचास मण्डलों का आलेखन किया। वह तमिस्रागुहा राजा भरत द्वारा यों एक-एक योजन के अंतर पर आलेखित यावत् एक योजन को उद्योतित करने वाले उनपचास मण्डलों से शीघ्र ही आलोकमय, उद्योतमय, दिन के समान हो गई।

उन्मग्नजला निमग्नजला महानदियाँ उत्तरण

(७१)

तीसे णं तिमिसगुहाए बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं उम्मग्गणिमग्गजलाओ णामं दुवे महाणईओ पण्णत्ताओ, जाओ णं तिमिसगुहाए पुरत्थिमिल्लाओ भित्ति-कडगाओ पवूढाओ समाणीओ पच्चत्थिमेणं सिंधुं महाणइं समप्पेंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-उम्मग्गणिमग्गजलाओ महाणईओ?

गोयमा! जण्णं उम्मग्गजलाए महाणईए तणं वा पत्तं वा कट्ठं वा सक्करं वा आसे वा हत्थी वा रहे वा जोहे वा मणुस्से वा पक्खिप्पइ ताओ णं उम्मग्गजला महाणई तिक्खुत्तो आहुणिय २ एगंते थलंसि एडेइ, जण्णं णिमग्गजलाए महाणईए तणं वा पत्तं वा कट्ठं वा सक्करं वा जाव मणुस्से वा पक्खिप्पइ तण्णं णिमग्गजला महाणई तिक्खुत्तो आहुणिय २ अंतो जलंसि णिमज्जावेइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-उम्मग्गणिमग्गजलाओ महाणईओ।

तए णं से भरहे राया चक्करयणदेसियमग्गे अणेगराय० महया उक्किट्ठिसीहणाय जाव करेमाणे सिंधूए महाणईए पुरत्थिमिल्लेणं कूलेणं जेणेव उम्मग्गजला महाणई तेणेव उवागच्छइ २ त्ता वड्ढइरयणं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी- खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! उम्मग्गणिमग्गजलासु महाणईसु अणेगखंभसय-सण्णिविट्ठे अयलमकंपे अभेज्जकवए सालंबणबाहाए सव्वरयणामए सुहसंकमे करेहि करेत्ता मम एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणाहि।

तए णं से वड्ढइरयणे भरहेणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठचित्त-माणंदिए जाव विणएणं० पडिसुणेइ २ त्ता खिप्पामेव उम्मग्गणिमग्गजलासु महाणईसु अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे जाव सुहसंकमे करेइ २ त्ता जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छइ २ त्ता जाव एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ।

तए णं भरहे राया सखंधावारबले उम्मग्गणिमग्गजलाओ महाणईओ तेहिं अणेगखंभसयसण्णिविट्ठेहिं जाव सुहसंकमेहिं उत्तरइ, तए णं तीसे तिमिस्सगुहाए उत्तरिल्लस्स दुवारस्स कवाडा सयमेव महया २ कोंचारवं करेमाणा सरसरस्स सगाइं २ ठाणाइं पच्चोसक्कित्था।

शब्दार्थ - **पक्खिप्पइ** - प्रक्षिप्त करने पर, **आहुणिय** - घुमाकर, **एगंते** - एक तरफ, **थलंसि** - थल पर, **एडेह** - फेंक देती है, **सुहसंकमे** - पुल, **अणेग** - अनेक।

भावार्थ - तमिस्रा गुहा के ठीक मध्य में-बीचोंबीच उन्मग्नजला तथा निमग्नजला संज्ञक दो महानदियाँ बतलाई गई हैं वे तमिस्रा गुहा के पूर्वी भित्ति प्रदेश से निकलती हैं तथा पश्चिमी भित्ति प्रदेश होती हुई सिंधु महानदी में मिल जाती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! वे नदियाँ उन्मग्नजला तथा निमग्नजला किस कारण कहलाती है?

हे गौतम! उन्मग्नजला महानदी में तृण, पत्ता, काष्ठ, पत्थर का टुकड़ा, अश्व, गज, रथ, पदाति अथवा मनुष्य - जो भी डाल दिए जाएँ-गिरा दिए जाएँ तो वह महानदी उन्हें तीन बार इतस्ततः घुमाकर एकांत, जलरहित स्थान में फेंक देती है। निमग्नजला महानदी में तिनका, पत्ता, काष्ठ, पत्थर का टुकड़ा यावत् मनुष्य गिरा दिए जाएँ तो वह उन्हें तीन बार इतस्ततः घुमाकर जल में डूबो देती है।

हे गौतम! इस कारण इन महानदियों के नाम निमग्नजला तथा उन्मग्नजला पड़े हैं।

तदनंतर राजा भरत चक्ररत्न द्वारा निर्देशित मार्ग का अवलंबन कर अनेक नरेशों से युक्त, अग्रसर होता हुआ, उच्च स्वर में सिंहनाद करता हुआ यावत् सिंधु महानदी के पूर्ववर्ती तट पर विद्यमान उन्मग्नजला महानदी के समीप पहुँचा। उसने अपने वर्द्धकिरत्न को बुलाया और उससे कहा - देवानुप्रिय! उन्मग्नजला तथा निमग्नजला महानदियों पर पुल बनाओ। प्रत्येक पुल सैकड़ों स्तम्भों पर भलीभाँति टिका हो, चलित और कंपित न होने वाला हो, कवच की तरह अभेद्य हो, जिसकी भुजाएँ अवलंबन सहित हों, सर्वरत्नमय हों। पुल का निर्माण कर मेरे आदेशानुरूप कार्य हो जाने की सूचना करो।

राजा भरत द्वारा इस प्रकार आदेश दिए जाने पर वह वर्धकिरत्न बहुत ही हर्षित, परितुष्ट और मन में आनंदित हुआ यावत् उसने विनय के साथ राजा की आज्ञा शिरोधार्य की और शीघ्र ही उन्मग्नजला और निमग्नजला महानदियों पर उत्तम पुलों की रचना की यावत् जो अनेक स्तंभों पर अवस्थित थे। ऐसा कर वह राजा के पास आया यावत् आदेशानुसार कार्य संपन्नता की सूचना दी। तदनंतर राजा भरत अपनी सैन्य छावनी सहित उन्मग्नजला तथा निमग्नजला नदियों पर निर्मित पुलों द्वारा, जो सैकड़ों खंभों पर स्थित थे यावत् नदियों को पार किया।

ज्यों ही राजा ने महानदियों को पार किया, तमिस्रा गुहा के उत्तरी द्वार क्रौंच पक्षी की तरह आवाज करते सरसराहट के साथ स्वयमेव अपने स्थान से सरक गए-उद्घाटित हो गए।

आपात किरातों द्वारा भीषण संघर्ष

(७२)

तेणं कालेणं तेणं समएणं उत्तरड्ढभरहे वासे बहवे आवाडा णामं चिलाया परिवसंति अड्ढा दित्ता वित्ता विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बहुधणबहुजायरूवरयया आओगपओगसंपउत्ता विच्छड्डियपउरभत्तपाणा बहु-दासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूया बहुजणस्स अपरिभूया सूरा वीरा विक्कंता विच्छिण्णविउलबलवाहणा बहुसु समरसंपराएसु लद्धलक्खा यावि होत्था।

तए णं तेसिमावाडचिलायाणं अण्णया कयाई विसयंसि बहूइं उप्पाइयसयाइं पाउब्भवित्था, तंजहा - अकाले गज्जियं अकाले विज्जुया अकाले पायवा पुप्फंति अभिक्खणं २ आगासे देवयाओ णच्चंति, तए णं ते आवाडचिलाया विसयंसि बहूइं उप्पाइयसयाइं पाउब्भूयाइं पासंति, पासित्ता अण्णमण्णं सद्दावेंति २ त्ता एवं वयासी - एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं विसयंसि बहूइं उप्पाइयसयाइं पाउब्भूयाइं तंजहा - अकाले गज्जियं अकाले विज्जुया अकाले पायवा पुप्फंति अभिक्खणं २ आगासे देवयाओ णच्चंति, तं ण णज्जइ णं देवाणुप्पिया! अम्हं विसयस्स के मण्णे उवद्दवे भविस्सइत्तिकट्टु ओहयमणसंकप्पा चिंतासोगसागरं पविट्ठा करयल-पल्हत्थमुहा अट्टज्झाणोवगया भूमिगयदिट्ठिया झियायंति, तए णं से भरहे राया चक्करयण-देसियमग्गे जाव समुद्दरवभूयं पिव करेमाणे करेमाणे तिमिसगुहाओ उत्तरिल्लेणं दारेणं णीइ ससिव्व मेहंधयारणिवहा, तए णं ते आवाडचिलाया भरहस्स रण्णो अग्गाणीयं एज्जमाणं पासंति पासित्ता आसुरुत्ता रुट्ठा चंडिक्किया कुविया मिसिमिसेमाणा अण्णमण्णं सद्दावेंति २ त्ता एवं वयासी - एस णं देवाणुप्पिया! केइ अपत्थियपत्थए दुरंतपंतलक्खणे हीणपुण्णचाउद्दसे हिरिसिरि-परिवज्जए जे णं अम्हं विसयस्स उवरिं विरिएणं हव्वमागच्छइ तं तहा णं घत्तामो देवाणुप्पिया! जहा णं एस अम्हं विसयस्स उवरिं विरिएणं णो हव्वमागच्छइ त्तिकट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति २ त्ता सण्णद्धबद्धवम्मियकवया उप्पीलियसरासणपट्टिया पिणद्धगेविज्जा बद्धआविद्धविमलवरचिंधपट्टा गहियाउहप्पहरणा जेणेव भरहस्स रण्णो अग्गाणीयं तेणेव उवागच्छंति २ त्ता भरहस्स रण्णो अग्गाणीएण सद्धिं संपलग्गा यावि होत्था, तए णं ते आवाडचिलाया भरहस्स रण्णो अग्गाणीयं हयमहियपवरवीरघाइय-विवडिय-चिंधद्धयपडागं किच्छप्पाणोवगयं दिसोदिसिं पडिसेहिंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - आवाड - आपात, **चिलाय** - किरात, **दित्ता** - तेजस्वी, **वित्ता** - विख्यात, **आओग-पओग** - व्यापारिक दृष्टि से धन का उचित विनियोग, **विच्छड्डिय** - बचा हुआ, **पउर** - प्रचुर, **भत्तपाण** - खाद्य सामग्री, **गवेलग** - बैल, **विक्कंता**- विक्रमशाली, **लद्धलक्खा**- लब्धलक्ष्य-लक्ष्य पूरा करने वाले, **पायवा** - पादप, **अभिक्खणं** - धीरे-धीरे, **उवद्दव** - उपद्रव, **विसयस्स** - देश पर।

भावार्थ - उस समय उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र में आपात नामक किरात-भील या आदिवासी रहते थे। वे संपन्न, प्रभावशाली और विख्यात थे। आवास स्थान, ओढने-बिछाने-बैठने के उपकरण, यान, वाहन आदि प्रचुर जीवनोपयोगी साज समान एवं सोना-चाँदी आदि विपुल धन-संपत्ति के स्वामी थे। व्यावसायिक दृष्टि से धन के विनियोग में कुशल थे। उनके यहाँ भोजन करने के पश्चात् भी खाने-पीने की सामग्री प्रचुर मात्रा में बचती थी, जिससे उनकी संपन्नता व्यक्त होती थी। उनके घरों में बहुत से दास-दासी, गाय, भैंस, बैल आदि थे। वे अत्यंत प्रभावशाली होने के कारण लोगों द्वारा अतिरस्करणीय थे। वे शूरवीर, योद्धा, पराक्रमी थे। उनके पास सेना, वाहन आदि की प्रचुरता थी। अनेक युद्धों में, जिनमें बराबरी के मुकाबले थे, अपना लक्ष्य पूरा किया-सफलता प्राप्त की।

उन आपात किरातों के देश में असमय में मेघों की गर्जना, बिजली का चमकना, अकाल में ही पेड़ों पर फूलों का आना, आकाश में वानव्यंतर आदि देवों का नर्तन-इस प्रकार वे सैकड़ों उत्पात एकाएक उत्पन्न हुए। उन आपात किरातों ने अपने देश में इन बहुत प्रकार के उत्पातों को देखा तो वे अन्यमनस्क एवं खिन्न हुए। वे एक दूसरे को संबोधित करते हुए कहने लगे - देवानुप्रियो! न जाने हमारे देश में कैसा उपद्रव होगा? ऐसा सोचकर वे उन्मनस्क, उदास और खिन्न हो गए। शोक सागर में निमग्न हो गए, हथेली मुँह रखे आर्त्तध्यान में ग्रस्त होते हुए, भूमि पर नजर गड़ाते हुए चिंतातुर हो उठे।

तब राजा भरत चक्ररत्न द्वारा निर्देशित किए गए रास्ते पर यावत् समुद्र की गर्जना की ज्यों सिंहनाद करता हुआ तमिस्रा गुहा के उत्तरी द्वार से इस प्रकार निकला जैसे चंद्रमा मेघों द्वारा बादलों की घटाओं से उत्पन्न अंधकार को चीरकर बाहर निकलता है। आपातकिरातों ने जब राजा भरत की सेना के अग्रभाग को आते हुए देखा तो वे अत्यंत क्रोध, रोष तथा कोप से तमतमाते हुए परस्पर कहने लगे - देवानुप्रियो! मौत को चाहने वाला, दुःखद अंत एवं अशुभ लक्षण वाला, हीन-अशुभ चतुर्दशी को जन्मा, लज्जा और शोभा रहित कौन पुरुष है, जो हमारे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देश पर दुःसाहसपूर्वक शीघ्रता से चढ़ा आ रहा है? देवानुप्रियो! हम उसकी सेना को नष्ट कर डालें, जिससे वह हमारे देश को दुस्साहसपूर्वक आक्रांत न कर सके। इस प्रकार आपस में विचार कर वे युद्ध के लिए तैयार हुए, लौहकवच धारण किए, अपने धनुषों पर प्रत्यंचा चढाई, गले में ग्रैवेयक-गर्दन रक्षक उपकरण बांधे, कमर में वीरता सूचक वस्त्र बांधे, शस्त्रास्त्र सज्जित होकर जहाँ राजा भरत की सेना की अग्रिम पंक्ति थी, वहाँ पहुँचे और सैनिकों से भिड़ गए। उन आपात चिलातों ने राजा भरत की सेना के कतिपय विशिष्ट योद्धाओं को मार डाला, सेना को मथ डाला, कईयों को घायल कर गिरा दिया। उनकी विशिष्ट चिह्नित ध्वजाओं को नष्ट कर डाला। इस प्रकार राजा भरत की सेना के अग्रिम टुकड़ी के सैनिक बड़ी कठिनाई से जान बचाकर इधर-उधर भाग छूटे।

(७३)

तए णं से सेणाबलस्स णेया वेढो जाव भरहस्स रण्णो अग्गाणीयं आवाडचिलाएहिं हयमहियपवरवीर जाव दिसोदिसिं पडिसेहियं पासइ २ त्ता आसुरुत्ते रुट्ठे चंडिक्किए कुविए मिसिमिसेमाणे कमलामेलं आसरयणं दुरूहइ २ त्ता तए णं तं असीइमंगुलमूसियं णवणउइमंगुलपरिणाहं अट्ठसयमंगुलमाययं बत्तीसमंगुल-मूसियसिरं चउरंगुलकण्णागं वीसइअंगुलबाहागं चउरंगुलजाणूकं सोलसअंगुलजंघागं चउरंगुलमूसियखुरं मुत्तोलीसंवत्तवलियमज्झं ईसिं अंगुल-पणयपट्ठं संणयपट्ठं संगयपट्ठं सुजायपट्ठं पसत्थपट्ठं विसिट्ठपट्ठं एणीजाणुण्णय-वित्थयथद्धपट्ठं वित्तलयकसणि-वायअं-केल्लणपहारपरिवज्जियंगं तवणिज्जथासगा-हिलाणं वरकणगसुफुल्लथासग-विचित्तरयणरज्जुपासं कंचणमणिकणगपयरग-णाणाविहघंटियाजालमुत्तिया-जालएहिं परिमंडिएणं पट्ठेण सोभमाणेण सोभमाणं कक्केयणइंदणीलमरगय-मसारगल्लमुहमंडणरइयं आविद्धमाणिक्कसुत्तगविभूसियं कणगा-मयपउम-सुकयतिलयं देवमइविगप्पियं सुरवरिंदवाहणजोग्गावयं सुरूवं दूइज्जमाण-पंचचारु-चामरामेलगं धरेंतं अणब्भवाहं अभेलणयणं कोकासिय-वहलपत्तलच्छं सयावरण-णवकणग-तविय-तवणिज्ज-तालुजीहासयं सिरिआ-भिसेयघोणं पोक्खर-पत्तमिव सलिलबिंदुजुयं अचंचलं चंचलसरीरं चोक्खचरग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिव्वायगो विव हिलीयमाणं हिलीयमाणं खुरचलणचच्चपुडेहिं धरणियलं अभिहणमाणं २ दोवि य चलणे जमगसमगं मुहाओ विणिग्गमंतं व सिग्घयाए मुणालतंतुउदगमवि णिस्साए पक्कमंतं जाइकुलरूवपच्चयपसत्थवारसावत्त-गविसुद्धलक्खणं सुकुलप्पसूयं मेहाविभद्दय-विणीयं अणुयतणुयसुकुमाललो-मणिद्धच्छविं सुजायअमरमणपवणगरुलजइण-चवलसिग्घगामिं इसिमिव खंतिखमए सुसीसमिव पच्चक्खयाविणीयं उदगहुयवह-पासाणपंसुकद्दमससक्करस-वालुइल्लतड कडगविसमपब्भारगिरिदरीसुलंघणपिल्लण-णित्थारणासमत्थं अचंडपाडियं दंडयाइं अणंसुपाइं अकालतालुं च कालहेसिं जियणिद्दंगवेसगं जियपरिसहं जच्चजाईयं मल्लिहाणिं सुगपत्तसुवण्णकोमलं मणाभिरामं कमलामेलं णामेणं आसरयणं सेणावई कमेण समभिरूढे कुवलयदल-सामलं च रयणियर-मंडलणिभं सत्तुजणविणासणं कणगरयणदंडं णवमालियपुप्फ-सुरहिगंधिं णाणा-मणिलयभत्तिचित्तं च पहोयमिसिमिसिंततिक्खधारं दिव्वं खग्गरयणं लोए अणोवमाणं तं च पुणो वंसरुक्खसिंगट्ठिदंतकालायसविउललोह-दंडयवरवइर-भेयगं जाव सव्वत्थअप्पडिहयं किं पुण देहेसु जंगमाणं

गाहा - पण्णासंगुलदीहो सोलस से अंगुलाइं विच्छिण्णो।
अद्धंगुलसोणीको जेट्ठपमाणो असी भणिओ।। १।।

असिरयणं णरवइस्स हत्थाओ तं गहिऊण जेणेव आवाडचिलाया तेणेव उवागच्छइ २ त्ता आवाडचिलाएहिं सद्धिं संपलग्गे यावि होत्था। तए णं से सुसेणे सेणावई ते आवाडचिलाए हयमहियपवरवीरघाइय जाव दिसोदिसिं पडिसेहेइ।।

शब्दार्थ - **मुत्तोली** - मध्य भाग, **पणय** - प्रणत-झुकना, **पट्ठं** - पीठ, **वत्त** - बेंत, **गाहिलाणं** - लगाम युक्त, **थास** - स्थास-दर्पण, **मरगय** - मरकत-पन्ना, **विरप्पिय** - विरचित, **अणब्भवाहं** - अनभ्रचारी-आकाश में नहीं चलने वाला, **कोकासिअ** - विकसित, **घोणं** - नाक, **पोक्खर** - कमल, **परिव्वायग** - परिव्राजक-संन्यासी, **चोक्खचरग** - उत्तम आचार सम्पन्न, **जमगसमगं** - दोनों एक साथ, **पक्कमंतं** - चलने में, **पच्चय** - प्रतीति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणुय - छोटे, **तणुय** - पतले, **सिग्घगइ** - शीघ्रगामी, **जइण** - जीतने वाला, **इसि** - ऋषि, **हुयवह** - अग्नि, **पंसु** - मिट्टी, **चंडपाइय** - शत्रु द्वारा न गिराये जाने योग्य, **अणंसुपाई**- आंसू न गिराने वाला, **कालहेसिं** - उचित समय पर हिनहिनाने वाला, **मल्लि**-मोगरा, **हाणि**- नाक, **पहोय** - शाण-धार करने का आधार।

भावार्थ - सेनापति सुषेण ने राजा भरत की यावत् सेना की अग्रिम पंक्ति के बहुत से योद्धाओं को आपात किरातों द्वारा हत-विहत यावत् जान बचाकर बड़े कष्ट के साथ एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर भागते देखा तब वह अत्यंत क्रोध, रोष से तमतमाते हुए विकराल हो उठा, कमलामेल नामक अश्वरत्न पर आरूढ हुआ। वह अश्व ऊँचाई में अस्सी अंगुल था। उसके मध्य भाग की परिधि निन्यानवें अंगुल थी। उसकी लम्बाई एक सौ आठ अंगुल थी। उसका मस्तक बत्तीस अंगुल प्रमाण था। उसके कान चार अंगुल, उसकी बाहा-मस्तक और घुटनों के बीच का भाग बीस अंगुल, घुटने चार अंगुल, जंघा सोलह अंगुल, खुर चार अंगुल, शरीर का मध्य भाग ऊपर से नीचे संकरा, मध्य में कुछ चौड़ा था। उसकी पीठ की विशेषता थी कि सवार के आरूढ होने पर वह एक अंगुल झुक जाती थी। वह देह प्रमाण संगत स्वभावतः दोष रहित, प्रशस्त, विशिष्ट-उत्तम अश्व के लक्षणों से युक्त थी। वह हरिणी के घुटनों की ज्यों उन्नत, दोनों पार्श्व भागों की ओर विस्तीर्ण तथा दृढ़ थी। उसका शरीर बेंत, लता, चर्म चाबुक आदि के प्रहारों से रहित था। अश्वरोही के इच्छानुरूप चलने के कारण इनसे ताड़ित करने की आवश्यकता ही नहीं होती थी। उसकी लगाम स्वर्ण जटित दर्पण सदृश थी। काठी बांधने हेतु प्रयोग में आने वाली रस्सी, जो घोड़े के पेट से लेकर पृष्ठ भाग में बांधी जाती है, स्वर्णघटित सुंदर फूलों तथा दर्पणों से सज्जित थी, विविध रत्नमय थी। उसकी पीठ स्वर्णयुक्त, मणिमय तथा स्वर्णपत्रक संज्ञक घंटियों और मोतियों की लड़ों से शोभित थी। जिनके कारण वह अश्व बड़ा ही मनोज्ञ प्रतीत होता था। मुखालंकरण हेतु कर्केतन, इन्द्रनील, पन्ना आदि रत्नों द्वारा निर्मित तथा माणिक्य रत्न के साथ पिरोए गए सूत्र से मुख पर पहनाए गए विशेष आभूषणों से वह अश्व अलंकृत था। स्वर्ण रचित कमलाकार तिलक से उसका मुख सुसज्जित था। वह अश्व देवमति-दैविक प्रज्ञा से विरचित था। वह गति एवं सौन्दर्य में देवराज इन्द्र के श्रेष्ठ अश्व-उच्चैश्रवा के तुल्य था। अपने मस्तक, गले, ललाट, मौलि तथा कर्णों के मूल में लगाई गई कलंगियों के समवेत रूप में धारण किए था। इन्द्र का वाहन उच्चैश्रवा जहाँ आकाशगामी होता है, यह स्थलगामी था। उसकी आँखें दोष रहित होने के कारण मिली हुई

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नहीं थी। विकसित आँखों पर सुरक्षा हेतु प्रच्छादन पट लगे थे। उनका तालु एवं जीभ परितप्त स्वर्ण की ज्यों लाल रंग के थे। उसकी नासिका पर लक्ष्मी के अभिषेक का निशान था। कमल पत्र पर पड़े जल बिन्दु की तरह वह अश्व अपने शरीर की आभा लिए था। उसका शरीर चंचल था किन्तु मन में स्थिरता थी। उत्तम आचार संपन्न संन्यासी जिस प्रकार अपवित्र पदार्थ से संसर्ग की आशंका से दूर रहता है, उसी प्रकार वह अश्व उबड़-खाबड़ स्थानों से बचता हुआ गति करता था। वह अपने खुरों की टापों से धरती को आहत करता हुआ चलता था। इसके पैर एक साथ इस प्रकार ऊपर उठते थे मानो वे उसके मुंह से निर्गत हो रहे हों। सघन मृणाल तन्तुओं से युक्त जल में भी वह धरती पर चलने की ज्यों निर्बाधगति से चलता था। देखने से यह प्रतीत होता था कि वह उत्तम जाति-मातृ पक्ष, कुल-पितृपक्ष तथा रूप-आकार संस्थान युक्त है। वह अश्व शास्त्रोक्त उत्तम कुल-क्षत्रियाश्व जातिय था। अपने स्वामी के संकेत आदि से ही उसका आशय समझने वाला था। वह अत्यंत सूक्ष्म, सुकोमल, स्निग्ध रोमों के कारण सुंदर आभा युक्त था। वह अपनी द्रुतगति से देव, मन, वायु तथा गरुड की गति को भी मात करने वाला था, चंचल एवं तीव्रगामी था। वह क्षमा में ऋषि तुल्य था। सुशिष्य की तरह साक्षात् विनय की प्रतिमूर्ति था। वह पानी, आग, पत्थर, मिट्टी, कीचड़, कंकड़ युक्त स्थान, बालू से भरे मैदान, नदियों के तट, उबड़-खाबड़ पठार, पर्वत, कंदरा इन सबको अनायास ही लांघने में, छलांग भरते हुए पार करने में समर्थ था। वह शत्रु द्वारा न गिराए जा सकने योग्य, शत्रु छावनी पर दण्ड की ज्यों आक्रमण करने वाला, परिश्रांत होने पर भी आंसू न गिराने वाला था। उसका तालु कालिमा रहित था। वह उचित समय पर हिनहिनाने वाला था। निद्रा विजयी, गवेषक-उचित स्थान पर मल-मूल-त्याग करने वाला, परिषहों को जीतने वाला, उत्तम मातृपक्ष युक्त था। उसका नाम मोगरे के फूल जैसा था। उसका रंग तोते के पंखों के समान सुंदर था, देह कोमलता लिए थी। इस प्रकार वह मन को प्रिय लगने वाला था।

वैसे उत्तमोत्तम गुणयुक्त कमलामेल नामक अश्वरत्न पर सेनापति भलीभांति सवार हुआ। उसने राजा के हाथ से खड्गरत्न ग्रहण किया, जो नीलकमल के समान श्यामल, घुमाए जाने पर चन्द्रमंडल के सदृश, शत्रुजन विनाशक तथा स्वर्ण एवं रत्ननिर्मित मूठ युक्त थी। उसमें नवमल्लिका के पुष्प के समान सुगंध आती थी। उस पर विविध प्रकार की मणियों का चित्रांकन था। शाण पर चढ़े होने से उसकी धार चमचमाती हुई एवं तीक्ष्ण थी। वह दिव्य खड्गरत्न लोक में अद्भुत था। वह बांस, वृक्ष, भैंसे आदि के सींग, हाथी आदि के दांत, लौह निर्मित भारी लौह दंड,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट वज्र, हीरक आदि को भेद डालने में सक्षम थी। अधिक क्या कहा जाय—वह सर्वत्र रुकावट से रहित थी। फिर जंगम-गमनशील प्राणियों के देह भेदन की तो बात ही क्या?

गाहा - वह तलवार लम्बाई में पचास अंगुल, चौड़ाई में सोलह अंगुल तथा मोटाई में अर्द्ध अंगुल प्रमाण थी। इस प्रकार की ज्येष्ठ-श्रेष्ठ प्रमाण की तलवार उत्तम कही गई है।

उस असि रत्न को लेकर सुषेण सेनापति जहाँ आपात किरात थे, वहाँ पहुँचा, उनके साथ युद्ध सन्नद्ध हुआ। सेनापति ने इनको हत, मथित कर डाला। कुछेक प्रबल योद्धाओं को घायल कर दिया यावत् वे आपात किरात एक दिशा से दूसरी दिशा में भाग छूटे।

मेघमुख देवों का उपसर्ग

(७४)

तए णं ते आवाडचिलाया सुसेणसेणावइणा हयमहिय जाव पडिसेहिया समाणा भीया तत्था वहिया उव्विग्गा संजायभया अत्थामा अबला अवीरिया अपुरिसक्कारपरक्कमा अधारणिज्जमितिकट्टु अणेगाइं जोयणाइं अवक्कमंति २ त्ता एगयओ मिलायंति २ त्ता जेणेव सिंधू महाणई तेणेव उवागच्छंति २ त्ता वालुयासंथारए संथरेंति २ त्ता वालुयासंथारए दुरूहंति २ त्ता अट्ठमभत्ताइं पगिण्हंति २ त्ता वालुयासंथारोवगया उत्ताणगा अवसणा अट्ठमभत्तिया जे तेसिं कुलदेवया मेहमुहा णामं णागकुमारा देवा ते मणसीकरेमाणा २ चिट्ठंति। तए णं तेसिमावाडचिलायाणं अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि मेहमुहाणं णागकुमाराणं देवाणं आसणाइं चलंति,

तए णं ते मेहमुहा णागकुमारा देवा आसणाइं चलियाइं पासंति २ त्ता ओहिं पउंजंति २ त्ता आवाडचिलाए ओहिणा आभोएंति २ त्ता अण्णमण्णं सद्दावेंति २ त्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! जंबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे वासे आवाडचिलाया सिंधूए महाणईए वालुयासंथारोवगया उत्ताणगा अवसणा अट्ठमभत्तिया अम्हे कुलदेवए मेहमुहे णागकुमारे देवे मणसीकरेमाणा २ चिट्ठंति, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं आवाडचिलायाणं अंतिए पाउब्भवित्तए त्तिकट्टु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणेत्ता ताए उक्किट्ठाए तुरियाए जाव वीइवयमाणा २ जेणेव जंबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे वासे जेणेव सिंधू महाणई जेणेव आवाडचिलाया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता अंतलिक्खपडिवण्णा सखिंखिणियाइं पंचवण्णाइं वत्थाइं पवरपरिहिया ते आवाडचिलाए एवं वयासी-हं भो आवाडचिलाया! जण्णं तुब्भे देवाणुप्पिया! वालुयासंथारोवगया उत्ताणगा अवसणा अट्ठमभत्तिया अम्हे कुलदेवए मेहमुहे णागकुमारे देवे मणसीकरेमाणा २ चिट्ठह तए णं अम्हे मेहमुहा णागकुमारा देवा तुब्भं कुलदेवया तुम्हं अंतियण्णं पाउब्भूया, तं वदह णं देवाणुप्पिया! किं करेमो किं च आचिट्ठामो के व भे मणसाइए?

तए णं ते आवाडचिलाया मेहमुहाणं णागकुमाराणं देवाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया जाव हियया उट्ठाए उट्ठेंति २ त्ता जेणेव मेहमुहा णागकुमारा देवा तेणेव उवागच्छंति २ त्ता करयलपरिग्गहियं जाव मत्थए अंजलिं कट्टु मेहमुहे णागकुमारे देवे जएणं विजएणं वद्धावेंति २ त्ता एवं वयासी-एस णं देवाणुप्पिया! केइ अपत्थियपत्थए दुरंतपंतलक्खणे जाव हिरिसिरिपरिवज्जिए जे णं अम्हं विसयस्स उवरिं वीरिएणं हव्वमागच्छइ, तं तहा णं घत्तेह देवाणुप्पिया! जहा णं एस अम्हं विसयस्स उवरिं वीरिएणं णो हव्वमागच्छइ।

तए णं ते मेहमुहा णागकुमारा देवा ते आवाडचिलाए एवं वयासी-एस णं भो देवाणुप्पिया! भरहे णामं राया चाउरंतचक्कवट्टी महिड्ढिए महज्जुईए जाव महासोक्खे, णो खलु एस सक्को केणइ देवेण वा दाणवेण वा किण्णरेण वा किंपुरिसेण वा महोरगेण वा गंधव्वेण वा सत्थप्पओगेण वा अग्गिप्पओगेण वा मंतप्पओगेण वा उद्दवित्तए वा पडिसेहित्तए वा, तहाविय णं तुब्भं पियट्ठयाए भरहस्स रण्णो उवसग्गं करेमोत्तिकट्टु तेसिं आवाडचिलायाणं अंतियाओ अवक्कमंति २ त्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणंति २ त्ता मेहाणीयं विउव्वंति २ त्ता जेणेव भरहस्स रण्णो विजयक्खंधा-वारणिवेसे तेणेव उवागच्छंति २ त्ता उप्पिं विजयक्खंधावार-णिवेसस्स खिप्पामेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पतणुतणायंति २ त्ता खिप्पामेव विज्जुयायंति २ त्ता खिप्पामेव जुगमुसलमुट्ठिप्प-माणमेत्ताहिं धाराहिं ओघमेघं सत्तरत्तं वासं वासिउं पवत्ता यावि होत्था।

शब्दार्थ - **पडिसेहिया** - प्रतिषेधित-रोके हुए, **उत्ताणगा** - मुंह ऊपर किए हुए, **वीइवयमाणा** - चलते हुए (व्यतिव्रजमाना), **परिहिया** - पहने हुए, **वेउव्विय-समुग्घाएणं** - वैक्रिय समुद्घात, **समोहणंति** - आत्म-प्रदेशों का बाहर निर्गमन, **पतणुतणायंति** - गरजने लगे, **विज्जुयायंति** - विद्युत चमकाने लगे, **वासिउं** - बरसने लगे, **ओघ** - समूह।

भावार्थ - सेनापति सुषेण द्वारा आहत, मथित यावत् मैदान छोड़कर भागे हुए आपात किरात भयभीत, त्रास युक्त व्यथायुक्त, पीड़ायुक्त और उद्वेगयुक्त होकर घबरा उठे। युद्ध में स्थिर नहीं रह सके। स्वयं को बल रहित, अशक्त, पौरुष-पराक्रम विहीन अनुभव करने लगे। सेनापति का सामना करना संभव नहीं है, ऐसा विचार कर वे अनेक योजन पर्यन्त भाग छूटे तथा परस्पर एक स्थान पर मिले। जहाँ सिंधु महानदी थी, वहाँ आए। बालू के संस्तारक तैयार किए। उन पर स्थित होकर तेले की तपस्या अंगीकार की। मुंह ऊँचा किए हुए, वस्त्र रहित होकर अपने कुल देवता मेघमुख नामक नागकुमारों का मन में ध्यान करते हुए स्थित रहे।

जब उनकी तेले की तपस्या पूर्ण होने को थी तब मेघमुख नागकुमारों के आसन चलायमान हुए। इन्होंने अपने आसनों को चलित देखा तो अवधिज्ञान को प्रयुक्त किया। अवधिज्ञान द्वारा इन्होंने आपात किरातों को देखा। उन्हें देखकर वे आपस में कहने लगे - देवानुप्रियो! जंबुद्वीप में, उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र में, सिंधु महानदी के तट पर बालू के बिछौनों पर स्थित होकर आपात किरात अपने मुंह ऊँचे किए, वस्त्र रहित होकर तेले की तपस्या में संलग्न हैं। हम मेघमुख नागकुमार उनके कुलदेवता हैं। वे हमारा ध्यान कर रहे हैं। देवानुप्रियो! हमारे लिए यह उचित है कि हम प्रादूर्भूत हो। आपस में ऐसा विचार कर उन्होंने वैसा करने का निश्चय किया। वे उत्कृष्ट तीव्र गति से यावत् चलते-चलते जंबूद्वीप के अंतगर्त उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र में, सिंधु महानदी के तट पर जहाँ आपात किरात थे। वहाँ आए। उन्होंने छोटे-छोटे घुंघुरुओं से युक्त पाँच रंगों के श्रेष्ठ वस्त्र पहन रखे थे, अंतरिक्ष में स्थित उन्होंने आपात किरातों को संबोधित कर कहा - देवानुप्रियो! तुम बालू के संस्तारकों पर वस्त्र रहित होकर तेले की तपस्या में स्थित होते हुए हम मेघमुख नागकुमारों का, जो तुम्हारे कुल देवता है, ध्यान कर रहे हो। यह देखकर हम तुम्हारे समक्ष प्रादुर्भूत हुए हैं। देवानुप्रियो! तुम्हारे मन में क्या है? हम तुम्हारे लिए क्या करें?

यह सुनकर आपात चिलात हर्षित, परितुष्ट और मन में आनंदित हुए यावत् हृदय में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उल्लसित हो उठे और जहाँ मेघमुख नागकुमार देव थे, वहाँ आए। करबद्ध होते हुए यावत् मस्तक पर अंजलिबद्ध हाथों से मेघमुख नागकुमारों को जय-विजय से वर्धापित किया, जयनाद किया, बोले - देवानुप्रियो! कोई मौत को चाहने वाला, अशुभ लक्षण युक्त यावत् लज्जा, शोभा एवं कांति से परिवर्जित, हमारे देश पर पराक्रम पूर्वक चढ़ आया है। देवानुप्रियो! आप उसको इस प्रकार मारें, जिससे वह हमारे देश पर पराक्रम पूर्वक आघात न कर सके।

तब उन मेघमुख नागकुमार देवों ने आपात चिलातों से यों कहा - देवानुप्रियो! जिसने ऐसा किया है, वह भरत नाम का चातुरंत चक्रवर्ती है, जो महान् ऋद्धि एवं द्युतियुक्त है यावत् परमसुख संपन्न है। वह किसी देव, दानव, किन्नर, किंपुरुष, महोरग, नाग या गंधर्व द्वारा किसी शस्त्र अग्नि या मंत्र प्रयोग द्वारा हटाया नहीं जा सकता, रोका नहीं जा सकता। फिर भी तुम्हारा प्रिय करने के लिए हम उपसर्ग संकट उत्पन्न कर रहे हैं। ऐसा कहकर वे आपात किरातों के यहाँ से चल पड़े और वैक्रिय लब्धि के समुद्घात द्वारा आत्म-प्रदेशों को बाहर निकाला। इन पुद्गलों से मेघों की विकुर्वणा की। जहाँ राजा भरत की छावनी थी, वहाँ आए। मेघ सैन्य शिविर के ऊपर शीघ्र ही गर्जने लगे, बिजली चमकाने लगे तथा जल्दी ही वे जल बरसाने लगे। सात दिन और सात रात पर्यन्त गाड़ी के जुए, मूसल एवं मुट्ठी जैसी मोटी घटाओं से वृष्टि होती रही।

छत्र रत्न द्वारा उपसर्ग से रक्षा

(७५)

तए णं से भरहे राया उप्पिं विजयक्खंधावारस्स जुगमुसलमुट्ठिप्पमाणमेत्ताहिं धाराहिं ओघमेघं सत्तरत्तं वासं वासमाणं पासइ २ त्ता चम्मरयणं परामुसइ, तए णं तं सिरिवच्छसरिसरूवं वेढो भाणियव्वो जाव दुवालसजोयणाइं तिरियं पवित्थरइ तत्थ साहियाइं, तए णं से भरहे राया सखंधावारबले चम्मरयणं दुरूहइ २ त्ता दिव्वं छत्तरयणं परामुसइ, तए णं णवणउइसहस्सकंचणसलागपरिमंडियं महरिहं अउज्झं णिव्वणसुपसत्थविसिट्ठलट्ठकंचणसुपुट्ठदंडं मिउराययवट्टलट्ठ-अरविंदकण्णिय-समाणरूवं वत्थिपएसे य पंजरविराइयं विविहभत्तिचित्तं मणिमुत्त-पवालतत्त-तवणिज्जपंचवण्णियधोयरयणरूवरइयं रयणमरीईसमोप्पणाकप्पकार-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मणुरंजिएल्लियं रायलच्छिचिंधं अज्जुणसुवण्णपंडुरपच्चत्थुयपट्ठदेसभागं तहेव तवणिज्जपट्टधम्मंतपरिगयं अहियसस्सिरीयं सारयरयणियरविमलपडिपुण्णचंद-मंडलसमाणरूवं णरिंदवामप्पमाणपगइवित्थडं कुमुयसंडधवलं रण्णो संचारिमं विमाणं सूरायववायवुट्ठिदोसाण य खयकरं तवगुणेहिं लद्धं -

"अहयं बहुगुणदाणं उऊण विवरीयसुहकयच्छायं।
छत्तरयणं पहाणं सुदुल्लहं अप्पपुण्णाणं॥१॥"

पमाणराईण तवगुणाण फलेगदेसभागं विमाणवासेवि दुल्लहतरं वग्घारिय-मल्लदामकलावं सारयधवलब्भरययणिगरप्पगासं दिव्वं छत्तरयणं महिवइस्स धरणियलपुण्णइंदो। तए णं से दिव्वे छत्तरयणे भरहेणं रण्णा परामुट्ठे समाणे खिप्पामेव दुवालस जोयणाइं पवित्थरइ साहियाइं तिरियं।

शब्दार्थ - साहियाइं - कुछ अधिक, **सलाग** - शलाका, **अउज्झं** - अयोध्य-शत्रु द्वारा अनाक्रमणीय, **वत्थिपएसे** - वस्ति प्रदेश-छते का मध्य भाग, **वित्थडं** - विस्तृत, **वामप्पमाण-** दोनों हाथों के घेरे जितना, **कुमुद** - चंद्र विकासी श्वेत कमल, **दुल्लहं** - कठिनाई से प्राप्तव्य, **अप्पपुण्णाणं** - अल्प पुण्य या पुण्यहीन, **पमाणराईण** - प्रमाणातीत-अत्यधिक प्रमाण युक्त।

भावार्थ - राजा भरत ने अपनी सेना पर मूसल एवं मुट्ठी सदृश मोटी धाराओं से सात दिन-रात पर्यन्त होती हुई वर्षा को देखा तो चर्मरत्न का स्पर्श किया। वह चर्मरत्न श्रीवत्स के समान रूप, आकार युक्त था। इसका विस्तृत वर्णन अन्यत्र से ग्राह्य है यावत् वह चर्मरत्न बारह योजन से कुछ अधिक-तिरछा फैल गया। तदनंतर राजा भरत अपनी सैन्य छावनी सहित उस चर्मरत्न पर आरूढ़ हो गया। वैसा कर उसने दिव्य छत्र रत्न का संस्पर्श किया। उस छत्र रत्न के निन्यानवें हजार स्वर्णनिर्मित शलाकाएं-ताड़ियाँ लगी थीं, जिनसे वह परिमंडित था। वह बहुमूल्य एवं चक्रवर्ती की गरिमा के अनुरूप था। शत्रुदल का आक्रमण उस पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकता था। वह निर्वृण छेद रहित, सुप्रशस्त, विशिष्ट, मनोज्ञ एवं स्वर्णनिर्मित मजबूत दंड से युक्त था। उसका रूप-आकार मुलायम, रजत निर्मित, गोल, कमल कर्णिका-कमलगट्टे (पुष्पासन) के समान था। उसका मध्य भाग (वस्ति प्रदेश) छत्र तानने की जगह पिंजरे जैसी थी तथा उस पर विविध प्रकार के चित्र अंकित थे। मणि, मुक्ता, प्रवाल, परितप्त स्वर्ण एवं रत्नों द्वारा बनाए गए पूर्ण कलश आदि मांगलिक पदार्थों के पांच रंगों के उज्ज्वल आकार उस पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंकित थे। रत्नरश्मियों की ज्यों रंग रचना करने में प्रवीण कलाकारों द्वारा बड़े सुंदर रूप में रंगा हुआ था। उस पर राजलक्ष्मी का निशान अंकित किया हुआ था। अर्जुन संज्ञक पांडुवर्ण के सोने से उसके पीछे का भाग आच्छादित था - उस पर सोने की पच्चीकारी का कलात्मक कार्य किया हुआ था। वह तपनीय स्वर्ण के पट्ट से - पात से परिवेष्टित था। वह शरद्ऋतु की पूर्णिमा के समान अत्यधिक शोभायुक्त, चंद्रविकासी कमल के समान धवल, राजा के संचरणशील विमानरूप, सूरज के आतप, वायु एवं वृष्टि के उपद्रव का विनाशक था। वह राजा के पूर्व जन्म में किए गए तप के परिणाम स्वरूप प्राप्त था।

गाथा - वह छत्र रत्न अहत - सर्वथा अखंडित अनेक गुण प्रदायक, ऋतुओं के विपरीत, सुखमय, छाया देने वाला था। पुण्यहीनों के लिए वह उत्तम छत्र रत्न दुर्लभ है।

धरणितल के स्वामी-परम पावन इन्द्र, राजा भरत का वह चक्ररत्न अत्यधिक प्रमाण में किए गए तपश्चरण के फलस्वरूप प्राप्त था, देवताओं के लिए भी दुर्लभ था, फैली हुए मालाओं के समूह से वह सज्जित था एवं शरद ऋतु के बादल एवं चन्द्रमा के समान धवल, दिव्य था। वह दिव्य छत्र रत्न राजा भरत द्वारा परामृष्ट-स्पर्श किए जाने पर शीघ्र ही बारह योजन से कुछ अधिक तिर्यक् रूप में तन गया।

रत्न चतुष्टय द्वारा सुरक्षा

(७६)

तए णं से भरहे राया छत्तरयणं खंधावारस्सुवरिं ठवेइ २ त्ता मणिरयणं परामुसइ वेढो जाव छत्तरयणस्स वत्थिभागंसि ठवेइ, तस्स य अणइवरं चारुरूवं सिलणिहि-अत्थमंतमेत्तसालि-जव-गोहूम-मुग्ग-मास-तिल-कुलत्थ-सट्ठिग-णिप्फावचणग-कोद्दव-कोत्थुंभरि-कंगुवरग-रालग-अणेगधण्णावरणहारियग-अल्लग-मूलग-हलिद्द-लाउयतउस-तुंबकालिंग-कविट्ठ-अंब-अंबिलिय-सव्वणिप्फायए सुकुसले गाहावइरयणेत्ति सव्वजण-वीसुयगुणे। तए णं से गाहावइरयणे भरहस्स रण्णो तद्दिवसप्पइण्ण-णिप्फाइय-पूइयाणं सव्वधण्णाणं अणेगाइं कुंभसहस्साइं उवट्ठवेइ, तए णं से भरहे राया चम्मरयणसमारूढे छत्तरयणसमोच्छण्णे मणिरयणकउज्जोए समुग्गयभूएणं सुहंसुहेणं सत्तरत्तं परिवसइ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाहा - णवि से खुहा ण विलियं णेव भयं णेव विज्जए दुक्खं।
भरहाहिवस्स रण्णो खंधावारस्सवि तहेव॥

शब्दार्थ - अणइवर - अत्यंत सुंदर, **अत्थमंत** - महत्त्वपूर्ण, **मुग्ग** - मूँग, **अल्लग** - अदरक, **हलिद्द** - हल्दी, **लाउय** - लौकी, **तउस** - ककड़ी, **आलिंग** - बिजौरा, **कविट्ठ** - कटहल, **अंब** - आम, **अंबिलिय** - इमली, **णिप्फाइय** - पके हुए, **खुहा** - क्षुधा-भूख, **विलियं** - दैन्यानुभव।

भावार्थ - तब राजा भरत ने चक्ररत्न को छावनी के ऊपर तान कर मणिरत्न का संस्पर्श किया यावत् उस मणिरत्न को बस्ती प्रदेश शलाकाओं के मध्य स्थापित किया। गाथापति रत्न शिला की तरह स्थित चर्मरत्न चावल, जौ, गेहूँ, मूंग, उड़द, तिल, कुलत्थ-निम्न कोटि का धान्य, षष्ठिक-चावल विशेष, निष्पाप-तण्डुल विशेष, चने, कोद्रव, कुस्तुंभरि, कंगु, वरक, रालक तथा धनिया, हरे पत्तों के साग, अदरक, मूली, हल्दी, लौकी, ककड़ी, तुंबक, बिजौरा, कटहल, आम, इमली आदि समग्र फल एवं शाक आदि पदार्थों को उत्पन्न करने में सकुशल था, समस्त लोगों का विश्वास पात्र था।

तब उस गाथापतिरत्न ने उसी दिन बोए हुए, पके हुए, भूसा आदि से रहित कर स्वच्छ बनाए हुए सब प्रकार के धान्यों से भरे हुए हजारों घड़े राजा भरत की सेवा में उपस्थापित किए। उस भीषण वर्षा में राजा चर्मरत्न पर आरूढ़ रहा, छत्र रत्न द्वारा आच्छादित रहा तथा मणिरत्न द्वारा किए गए प्रकाश में सात-दिन रात तक सुखपूर्वक रहा।

गाथा - उस समय राजा भरत एवं उसकी सेना ने न तो भूख का अनुभव किया, न उनमें हीनता और भय का संचार हुआ तथा न किसी प्रकार का दुःख ही रहा।

(७७)

तए णं तस्स भरहस्स रण्णो सत्तरत्तंसि परिणममाणंसि इमेयारूवे अब्भत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था-केस णं भो! अपत्थियपत्थए दुरंतपंतलक्खणे जाव परिवज्जिए जे णं ममं इमाए एयाणुरूवाए जाव अभिसमण्णागयाए उप्पिं विजयखंधावारस्स जुगमुसलमुट्ठि जाव वासं वासइ।

तए णं तस्स भरहस्स रण्णो इमेयारूवं अब्भत्थियं चिंतियं पत्थियं मणोगयं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संकप्पं समुप्पण्णं जाणित्ता सोलस देवसहस्सा सण्णज्झिउं पवत्ता यावि होत्था, तए णं ते देवा सण्णद्धबद्धवम्मियकवया जाव गहियाउहप्पहरणा जेणेव ते मेहमुहा णागकुमारा देवा तेणेव उवागच्छंति २ त्ता मेहमुहे णागकुमारे देवे एवं वयासी-हं भो मेहमुहा णागकुमारा देवा! अपत्थियपत्थगा जाव परिवज्जिया किण्णं तुब्भे ण याणह भरहं रायं चाउरंतचक्कवट्टिं महिड्ढियं जाव उद्दवित्तए वा पडिसेहित्तए वा तहा वि णं तुब्भे भरहस्स रण्णो विजयखंधावारस्स उप्पिं जुगमुसल-मुट्ठिप्पमाणमित्ताहिं धाराहिं ओघमेघं सत्तरत्तं वासं वासह, तं एवमवि गए इत्तो खिप्पामेव अवक्कमह अहव णं अज्ज पासह चित्तं जीवलोगं।

तए णं ते मेहमुहा णागकुमारा देवा तेहिं देवेहिं एवं वुत्ता समाणा भीया तत्था वहिया उव्विग्गा संजायभया मेहाणीयं पडिसाहरंति २ त्ता जेणेव आवाडचिलाया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता आवाडचिलाए एवं वयासी-एस णं देवाणुप्पिया! भरहे राया महिड्ढिए जाव णो खलु एस सक्को केणइ देवेण वा जाव अग्गिप्पओगेण वा जाव उद्दवित्तए वा पडिसेहित्तए वा तहावि य णं अम्हेहिं देवाणुप्पिया! तुब्भं पियट्ठयाए भरहस्स रण्णो उवसग्गे कए, तं गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय-मंगलपायच्छित्ता उल्लपडसाडगा ओचूलगणियच्छा अग्गाइं वराइं रयणाइं गहाय पंजलिउडा पायवडिया भरहं रायाणं सरणं उवेह, पणिवइयवच्छला खलु उत्तमपुरिसा णत्थि भे भरहस्स रण्णो अंतियाओ भयमितिकट्टु एवं वइत्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

तए णं ते आवाडचिलाया मेहमुहेहिं णागकुमारेहिं देवेहिं एवं वुत्ता समाणा उट्ठाए उट्ठेंति २ त्ता ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता उल्लपडसाडगा ओचूलगणियच्छा अग्गाइं वराइं रयणाइं गहाय जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता करयलपरिग्गहियं जाव मत्थए अंजलिं कट्टु भरहं रायं जएणं विजएणं वद्धाविंति २ त्ता अग्गाइं वराइं रयणाइं उवणेंति २ त्ता एवं वयासी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाहाओ - वसुहर गुणहर जयहर, हिरिसिरिधीकित्तिधारगणरिंद।
लक्खणसहस्सधारग रायमिदं णे चिरं धारे॥१॥
हयवइ गयवइ णरवइ णवणिहिवइ भरहवासपढमवई।
बत्तीसजणवयसहस्सराय सामी चिरं जीव॥२॥
पढमणरीसर ईसर हियईसर महिलियासहस्साणं।
देवसयसाहसीसर चोद्दसरयणीसर जसंसी॥३॥
सागरगिरिमेरागं उत्तरवाईणमभिजियं तुमए।
ता अम्हे देवाणुप्पियस्स विसए परिवसामो॥४॥

अहो णं देवाणुप्पियाणं इड्ढी जुई जसे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे दिव्वा देवजुई दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते अभिसमण्णागए, तं दिट्ठा णं देवाणुप्पियाणं इड्ढी एवं चेव जाव अमिसमण्णागए, तं खामेमु णं देवाणुप्पिया! खमंतु णं देवाणुप्पिया! खंतुमरहंतु णं देवाणुप्पिया! णाइ भुज्जो २ एवं करणयाए त्तिकट्टु पंजलिउडा पायवडिया भरहं रायं सरणं उविंति।

तए णं से भरहे राया तेसिं आवाडचिलायाणं अग्गाइं वराइं रयणाइं पडिच्छइ २ त्ता ते आवाडचिलाए एवं वयासी-गच्छह णं भो तुब्भे ममं बाहुच्छाया-परिग्गहिया णिब्भया णिरुव्विग्गा सुहंसुहेणं परिवसह, णत्थि भे कत्तोवि भयमत्थित्तिकट्टु सक्कारेइ सम्माणेइ सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता पडिविसज्जेइ।

तए णं से भरहे राया सुसेणं सेणावइं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-गच्छाहि णं भो देवाणुप्पिया! दोच्चंपि सिंधूए महाणईए पच्चत्थिमं णिक्खुडं ससिंधु-सागरगिरिमेरागं समविसमणिक्खुडाणि य ओअवेहि २ त्ता अग्गाइं वराइं रयणाइं पडिच्छाहि २ त्ता मम एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणाहि जहा दाहिणिल्लस्स ओयवणं तहा सव्वं भाणियव्वं जाव पच्चणुभवमाणे विहरइ।

शब्दार्थ - **सण्णज्झिउं** - सन्नद्ध-तत्पर, **थाणह** - जानते, **अहव** - अन्यथा, **चित्तं** - त्यक्तं-गया हुआ, **पडिसाहरंति** - समेट लिया, **उद्दवित्तए** - रोका जाना, **ओचूल** - चूते हुए,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पायवडिया - पादपतिता-पैरों में गिर जाओ, **वच्छला** - वात्सल्य, **वसु** - धन-वैभव, **णवणिहि** - नवनिधि, **महिलिया** - नारियाँ, **भुज्जो-भुज्जो** - बार-बार।

भावार्थ - जब राजा भरत को इस प्रकार रहते हुए सात दिन-रात बीत गए तब उसके मन में ऐसा चिंतन, विचार, संकल्प उत्पन्न हुआ- वह कौन मौत को चाहने वाला, अशुभ लक्षण युक्त यावत् लज्जा एवं शोभा से रहित पुरुष है, जो मेरे ऐसे प्रभाव के होते हुए भी यावत् मेरी सेना पर जुआ, मूसल तथा मुट्ठी के सदृश मोटी जल धारा द्वारा यावत् वर्षा कर रहा है।

राजा के मन में ऐसा चिंतन, भाव, संकल्प उत्पन्न हुआ है, यह जानकर सोलह सहस्त्र देव युद्ध हेतु सन्नद्ध हुए। उन्होंने शरीर पर कवच धारण किए यावत् शस्त्रास्त्र गृहीत किए तथा जहाँ मेघमुख नामक नागकुमार थे, वहाँ आए और उनसे बोले - अरे मौत को चाहने वालों यावत् निर्लज्जो! श्रीविहीनो! क्या तुम नहीं जानते, चातुरंत चक्रवर्ती राजा भरत महान् ऋद्धिशाली यावत् उसे कोई भी पराजित करने में या रोक पाने में असमर्थ है। ऐसा होते हुए भी राजा भरत की सैन्य छावनी पर युग, मूसल और मुट्ठी की ज्यों जलधाराओं के साथ सात दिन-रात से पानी बरसाते जा रहे हो।

जल्दी ही यहाँ से हट जाओ अथवा अपने जीवन को बीता हुआ समझ लो। अब तुम बच नहीं पाओगे।

इस प्रकार कहने पर वे मेघमुख नागकुमार भयभीत, उद्विग्न हो गए और मेघों के समूहों को समेट लिया। इसके पश्चात् जहाँ आपात चिलात थे, वहाँ आए और उनसे बोले- देवानुप्रियो! राजा भरत अत्यधिक वैभव और प्रभावयुक्त है यावत् वह किसी देव द्वारा यावत् अग्नि प्रयोग द्वारा यावत् रोका नहीं जा सकता, प्रतिषेधित नहीं किया जा सकता। फिर भी हमने तुम्हारा प्रिय करने हेतु राजा भरत के लिए उपसर्ग उपस्थित किए।

देवानुप्रियो! अब तुम जाओ, स्नान, नित्य-नैमित्तिक बलि, प्रायश्चित्त आदि मंगलोपचार संपादित करो, गीले वस्त्र धारण किए हुए, लटकते हुए वस्त्रों को पकड़े हुए, उत्तम रत्न लेकर, कर बद्ध होकर राजा भरत के चरणों में गिर जाओ, उसकी शरण में जाओ। चरणों में पड़े हुए लोगों के प्रति उत्तम पुरुष वात्सल्य भाव युक्त होते हैं। तुम राजा के समीप जाने में भय न करो। ऐसा कह वे देव जिस दिशा से आए थे, उसी दिशा में चले गए।

तब मेघमुख नागकुमारों द्वारा यों निर्देशित किए जाने पर आपात किरात उठे, स्नान किया, बलि-प्रायश्चित आदि नित्य-नैमित्तिक-मंगलोपचार संपादित कर गीले वस्त्र पहने हुए, वस्त्रों के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छोर को संभाले हुए बहुमूल्य, श्रेष्ठ रत्न लेकर जहां राजा भरत था, वहाँ आए। अंजलि बद्ध हाथों को मस्तक पर रखे हुए राजा को जय-विजय द्वारा वर्धापित किया था बहुमूल्य उत्तम रत्न उन्हें भेट किए एवं बोले -

गाथा - वैभव के स्वामिन्! गुण-गण शोभित! जयशील! लज्जा, श्री, धैर्य एवं यश के धारक! राजोचित सहस्त्र लक्षण धारिन! नरपते! हमारे राज्य को चिरकाल पर्यन्त धारण करे - स्वीकार करे, पालन-पोषण करे॥१॥

अश्वों, गजों, नरों, मानवों एवं नवनिधियों के स्वामिन्! बत्तीस सहस्त्र देवों के अधिनायक! आप चिरकाल तक जीवित रहें॥२॥

प्रथम नरपते! ऐश्वर्यवान! सहस्त्रांगनाओं के हृदयवल्लभ! लाखों देवों के अधीश्वर! चतुर्दशरत्न धारण करने वाले! कीर्तिशालिन! आपने दक्षिण, पूर्व, पश्चिम दिशा में समुद्र पर्यंत तथा दक्षिण दिशा में चुल्लहिमवान् गिरिपर्यन्त—समग्र भरत क्षेत्र को विजित कर रहे हैं। हम देवानुप्रिय के-आपके देश में प्रजा के रूप में बस रहे हैं। ॥३,४॥

हे देवानुप्रिय! आपकी समृद्धि, द्युति, कीर्ति आंतरिक एवं बाह्य शक्ति, पौरुष, पराक्रम—ये सभी आश्चर्य जनक हैं। आपको दिव्य उद्योत, दिव्य देव प्रभाव लब्ध, संप्राप्त, अभिसमन्वागत-स्वायत हैं। हे देवानुप्रिय! आप द्वारा समुपलब्ध ऋद्धि आदि को यावत् हमने प्रत्यक्ष देख लिया है। देवानुप्रिय! हम आपसे क्षमायाचना करते हैं, आप हमें क्षमा करें, आप क्षमा करने में समर्थ हैं। इस प्रकार बारबार ऐसा कर हाथ जोड़े हुए राजा भरत के चरणों में गिर पड़े एवं उनके शरणागत हुए।

फिर राजा भरत ने आपात किरातों द्वारा उपहार के रूप में समर्पित श्रेष्ठ, उत्तम रत्न अंगीकार किए और बोला—तुम सभी लौट जाओ। तुम मेरी भुजाओं की छत्रच्छाया में हो। तुम भय एवं उद्वेग रहित होकर सुख पूर्वक रहो। अब तुम्हें किसी से भी कोई डर नहीं है, ऐसा कह कर राजा ने उनको सत्कृत-सम्मानित कर विदा किया।

तदुपरांत राजा भरत ने सेनापति सुषेण को बुलाया और कहा - हे देवानुप्रिय! जाओ, सिंधुमहानदी के पश्चिमवर्ती दूसरे कोने में विद्यमान निष्कुट प्रदेश को, जिसके एक तरफ सिंधु महानदी एवं एक ओर सागर तथा दूसरी ओर चुल्लहिमवान है, जहाँ उबड़-खाबड़ स्थान है - गड्ढे हैं, उन्हें अधिकृत करो तथा श्रेष्ठ उत्तम रत्न प्राप्त करो। ऐसा हो जाने पर शीघ्र मुझे सूचना दो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इससे आगे का वर्णन दक्षिणवर्ती सिंधु निष्कुट के वर्णन सदृश कथनीय है यावत् वैसा कर वे सांसारिक सुखों का प्रत्यनुभव-भोगोपभोग करते हुए रहने लगे।

(७८)

तए णं दिव्वे चक्करयणे अण्णया कयाइ आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता अंतलिक्खपडिवण्णे जाव उत्तरपुरत्थिमं दिसिं चुल्लहिमवंतपव्वयाभिमुहे पयाए यावि होत्था, तए णं से भरहे राया तं दिव्वं चक्करयणं जाव चुल्लहिमवंत-वासहरपव्वयस्स अदूरसामंते दुवालसजोयणायामं जाव चुल्लहिमवंतगिरिकुमारस्स देवस्स अट्ठमभत्तं पगिण्हइ, तहेव जहा मागहतित्थस्स जाव समुद्दरवभूयं पिव करेमाणे २ उत्तरदिसाभिमुहे जेणेव चुल्लहिमवंतवासहरपव्वए तेणेव उवागच्छइ २ त्ता चुल्लहिमवंतवासहरपव्वयं तिक्खुत्तो रहसिरेणं फुसइ फुसित्ता तुरए णिगिण्हइ णिगिण्हित्ता तहेव जाव आययकण्णाययं च काऊण उसुमुदारं इमाणि वयणाणि तत्थ भाणीय से णरवई जाव सव्वे मे ते विसयवासित्तिकट्टु उद्धं वेहासं उसुं णिसिरइ परिगरणिगरियमज्झे जाव तए णं से सरे भरहेणं रण्णा उद्धं वेहासं णिसट्ठे समाणे खिप्पामेव बावत्तरिं जोयणाइं गंता चुल्लहिमवंतगिरिकुमारस्स देवस्स मेराए णिवइए।

तए णं से चुल्लहिमवंतगिरिकुमारे देव मेराए सरं णिवइयं पासइ २ त्ता आसुरुत्ते रुट्ठे जाव पीइदाणं सव्वोसहिं च मालं गोसीसचंदणं च कडगाणि जाव दहोदगं च गेण्हइ २ त्ता ताए उक्किट्ठाए जाव उत्तरेणं चुल्लहिमवंतगिरिमेराए अहण्णं देवाणुप्पियाणं विसयवासी जाव अहण्णं देवाणुप्पियाणं उत्तरिल्ले अंतवाले जाव पडिविसज्जेइ।

शब्दार्थ - **रहसिरेणं** - रथ के अग्रभाग को, **फुसइ** - स्पर्श किया।

भावार्थ - आपात किरातों को जीत लेने के अनंतर अन्य किसी दिन वह चक्ररत्न आयुधशाला से प्रतिनिष्क्रांत हुआ। अंतरिक्ष में स्थित होता हुआ यावत् उत्तर पूर्व दिशा में-ईशान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोण में चुल्लहिमवान् पर्वत की ओर चला। राजा भरत ने उस चक्ररत्न को चुल्लहिमवान पर्वत की ओर जाते हुए देखा तो उसका अनुगमन किया यावत् चुल्लहिमवान पर्वत से न अधिक दूर न अधिक समीप बारह योजन का सैन्य शिविर लगाया यावत् चुल्लहिमवान गिरिकुमार को उदिष्ट कर तेले की तपस्या अंगीकार की। इससे आगे का वर्णन मागधतीर्थ के वृत्तांत के सदृश है यावत् समुद्र के गर्जन की तरह गंभीर शब्द करता हुआ राजा भरत चुल्लहिमवान पर्वत जहाँ था वहाँ आया। उसने अपने रथ के अग्र भाग से चुल्लहिमवान पर्वत का तीन बार स्पर्श किया, तेजी से चलते हुए अपने अश्वों को रोका-यावत् कमर में युद्धोचित वस्त्र बांधे हुए धनुष पर बाण चढ़ाकर उसको कान तक खीचक॰र राजा इस प्रकार बोला यावत् मेरे देश में रहने वाले सब सुनें, ऐसा कहकर उसने आकाश में बाण छोड़ा यावत् राजा भरत द्वारा ऊपर आकाश में छोड़ा गया वह बाण त्वरा पूर्वक बहत्तर योजन तक जाकर चुल्लहिमवान गिरिकुमार की सीमा में उचित स्थान पर गिरा।

चुल्लहिमवान् गिरिकुमार देव ने बाण को जब अपनी सीमा में निपतित देखा तो वह तत्काल क्रोध से जल उठा, रुष्ट हो गया यावत् राजा को उपहार देने हेतु समस्त औषधियाँ मालाएं, गोशीर्ष चंदन, कड़े यावत् पद्मद्रह का जल लिया यावत् अत्यंत तेज गति से राजा भरत के पास पहुँचा यावत् मैं उत्तरी चुल्लहिमवान पर्वत की सीमा में आपके देश का निवासी हूँ यावत् आपका उत्तर दिशा का अंतपाल-विघ्न निवारक हूँ यावत् राजा के उपहार स्वीकार कर, उसे विदा किया।

(७९)

तए णं से भरहे राया तुरए णिगिण्हइ २ त्ता रहं परावत्तेइ २ त्ता जेणेव उसहकूडे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता उसहकूडं पव्वयं तिक्खुत्तो रहसिरेणं फुसइ २ त्ता तुरए णिगिण्हइ २ त्ता रहं ठवेइ २ त्ता छत्तलं दुवालसंसियं अट्ठकण्णियं अहिगरणिसंठियं सोवण्णियं कागणिरयणं परामुसइ २ त्ता उसभकूडस्स पव्वयस्स पुरत्थिमिल्लंसि कडगंसि णामगं आउडेइ-

ओसप्पिणीइमीसे तइयाए समाइ पच्छिमे भाए।
अहमंसि चक्कवट्टी भरहो इय णामधिज्जेणं॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहमंसि पढमराया अहयं भरहाहिवो णरवरिंदो।

णत्थि महं पडिसत्तू जियं मए भारहं वासं॥२॥

इति कट्टु णामगं आउडेइ णामगं आउडित्ता रहं परावत्तेइ २ त्ता जेणेव विजयखंधावारणिवेसे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता जाव चुल्लहिमवंतगिरिकुमारस्स देवस्स अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जाव दाहिणदिसिं वेयड्ढ-पव्वयाभिमुहे पयाए यावि होत्था।

शब्दार्थ - **परावत्तेइ** - वापस लौटा, **उसहकूडे** - ऋषभकूट, **कडगंसि** - पर्वत का मध्य भाग, **आउडेइ** - आलेखित किया, **णिव्वत्ताए** - परिसंपन्न होने पर।

भावार्थ - तत्पश्चात् राजा भरत ने अश्वों को नियंत्रित किया तथा रथ को मोड़ा। वह जहाँ ऋषभकूट पर्वत था, वहाँ आया और रथ के आगे के भाग से पर्वत का तीन बार संस्पर्श किया। वैसा कर उसने घोड़ों को रोका, रथ को ठहराया। छह तल युक्त, बारह कोनों से युक्त तथा आठ कर्णिका युक्त, सुनार के लौह निर्मित एहरन के आकार युक्त काकणिरत्न का स्पर्श किया। यह अष्ट स्वर्ण प्रमाण❖ था। राजा ने ऋषभकूट पर्वत के मध्य भाग में इस प्रकार नामांकन किया -

गाथा - इस अवसर्पिणी काल के तृतीय आरक के तीसरे भाग में भरत नामक चक्रवर्ती हुआ हूँ। मैं भरत क्षेत्र का प्रथम राजा हूँ। नरवरेन्द्र हूँ। मेरा कोई प्रतिद्वन्दी नहीं है। मैंने भरत क्षेत्र को विजित कर लिया है॥१,२॥

इस प्रकार राजा भरत ने अपने नाम एवं परिचय का आलेखन किया और अपने रथ को प्रत्यावर्तित किया - मोड़ा तथा जहाँ अपनी छावनी थी वहाँ बाह्य उपस्थानशाला-सभा भवन में पहुँचा यावत् चुल्लहिमवान् गिरिकुमार देव को जीत लेने के उपलक्ष में अष्टदिवसीय विजय समारोह सम्पन्न हो जाने पर यावत् वह दिव्य चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकला यावत् दक्षिणदिशा में स्थित वैताढ्य पर्वत की ओर चलने में प्रवृत्त हुआ।

❖ अष्ट स्वर्ण प्रमाण-आठ तोले स्वर्ण के प्रमाण जितना।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विद्याधरराज नमि विनमि पर विजय

(८०)

तए णं से भरहे राया तं दिव्वं चक्करयणं जाव वेयड्ढस्स पव्वयस्स उत्तरिल्ले णियंबे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता वेयड्ढस्स पव्वयस्स उत्तरिल्ले णियंबे दुवालसजोयणायामं जाव पोसहसालं अणुपविसइ जाव णमिविणमीणं विज्जाहरराईणं अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता पोसहसालाए जाव णमिविणमिविज्जाहररायाणो मणसीकरेमाणे २ चिट्ठइ, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि णमिविणमी-विज्जाहररायाणो दिव्वाए मईए चोइयमई अण्णमण्णस्स अंतियं पाउब्भवंति २ त्ता एवं वयासी - उप्पण्णे खलु भो देवाणुप्पिया! जंबुद्दीवे दीवे भरहे वासे भरहे राया चाउरंतचक्कवट्टी तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्णमणागयाणं विज्जाहरराईणं चक्कवट्टीणं उवत्थाणियं करेत्तए, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया! अम्हेवि भरहस्स रण्णो उवत्थाणियं करेमोत्तिकट्टु विणमी णाऊणं चक्कवट्टिं दिव्वाए मईए चोइयमई माणुम्माण-प्पमाणजुत्तं तेयस्सिं रूवलक्खणजुत्तं ठियजुव्वणकेसवट्ठियणहं सव्वरोगणासणिं बलकरिं इच्छिसीउण्हफासजुत्तं-

तिसु तणुयं तिसु तंबं तिवलीगइउण्णयं तिगंभीरं।
तिसु कालं तिसु सेयं, तियाययं तिसु य विच्छिण्णं॥१॥

समसरीरं भरहे वासंमि सव्वमहिलप्पहाणं सुंदरथण-जहणवरकरचलण-णयण-सिरसिजदसणजण-हियय-रमणमणहरिं सिंगारागार जाव जुत्तोवयारकुसलं अमरवहूणं सुरूवं रूवेणं अणुहरंतिं सुभद्दं भद्दंमि जोव्वणे वट्टमाणिं इत्थीरयणं णमी य रयणाणि य कडगाणि य तुडियाणि य गेण्हइ २ त्ता ताए उक्किट्ठाए तुरियाए जाव उद्धुयाए विज्जाहरगईए जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता अंतलिक्खपडिवण्णा सखिंखिणियाइं जाव जएणं विजएणं वद्धावेंति २ त्ता एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वयासी - अभिजिए णं देवाणुप्पिया! जाव अम्हे देवाणुप्पियाणं आणत्तिकिंकरा इतिकट्टु तं पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया! अम्हं इमं जाव विणमी इत्थीरयणं णमी रयणाणि० समप्पेइ। तए णं से भरहे राया जाव पडिविसज्जेइ २ त्ता पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता....भोयणमंडवे जाव णमिविमीणं विज्जाहरराईणं अट्ठाहियमहामहिमा, तए णं से दिव्वे चक्करयणे आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ जाव उत्तरपुरत्थिमं दिसिं गंगादेवीभवणाभिमुहे पयाए यावि होत्था, सच्चेव सव्वा सिंधुवत्तव्वया जाव णवरं कुंभट्ठसहस्सं रयणचित्तं णाणामणि-कणगरयणभत्तिचित्ताणि य दुवे कणगसीहासणाइं सेसं तं चेव जाव महिमत्ति।

शब्दार्थ - **णियंबे** - नितंबे-तलहटी, **मइए** - मति, **चोइय** - प्रेरित, **उप्पण्णे** - उत्पन्न हुआ है, **उवत्थाणिय** - उपस्थित होना, **णाऊणं** - जानकर, **तंब** - लालिमायुक्त।

भावार्थ - राजा भरत ने जब चक्ररत्न को यावत् वैताढ्य पर्वत की उत्तरवर्ती तलहटी की ओर जाते हुए देखा तो वहाँ बारह योजन लम्बी तथा नौ योजन चौड़ी छावनी लगाई यावत् पौषधशाला में प्रविष्ट हुआ यावत् नमि एवं विनमि नामक विद्याधर राजाओं को विजित करने हेतु पौषधशाला में तेले की तपस्या अंगीकार की यावत् वह इन दोनों का मन में ध्यान करता हुआ स्थित हुआ।

जब राजा भरत की तेले की तपस्या पूर्ण होने को थी तब नमि एवं विनमि नामक विद्याधर राजाओं को अपनी दिव्य बुद्धि-दिव्यानुभाव जनित ज्ञान द्वारा प्रेरित होकर यह जाना। वे परस्पर मिले एवं कहने लगे - देवानुप्रिय! जंबूद्वीप के अन्तर्गत, भरत क्षेत्र में भरत नामक चातुरंत चक्रवर्ती राजा पैदा हुआ है। वर्तमान, भूत एवं भविष्यत् काल में हुए विद्याधर राजाओं का यह परंपरानुगत व्यवहार है कि वे चक्रवर्ती राजा के समक्ष उपस्थित होते रहे हैं। इसलिए हमें भी राजा भरत के समक्ष उपस्थित होकर उपहार भेंट करने चाहिए। यों सोचकर विद्याधरराज विनमि ने अपनी दिव्यबुद्धि से प्रेरित होकर चक्रवर्ती राजा भरत को उपहृत करने हेतु सुभद्रा नामक स्त्रीरत्न को लिया। उसका शरीरमान-दैहिक विस्तार, उन्मान-शरीर का वजन देह की दृष्टि से परिपूर्ण था। वह तेजस्विनी, रूपवती, उत्तम लक्षण युक्त, चिरयौवना थी। उसके बाल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और नाखून बढ़ते नहीं थे। वह स्पर्श से समस्त रोगों का नाश करने वाली, बलवृद्धि करने वाली तथा इच्छानुरूप शीत, उष्ण स्पर्श देने वाली थी।

गाथा - वह तीन स्थानों में तनुक्-पतली, तीन स्थानों में लालिमामय, शरीर में तीन सलवटों से युक्त, तीन स्थानों में गंभीर, तीन स्थानों में उन्नत, तीन स्थानों में कृष्ण वर्ण युक्त, तीन स्थानों में श्वेत, तीन स्थानों में प्रलम्ब तथा तीन स्थानों में विस्तीर्ण थी॥१॥

वह समशरीर युक्त, भरत क्षेत्र की समस्त नारियों में श्रेष्ठ थी। उसके स्तन, जघन, हस्त, पैर, नेत्र, केश, दंत सभी सुंदर थे। ये सभी दर्शकों के लिए चिताह्लादक एवं आकर्षित करने वाले थे। वह श्रृंगार रस की साक्षात् प्रतिमूर्ति थी यावत् लोक व्यवहार में अत्यंत कुशल एवं प्रवीण थी। वह रूप में देवांगनाओं के सौंदर्य का अनुसरण करती थी। वह कल्याणकर, सुखप्रद यौवन में समाविष्ट थी।

विद्याधर राजा नमि ने रत्न, कड़े तथा भुजबंद लिए। उत्तम तेज, तीव्र विद्याधर गति से जहाँ राजा भरत था, वहाँ आए। अंतरिक्ष में अवस्थित वे पंचरंगे वस्त्र पहने हुए थे, जिनमें छोटी-छोटी घंटियाँ-किंकिणियां लगी थीं यावत् उन्होंने राजा भरत को जय-विजय शब्दों द्वारा वर्धापित किया एवं बोले - देवानुप्रिय! आपने यावत् भरत क्षेत्र को विजय किया है। हम आपके विजित प्रदेश में हैं, आपके आज्ञानुवर्ती सेवक हैं। देवानुप्रिय! हमारे उपहार स्वीकार करें यावत् यों कहकर विनमि ने स्त्रीरत्न तथा नमि ने रत्नमय आभरण आदि भेंट किए। राजा ने उपहार स्वीकार किए यावत् उन्हें विदा किया। तत्पश्चात् पौषधशाला से निकलकर स्नानागार में प्रविष्ट हुआ। .....फिर भोजन मंडप में आया यावत् नमि-विनमि नामक विद्याधर राजाओं को जीतने के उपलक्ष में अष्टदिवसीय महोत्सव संपन्न किया।

तदनंतर वह दिव्य चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकला यावत् उत्तरपूर्व-ईशान कोण में गंगादेवी के भवन की ओर प्रयाण हेतु अभिमुख हुआ। यहाँ आगे का सारा वर्णन सिंधु देवी की वक्तव्यता के अनुरूप है यावत् अन्तर इतना है - गंगादेवी ने राजा भरत को उपहार में विभिन्न प्रकार के रत्नों से युक्त एक हजार आठ कलश तथा स्वर्ण एवं विभिन्न मणियों से रचित स्वर्णमय सिंहासन भेंट किए यावत् अष्टाह्निक महोत्सव आयोजित करने तक शेष वर्णन पूर्व की तरह है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खंडप्रपात पर विजय

(८१)

तए णं से दिव्वे चक्करयणे गंगाए देवीए अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जाव गंगाए महाणईए पच्चत्थिमिल्लेणं कूलेणं दाहिणदिसिं खंडप्पवायगुहाभिमुहे पयाए यावि होत्था, तए णं से भरहे राया जाव जेणेव खंडप्पवायगुहा तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सव्वा कयमालगवत्तव्वया णेयव्वा णवरं णट्टमालगे देवे पीइदाणं से आलंकारियभंडं कडगाणि य सेसं सव्वं तहेव जाव अट्ठाहिया महामहिमा०।

तए णं से भरहे राया णट्टमालगस्स देवस्स अट्ठाहियाए म० णिव्वत्ताए समाणीए सुसेणं सेणावइं सद्दावेइ २ त्ता जाव सिंधुगमो णेयव्वो जाव गंगाए महाणईए पुरत्थिमिल्लं णिक्खुडं सगंगासागरगिरिमेरागं समविसमणिक्खुडाणि य ओअवेइ २ त्ता अग्गाणि वराणि रयणाणि पडिच्छइ २ त्ता जेणेव गंगा महाणई तेणेव उवागच्छइ २ त्ता दोच्चंपि सक्खंधावारबले गंगामहाणइं विमलजलतुंगवीइं णावाभूएणं चम्मरयणेणं उत्तरइ २ त्ता जेणेव भरहस्स रण्णो विजयखंधावारणिवेसे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ २ त्ता अग्गाइं वराइं रयणाइं गहाय जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छइ २ त्ता करयलपरिग्गहियं जाव अंजलिं कट्टु भरहं रायं जएणं विजएणं वद्धावेइ २ त्ता अग्गाइं वराइं रयणाइं उवणेइ। तए णं से भरहे राया सुसेणस्स सेणावइस्स अग्गाइं वराइं रयणाइं पडिच्छइ २ त्ता सुसेणं सेणावइं सक्कारेइ सम्माणेइ सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता पडिविसज्जेइ।

तए णं से सुसेणे सेणावई भरहस्स रण्णो सेसंपि तहेव जाव विहरइ, तए णं से भरहे राया अण्णया कयाइ सुसेणं सेणावइरयणं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - गच्छ णं भो देवाणुप्पिया! खंडगप्पवायगुहाए उत्तरिल्लस्स दुवारस्स कवाडे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विहाडेहि २ त्ता जहा तिमिसगुहाए तहा भाणियव्वं जाव पियं मे भवउ सेसं तहेव जाव भरहो उत्तरिल्लेणं दुवारेणं अईइ ससिव्व मेहंधयारणिवहं तहेव पविसंतो मंडलाइं आलिहइ, तीसे णं खंडगप्पवायगुहाए बहुमज्झदेसभाए जाव उम्मग्गणि-मग्गजलाओ णामं दुवे महाणईओ तहेव णवरं पच्चत्थिमिल्लाओ कडगाओ पवूढाओ समाणीओ पुरत्थिमेणं गंगं महाणइं समप्पेंति, सेसं तहेव णवरं पच्चत्थिमिल्लेणं कूलेणं गंगाए संकमवत्तव्वया तहेवत्ति, तए णं खंडगप्पवायगुहाए दाहिणिल्लस्स दुवारस्स कवाडा सयमेव महया २ कोंचारवं करेमाणा सरसरस्स सगाइं ठाणाइं पच्चोसक्कित्था, तए णं से भरहे राया चक्करयणदेसियमग्गे जाव खंडगप्पवाय-गुहाओ दक्खिणिल्लेणं दारेणं णीणेइ ससिव्व मेहंधयारणिवहाओ।

शब्दार्थ - पवूढाओ - निकलती हुई, **समप्पेंति** - समर्पित हो जाती हैं, मिल जाती हैं।

भावार्थ - गंगादेवी को सिद्ध कर लेने के उपलक्ष में समायोजित अष्ट दिवसीय महोत्सव के समापन पर वह दिव्य चक्ररत्न आयुधशाला से प्रतिनिष्क्रांत हुआ यावत् उसने गंगामहानदी के पश्चिमी तट पर दक्षिणी दिशा में विद्यमान खंडप्रपात गुफा की ओर प्रयाण किया। तब राजा भरत ने उसका अनुगमन किया यावत् वह खंडप्रपात गुफा पर पहुँचा।

यहाँ तमिस्राधिपति कृतमालक देव के वर्णन के समान वृत्तांत योजनीय है। अन्तर इतना है- खंडप्रपात गुफा के अधिष्ठायक देव नृतमालक देव ने प्रीतिदान के रूप में राजा भरत को अलंकार पूर्ण पात्र, कड़े आदि भेंट किए। बाकी का वर्णन यावत् अष्टाह्निक महोत्सव आयोजित करने पर्यन्त पूर्ववत् है।

फिर नृतमालक देव को विजित करने के उपलक्ष में आयोजित आठ दिनों के महोत्सव के सम्पन्न हो जाने पर राजा भरत ने सेनापति सुषेण को बुलाया यावत् यहाँ सिंधुदेवी के संदर्भ में आया वर्णन योजनीय है यावत् सेनापति सुषेण ने गंगा महानदी के पूर्व दिग्वर्ती कोण प्रदेश को, जो गंगा महानदी, समुद्र, वैताढ्य पर्वत एवं चुल्लहिमवान पर्वत से मर्यादित, उबड़-खाबड़ निष्कुटों से युक्त था, अधिकृत किया तथा श्रेष्ठ, उत्तम रत्न उपहार के रूप में प्राप्त किए। वैसा कर सेनापति सुषेण गंगा महानदी के निकट आया। निर्मल जल की ऊँची उछलती तरंगों से युक्त गंगा महानदी को नौकारूप में परिणत चर्मरत्न द्वारा सैन्य सहित पुनः पार किया। ऐसा कर जहाँ राजा भरत का सैन्य पड़ाव था वहाँ स्थित बाह्य सभा भवन के समीप आया। आभिषेक्य हस्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्न से नीचे उतरा। सेनापति सुषेण उपहार में प्राप्त उत्तम, श्रेष्ठ रत्न लेकर राजा भरत के समक्ष उपस्थित हुआ। दोनों हाथ जोड़े हुए यावत् अंजलिबद्ध होकर राजा को जय-विजय से वर्धापित किया, उपहार रूप में प्राप्त उत्तम, श्रेष्ठ रत्न उपहृत किए। राजा ने सेनापति सुषेण से उन्हें स्वीकार किया। राजा ने उसका सत्कार-सम्मान कर उसे विदा किया। आगे का वर्णन सांसारिक सुखोपभोग में निरत रहने पर्यन्त पूर्ववत् है।

तत्पश्चात् राजा भरत ने किसी एक दिन सेनापति रत्न को आहूत किया और कहा- देवानुप्रिय! जाओ, खंडप्रपात गुहा के उत्तरीद्वार का कपाटोद्घाटन करो। आगे का वर्णन तमिस्रा गुहा की ज्यों यहाँ योजनीय है यावत् आपका प्रिय हो, पर्यन्त ऐसा ही वर्णन है, फिर आगे यावत् राजा भरत उत्तरवर्ती द्वार के पास गया। बादलों के समूह से जनित अंधकार को चीर कर निकलते हुए चंद्र की ज्यों राजा गुफा में प्रविष्ट हुआ, मंडलों का आलेखन किया। उस खंडप्रपात गुफा के ठीक मध्य स्थान में यावत् उन्मग्नजला तथा निमग्नजला दो महानदियाँ निकलती हैं से आगे का वर्णन पूर्ववत् है। केवल इतनी विशेषता है कि ये नदियाँ खंडप्रपात गुफा के पश्चिमी भाग से निकलती है तथा आगे चलकर पूर्व दिशा में गंगा महानदी में मिल जाती हैं। अवशिष्ट वर्णन पूर्व की तरह है। केवल इतनी विशेषता है - पुल का निर्माण गंगा के पश्चिमी तट पर हुआ।

तदनंतर खंडप्रपात गुफा के दक्षिणी द्वार के कपाट क्रौंच पक्षी की तरह जोर से आवाज करते हुए सरसराहट के साथ स्वयं ही अपने स्थान से सरक गए। चक्ररत्न द्वारा दिखलाए गए मार्ग पर चलता हुआ राजा यावत् मेघसमूह जनित अंधकार को चीरकर निकलते हुए चंद्रमा की तरह (राजा) खंडप्रपात गुफा के दक्षिणी द्वार से निकला।

(८२)

तए णं से भरहे राया गंगाए महाणईए पच्चत्थिमिल्ले कूले दुवालसजोयणायामं णवजोयणविच्छिण्णं जाव विजयक्खंधावारणिवेसं करेइ, अवसिट्ठं तं चेव जाव णिहिरयणाणं अट्ठमभत्तं पगिण्हइ, तए णं से भरहे राया पोसहसालाए जाव णिहिरयणे मणसि करेमाणे करेमाणे चिट्ठइ, तस्स य अपरिमियरत्तरयणा धुयमक्खयमव्वया सदेवा लोकोपचयंकरा उवगया णव णिहिओ लोगविस्सुयजसा, तंजहा -

णेसप्पे १ पंडुयए २ पिंगलए ३ सव्वरयण ४ महपउमे।
काले ६ य महाकाले ७ माणवगे महाणिही ८ संखे ६।।१।।
णेसप्पंमि णिवेसा, गामागरणगर-पट्टणाणं च।
दोणमुहमडंबाणं खंधावारावणगिहाणं।।१।।
गणियस्स य उप्पत्ती, माणुम्माणस्स जं पमाणं च।
धण्णस्स य बीयाण, य उप्पत्ती पंडुए भणिया।।२।।
सव्वा आभरणविही, पुरिसाणं जा य होइ महिलाणं।
आसाण य हत्थीण य, पिंगलगणिहिंमि सा भणिया।।३।।
रयणाइं सव्वरयणे, चउदसवि वराइं चक्कवट्टिस्स।
उप्पज्जंते एगिंदियाइं पंचिंदियाइं च।।४।।
वत्थाण य उप्पत्ती, णिप्फत्ती चेव सव्वभत्तीणं।
रंगाण य धोव्वाण य, सव्वाएसा महापउमे।।५।।
काले कालण्णाणं, सव्वपुराणं च तिसुवि वंसेसु।
सिप्पसयं कम्माणि य तिण्णि पयाए हियकराणि।।६।।
लोहस्स य उप्पत्ती, होई महाकालि आगराणं च।
रुप्पस्स सुवण्णस्स य, मणिमुत्तसिलप्पवालाणं।।७।।
जोहाण य उप्पत्ती, आवरणाणं च पहरणाणं च।
सव्वा य जुद्धणीई, माणवगे दंडणीई य।।८।।
णट्टविही णाडगविही, कव्वस्स य चउव्विहस्स उप्पत्ती।
संखे महाणिहिंमि, तुडियंगाणं च सव्वेसिं।।६।।
चक्कट्ठपइट्ठाणा, अट्ठुस्सेहा य णव य विक्खंभा।
बारसदीहा मंजूससंठिया जण्हवीइ मुहे।।१०।।
वेरुलियमणिकवाडा, कणगमया विविहरयणपडिपुण्णा।
ससिसूर-चक्कलक्खण, अणुसमवयणोववत्ती या।।११।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पलिओवमट्ठिईया, णिहिसरिणामा य तत्थ खलु देवा।
जेसिं ते आवासा, अक्किज्जा आहिवच्चा य।।१२।।
एए णव णिहिरयणा पभूयधणरयणसंचयसमिद्धा।
जे वसमुवगच्छंति, भरहाहिवचक्कवट्टीणं।।१३।।

तए णं से भरहे राया अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, एवं मज्जणघरपवेसो जाव सेणिप्पसेणिसद्दावणया जाव णिहिरयणाणं अट्ठाहियं महामहिमं करेइ, तए णं से भरहे राया णिहिरयणाणं अट्ठाहियाए महामहिमाए णिव्वत्ताए समाणीए सुसेणं सेणावइरयणं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - गच्छ णं भो देवाणुप्पिया! गंगामहाणईए पुरत्थिमिल्लं णिक्खुडं दुच्चंपि सगंगासागर-गिरिमेरागं समविसमणिक्खुडाणि य ओअवेहि २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहित्ति।

तए णं से सुसेणे तं चेव पुव्ववण्णियं भाणियव्वं जाव ओअवित्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणइ.....पडिविसज्जेइ जाव भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ। तए णं से दिव्वे चक्करयणे अण्णया कयाइ आउहघरसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता अंतलिक्ख-पडिवण्णे जक्खसहस्ससंपरिवुडे दिव्वतुडिय जाव आपूरेंते चेव० विजयक्खंधावार-णिवेसं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ० दाहिणपच्चत्थिमं दिसिं विणीयं रायहाणिं अभिमुहे पयाए यावि होत्था।

तए णं से भरहे राया जाव पासइ २ त्ता हट्ठतुट्ठ जाव कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कं जाव पच्चप्पिणंति।।

शब्दार्थ - **णिहिरयणाणं** - निधिरत्नों के, **अपरिमिय** - अपरिमित, **अक्खय** - अक्षय-क्षयरहित, **लोकोपचयकंरा** - लोक में अभिवृद्धि देने वाली, **णिवेस** - स्थापन-समुत्पादन, **जण्हवीइ** - जाह्नवी-गंगा, **वयण** - वदन, **अक्किज्जा** - अक्रयणीय, **आहिवच्चा** - आधिपत्य।

भावार्थ - तदनंतर राजा भरत ने गंगा महानदी के पश्चिमी किनारे पर बारह योजन लंबी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं नौ योजन चौड़ी, उत्तम नगर सदृश छावनी लगाई। अवशिष्ट वर्णन पूर्ववत् है यावत् फिर राजा ने नवनिधियों को उद्दिष्ट कर तेले की तपस्या अंगीकार की। तदनंतर राजा भरत पौषधशाला में यावत् नौ निधियों का मन में चिंतन करता हुआ स्थित रहा। नौ निधियाँ अपने अधिष्ठायक देवताओं के साथ राजा भरत के समक्ष उपस्थित हुई। वे अपने अपरिमित लाल रत्नों सहित, निश्चय ही क्षय रहित, नाश रहित, लोक में उन्नतिप्रद एवं लोकविश्रुत थी। उनका वर्णन इस प्रकार है -

गाथाएँ - १. नैसर्प २. पाण्डुक ३. पिंगलक ४. सर्वरत्न ५. महापद्म ६. काल ७. महाकाल ८. माणवक ६. शंख - ये नौ निधियाँ थीं॥१॥

१. नैसर्प निधि - गांव, आकर, नगर, पट्टन, द्रोणमुख, मडंब, स्कंधावार, आपण, गृह–इनको स्थापित या उत्पन्न करने की विशेषता लिए होती है॥१॥

२. पाण्डुक निधि - गिने जाने, मापे जाने, तोले जाने योग्य पदार्थों तथा धान्यों के उत्पादन में समर्थ होती है॥२॥

३. पिंगलक निधि - पुरुषों, स्त्रियों, अश्वों तथा हाथियों के सभी प्रकार के आभरणों-अलंकारों को उत्पन्न करने की विशेषता लिए होती है॥३॥

४. सर्वरत्न निधि - चक्रवर्ती के चतुर्दश श्रेष्ठ रत्नों को यह उत्पन्न करती है, जो एकेन्द्रिय एवं पंचेन्द्रिय होते हैं।

चक्ररत्न, दण्डरत्न, असिरत्न, छत्ररत्न चर्मरत्न, मणिरत्न तथा काकणी रत्न ये एकेन्द्रिय तथा सेनापतिरत्न, गाथापतिरत्न, वर्धकिरत्न, पुरोहित रत्न, अश्वरत्न, हस्तिरत्न तथा स्त्रीरत्न - ये पंचेन्द्रिय हैं॥४॥

५. महापद्म निधि सब प्रकार के वस्त्रों को उत्पन्न-निष्पन्न करने, रंजित एवं प्रक्षालित करने का वैशिष्ट्य लिए होती है॥५॥

६. काल निधि - समस्त ज्योतिषशास्त्र के ज्ञान, तीर्थंकर, चक्रवर्ती एवं बलदेव-वासुदेव इन तीनों प्राचीन वंशों, सौ प्रकार के शिल्पकर्मों के उत्तम, मध्यम एवं अधम कोटि के कर्मज्ञान का सामर्थ्य लिए होती है॥६॥

७. महाकाल निधि में विभिन्न प्रकार के लौह-ताँबा पीतल आदि धातुएँ, चाँदी, सोना, मणि, मुक्ता, स्फटिक तथा मूंगे आदि बहुमूल्य खनिज पदार्थ उत्पन्न करने की क्षमता होती है॥७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८. माणवक निधि - योद्धा और कवच आदि आवरण, शस्त्रास्त्र, युद्धनीति, दण्डनीति के उद्‌भव की विशेषता लिए होती है॥८॥

९. शंखनिधि - सब प्रकार के नृत्य, नाटक, चतुर्विध काव्य - गद्य, पद्य, गेय एवं चौर्ण-निपात एवं अव्यय बहुल रचनायुक्त काव्यों तथा सब प्रकार के वाद्यों को उत्पन्न करने की क्षमता लिए होती है॥९॥

इनमें से प्रत्येक निधि आठ-आठ चक्रों पर अवस्थित होती है। इनकी ऊँचाई आठ-आठ योजन, चौड़ाई नौ-नौ योजन तथा लंबाई बारह-बारह योजन परिमित होती है। इनका आकार मंजूषा-पेटिका के सदृश होता है। गंगा जहाँ समुद्र में मिलती है, वहाँ इनका आवास स्थान है। इनके कपाट नीलम रत्नमय होते हैं। वे स्वर्णघटित, विविधरत्न परिपूर्ण होती हैं। उन पर चंद्रमा, सूरज एवं चक्र की आकृति के चिह्न होते हैं. उनकी वदन रचना अपने-अपने स्वरूप के अनुसार होती है॥१०,११॥

निधियों के नामों के समान अधिष्ठातृ देवों की स्थिति एक पल्योपम होती है। इनके आवास अक्रयणीय-अत्यंत मूल्यवान होने के कारण न खरीदे जा सकने योग्य तथा स्वामित्व वर्जित होते हैं - दूसरा इनका स्वामी नहीं बन सकता॥१२॥

विपुल धनरत्न संचययुक्त ये नौ निधियाँ, भरत क्षेत्र के छहों खण्डों के विजेता चक्रवर्ती राजाओं के वंशगत होती है॥१३॥

राजा भरत तेले की तपस्या पूर्ण हो जाने पर पौषधशाला से प्रतिनिष्क्रांत होकर स्नानागार में प्रविष्ट हुआ यावत् श्रेणी-प्रश्रेणी जनों को बुलाया यावत् निधिरत्नों को सिद्ध करने के उपलक्ष में अष्टदिवसीय महोत्सव आयोजित करवाया।

अष्टाह्निक महोत्सव के परिसंपन्न हो जाने पर राजा भरत ने अपने सेनापति सुषेण को बुलाया और कहा - देवानुप्रिय! गंगामहानदी के पूर्व में विद्यमान, भरत क्षेत्र के कोणवर्ती प्रदेश को, जो गंगा महानदी, समुद्र तथा वैताढ्य पर्वत से मर्यादित, परिसीमित है तथा वहाँ के अवान्तर क्षेत्रीय उबड़-खाबड़ कोणवर्ती प्रदेशों को अधिकृत करो। वैसा कर मुझे सूचित करो। सेनापति सुषेण ने उन पर अधिकार किया। यहाँ का समस्त वर्णन पूर्व वर्णन के अनुसार कथनीय है यावत् राजा को उन पर अधिकार होने की सूचना दी। राजा ने सत्कृत-सम्मानित कर विदा किया यावत् वह भोगोपभोग में अभिरत होता हुआ सुखपूर्वक रहने लगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तदनंतर किसी एक दिन वह दिव्य चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकला। वह एक सहस्र यक्षों से घिरा हुआ दिव्य वाद्य ध्वनि के बीच अंतरिक्ष में स्थित हुआ यावत् ध्वनि निनाद से आकाश को भरता हुआ, सैन्य शिविर के बीचों बीच चला। राजा भरत ने यावत् उसे देखा तो वह हर्षित एवं परितुष्ट हुआ यावत् उसने अपने कौटुंबिक पुरुषों को बुलाया और कहा - देवानुप्रियो! आभिषेक्य हस्तिरत्न को तैयार करो यावत् मेरे आज्ञानुसार कार्य सम्पन्न होने की सूचना दो। कौटुंबिक पुरुषों ने ऐसा कर राजा को सूचित किया।

राजधानी में प्रत्यावर्तन

(८३)

तए णं से भरहे राया अज्जियरज्जो णिज्जियसत्तू उप्पण्णसमत्तरयणे चक्करयणप्पहाणे णवणिहिवई समिद्धकोसे बत्तीसरायवरसहस्साणुयायमग्गे सट्ठीए वरिससहस्सेहिं केवलकप्पं भरहं वासं ओअवेइ २ त्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कं हत्थिरयणं हयगयरह तहेव जाव अंजणगिरिकूडसण्णिभं गयवइं णरवई दुरूढे।

तए णं तस्स भरहस्स रण्णो आभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरूढस्स समाणस्स इमे अट्ठट्ठमंगलगा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तंजहा - सोत्थिय-सिरिवच्छ जाव दप्पणे, तयणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगार दिव्वा य छत्तपडागा जाव संपट्ठिया, तयणंतरं च णं वेरुलियभिसंतविमलदंडं जाव अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं, तयणंतरं च णं सत्त एगिंदियरयणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तंजहा - चक्करयणे १ छत्तरयणे २ चम्मरयणे ३ दंडरयणे ४ असिरयणे ५ मणिरयणे ६ कागणिरयणे ७, तयणंतरं च णं णव महाणिहिओ पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तंजहा - णेसप्पे पंडुयए जाव संखे, तयणंतरं च णं सोलस देवसहस्सा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयणंतरं च णं बत्तीसं रायवरसहस्सा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयणंतरं च णं सेणावइरयणे पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिए, एवं गाहावइरयणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढइरयणे पुरोहियरयणे, तयणंतरं च णं इत्थिरयणे पुरओ अहाणुपुव्वीए०, तयणंतरं च णं बत्तीसं उडुकल्लाणिया सहस्सा पुरओ अहाणुपुव्वीए०, तयणंतरं च णं बत्तीसं जणवयकल्लाणिया सहस्सा पुरओ अहाणुपुव्वीए०, तयणंतरं च णं बत्तीसं बत्तीसइबद्धा णाडगसहस्सा पुरओ अहाणुपुव्वीए०, तयणंतरं च णं तिण्णि सट्ठा सूयसया पुरओ अहाणुपुव्वीए०, तयणंतरं च णं अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ पुरओ०, तयणंतरं च णं चउरासीइं आससयसहस्सा पुरओ०, तयणंतरं च णं चउरासीइं हत्थिसयसहस्सा पुरओ अहाणुपुव्वीए०, तयणंतरं च णं चउरासीइं रहसयसहस्सा पुरओ अहाणुपुव्वीए०, तयणंतरं च णं छण्णउई मणुस्सकोडीओ पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयणंतरं च णं बहवे राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभिइओ पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयणंतरं च णं बहवे असिग्गाहा लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा चावग्गाहा चामरग्गाहा पासग्गाहा फलगग्गाहा परसुग्गाहा पोत्थयग्गाहा वीणग्गाहा कूयग्गाहा हडप्फग्गाहा दीवियग्गाहा सएहिं सएहिं रूवेहिं, एवं वेसेहिं चिंधेहिं णिओएहिं सएहिं २ वत्थेहिं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयणंतरं च णं बहवे दंडिणो मुंडिणो सिहंडिणो जडिणो पिच्छिणो हासकारगा खेड्डकारगा दवकारगा चाडुकारगा कंदप्पिया कुक्कुइया मोहरिया गायंता य दीवंता य (वायंता) णच्चंता य हसंता य रमंता य कीलंता य सासेंता य सावेंता य जावेंता य रावेंता य सोभेंता य सोभावेंता य आलोयंता य जयजयसद्दं च पउंजमाणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, एवं उववाइयगमेणं जाव तस्स रण्णो पुरओ महआसा आसधरा उभओ पासिं णागा णागधरा पिट्ठओ रहा रहसंगेल्ली अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया।

तए णं से भरहाहिवे णरिंदे हारोत्थयसुकयरइयवच्छे जाव अमरवइसण्णिभाए इड्ढीए पहियकित्ती चक्करयणदेसियमग्गे अणेगरायवरसहस्साणुयायमग्गे जाव समुद्दरवभूयं पिव करेमाणे सव्विड्ढीए सव्वजुईए जाव णिग्घोसणाइयरवेणं गामागरणगरखेडकब्बडमडंब जाव जोयणंतरियाहिं वसहीहिं वसमाणे २ जेणेव

विणीया रायहाणी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता विणीयाए रायहाणीए अदूरसामंते दुवालसजोयणायामं णवजोयण-विच्छिण्णं जाव खंधावार-णिवेसं करेइ २ त्ता वड्डइरयणं सद्दावेइ २ त्ता जाव पोसहसालं अणुपविसइ २ त्ता विणीयाए रायहाणीए अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता जाव अट्ठमभत्तं पडिजागरमाणे २ विहरइ।

तए णं से भरहे राया अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता तहेव जाव अंजणगिरि-कूडसण्णिभं गयवइं णरवई दुरूढे तं चेव सव्वं जहा हेट्ठा णवरं णव महाणिहिओ चत्तारि सेणाओ ण पविसंति सेसो सो चेव गमो जाव णिग्घोसणाइएणं विणीयाए रायहाणीए मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे जेणेव भवणवरवडिंसगपडिदुवारे तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो विणीयं रायहाणिं मज्झंमज्झेणं अणुपविसमाणस्स अप्पेगइया देवा विणीयं रायहाणिं सब्भंतरबाहिरियं आसिय-सम्मज्जिओवलित्तं करेंति, अप्पेगइया० मंचाइमंचकलियं करेंति, एवं सेसेसुवि पएसु, अप्पेगइया० णाणाविहरागवसणुस्सियधयपडागामंडियभूमियं० अप्पेगइया० लाउल्लोइयमहियं करेंति, अप्पेगइया जाव गंधवट्टिभूयं करेंति, अप्पेगइया० हिरण्णवासं वासिंति० सुवण्णरयणवइरआभरणवासं वासेंति, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो विणीयं रायहाणिं मज्झंमज्झेणं अणुपविसमाणस्स सिंघाडग जाव महापहपहेसु बहवे अत्थत्थिया कामत्थिया भोगत्थिया लाभत्थिया इड्ढिसिया किब्बिसिया कारोडिया कारवाहिया संखिया चक्किया णंगलिया मुहमंगलिया पूसमाणया वद्धमाणया लंखमंखमाइया ताहिं ओरालाहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं सिवाहिं धण्णाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरीयाहिं हिययगमणिज्जाहिं हिययपल्हायणिज्जाहिं वग्गूहिं अणवरयं अभिणंदंता य अभिथुणंता य एवं वयासी-जय जय णंदा! जय जय भद्दा! भद्दं ते अजियं जिणाहि जियं पालयाहि जियमज्झे वसाहि इंदो विव देवाणं चंदो विव ताराणं चमरो विव असुराणं धरणो विव

णागाणं बहूइं पुव्वसयसहस्साइं बहुईओ पुव्वकोडिओ बहुईओ पुव्वकोडाकोडीओ विणीयाए रायहाणीए चुल्लहिमवंत-गिरिसागरमेरागस्स य केवलकप्पस्स भरहस्स वासस्स गामागर-णगर-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-सण्णिवेसेसु सम्मं पयापाल-णोवज्जियलद्धजसे महया जाव आहेवच्चं पोरेवच्चं जाव विहराहित्तिकट्टु जयजयसद्दं पउंजंति, तए णं से भरहे राया णयणमालासहस्सेहिं पिच्छिज्जमाणे २ वयणमाला-सहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे २ हिययमालासहस्सेहिं उण्णंदिज्जमाणे २ मणोरहमाला-सहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे २ कंतिरूवसोहग्गगुणेहिं पिच्छिज्जमाणे २ अंगुलिमाला-सहस्सेहिं दाइज्जमाणे २ दाहिणहत्थेणं बहूणं णरणारीसहस्साणं अंजलिमाला-सहस्साइं पडिच्छेमाणे २ भवणपंतीसहस्साइं समइच्छमाणे २ तंतीतलतुडियगीय-वाइयरवेणं महुरेणं मणहरेणं मंजुमंजुणा घोसेणं पडिबुज्झमाणे २ जेणेव सए गिहे जेणेव सए भवणवरवडिंसयदुवारे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता आभिसेक्कं हत्थिरयणं ठवेइ २ त्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ २ त्ता सोलस देवसहस्से सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता बत्तीसं रायसहस्से सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता सेणावइरयणं सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता एवं गाहावइरयणं वड्ढइरयणं पुरोहिय-रयणं सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता तिण्णि सट्ठे सूयसए सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता अट्ठारस्स सेणिप्पसेणीओ सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता अण्णेवि बहवे राईसर जाव सत्थवाहप्पभिइओ सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता पडिविसज्जेइ, इत्थीरयणेणं बत्तीसाए उडुकल्लाणियासहस्सेहिं बत्तीसाए जणवयकल्लाणियासहस्सेहिं बत्तीसाए बत्तीसइबद्धेहिं णाडयसहस्सेहिं सद्धिं संपरिवुडे भवणवरवडिंसगं अईइ जहा कुबेरोव्व देवराया केलाससिहरिसिंगभूयंति, तए णं से भरहे राया मित्तणाइ-णियग-सयण-संबंधि-परियणं पच्चुवेक्खइ २ त्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता जाव मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव भोयणमंडवे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए अट्ठमभत्तं पारेइ २ त्ता उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसइबद्धेहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णाडएहिं उवलालिज्जमाणे २ उवणच्चिज्जमाणे २ उवगिज्जमाणे २ महया जाव भुंजमाणे विहरइ॥

शब्दार्थ - **अज्जिय** - अर्जित, **सूय** - पाचक-रसोइए (सूद), **हडक्क** - मुद्रा पात्र या तांबूल पत्र, **सिंहडिणो** - शिखंडी-शिखाधारी, **कुक्कुइया** - कौत्कुचिक-भांड आदि भौंडी चेष्टाएँ करने वाले, **सावेंता** - सिखलाते हुए, **पउंजमाणा** - प्रयुक्त करते हुए, **संगेल्ली** - समुदाय, **आसिय** - छिड़कना, **ओवलियं** - लेपन करना, **अत्थत्थिया** - अर्थार्थी-धन चाहने वाले, **वग्गूहिं** - वाणी से, **आहेवच्चं** - आधिपत्य, **पोरेवच्चं**- पुरोगामिता-नेतृत्व, **पिच्छिज्जमाणे**- दर्शन कर रहे थे, **विच्छिप्पमाणे** - व्यक्त कर रहे थे, **समइच्छमाणे** - देखता हुआ, **पडिबुज्झमाणे** - आनंद लेता हुआ, **पच्चुवेक्खइ** - पूछो।

भावार्थ - राजा भरत ने इस प्रकार राज्य अर्जित किया। शत्रुओं को निर्जित-विजित किया। उसके यहाँ समस्त रत्न प्रादुर्भत हुए, जिनमें चक्ररत्न प्रमुख था। राजा भरत को नौ निधियों की प्राप्ति हुई। उसका कोश धन-धान्य से समृद्ध था। बत्तीस सहस्र राजा उसके अनुगामी थे। उसमें साठ हजार वर्षों में समस्त भरत क्षेत्र को स्वाधिकृत किया। तत्पश्चात् राजा भरत ने कौटुंबिक पुरुषों को आहूत किया और आदेश दिया - देवानुप्रियो! शीघ्र ही प्रमुख हस्तिरत्न को तैयार करो। अश्व, रथ, गज एवं पदाति युक्त चतुरंगिणी सेना को सुसज्ज करो यावत् अंजनगिरि की चोटी के समान उन्नत हस्तिराज पर वह सवार हुआ। राजा के हस्तिरत्न पर आरूढ हो जाने पर स्वस्तिक, श्रीवत्स यावत् दर्पण ये आठ-आठ मंगल प्रतीक यथानुक्रम से उसके आगे-आगे चले।

तत्पश्चात् जल से भरे हुए मंगल कलश, झारी, दिव्य छत्र, पताका यावत् इन सबको लिए हुए राजपुरुष चले। इसके बाद नीलम की प्रभा से चमचमाता उज्ज्वल दंडयुक्त छत्र यावत् लिए राजपुरुष यथानुक्रम चले। तत्पश्चात् सात एकेन्द्रिय रत्न- चक्र, छत्र, चर्म, दंड, असि, मसि तथा काकणि रत्न क्रमानुसार चले। इनके अनंतर नैसर्प, पांडुक यावत् शंख - ये नौ महानिधियाँ चली। इनके पीछे सोलह हजार देव, बत्तीस हजार उत्तम नृपतिगण, सेनापतिरत्न, गाथापतिरत्न, वर्द्धकिरत्न, पुरोहितरत्न तथा स्त्रीरत्न, बत्तीस हजार ऋतु कल्याणिकाएँ - ऋतु के प्रतिकूल स्पर्श युक्त कन्याएँ, बत्तीस सहस्र जनपद कल्याणिकाएँ - अग्रगण्य - ये सब यथानुक्रम से चले।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इनके पीछे बत्तीस-बत्तीस हजार अभिनय प्रकारों से संयुक्त नाटक मण्डलियाँ, तीन सौ साठ रसोइए, अठारह श्रेणि-प्रश्रेणिजन, चौरासी लाख अश्व, चौरासी लाख गज, चौरासी लाख रथ, छियानवे करोड़ मनुष्य चले।

तत्पश्चात् अनेक मांडलिक राजा, प्रभावशाली पुरुष यावत् सार्थवाह आदि यथानुक्रम चले। इनके बाद तलवार, यष्टिका, भाले तथा धनुष - इनको धारण करने वाले पुरुष, चँवर, पाश, फलक-काष्ठ पट्ट, परशु-कुल्हाड़े, पुस्तक, वीणा, कुप्य (तरल पदार्थ डालने के पात्र), हड़प्फ तथा दीपिका-मशाल - इनको धारण करने वाले पुरुष अपने-अपने कार्यों के अनुरूप वेश, चिह्न, कपड़े आदि धारण किए हुए क्रमशः चले।

इनके पश्चात् दंडी - दण्डधारी, मुंडी - मुंडे हुए सिर वाले, शिखाधारी, जटाधारी, मयूरपिच्छिधारी, हंसी करने वाले–विदूषक, खेड्डकारक–धूत निष्णात, द्रवकारक - क्रीड़ा करने वाले-मदारी, चाटुकारक - खुशामदी, कांदर्पिक - कामुक या श्रृंगार पूर्ण चेष्टाएँ करने वाले, भांड आदि, मोखरिक - मुखर, वाचाल - ये सभी गाते हुए, तालियाँ देते हुए, नाचते हुए, हंसते हुए, रमण करते हुए, क्रीड़ा करते हुए, दूसरों को शोभित करते हुए, राजा भरत की ओर देखते हुए, जय-जय शब्दों द्वारा उनका जयनाद करते हुए यथाक्रम से चले।

यह प्रसंग विस्तार से औपपातिक सूत्र से ग्राह्य है यावत् उस राजा के आगे-आगे बड़े-बड़े कद्दावर घोड़े, अश्वारोही तथा दोनों ओर हाथी और हाथियों पर सवार पुरुष चल रहे थे। उसके पीछे रथ समुदाय यथाविधि चल रहे थे।

भरताधिपति राजा भरत, जिसका वक्षस्थल हारों से सुशोभित एवं प्रीतिकर था यावत् समृद्धि एवं कीर्ति देवराज इन्द्र के तुल्य थी, चक्ररत्न द्वारा निर्देशित मार्ग का अनुसरण करता हुआ, सहस्रों श्रेष्ठ राजाओं द्वारा अनुगत यावत् समुद्र के गर्जन की तरह गंभीर सिंहनाद करता हुआ, सब प्रकार की ऋद्धि एवं वैभव से युक्त यावत् ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, मडंब को पार करता हुआ यावत् एक-एक योजन पर पड़ाव डालता हुआ, रुकता हुआ विनीता राजधानी पहुँचा।

राजा ने राजधानी से न अधिक दूर, न अधिक निकट बारह योजन लंबा, नौ योजन चौड़ा यावत् सैन्य शिविर स्थापित किया। फिर वर्द्धकिरत्न को बुलाया यावत् पौषधशाला में प्रविष्ट हुआ एवं विनीता राजधानी को उद्दिष्ट कर तेले की तपस्या स्वीकार की यावत् जागरूक भाव से इसके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पालन में तत्पर रहा। तेले की तपस्या के पूर्ण हो जाने पर राजा भरत पौषधशाला से प्रतिनिष्क्रांत हुआ। कौटुंबिक पुरुषों को बुलाया तथा शिखर के समान उत्तम गजपति पर आरूढ हुआ।

यहाँ से आगे का वर्णन विनीता राजधानी से विजय अभियान हेतु जाने के वर्णन सदृश है। केवल इतना अंतर है - विनीता राजधानी में प्रवेश करने के समय नौ महानिधियाँ तथा चार सेनाएँ राजधानी में प्रविष्ट नहीं हुई। इनके अतिरिक्त बाकी का वर्णन पूर्ववत् है यावत् राजा भरत ने गंभीर निर्घोष-तुमुल वाद्य ध्वनि के साथ विनीता राजधानी के बीचोंबीच चलते हुए जहाँ अपना पैतृक आवास स्थान था, सर्वोत्कृष्ट प्रासाद का बाहरी द्वार था, उस ओर गमन करने का निश्चय किया। जब राजा भरत विनीता राजधानी के मध्य-भाग से होता हुआ निकल रहा था, उस समय कतिपय देव विनीता राजधानी के बाह्य और आभ्यंतर भाग में जल का छिड़काव कर रहे थे, गोमय आदि का लेप कर रहे थे तथा मंचातिमंचों की रचना कर रहे थे, इसी प्रकार कई देव तरह-तरह के रंगों के कपड़ों से बनी, ऊँची ध्वजाओं एवं पताकाओं से नगर को सजा रहे थे। कुछेक देव दीवारों को लीप रहे थे, पोत रहे थे यावत् अनेक उत्कृष्ट, सुगंधित द्रव्यों द्वारा वातावरण को सुरभिमय बना रहे थे, जिससे धूम के गोल-गोल छल्ले बन रहे थे। कई चाँदी की वर्षा, कतिपय देव स्वर्ण, रत्न, हीरों और आभूषणों की वर्षा कर रहे थे।

जब राजा भरत विनीता राजधानी के बीचोंबीच से निकल रहा था तब नगरी के सिंघाटक-सिंघाड़े की ज्यों तिकाने यावत् बड़े-बड़े राजमार्गों पर अर्थ चाहने वाले, कामार्थी-सुख या सुंदर काम भोगों के अभिलाषी, भोग के आकांक्षी, लाभार्थी, ऋद्धि चाहने वाले, किल्विषक-भांड आदि, कारोडिक-कापालिक-हाथ में खप्पर रखने वाले, करबाधित-राज्य के कर आदि से कष्ट पाने वाले, शांखिक-शंखवादक, चाक्रिक-चक्रधारी, लांगलिक-हलधारी, मुखमांगलिक-मुख से मंगलमय वचन बोलने वाले, पुष्यमानव-भाट, चारण आदि स्तुति गायक, वर्द्धमानक-दूसरों के कंधों पर स्थित पुरुष, लंख-बांस के सिरे पर चढ़कर खेल दिखाने वाले, मंख-चित्रयुक्त पट दिखलाकर आजीविका चलाने वाले - ये सब उदार, प्रिय, कमनीय, प्रीतिकर, मनोज्ञ, चित्तप्रसादक, कल्याणमय, धन्य-श्लाघनीय, मंगल युक्त, शोभायुक्त, हृदयंगम, हृदयाह्लादक वाणी से एवं मंगलोपेत शब्दों द्वारा राजा का निरंतर अभिनंदन, अभिस्तवन करते हुए इस प्रकार बोले - हे राजन्! आप सर्वदा जयशील हों। आपका श्रेयस् हो। अब तक जिनको नहीं जीता है, उन पर आप विजय प्राप्त करें। देवों में इन्द्र, तारों में चन्द्र, असुरों में चमरेन्द्र, नागों में धरणेन्द्र की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्यों लाखों, करोड़ों कोड़ाकोड़ी पूर्वों तक उत्तर दिशा में चुल्लहिमवान् पर्वत तथा अन्य तीन दिशाओं में मर्यादित संपूर्ण भरत क्षेत्र के ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, मडंब, द्रोणमुख, पत्तन, आश्रम, सन्निवेश इन सब में निवास करने वाले प्रजाजनों का भलीभांति पालन कर यशस्वी बनते हुए, इनका आधिपत्य, नेतृत्व यावत् इनका निर्वाह करते हुए सुखपूर्वक राज्य भोग करें। यों कहकर उन्होंने जय-जय शब्दों को प्रयुक्त किया।

तब राजा भरत का हजारों स्त्री-पुरुष अपने नेत्रों से पुनः-पुनः दर्शन कर रहे थे, वचनों द्वारा पुनः-पुनः संस्तवन कर रहे थे, हृदय से बार-बार अभिनंदन कर रहे थे, अपने मनोरथों को व्यक्त कर रहे थे, उसकी कांति, रूप एवं सौभाग्य आदि गुणों के कारण बार-बार उनको प्राप्त करने की इच्छा कर रहे थे। हजारों अंगुलियों-हाथों द्वारा हजारों नर-नारी राजा को प्रणाम कर रहे थे। अपना दाहिना हाथ ऊँचा उठाकर बार-बार स्वीकार करता हुआ, हजारों भवनों की पंक्तियों को देखता हुआ, वीणा, ढोल, तुरही की मधुर, मनोहर, सुंदर ध्वनि में तन्मय होता हुआ, आनन्द लेता हुआ, अपने सुंदर प्रासाद के द्वार के पास आभिषेक्य हस्ति रत्न को रोका और नीचे उतरा तथा सोलह हजार देवों, बत्तीस हजार राजाओं, सेनापतिरत्न, गाथापतिरत्न, वर्द्धकिरत्न तथा तीन सौ साठ पाचकों, अठारह श्रेणी-प्रश्रेणीजनों का एवं अन्य बहुत से मांडलिक राजाओं यावत् सार्थवाहों आदि का सत्कार-सम्मान किया। इन सबको सत्कृत, सम्मानित कर विदा किया। सुभद्रा नामक स्त्रीरत्न, बत्तीस हजार ऋतुकल्याणिकाओं, बत्तीस हजार जनपद कल्याणिकाओं, बत्तीस बत्तीस नाट्यविधिक्रमों से संबद्ध बत्तीस हजार नाटक मंडलियों से घिरा हुआ राजा, जिस प्रकार कुबेर कैलाश पर्वत के शिखर पर अपने आवास में जाता है, उसी प्रकार (राजा) अपने उत्कृष्ट भवन में गया।

राजा भरत ने अपने मित्रों, निजक—माता-पिता आदि पारिवारिकों, संबंधियों से कुशलक्षेम पूछा। वैसा कर वह स्नानागार में गया यावत् स्नानागार से बाहर निकला तथा भोजन मंडप में आकर सुखासन पर स्थित हुआ। तेले की तपस्या का पारणा किया। तदुपरांत अपने ऊपर के प्रासाद में गया जहाँ मृदंग आदि बज रहे थे, बत्तीस प्रकार की नाट्य विधियों से निबद्ध नृत्य हो रहे थे, गान हो रहे थे। राजा उनका आनंद लेता हुआ यावत् मनुष्य भव संबंधी कामभोगों का सेवन करता हुआ, सुखपूर्वक रहने लगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजतिलक

(८४)

तए णं तस्स भरहस्स रण्णो अण्णया कयाइ रज्जधुरं चिंतेमाणस्स इमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था-अभिजिए णं मए णियगबलवीरिय-पुरिसक्कारपरक्कमेण चुल्लहिमवंतगिरिसागरमेराए केवलकप्पे भरहे वासे तं सेयं खलु मे अप्पाणं महया २ रायाभिसेएणं अभिसेएणं अभिसिंचावित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेइ २ त्ता कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मज्जणघरे जाव पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ, णिसीइत्ता सोलस देवसहस्से बत्तीसं रायवरसहस्से सेणावइरयणे जाव पुरोहियरयणे तिण्णि सट्ठे सूयसए अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ अण्णे य बहवे राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभियओ सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी- अभिजिए णं देवाणुप्पिया! मए णियगबलवीरिय जाव केवलकप्पे भरहे वासे तं तुब्भे णं देवाणुप्पिया! ममं महया रायाभिसेयं वियरह, तए णं ते सोलस देवसहस्सा जावप्पभिइओ भरहेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ० करयल० मत्थए अंजलिं कट्टु भरहस्स रण्णो एयमट्ठं सम्मं विणएणं पडिसुणेंति, तए णं से भरहे राया जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता जाव अट्ठमभत्तिए पडिजागरमाणे २ विहरइ।

तए णं से भरहे राया अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि आभिओगिए देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! विणीयाए रायहाणीए उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एगं महं अभिसेयमंडवं विउव्वेह २ त्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते आभिओगा देवा भरहेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव एवं सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता विणीयाए रायहाणीए उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति २ त्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणंति २ त्ता संखिज्जाइं जोयणाइं दंडं णिसिरंति, तंजहा- रयणाणं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रिट्ठाणं अहाबायरे पुग्गले परिसाडेंति २ त्ता अहासुहुमे पुग्गले परियादियंति २ त्ता दुच्चंपि वेउव्वियसमुग्घाएणं जाव समोहणंति २ त्ता बहुसम-रमणिज्जं भूमिभागं विउव्वंति से जहाणामए-आलिंगपुक्खरेइ वा०, तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगं अभिसेयमंडवं विउव्वंति अणेगखंभसयसण्णिविट्ठं जाव गंधवट्टिभूयं पेच्छाधरमंडववण्णगोत्ति, तस्स णं अभिसेयमंडवस्स बहुमज्झ-देसभाए एत्थ णं महं एगं अभिसेयपेढं विउव्वंति अच्छं सण्हं०, तस्स णं अभिसेयपेढस्स तिदिसिं तओ तिसोवाणपडिरूवए विउव्वंति, तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते जाव तोरणा, तस्स णं अभिसेयपेढस्स बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगं सीहासणं विउव्वंति, तस्स णं सीहासणस्स अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते जाव दामवण्णगं समत्तंति। तए णं ते देवा अभिसेयमंडवं विउव्वंति २ त्ता जेणेव भरहे राया जाव पच्चप्पिणंति।

तए णं से भरहे राया आभिओगाणं देवाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेह २ त्ता हयगय जाव सण्णाहेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से भरहे राया मज्जणघरं अणुपविसइ जाव अंजणगिरिकूडसण्णिभं गयवइं णरवई दुरूढे, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो आभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरूढस्स समाणस्स इमे अट्ठट्ठमंगलगा जो चेव गमो विणीयं पविसमाणस्स सो चेव णिक्खममाणस्सवि जाव अपडिबुज्झमाणे २ विणीयं रायहाणिं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ २ त्ता जेणेव विणीयाए रायहाणीए उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए अभिसेयमंडवे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अभिसेयमंडवदुवारे आभिसेक्कं हत्थिरयणं ठावेइ २ त्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ २ त्ता इत्थीरयणेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बत्तीसाए उडुकल्लाणियासहस्सेहिं बत्तीसाए जणवयकल्लाणियासहस्सेहिं बत्तीसाए बत्तीसइबद्धेहिं णाडगसहस्सेहिं सद्धिं संपरिवुडे अभिसेयमंडवं अणुपविसइ २ त्ता जेणेव अभिसेयपेढे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अभिसेयपेढं अणुप्पयाहिणीकरेमाणे २ पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं दुरूहइ २ त्ता जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे। तए णं तस्स भरहस्स रण्णो बत्तीसं रायसहस्सा जेणेव अभिसेयमण्डवे तेणेव उवागच्छंति २ त्ता अभिसेयमंडवं अणुपविसंति २ त्ता अभिसेयपेढं अणुप्पयाहिणी-करेमाणा २ उत्तरिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता करयल जाव अंजलिं कट्टु भरहं रायाणं जएणं विजएणं वद्धावेंति २ त्ता भरहस्स रण्णो णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणा जाव पज्जुवासंति, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो सेणावइरयणे जाव सत्थवाहप्पभिइओ तेऽवि तह चेव णवरं दाहिणिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं जाव पज्जुवासंति, तए णं से भरहे राया आभिओगे देव सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! ममं महत्थं महग्घं महरिहं महारायाभिसेयं उवट्ठवेह।

तए णं ते आभिओगिया देवा भरहेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठचित्त जाव उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति अवक्कमित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणंति, एवं जहा विजयस्स तहा इत्थंपि जाव पंडगवणे एगओ मिलायंति एगओ मिलाइत्ता जेणेव दाहिणड्ढभरहे वासे जेणेव विणीया रायहाणी तेणेव उवागच्छंति २ त्ता विणीयं रायहाणिं अणुप्पयाहिणीकरेमाणा २ जेणेव अभिसेयमंडवे जेणेव भरहे राया तेणेव उवागच्छंति २ त्ता तं महत्थं महग्घं महरिहं महारायाभिसेयं उवट्ठवेंति, तए णं तं भरहं रायाणं बत्तीसं रायसहस्सा सोभणंसि तिहि-करण-दिवस-णक्खत्त-मुहुत्तंसि उत्तरपोट्ठवयाविजयंसि तेहिं साभाविएहि य उत्तरवेउव्विएहि य वरकमलपइट्ठाणेहिं सुरभिवरवारिपडिपुण्णेहिं जाव महया महया रायाभिसेएणं अभिसिंचिंति, अभिसेओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जहा विजयस्स, अभिसिंचित्ता पत्तेयं २ जाव अंजलिं कट्टु ताहिं इट्ठाहिं जहा पविसंतस्स० भणिया जाव विहराहित्तिकट्टु जयजयसद्दं पउंजंति।

तए णं तं भरहं रायाणं सेणावइरयणे जाव पुरोहियरयणे तिण्णि य सट्ठा सूयसया अट्ठारस सेणिप्पसेणीओ अण्णे य बहवे जाव सत्थवाहप्पभिइओ एवं चेव अभिसिंचंति तेहिं वरकमलपइट्ठाणेहिं तहेव जाव अभिथुणंति य सोलस देवसहस्सा एवं चेव णवरं पम्हलसुकुमालाए जाव मउडं पिणद्धेंति, तयणंतरं च णं दद्दरमलयसुगंधिएहिं गंधेहिं गायाइं अब्भुक्खेंति दिव्वं च सुमणोदामं पिणद्धेंति, किं बहुणा? गंठिमवेढिम जाव विभूसियं करेंति।

तए णं भरहे राया महया २ रायाभिसेएणं अभिसिंचिए समाणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हत्थिखंधवरगया विणीयाए रायहाणीए सिंघाडगतिगचउक्कचच्चर जाव महापहपहेसु महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा २ उस्सुक्कं उक्करं उक्किट्ठं अदिज्जं अमिज्जं अभडप्पवेसं अदंडकुदंडिमं जाव सपुरजणजाणवयं दुवालससंवच्छरियं पमोयं घोसेह २ त्ता ममेयमाणत्तियं पच्चप्पिणहत्ति, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा भरहेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया पीइमणा० हरिसवसविसप्पमाणहियया विणएणं वयणं पडिसुर्णेति २ त्ता खिप्पामेव हत्थिखंधवरगया जाव घोसेंति २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

तए णं से भरहे राया महया २ रायाभिसेएणं अभिसित्ते समाणे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ २ त्ता इत्थिरयणेणं जाव णाडगसहस्सेहिं सद्धिं संपरिवुडे अभिसेयपेढाओ पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहइ २ त्ता अभिसेयमंडवाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव आभिसेक्के हत्थिरयणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अंजणगिरिकूडसण्णिभं गयवइं जाव दुरूढे, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो बत्तीसं रायसहस्सा अभिसेय-पेढाओ उत्तरिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहंति, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो सेणावइरयणे जाव सत्थवाहप्पभिइओ अभिसेयपेढाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दाहिणिल्लेणं तिसोवाण-पडिरूवएणं पच्चोरुहंति, तए णं तस्स भरहस्स रण्णो आभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरूढस्स समाणस्स इमे अट्ठट्ठमंगलगा पुरओ जाव संपट्ठिया, जोऽविय अइगच्छमाणस्स गमो पढमो कुबेरावसाणो सो चेव इहंपि कमो सक्कारजढो णेयव्वो जाव कुबेरोव्व देवराया केलासं सिहरिसिंगभूयंति। तए णं से भरहे राया मज्जणघरं अणुपविसइ २ त्ता जाव भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए अट्ठमभत्तं पारेइ २ त्ता भोयणमंडवाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता उप्पिंपासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं जाव भुंजमाणे विहरइ।

तए णं से भरहे राया दुवालससंवच्छरियंसि पमोयंसि णिव्वत्तंसि समाणंसि जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता जाव मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव बाहिरिया-उवट्ठाणसाला जाव सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ २ त्ता सोलस देवसहस्से सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता पडिविसज्जेइ २ त्ता बत्तीसं रायवरसहस्सा सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता० सेणावइरयणं सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता जाव पुरोहियरयणं सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता० एवं तिण्णि सट्ठे सूयारसए अट्ठारससेणिप्पसेणीओ सक्कारेइ सम्माणेइ, सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता अण्णे य बहवे राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभिइओ सक्कारेइ सम्माणेइ स० २ त्ता पडिविसज्जेइ २ त्ता उप्पिं पासायवरगए जाव विहरइ।

शब्दार्थ - **वियरय** - तैयारी करो, **परियादियंति** - ग्रहण किया, **सोवाण** - सोपान, **उत्तरपोट्ठवया** - उत्तरभाद्रपदा, **साभाविएहि** - स्वाभाविक, **पविसतस्य** - प्रवेश करते समय, **भणिया** - कहा, **पिणद्धेंति** - पहनाया।

भावार्थ - राजा भरत राज्य का उत्तरदायित्व संभाले हुए था, तब किसी एक दिन उसके मन में ऐसा विचार यावत् संकल्प उत्पन्न हुआ - मैंने अपनी शक्ति, शौर्य, पौरुष, पराक्रम को विजित किया है। इसलिए यह समुचित है कि मेरा महान् राज्याभिषेक समारोह किया जाए, जिसमें मेरा राजतिलक हो। दूसरे दिन प्रातःकाल रात्रि व्यतीत हो जाने पर यावत् सूर्य की किरणों के उद्दीप्त हो जाने पर राजा स्नानगृह में गया यावत् स्नान कर वहाँ से प्रतिनिष्क्रांत होकर बाह्य सभा में पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन हुआ। तदनंतर राजा ने सोलह हजार देवों, बत्तीस हजार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रेष्ठ राजाओं, सेनापति रत्न यावत् पुरोहित रत्न, तीन सौ आठ रसोइयों, अठारह श्रेणी-प्रश्रेणीजनों तथा दूसरे बहुत से मांडलिक राजाओं, ऐश्वर्यशाली पुरुषों, राज्य सम्मानित विशिष्टजनों यावत् सार्थवाह आदि को बुलाकर कहा—देवानुप्रियो! मैंने अपनी शक्ति, शौर्य द्वारा यावत् समस्त भरत क्षेत्र को विजित किया है। देवानुप्रियो! तुम मेरे महान् राज्याभिषेक की तैयारी करो।

राजा भरत द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर वे सोलह सहस्र देव यावत् सार्थवाह आदि हर्षित और परितुष्ट हुए दोनों हाथों को अंजलिबद्ध कर मस्तक पर घुमाते हुए राजा को प्रणाम किया एवं आदेश को नियमपूर्वक स्वीकार किया। तदनंतर राजा भरत पौषधशाला में आया यावत् तेले की तपस्या में प्रतिजागरित रहता हुआ तल्लीन रहा। तेले की तपस्या पूर्ण हो जाने पर आभियोगिक देवों को बुलाया और कहा-देवानुप्रियो! विनीता राजधानी के उत्तरपूर्व दिशाभाग-ईशान कोण में शीघ्र ही एक बड़े अभिषेक मण्डप की वैक्रियलब्धि द्वारा रचना करो। वैसा कर मुझे ज्ञापित करो। राजा भरत द्वारा यों कहने पर आभियोगिक देव बहुत ही हर्षित एवं परितुष्ट हुए यावत् स्वामी की जैसी आज्ञा—ऐसा कहकर उन्होंने राजा भरत का आदेश सविनय अंगीकार किया। फिर वे विनीता राजधानी के ईशान कोण में गए, वैक्रिय समुद्घात द्वारा अपने आत्मप्रदेशों को बाहर निष्क्रांत किया। उन्हें संख्यात योजन परिमित दण्ड रूप में परिणत किया। उन से यावत् रिष्ट रत्नों के सारहीन स्थूल पुद्गलों को छोड़ा तथा सारभूत सूक्ष्म पुद्गलों को गृहीत किया। पुनः वैक्रिय समुद्घात द्वारा अपने आत्म-प्रदेशों को बाहर निकाला यावत् मृदंग के उपरितन चर्मनद्ध भाग की ज्यों समतल, रमणीय भूमि भाग की विकुर्वणा की। उसके बीचों बीच एक विशाल अभिषेक मण्डप का निर्माण किया। यह अभिषेक मण्डप सैकड़ों स्तंभों पर समवस्थित था यावत् उससे सुगंधित धूप आदि पदार्थों के धूम मय छल्ले बन रहे थे। यहाँ प्रेक्षागृह विषयक वर्णन योजनीय है।

अभिषेक मंडप के ठीक मध्य भाग में एक विशाल पीठ चत्वर (चबूतरे) की विकुर्वणा की। वह अभिषेक पीठ रज रहित, चिकना मुलायम था। उसकी तीन दिशाओं में तीन-तीन सीढ़ियाँ बनाईं। उन तीन सोपानमार्गों यावत् तोरण का वर्णन पूर्ववत् कहा गया है। इस अभिषेक पीठ का भूमिभाग अत्यंत समतल एवं रमणीय था। उस भूमिभाग के मध्य उन्होंने बहुत बड़े सिंहासन की रचना की। सिंहासन से लेकर पुष्पमालाओं पर्यन्त वर्णन पहले जैसा है। वे देव इस प्रकार अभिषेक मण्डप का निर्माण कर राजा भरत के पास आए और आदेशानुरूप कार्य सम्पन्न होने की सूचना दी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आभियोगिक देवों से यह सुनकर राजा भरत प्रसन्न एवं संतुष्ट हुआ यावत् पौषधशाला से प्रतिनिष्क्रांत होकर कौटुंबिक पुरुषों को बुलाया और कहा - देवानुप्रियो! शीघ्र ही आभिषेक्य हस्तिरत्न को तैयार करो। वैसा कर अश्व, गज यावत् चतुरंगिणी सेना को सुसज्ज कर मुझे सूचना दो यावत् कौटुंबिक पुरुषों ने राजा को कार्य सम्पन्नता की सूचना दी।

फिर राजा भरत स्नानगृह में प्रविष्ट हुआ यावत् अंजनगिरि पर्वत के शिखर सदृश हाथी पर सवार हुआ। इसके उपरांत आठ-आठ मंगल प्रतीक राजा के आगे-आगे चले। जैसा वर्णन विनीता राजधानी में प्रवेश के समय आया है। वैसा ही यहाँ निष्क्रमण के समय योजनीय है यावत् वह वाद्यादि का आनंद लेता हुआ विनीता राजधानी के बीचोंबीच से निकला। फिर विनीता राजधानी के ईशानकोण में अभिषेक मंडप के पास आया। अभिषेक मण्डप के द्वार पर आभिषेक्य हस्तिरत्न को ठहराया और उससे नीचे उतरा तथा स्त्रीरत्न, बत्तीस सहस्र ऋतु कल्याणिकाओं, बत्तीस सहस्र जन पद कल्याणिकाओं बत्तीस-बत्तीस अभिनय क्रमोपक्रमों से निबद्ध बत्तीस सहस्र नाटक मण्डलियों से घिरा हुआ राजा भरत अभिषेक मण्डप में संप्रविष्ट हुआ। अभिषेक पीठ के पास आया, उसकी प्रदक्षिणा की और पूर्व दिशावर्ती त्रिसोपानमार्ग से होता हुआ, पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन हुआ। राजा भरत के पीछे-पीछे चलने वाले बत्तीस सहस्र राजा जहाँ अभिषेक मण्डप था, आए। वहाँ आकर उन्होंने मण्डप में प्रवेश किया। अभिषेक मण्डप की प्रदक्षिणा की। अभिषेक मंडप के उत्तरी त्रिसोपान मार्ग से राजा भरत के पास आए। हाथ जोड़कर अंजलि बद्ध होते हुए राजा भरत को जय-विजय शब्दों द्वारा वर्धापित किया तथा राजा भरत के न अधिक पास न अधिक दूर सुश्रूषा—राजा का वचन सुनने की इच्छा रखते हुए यावत् पर्युपासनारत होते हुए स्थित हुए।

इसके बाद सेनापतिरत्न यावत् सार्थवाह आदि समागत हुए। उनके आगमन का वर्णन पूर्ववत् है। केवल इतनी विशेषता है - वे दक्षिणदिशावर्ती त्रिसोपान मार्ग से अभिषेक पीठ पर आए यावत् राजा की सेवा में पर्युपासनारत हुए। तदनंतर राजा भरत ने आभियोगिक देवों को बुलाया और कहा - देवानुप्रियो! मेरे लिए महार्थ—स्वर्ण-मणि-रत्नमय, महार्घ—पूजा-प्रतिष्ठा सत्कारमय, महार्ह—महान् लोगों की प्रतिष्ठा के अनुरूप महाराज्याभिषेक की व्यवस्था करो। राजा भरत द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर आभियोगिक देव बहुत ही हर्षित एवं परितुष्ट हुए यावत् उत्तर पूर्व दिशा में गए एवं वैक्रिय समुद्घात द्वारा आत्मप्रदेशों को बाहर निकाला। जंबूद्वीप के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विजय द्वार के अधिष्ठाता विजय देव के वृत्तांत के अन्तर्गत जो वर्णन आया है, उसी प्रकार यहाँ कथनीय है यावत् वे देव पंडकवन में एकत्रित हुए-परस्पर मिले एवं दक्षिणार्द्ध भरत में स्थित विनीता राजधानी में उपस्थित हुए। राजधानी की प्रदक्षिणा करते हुए अभिषेक मंडप में राजा भरत के पास आए तथा महार्थ, महार्घ एवं महार्ह राज्याभिषेक के लिए वांछित समस्त सामग्री को वहाँ उपस्थित किया।

तदनंतर बत्तीस सहस्र राजाओं ने शुभ तिथि, करण, दिवस, नक्षत्र एवं मुहूर्त्त में, उत्तर भाद्रपदा नक्षत्र में विजयमुहूर्त्त में स्वाभाविक एवं उत्तर विक्रिया द्वारा निर्मित, उत्तम कमलों पर प्रतिष्ठापित, सुरभिमय उत्तमजल से भरे हुए यावत् राजा भरत का अत्यधिक समारोह पूर्वक अभिषेक किया। अभिषेक का पूरा वर्णन विजय देव के अभिषेक के समान है।

अभिषेक के पश्चात् प्रत्येक राजा ने यावत् अंजलिबद्ध होकर प्रीतिमय वाणी द्वारा उसी प्रकार कहा, जिस प्रकार प्रवेश के समय कहा था यावत् आधिपत्य करते हुए सुखपूर्वक विहरणशील रहो, यों कहकर उन्होंने जय-जय शब्दों को प्रयुक्त किया।

तत्पश्चात् सेनापति रत्न यावत् पुरोहित रत्न तीन सौ साठ पाचक, अठारह श्रेणी-प्रश्रेणी जनों यावत् सार्थवाह आदि ने राजा भरत का उत्तम कमलपत्रों पर स्थापित कलशों से उसी प्रकार अभिषेक किया यावत् अभिसंस्तवन किया, जिस प्रकार सोलह हजार देवों ने किया। विशेषता यह है - उन्होंने रौएदार सुकोमल वस्त्र द्वारा राजा की देह को पोंछा और उनको मुकुट पहनाया। तदनंतर उन्होंने दर्दर एवं मलयगिरि की सुगंध सदृश गंध वाले चंदन के घोल को राजा के शरीर पर लगाया। दिव्य फूलों की मालाएं पहनाई। अधिक क्या कहा जाए? सूत्रादि से ग्रथित, वेष्टित-वस्तु विशेष पर लपेटी हुई यावत् इन विशिष्ट मालाओं द्वारा अलंकृत किया।

इस महान् राज्याभिषेक महोत्सव में अभिसिंचित हो जाने के उपरांत राजा भरत ने अपने कौटुंबिक पुरुषों—कार्य व्यवस्थापकों को बुलाया और कहा - देवानुप्रियो! तुम लोग हाथी पर आरूढ़ होकर विनीता राजधानी के सिंघाटकों, तिराहों, चौराहों, चौकों यावत् बड़े-बड़े राजमार्गों पर जोर-जोर से ऐसा उद्घोषित करो कि मेरे राज्याभिषेक के उपलक्ष में राज्य के निवासी द्वादश वर्ष पर्यन्त प्रमोदोत्सव—आनंदोत्सव मनाते रहें। इस बीच राज्य में खरीद-बिक्री पर कोई शुल्क नहीं लगेगा, संपत्ति आदि पर कर नहीं लिया जाएगा, ऋण आदि की वसूली का तकाजा नहीं किया जाएगा, आदान-प्रदान एवं नाप-जोख का क्रम बंद रखा जाएगा, राज्य कर्मचारी किसी के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

घर में प्रवेश नहीं करेंगे, अदण्ड-अपराध पर लिया जाने वाला जुर्माना नहीं लिया जायेगा तथा कुदंड-बड़े अपराध पर लिया जाने वाला वृहद द्रव्य अल्प रूप में भी नहीं लिया जायेगा यावत् इस प्रकार घोषणा कर मुझे सूचित करो। राजा भरत से यह सब सुनकर कौटुंबिक पुरुष बहुत ही हर्षित, परितुष्ट और चित्त में प्रसन्न हुए, हर्षोद्रेक से उल्लसित होते हुए उन्होंने विनय के साथ राजा के वचन को शिरोधार्य किया तथा शीघ्र ही यह सम्पन्न होने की सूचना दी।

इस महान् राज्याभिषेक के संपन्न हो जाने पर राजा सिंहासन से उठा एवं स्त्रीरत्न यावत् सहस्रों नाटक मंडलियों से घिरा हुआ, अभिषेक पीठ की पूर्ववर्ती तीन सीढ़ियों से नीचे उतरा तथा वहाँ से बाहर निकला, जहाँ अभिषेक्य हस्तिरत्न था वहाँ आया, अंजन पर्व के शिखर सदृश हस्तिरत्न पर यावत् सवार हुआ। इसके पश्चात् राजा भरत के अनुगामी बत्तीस हजार राजा अभिषेक पीठ के त्रिसोपानवर्ती उत्तरी मार्ग से नीचे उतरे। तदनंतर सेनापतिरत्न यावत् सार्थवाह प्रभृति अभिषेक पीठ के दक्षिणी त्रिसोपान मार्ग से नीचे उतरे।

आभिषेक्य हस्तिरत्न पर सवार राजा भरत के आगे आठ-आठ मंगल प्रतीक चले यावत् सभी रवाना हुए। विजयाभियान में राजा जिस प्रकार चला तद्विषयक पूर्व पाठ यहाँ ग्राह्य है। कुबेर के अपने आवास में प्रविष्ट होने तथा राजा द्वारा सबको सत्कृत करने तक का प्रसंग यहाँ उद्धरणीय है यावत् राजा ने अपने भवन में उसी प्रकार प्रवेश किया जिस प्रकार कुबेर कैलाश पर्वत पर स्थित अपने आवास में प्रविष्ट होता है।

इसके अनन्तर राजा भरत स्नानगृह में प्रविष्ट हुआ यावत् भोजन मंडप में सुखासनासीन होकर तेले की तपस्या का पारणा किया। भोजन मण्डप से राजा अपने प्रासाद के उपरितन श्रेष्ठ महल में गया, जहाँ बजाए जाते हुए मृदंगों के साथ बत्तीस नाट्य विधियों के सहित नृत्याभिनय हो रहे थे यावत् वहाँ सुखपूर्वक भोगोपभोग में निरत रहता हुआ स्थित रहा।

बारह वर्ष पश्चात् आनंदोत्सव के पूर्ण हो जाने पर राजा ने स्नानगृह में प्रविष्ट किया। स्नानगृह से बाहर निकल कर वह बाह्य उपस्थान शाला-सभा भवन में आया तथा पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन हुआ। तत्पश्चात् सोलह हजार देवों, बत्तीस हजार श्रेष्ठ राजाओं, सेनापति रत्न यावत् पुरोहित रत्न, तीन सौ साठ रसोइयों, अठारह श्रेणी प्रश्रेणी के लोगों तथा अन्य बहुत से राजन्यवृंद, ऐश्वर्यशाली पुरुष, राज्यसम्मानित विशिष्टजनों यावत् सार्थवाह आदि-इन सभी को सत्कृत-सम्मानित किया एवं उत्तम प्रासाद के ऊपर बने श्रेष्ठ महल में यावत् सुखपूर्वक भोगोपभोग निरत रहता हुआ रहने लगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नों एवं निधियों के उत्पत्ति स्थान

(८५)

भरहस्स रण्णो चक्करयणे १ दंडरयणे २ असिरयणे ३ छत्तरयणे ४ एए णं चत्तारि एगिंदियरयणा आउहघरसालाए समुप्पण्णा, चम्मरयणे १ मणिरयणे २ कागणिरयणे ३ णव य महाणिहिओ एए णं सिरिघरंसि समुप्पण्णा, सेणावइरयणे १ गाहावइरयणे २ वड्डइरयणे ३ पुरोहियरयणे ४ एए णं चत्तारि मणुयरयणा विणीयाए रायहाणीए समुप्पण्णा, आसरयणे १ हत्थिरयणे २ एए णं दुवे पंचिंदियरयणा वेयड्ढ गिरिपायमूले समुप्पण्णा, सुभद्दा इत्थीरयणे उत्तरिल्लाए विज्जाहरसेढीए समुप्पण्णे।

शब्दार्थ - सिरिघरंसि - भाण्डागार, समुप्पण्णे - समुत्पन्न हुए।

भावार्थ - राजा भरत के शस्त्रागार में चक्ररत्न, दण्डरत्न, असिरत्न तथा छत्ररत्न - ये चार एकेन्द्रिय रत्न उत्पन्न हुए। चर्मरत्न, मणिरत्न, काकणी रत्न तथा नौ महानिधियाँ ये श्रीगृह (भाण्डागार) में उत्पन्न हुए।

सेनापति रत्न, गाथापति रत्न, वर्द्धकि रत्न तथा पुरोहित रत्न ये चार मनुष्य रत्न विनीता राजधानी में उत्पन्न हुए।

दो पंचेन्द्रिय रत्न - अश्वरत्न तथा हस्तिरत्न, वैताढ्य पर्वत की तलहटी में उत्पन्न हुए। उत्तर विद्याधर श्रेणी में सुभद्रा नामक स्त्रीरत्न उत्पन्न हुआ।

विपुल ऐश्वर्य एवं सुखोपभोगमय विशाल राज्य

(८६)

तए णं से भरहे राया चउदसण्हं रयणाणं णवण्हं महाणिहीणं सोलसण्हं देवसाहस्सीणं बत्तीसाए रायसहस्साणं बत्तीसाए उडुकल्लाणियासहस्साणं बत्तीसाए जणवयकल्लाणियासहस्साणं बत्तीसाए बत्तीसइबद्धाणं णाडगसहस्साणं तिण्हं सट्ठीणं सूयारसयाणं अट्ठारसण्हं सेणिप्पसेणीणं चउरासीईए आससयसहस्साणं चउरासीईए दंतिसयसहस्साणं चउरासीईए रहसयसहस्साणं छण्णउईए मणुस्स-कोडीणं बावत्तरीए पुरवरसहस्साणं बत्तीसाए जणवयसहस्साणं छण्णउईए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गामकोडीणं णवणउईए दोणमुहसहस्साणं अडयालीसाए पट्टणसहस्साणं चउव्वीसाए कब्बडसहस्साणं चउव्वीसाए मडंबसहस्साणं वीसाए आगरसहस्साणं सोलसण्हं खेडसहस्साणं चउदसण्हं संवाहसहस्साणं छप्पण्णाए अंतरोदगाणं एगूणपण्णाए कुरज्जाणं विणीयाए रायहाणीए चुल्लहिमवंतगिरिसागरमेरागस्स केवलकप्पस्स भरहस्स वासस्स अण्णेसिं च बहूणं राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभिईणं आहेवच्चं पोरेवच्चं भट्टित्तं सामित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे ओहयणिहएसु कंटएसु उद्धियमलिएसु सव्वसत्तुसु णिज्जिएसु, भरहाहिवे णरिंदे वरचंदणचच्चियंगे वरहाररइयवच्छे वरमउडविसिट्ठए वरवत्थ-भूसणधरे सव्वोउय-सुरहि-कुसुमवरमल्लसोभियसिरे वरणाडगणाडइज्जवरइत्थिगुम्मसद्धिं संपरिवुडे सव्वोसहि-सव्वरयण-सव्वसमिइ-समग्गे संपुण्णमणोरहे हयामित्तमाणमहणे पुव्वकयतवप्पभाव-णिविट्ठ-संचियफले भुंजइ माणुस्सए सुहे भरहे णामधेज्जेत्ति।

शब्दार्थ - **दंति** - हाथी, **अंतरोदगाणं** - जल के अन्तर्वर्ती निवास स्थान, **कुरज्जाणं** - कुत्सित राज्यों, भील आदि आदिवासी प्रदेशों, **भट्टित्तं** - प्रभुत्व, **आणाइसर** - आज्ञेश्वर, **ओहयणिहएसु** - अवहेलना करने योग्य, **कंटएसु** - गोत्रज शत्रु।

भावार्थ - तत्पश्चात् राजा भरत चौदह रत्नों, नौ महानिधियों, सोलह सहस्र देवताओं, बत्तीस सहस्र राजाओं, बतीस सहस्र ऋतु कल्याणिकाओं, बत्तीस सहस्र जनपद कल्याणिकाओं, बत्तीस-बत्तीस नाट्याभिनयों से सज्जित बत्तीस हजार नाटक मण्डलियों, तीन सौ साठ पाचकों, अठारह श्रेणी-प्रश्रेणी जनों, चौरासी लाख घोड़ों, चौरासी लाख हाथियों, चौरासी लाख रथों, छियानवें करोड़ मनुष्यों, बहत्तर हजार उत्तम नगरों, बत्तीस हजार जनपदों, छियानवें करोड़ गांवों, निन्यानवें हजार द्रोणमुखों, अड़तालीस हजार पत्तनों, चौबीस हजार कर्बटों, चौबीस हजार मंडबों, बीस हजार आकरों, सोलह हजार खेटों, चौदह हजार संबाधों, छप्पन अन्तरोदकों, उनपचास कुराज्यों, विनीता राजधानी, एक तरफ चुल्लहिमवान् पर्वत एवं तीन ओर से समुद्र से घिरे हुए सम्पूर्ण भरत क्षेत्र का, अन्य बहुत से माण्डलिक राजा ऐश्वर्यशाली पुरुषों, राज्य सम्मानित विशिष्टजनों यावत् सार्थवाह आदि - इन सभी का आधिपत्य, नेतृत्व, प्रभुत्व, स्वामित्व एवं महत्तरत्व-अधिनायकत्व करता हुआ, आज्ञेश्वर—आज्ञा देने का सामर्थ्य रखते हुए, सेनापतित्व का भाव धारण किए हुए, सभी का सम्यक् पालन करते हुए राज्य करता रहा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजा भरत ने अपने समस्त अवहेलनीय सगोत्रीय शत्रुओं का उच्छेद कर डाला, उन्हें मसल डाला, विजित कर डाला।

श्रेष्ठ चंदन चर्चितांग वक्ष स्थल पर हारों से सुशोभित, प्रीतिकर, उत्तम मुकुट सहित, उत्तम वस्त्र एवं आभूषणधारी, समस्त ऋतुओं में विकासमान पुष्पों की सुशोभन मालाओं से विभूषित मस्तक युक्त, उत्तम नाट्य प्रस्तुत करती हुई सुंदर नृत्यांगनाओं से घिरा हुआ, समस्त औषधि, सर्वरत्न, समस्त राजोचित उपकरण, सम्पूर्ण सिद्ध मनोरथ युक्त-आप्तकाम, शत्रुमान मर्दक, पूर्व जन्म में आचरित तपश्चरण के सुनिश्चित परिणाम-युक्त चक्रवर्ती राजा भरत मनुष्य जीवन के सुखों को भोगता रहा।

सर्वज्ञत्व का प्राकट्य

(८७)

तए णं से भरहे राया अण्णया कयाइ जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता जाव ससिव्व पियदंसणे णरवई मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव आयंसघरे जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ २ त्ता आयंसघरंसि अत्ताणं देहमाणे २ चिट्ठइ।

तए णं तस्स भरहस्स रण्णो सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं विसुज्झमाणीहिं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स तयावरणिज्जाणं कम्माणं खएणं कम्मरय-विकिरणकरं अपुव्वकरणं पविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे णिव्वाघाए णिरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवलवरणाणदंसणे समुप्पण्णे, तए णं से भरहे केवली सयमेवाभरणा-लंकारं ओमुयइ २ त्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ २ त्ता आयंसघराओ पडिणिक्खमइ २ त्ता अंतेउरमज्झं-मज्झेणं णिग्गच्छइ २ त्ता दसहिं रायवरसहस्सेहिं सद्धिं संपरिवुडे विणीयं रायहाणिं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ २ त्ता मज्झदेसे सुहंसुहेणं विहरइ २ त्ता जेणेव अट्ठावए पव्वए तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अट्ठावयं पव्वयं सणियं २ दुरूहइ २ त्ता मेघघण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सण्णिगासं देवसण्णिवायं पुढविसिलापट्टयं पडिलेहेइ २ त्ता संलेहणाझूसणाझूसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालं अणवकंखमाणे विहरइ।

तए णं से भरहे केवली सत्तत्तरिं पुव्वसयसहस्साइं कुमार-वासमज्झे वसित्ता एगं वाससहस्सं मंडलियरायमज्झे वसित्ता छ पुव्वसयसहस्साइं वाससहस्सूणगाइं महारायमज्झे वसित्ता तेसीइपुव्वसयसहस्साइं अगारवासमज्झे वसित्ता, एगं पुव्वसयसहस्सं देसूणगं केवलिपरियायं पाउणित्ता तमेव बहुपडिपुण्णं सामण्णपरियायं पाउणित्ता चउरासीइपुव्वसयसहस्साइं सव्वाउयं पाउणित्ता मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं सवणेणं णक्खत्तेणं जोगमुवागएणं खीणे वेयणिज्जे आउए णामे गोए कालगए वीइक्कंते समुज्जाए छिण्णजाइजरामरणबंधणे सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिणिव्वुडे अंतगडे सव्वदुक्खप्पहीणे।

॥ इइ भरहचक्किचरियं समत्तं॥

शब्दार्थ - **झूसणा झूसिए** - शरीर एवं कषाय को क्षीण बनाते हुए, **अणवकंखमाणे** - अनाकांक्षा युक्त, **देसूणगं** - कुछ कम, **अज्झवसाणेहिं** - अध्यवसायों से।

भावार्थ - अन्य किसी दिन राजा भरत स्नानागार में प्रविष्ट हुआ यावत् चन्द्रमा की तरह प्रिय दिखलाई देते हुए वहाँ से बाहर निकला। यहाँ से आदर्श गृह-शीश महल में गया एवं पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन हुआ। सिंहासन पर बैठा हुआ राजा शीश महल में देहमान के अनुरूप दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब को बार-बार देखता रहा।

तदनंतर शुभ होते परिणामों, प्रशस्त अध्यवसायों, विशुद्ध होती हुई लेश्याओं, ईहा, अपोह, मार्गण, गवेषण के परिणाम स्वरूप आगे बढ़ते हुए चिंतन-विमर्श के फलस्वरूप कर्मावरणों के क्षय से, कर्मरज के खिर जाने से अपूर्वकरण में प्रविष्ट राजा भरत को अनंत, अनुत्तर, बाधा रहित, आवरण रहित, सम्पूर्ण, प्रतिपूर्ण केवल ज्ञान, केवल दर्शन समुत्पन्न हुए।

भरत केवली ने स्वयमेव अपने आभरण एवं अलंकार उतारे एवं स्वयं ही पंचमुष्टिक लोच किया। लोच करने के बाद राजा भरत आदर्श महल से बाहर निकला, अंतःपुर के बीचों-बीच होता हुआ राजभवन से प्रतिनिष्क्रांत हुआ। श्रेष्ठ दस हजार राजाओं से घिरा हुआ केवली भरत विनीता राजधानी के ठीक मध्य से निकला। ये सभी मध्य देश में सुखपूर्वक विहार करते हुए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अष्टापद पर्वत पर पहुँचे। अष्टापद पर्वत पर धीरे-धीरे चढ़े, सघन बादलों के सदृश श्याम तथा देवों के आवागमन से युक्त पृथ्वी शिलापट्टक का प्रतिलेखन किया, उसे स्वच्छ, परिमार्जित किया। वहाँ संलेखना – शरीर कषाय क्षयकारी तपोविशेष अंगीकार किया, आहार पानी का परित्याग किया। पादोपगत – पेड़ की कटी हुई डाली की ज्यों शरीर को सर्वथा निष्प्रकंप रखते हुए जीवन और मृत्यु की आकांक्षा से सर्वथा अतीत रहते हुए आत्माभिरत रहे।

केवली भरत सत्तत्तर लाख वर्ष पर्यन्त कौमार्यावस्था में राजकुमार के रूप में रहे। एक सहस्र वर्ष पर्यन्त मांडलिक राजा के रूप में रहे। एक सहस्त्र वर्ष कम छह लाख पूर्व तक महाराजा - चक्रवर्ती सम्राट के रूप में रहे। वे कुल तिरासी लाख पूर्व पर्यन्त गृहस्थ जीवन में रहे। कुछ कम एक लाख पूर्व तक वे सर्वज्ञावस्था - केवली रूप में रहे। एक लाख पूर्व तक उन्होंने समस्त श्रमण जीवन का पालन किया। उनका समग्र आयुष्य चौरासी लाख पूर्व का था। उन्होंने एक मास के चौविहार-अनशन द्वारा वेदनीय, आयुष्य, नाम तथा गोत्र इन चार अघाति कर्मों का क्षय हो जाने पर, श्रवण नक्षत्र से जब चन्द्रमा का योग था, शरीर का त्याग किया। जन्म, वृद्धावस्था तथा मरण के बंधन को छिन्न कर वे सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत-परिनिर्वाण प्राप्त, अन्तकृत–आवागमन रूप सर्वदुःखों के नाशक हुए।

भरत चक्रवर्ती का चरित्र-वृत्तांत यहाँ समाप्त हुआ।

विवेचन - भरत के जीवन का जो चित्रण यहाँ हुआ है, वह सांसारिक सुखों के भोगोपभोग की पराकाष्ठा का उत्कृष्टतम रूप लिए हुए है। इतने योगों में अभिरत रहने वाले पुरुष के जीवन में मुहूर्त्त मात्र में, एकाएक इतना परिवर्तन आ जाए, यह कैसे संभव है? ऐसा प्रश्न जन साधारण के मन में सहसा उपस्थित होता है। किन्तु यहाँ जैन दर्शन में निरूपित आत्मा के परम पराक्रम, शक्ति, ऊर्जा, तेज और बलमय स्वरूप की दृष्टि से विचार करने पर सहज ही इसका समाधान प्राप्त हो जाता है। ज्योंही आत्मा की सुषुप्त शक्ति जागृत हो उठती है, आसक्ति, ममता और मोह के बंधन तड़ातड़ टूटने लगते हैं। पूर्वों तक के दीर्घ काल में न सध पाने वाले कार्य क्षणों में सिद्ध हो जाता है। वहाँ गणित द्वारा स्वीकृत क्रमबद्ध विकास का सिद्धान्त लागू नहीं होता। आत्मतेज की प्रोज्ज्वलता जब तीव्रतम अवस्था में परिणत हो जाती है तो आत्मेतर जड़, पुद्गलों के पर्वत के पर्वत क्षण मात्र में ढह जाते हैं धूलिसात हो जाते हैं। यही सम्राट भरत के साथ घटित हुआ। भोगों के सुख का वह पूर्वो तक अनुभव कर चुका था। किन्तु ज्यों ही अध्यात्म सुख के अनिर्वचनीय आस्वाद को वह अनुभूत करने लगा, सभी भोग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सहज ही छूट गए क्योंकि भोगमय जीवन तो वैभाविक है, आत्म-स्वभाव के उद्बुद्ध होने पर विभाव अपने आप मिट जाता है, भरत जिस प्रकार सांसारिक जीवन के परम पराक्रमी और महाविजेता था उसी प्रकार उसने मुहूर्त्त भर में जीवन के क्रम को सर्वथा परिवर्तित कर यह कर दिखाया कि आध्यात्मिक बल में भी वह किसी प्रकार कम नहीं है।

नोट - जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र के इस तृतीय वक्षस्कार में भरत चक्रवर्ती का विस्तृत वर्णन किया गया है जिसमें उनके स्नान, मंजन, वस्त्रादि परिधान, दिग्विजय तथा शीशमहल में केवलज्ञान प्राप्त करने आदि का तो कथन है किन्तु मंदिर के लिए एक शब्द भी नहीं है और कहीं पर भी भरत राजा के द्वारा अष्टापद तीर्थ पर ऋषभ आदि की चिताओं पर मंदिर बनाने का उल्लेख नहीं आया है। अतः कथा ग्रन्थों की यह बात विश्वसनीय नहीं है।

भरत क्षेत्र का नामकरण

(८८)

भरहे य इत्थ देवे महिड्ढिए महज्जुईए जाव पलिओवमट्ठिईए परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-भरहे वासे २ इति।

अदुत्तरं च णं गोयमा! भरहस्स वासस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते, जं ण कयाइ ण आसि ण कयाइ णत्थि ण कयाइ ण भविस्सइ भुविं च भवइ य भविस्सइ य धुवे णियए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे भरहे वासे।

॥ तइओ वक्खारो समत्तो॥

भावार्थ - यहाँ भरत में महान् समृद्धिशाली, उद्योतमय यावत् पल्योपम परिमित आयुष्य युक्त भरत नामक देव निवास करता है।

हे गौतम! इस कारण यह क्षेत्र भरत वर्ष या भरत क्षेत्र कहा जाता है। हे गौतम! एक अन्य हेतु भी है। भरतक्षेत्र शाश्वत नाम है। यह कभी नहीं था, कभी नहीं है तथा न कभी होगा—ये तीनों ही उस पर लागू नहीं है, क्योंकि यह ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय एवं नित्य है।

॥ तृतीय वक्षस्कार समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउत्थो वक्खारो - चतुर्थ वक्षस्कार

चुल्लहिमवान् पर्वत

(८९)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे चुल्लहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! हेमवयस्स वासस्स दाहिणेणं, भरहस्स वासस्स उत्तरेणं, पुरत्थिम-लवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे चुल्लहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिण-विच्छिण्णे दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे एगं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं पणवीसं जोयणाइं उव्वेहेणं एगं जोयणसहस्सं बावण्णं च जोयणाइं दुवालस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खंभेणंति।

तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं पंच जोयणसहस्साइं तिण्णि य पण्णासे जोयणसए पण्णरस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणं, तस्स जीवा उत्तरेणं पाईण-पडीणायया जाव पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा चउव्वीसं जोयणसहस्साइं णव य बत्तीसे जोयणसए अद्धभागं च किंचिविसेसूणा आयामेणं पण्णत्ता, तीसे धणुपट्ठे दाहिणेणं पणवीसं जोयणसहस्साइं दोण्णि य तीसे जोयणसए चत्तारि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं पण्णत्ते, रुयगसंठाणसंठिए सव्वकणगामए अच्छे सण्हे तहेव जाव पडिरूवे, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते दुण्हवि पमाणं वण्णगोत्ति।

चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए-आलिंगपुक्खरेइ वा जाव बहवे वाणमंतरा देवा य देवीओ य आसयंति जाव विहरंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत कहां बतलाया गया है?

उत्तर - हे गौतम! जम्बूद्वीप के अंतर्गत चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत हैमवत क्षेत्र के दक्षिण में, भरत क्षेत्र के उत्तर में, पूर्ववर्ती लवण समुद्र के पश्चिम में तथा पश्चिमवर्ती लवण समुद्र के पूर्व में कहा गया है। यह पूर्व-पश्चिम में लम्बा तथा उत्तर दक्षिण में चौड़ा है। वह अपने पूर्वी किनारे से पूर्वी लवण समुद्र को तथा पश्चिमी किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र को संस्पर्श करता है अर्थात् इसके दोनों ओर लवण समुद्र है। इसकी ऊँचाई सौ योजन, गहराई पच्चीस योजन तथा चौड़ाई १०५२ $\frac{१२}{१९}$ योजन है।

इसकी बाहा पूर्व-पश्चिम ५३५० $\frac{१५\frac{१}{२}}{१९}$ योजन तथा उत्तरवर्ती जीवा पूर्व पश्चिम लम्बी है यावत् दोनों ओर लवण समुद्र को स्पर्श करते हुए २४९३२ योजन एवं आधे योजन से कुछ कम लम्बी है। इसका दक्षिणवर्ती धनुष्य पृष्ट २५२३० $\frac{४}{१९}$ योजन है। यह परिधि की अपेक्षा से है। यह रुचक संज्ञक आभूषण के संस्थान में संस्थित है, सर्व स्वर्णमय, उज्ज्वल, चिकना यावत् चित्ताकर्षक है। यह दोनों ओर दो पद्मवर वेदिकाओं एवं दो वनखण्डों से घिरा हुआ है। इनका प्रमाण विषयक वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है।

चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत के ऊपर बहुत समतल एवं सुंदर भूमिभाग बतलाया गया है। यह मुरज या ढोलक के उपरितन चर्मनद्ध के सदृश है यावत् बहुत से वाणव्यंतर देव एवं देवियाँ विश्राम करते हैं यावत् सुखपूर्वक विचरण करते हैं।

पद्मद्रह

(९०)

तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए इत्थ णं इक्के महं पउमद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे इक्कं जोयणसहस्सं आयामेणं पंच जोयणसयाइं विक्खंभेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं अच्छे सण्हे रययामयकूले जाव पासाईए जाव पडिरूवेत्ति।

से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते वेइया वणसंडवण्णओ भाणियव्वोत्ति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स णं पउमद्दहस्स चउद्दिसिं चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता, वण्णावासो भाणियव्वोत्ति। तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं पुरओ पत्तेयं २ तोरणा पण्णत्ता, ते णं तोरणा णाणामणिमया०।

तस्स णं पउमद्दस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थं महं एगे पउमे पण्णत्ते, जोयणं आयामविक्खंभेणं अद्धजोयणं बाहल्लेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं दो कोसे ऊसिए जलंताओ साइरेगाइं दसजोयणाइं सव्वग्गेणं पण्णत्ते, से णं एगाए जगईए सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते जंबुद्दीवजगइप्पमाणा गवक्खकडएवि तह चेव पमाणेणंति, तस्स णं पउमस्स अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा - वइरामया मूला रिट्ठामए कंदे वेरुलियामए णाले वेरुलियामया बाहिरपत्ता जंबूणयामया अब्भिंतरपत्ता तवणिज्जमया केसरा णाणामणिमया पोक्खरत्थिरुया कणगामई कण्णिया, सा णं० अद्धजोयणं आयामविक्खंभेणं कोसं बाहल्लेणं सव्वकणगामई अच्छा०।

तीसे णं कण्णियाए उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए-आलिंग०, तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे भवणे पण्णत्ते, कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खंभेणं देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे जाव पासाईए दरिसणिज्जे०, तस्स णं भवणस्स तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता, ते णं दारा पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं विक्खंभेणं तावइयं चेव पवेसेणं सेया वरकणगथूभियागा जाव वणमालाओ णेयव्वाओ।

तस्स णं भवणस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए-आलिंग०, तस्स णं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महई एगा मणिपेढिया पण्णत्ता, सा णं मणिपेढिया पंचधणुसयाइं आयामविक्खंभेणं, अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेणं सव्वमणिमई अच्छा०, तीसे णं मणिपेढियाए उप्पिं एत्थ णं महं एगे सयणिज्जे पण्णत्ते, सयणिज्जवण्णओ भाणियव्वो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से णं पउमे अण्णेणं अट्ठसएणं पउमाणं तदद्धुच्चत्तप्पमाणमित्ताणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, ते णं पउमा अद्धजोयणं आयामविक्खंभेणं कोसं बाहल्लेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं कोसं ऊसिया जलंताओ साइरेगाइं दसजोयणाइं उच्चत्तेणं।

तेसि णं पउमाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा - वइरामया मूला जाव कणगामई कण्णिया।

सा णं कण्णिया कोसं आयामेणं अद्धकोसं बाहल्लेणं सव्वकणगामई अच्छा, तीसे णं कण्णियाए उप्पिं बहुसमरमणिज्जे जाव मणीहिं उवसोभिए।

तस्स णं पउमस्स अवरुत्तरेणं उत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं सिरीए देवीए चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं चत्तारि पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, तस्स णं पउमस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं सिरीए देवीए चउण्हं महत्तरियाणं चत्तारि पउमा प०, तस्स णं पउमस्स दाहिणपुरत्थिमेणं सिरीए देवीए अब्भिंतरियाए परिसाए अट्ठण्हं देवसाहस्सीणं अट्ठ पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, दाहिणेणं मज्झिमपरिसाए दसण्हं देवसाहस्सीणं दस पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, दाहिणपच्चत्थिमेणं बाहिरियाए परिसाए बारसण्हं देवसाहस्सीणं बारस पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, पच्चत्थिमेणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं सत्त पउमा पण्णत्ता, तस्स णं पउमस्स चउद्दिसिं सव्वओ समंता इत्थ णं सिरीए देवीए सोलसण्हं आयारक्खदेवसाहस्सीणं सोलस पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।

से णं तिहिं पउमपरिक्खेवेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, तंजहा-अब्भिंतरएणं मज्झिमएणं बाहिरएणं, अब्भिंतरए पउमपरिक्खेवे बत्तीसं पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ मज्झिमए पउमपरिक्खेवे चत्तालीसं पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ बाहिरए पउमपरिक्खेवे अडयालीसं पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, एवामेव सपुव्वावरेणं तिहिं पउमपरिक्खेवेहिं एगा पउमकोडी वीसं च पउमसयसाहस्सीओ भवंतीति मक्खायं।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-पउमद्दहे २?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! पउमद्दहे णं० तत्थ २ देसे २ तहिं २ बहवे उप्पलाइं जाव सयसहस्सपत्ताइं पउमद्दहप्पभाइं पउमद्दहवण्णाभाइं सिरी य इत्थ देवी महिड्डिया जाव पलिओवमट्ठिइया परिवसइ, से एएणट्ठेणं जाव अदुत्तरं च णं गोयमा! पउमद्दहस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते ण कयाइ णासि ण०।

शब्दार्थ - **जगईए** - जगती-प्राचीर, **पोक्खरत्थिरुया** - पुष्करास्थिभाग-पुष्पासन, **सयणिज्जे** - शयनिका।

भावार्थ - उस अत्यंत समतल तथा सुंदर भूमिभाग के बीचों बीच पद्मद्रह नामक एक विशाल द्रह (झील) बतलाया गया है। वह पूर्व-पश्चिम लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण चौड़ा है। वह लम्बाई में एक सहस्र योजन, चौड़ाई में पांच योजन एवं गहराई में दस योजन है। वह साफ, कोमल, रजमय तटों से युक्त यावत् सुंदर, मनोज्ञ है। वह सब ओर एक पद्मवर वेदिका तथा एक वनखंड द्वारा घिरा हुआ है। इनका वर्णन पूर्ववत् है। उस द्रह की चारों दिशाओं में तीन-तीन सोपान रचित हैं। इनका वर्णन जैसा पहले आया है वैसा है उन त्रिसोपानभागों में से प्रत्येक के आगे तोरण द्वार बने हैं। ये अनेक प्रकार की मणियों से सज्जित हैं।

इस पद्मद्रह के मध्यवर्ती भाग में एक पद्म बतलाया गया है। उसकी लम्बाई-चौड़ाई एक योजन तथा मोटाई आधा योजन है। यह जल में दो योजन गहरा है। इस प्रकार इसका सम्पूर्ण विस्तार दस योजन से कुछ अधिक है। यह चारों ओर से एक जगती-प्राचीर द्वारा घिरा हुआ है। इस प्राचीर एवं गवाक्ष समूह का प्रमाण क्रमशः जंबूद्वीप के प्रकार एवं गवाक्ष के समान है।

इस पद्म का वर्णन इस प्रकार बतलाया गया है - इसकी जड़ें वज्ररत्न, कंद रिष्टरत्न, नाल एवं बाह्यपत्र वैदूर्यरत्न-नीलम, आभ्यंतर पत्र जंबूनद स्वर्ण, किंजल्क (केसर) तपनीय स्वर्ण, पुष्पासन विविध मणियों एवं कर्णिका—बीजकोश स्वर्णमय हैं। इसकी लम्बाई-चौड़ाई आधा योजन एवं मोटाई एक कोस है। यह सर्वथा स्वर्णमय एवं उज्ज्वल हैं। उस कर्णिका के ऊपर अत्यंत समतल एवं सुन्दर भूमिभाग बतलाया गया है। यह मुरज के चर्मपुट के समान है। इस समतल भूमि भाग के बीचोंबीच एक विशाल भवन है, जिसकी लम्बाई एक कोस, चौड़ाई आधा कोस तथा ऊँचाई एक कोस से कुछ कम है। यह अनेक खंभों पर टिका हुआ है यावत् सुखप्रद एवं दर्शनीय है। इस भवन की तीनों दिशाओं में तीन द्वार बतलाए गए हैं। इन द्वारों की ऊँचाई पांच सौ धनुष तथा चौड़ाई अढाई सौ धनुष है। इनके प्रवेश मार्ग भी चौड़ाई जितने ही

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। इन पर श्रेष्ठ स्वर्णमय स्तूपिकाएं बनी हुई हैं यावत् पुष्पमालाओं पर्यंत वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

उस भवन का अन्तरवर्ती भूमिभाग अत्यंत समतल एवं रमणीय कहा गया है। यह वैसा ही है जैसा ढोलक का उपरितन चर्मपुट होता है। उसके बीचोंबीच एक विशाल मणिपीठिका बतलाई गई है, जो पांच सौ धनुष लम्बी-चौड़ी तथा अढाई सौ धनुष मोटी है, सर्वथा मणिमय एवं उज्ज्वल है। इस मणिपीठिका के ऊपर एक विशाल शयनिका-शय्या बतलाई गई है, जिसका वर्णन पूर्वानुसार कथनीय है।

यह पद्म अपनी ऊँचाई और विस्तार में आधे प्रमाणयुक्त एक सौ आठ पद्मों से घिरा हुआ है। इन पद्मों का आयाम-विस्तार आधा योजन तथा मोटाई एक कोस है। ये जल में दस योजन गहरे तथा एक कोस ऊपर उठे हुए हैं। इस प्रकार इनकी कुल ऊँचाई दस योजन से कुछ अधिक है। इन पद्मों का विशेष वर्णन इस प्रकार हैं - इनके मूल वज्ररत्नमय यावत् कर्णिका स्वर्णमय है। यह लम्बाई तथा मोटाई में क्रमश एक कोस एवं आधा कोस है। यह पूर्णतः स्वर्णमय एवं उज्ज्वल है। इस कर्णिका के ऊपर अत्यंत समतल भूमिभाग है यावत् यह मणियों से सुशोभित है।

इस मध्यवर्ती प्रधान पद्म के उत्तर-पश्चिम में वायव्य कोण में, उत्तर में तथा उत्तर पूर्व में श्री देवी के चार हजार सामानिक देवों के चार हजार पद्म बतलाए गए हैं। इसकी पूर्व दिशा में श्रीदेवी की चार महत्तरिकाओं के चार पद्म हैं। इसके दक्षिण पूर्व में श्रीदेवी की आभ्यंतर परिषद् के आठ हजार देवों के आठ हजार पद्म तथा दक्षिण में इसकी मध्यम परिषद् के दस हजार देवों के दस हजार पद्म हैं। दक्षिण-पश्चिम-नैऋत्यकोण में श्रीदेवी की बाह्य परिषद् के बारह सहस्र देवों के बारह सहस्रपद्म हैं। पश्चिम में सात सेनाधिपति देवों के सात पद्म हैं। इस प्रधान पद्म की चारों दिशाओं में श्रीदेवी के सोलह हजार आत्म रक्षक देवों के सोलह हजार पद्म हैं। यह पद्म तीन पद्म परिक्षेपों-कमल परकोटों द्वारा चारों ओर से संपरिवृत है। इन आभ्यतंर, मध्यम तथा बाह्य परिक्षेपों में क्रमशः बत्तीस लाख पद्म, चालीस लाख पद्म तथा अड़तालीस लाख पद्म हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर तीनों पद्मपरिक्षेपों में एक करोड़ बत्तीस लाख पद्म आख्यात हुए हैं।

हे भगवन्! यह किस कारण पद्मद्रह कहलाता है?

हे गौतम! इस पद्मद्रह में स्थान-स्थान पर अनेक उत्पल यावत् लक्षपत्री संज्ञक कमल विद्यमान हैं। ये वर्ण एवं आभा में पद्मद्रह के समान हैं। यहाँ परमऋद्धि यावत् पल्योपम स्थिति युक्त श्रीदेवी निवास करती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! इसी कारण यह पद्मद्रह कहलाता है। यावत् इसके अलावा हे गौतम! पद्मद्रह का यह नाम शाश्वत है, जो भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान तीनों में ही नष्ट न होने वाला है।

(९१)

तस्स णं पउमद्दहस्स पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं गंगा महाणई पवूढा समाणी पुरत्थाभिमुही पंच जोयणसयाइं पव्वएणं गंता गंगावत्तणकूडे आवत्ता समाणी पंच तेवीसे जोयणसए तिण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएणं गंता महया घड़मुहपवित्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगजोयणसइएणं पवाएणं पवडइ।

गंगा महाणई जओ पवडइ इत्थ णं महं एगा जिब्भिया पण्णत्ता, सा णं जिब्भिया अद्धजोयणं आयामेणं छ सकोसाइं जोयणाइं विक्खंभेणं अद्धंकोसं बाहल्लेणं मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिया सव्ववइरामई अच्छा सण्हा।

गंगा महाणई जत्थ पवडइ एत्थ णं महं एगे गंगप्पवायकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते सट्ठिं जोयणाइं आयामविक्खंभेणं णउयं जोयणसयं किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं अच्छे सण्हे रययामयकूले समतीरे वइरामयपासाणे वइरतले सुवण्ण-सुब्भरययामयवालुयाए वेरुलियमणिफालियपडलपच्चोयडे सुहोयारे सुहोत्तारे णाणामणितित्थसुबद्धे वट्टे अणुपुव्वसुजायवप्पगंभीरसीयलजले संछण्णपत्त-भिसमुणाले बहुउप्पल-कुमुय-णलिण-सुभग-सोगंधिय-पोंडरीय-महापोंडरीय-सय-पत्त-सहस्सपत्त-सयसहस्सपत्त-पप्फुल्लकेसरोवचिए छप्पयमहुयरपरिभुज्जमाणकमले अच्छविमलपत्थसलिले पुण्णे पडिहत्थभमंतमच्छ-कच्छभ-अणेगसउणगण-मिहुण-पवियरिय-सद्दुण्णइय-महुरसरणाइए पासाईए०। से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते वेइयावणसंडगाणं पउमाणं वण्णओ भाणियव्वो, तस्स णं गंगप्पवायकुंडस्स तिदिसिं तओ तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता, तंजहा-पुरत्थिमेणं दाहिणेणं पच्चत्थिमेणं, तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तंजहा - वइरामया णेम्मा रिट्ठामया पइट्ठाणा वेरुलियामया खंभा सुवण्णरुप्पमया फलया लोहियक्खमईओ सूईओ वयरामया संधी णाणामणिमया आलंबणा आलंबण-बाहाओत्ति।

तेसि णं तिसोवाण-पडिरूवगाणं पुरओ पत्तेयं पत्तेयं तोरणा पण्णत्ता, ते णं तोरणा णाणामणिमया णाणमणिमएसु खंभेसु उवणिविट्ठसंणिविट्ठा विविहमुत्तं-तरोवचिया विविहतारारूवोवचिया ईहामिय-उसह-तुरग-णर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्ता खंभुग्गय-वइरवेइयापरिगयाभिरामा विज्जाहरजमलजुयलजंतजुत्ताविव अच्चीसहस्समालणीया रूवगसहस्सकलिया भिसमाणा भिब्भिसमाणा चक्खुल्लोयणलेसा सुहफासा सस्सिरियरूवा घंटावलिचलियमहुरमणहरसरा पासाईया०।

तेसि णं तोरणाणं उवरिं बहवे अट्ठट्ठमंगला पण्णत्ता, तंजहा-सोत्थिय सिरिवच्छे जाव पडिरूवा, तेसि णं तोरणाणं उवरिं बहवे किण्हचामरज्झया जाव सुक्किल्लचामरज्झया अच्छा सण्हा रुप्पपट्टा वइरामयदण्डा जलयामलगंधिया सुरम्मा पासाईया ४, तेसि णं तोरणाणं उप्पिं बहवे छत्ताइच्छत्ता, पडागाइपडागा, घंटाजुयला, चामरजुयला, उप्पलहत्थगा, पउमहत्थगा जाव सयसहस्सपत्तहत्थगा सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा।

तस्स णं गंगप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे गंगादीवे णामं दीवे पण्णत्ते अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं साइरेगाइं पणवीसं जोयणाइं परिक्खेवेणं दो कोसे ऊसिए जलंताओ सव्ववइरामए अच्छे सण्हे०, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते वण्णओ भाणियव्वो।

गंगादीवस्स णं दीवस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, तस्स णं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं गंगाए देवीए एगे भवणे पण्णत्ते कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खंभेणं देसूणगं च कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं अणेगखंभसय-सण्णिविट्ठे जाव बहुमज्झदेसभाए मणिपेढियाए सयणिज्जे, से केणट्ठेणं जाव सासए णामधेज्जे पण्णत्ते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स णं गंगप्पवायकुंडस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं गंगामहाणई पवूढा समाणी उत्तरड्ढभरहवासं एज्जमाणी २ सत्तहिं सलिलासहस्सेहिं आऊरेमाणी २ अहे खण्डप्पवायगुहाए वेयड्ढपव्वयं दालइत्ता दाहिणड्ढभरहवासं एज्जमाणी २ दाहिणड्ढभरहवासस्स बहुमज्झदेसभागं गंता पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी चोद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, गंगा णं महाणई पवहे छ सकोसाइं जोयणाइं विक्खंभेणं अद्धकोसं उव्वेहेणं तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी २ मुहे बासट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च विक्खंभेणं सकोसं जोयणं उव्वेहेणं उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहिं वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता वेइयावणसंडवण्णओ भाणियव्वो, एवं सिंधूएवि णेयव्वं जाव तस्स णं पउमद्दहस्स पच्चत्थिमिल्लेणं तोरणेणं सिंधुआवत्तणकूडे दाहिणाभिमुही सिंधुप्पवायकुंडं सिंधुद्दीवो अट्ठो सो चेव जाव अहेतिमिसगुहाए वेयड्ढपव्वयं दालइत्ता पच्चत्थिमाभिमुही आवत्ता समाणी चोद्दससलिला अहे जगइं पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं जाव समप्पेइ, सेसं तं चेव।

तस्स णं पउमद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं रोहियंसा महाणई पवूढा समाणी दोण्णि छावत्तरे जोयणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोयणस्स उत्तराभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगजोयणसइएणं पवाएणं पवडइ, रोहियंसा णामं महाणई जओ पवडइ एत्थ णं महं एगा जिब्भिया पण्णत्ता, सा णं जिब्भिया जोयणं आयामेणं अद्धतेरसजोयणाइं विक्खंभेणं कोसं बाहल्लेणं मगरमुहविउट्ठसंठाणसंठिया सव्ववइरामई अच्छा०।

रोहियंसा महाणई जहिं पवडइ एत्थ णं महं एगे रोहियंसापवायकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते सवीसं जोयणसयं आयाम-विक्खंभेणं तिण्णि असीए जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं दसजोयणाइं उव्वेहेणं अच्छे कुंडवण्णओ जाव तोरणा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स णं रोहियंसप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे रोहियंसा णामं दीवे पण्णत्ते, सोलस जोयणाइं आयामविक्खंभेणं साइरेगाइं पण्णासं जोयणाइं परिक्खेवेणं दो कोसे ऊसिए जलंताओ सव्वरयणामए अच्छे सण्हे सेसं तं चेव जाव भवणं अट्ठो य भाणियव्वो, तस्स णं रोहियंसप्पवायकुंडस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं रोहियंसा महाणई पवूढा समाणी हेमवयं वासं एज्जमाणी २ चउद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ सद्दावइवट्टवेयड्डपव्वयं अद्धजोयणेणं असंपत्ता समाणी पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी हेमवयं वासं दुहा विभयमाणी २ अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, रोहियंसा णं० पवहे अद्धतेरसजोयणाइं विक्खंभेणं कोसं उव्वेहेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी २ मुहमूले पणवीसं जोयणसयं विक्खंभेणं अड्डाइज्जाइं जोयणाइं उव्वेहेणं उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।

शब्दार्थ - **पवूढा** - उद्‌गत होती है, **पवडइ** - गिरती है, **जिब्भिया** - प्रणालिका, **विउट्ट** - उद्‌घाटित, **कूल** - तट, **सुब्भ** - शुभ्र-सफेद, **पडल** - पट्टी, **सुहोयारे** - सुख पूर्वक प्रवेश करने हेतु, **सुहोत्तारे** - सुख पूर्वक बाहर आने हेतु, **संछण्ण** - ढका हुआ, **भिस** - कंद, **केसर** - पराग, **तित्थ** - घाट, **णेम्मा** - भूमि से ऊपर निकला हुआ भाग, **सूइओ** - सूचियाँ-कीलक, **आऊरेमाणी** - आवृत्त होती हुईं-समायुक्त होती हुईं।

भावार्थ - इस पद्मद्रह के पूर्वी तोरण द्वार से गंगामहानदी निकलती है। यह पर्वत पर पांच सौ योजन पूर्व में बहने के पश्चात् गंगावर्त कूट से वापस मुड़ती हुई दक्षिण दिशा में ५२३ $\frac{३}{१९}$ योजन बहती है। गंगामहानदी जब बहती है तो भरे हुए घड़े से वेगपूर्वक निकलते हुए पानी की तरह शब्द करती हुई, मुक्ताहार के समान अविच्छिन्न धारावत् प्रताप कुण्ड में गिरती है, प्रपात कुण्ड में गिरते समय इसका प्रवाह सौ योजन से कुछ अधिक होता है।

गंगा महानदी प्रपात में जहाँ गिरती है, वहाँ आधा योजन लम्बी छह योजन एवं एक कोस चौड़ी तथा आधा कोस मोटी एक प्रणालिका (जिह्विका) बतलाई गई है। मगरमच्छ के खुले हुए मुख के संस्थान में संस्थित यह प्रणालिका सर्वरत्नमय, उज्ज्वल एवं चिकनी है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गंगा महानदी जहाँ गिरती है, वहाँ विशाल गंगाप्रपात कुण्ड बतलाया गया है। यह आठ योजन लम्बा चौड़ा है। इसकी परिधि एक सौ नब्बे योजन से कुछ अधिक है। इसकी गहराई दस योजन है, स्वच्छ एवं चिकना है। इसके किनारे रजतमय एवं समतल तट युक्त है। इसका तल वज्ररत्नमय है। इसकी बालू स्वर्ण एवं रजत के शुभ कणों से निर्मित है। इसके तट के निकटवर्ती उभरे हुए प्रदेश वैदूर्य तथा स्फटिक के फलकों से बने हैं। इसके अन्दर प्रवेश करने एवं बाहर निकलने के मार्ग सुखप्रद हैं। इसके घाट विविध मणियों से बंधे हैं। किनारे से भीतर की ओर इसका जल अधिक गहरा और शीतल है। यह कमल पत्रों, कंदों तथा मृणाल-कमल नालों से ढका हुआ है। बहुत से उत्पल, कुमुद, नलिन, सुभग सौगंधिक, पुण्डरीक, महापुण्ड़रीक, शतपत्र, सहस्रपत्र, शतसहस्रपत्र (लाख पत्तों वाला कमल) इन अनेकविध कमलों के प्रफुल्लित केसरों से उपशोभित हैं, व्याप्त हैं। भौंरे इन कमलों के पराग का परिभोग करते रहते हैं। जल से परिपूर्ण इस कुण्ड का जल निर्मल, स्वच्छ एवं स्वास्थ्य प्रद है। जल में इधर-उधर विचरण करती मछलियों एवं कछुओं तथा विविध पक्षीवृंद के मधुर उच्च कलरव से वहाँ का वातावरण मन को हरने वाला प्रतीत होता है। यह एक पद्मवर वेदिका एवं वनखंड द्वारा चारों ओर से संपरिवृत है। पद्मवरवेदिका, वनखण्ड एवं कमलों का वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है। इस गंगाप्रपात कुण्ड की पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम—इन तीनों दिशाओं में त्रिसोपान प्रतिरूपक—तीन-तीन सीढियाँ बतलाई गई हैं। इन सीढियों का वर्णन इस प्रकार कहा गया है -

उनकी नेमा—भूमि के ऊपर निकला हुआ भाग वज्ररत्नमय, मूल भाग—प्रतिष्ठापक रिष्टरत्नमय एवं स्तंभ नीलम रत्न निर्मित हैं। इनके फलक स्वर्ण-रजतमय हैं। सूचियाँ लोहिताक्षरत्न निर्मित हैं। इनकी संधियाँ वज्ररत्नमय हैं। इनके आलंबन-उतरते समय आधार देने वाले स्थान तथा आलंबन भुजा विविध प्रकार की मणियों से बने हैं। इन तीनों सीढियों के समक्ष तोरण द्वार बने हैं। विविध रत्नों से सज्जित ये तोरण द्वार अनेक मणियों से निर्मित खंभों पर टिके हैं। इनमें विविध तारों के आकार में मोती उपचित हैं-जड़े हैं। इन तोरण द्वारों पर वृक, वृषभ, अश्व, मनुष्य, मकर, खग, सर्प, किन्नर, रुरु जातीय मृग, शरभ, चंवरी गाय, हाथी, वनलता, पद्मलता आदि के चित्र अंकित हैं। स्तंभोदगत वज्ररत्नमय वेदिकाएं मन को हरने वाली हैं। इन पर बने हुए विद्याधर युगल एक समान आकार की कठपुतलियों की तरह संचरणशील प्रतीत होते हैं। इनसे निकली हजारों किरणों से ये सुशोभित हैं, देदीप्यमान एवं चमचमाते हुए तोरण द्वार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नेत्राकर्षक हैं, सुखद स्पर्श युक्त एवं शोभायमान हैं। इन पर लगी हुई घंटियों की पंक्तियाँ चलित होने पर-बजने पर अति मधुर शब्द करती हैं, मन को तुष्टि प्रदान करती हैं।

इन तोरण द्वारों पर आठ-आठ मंगल प्रतीक बतलाए गए हैं, यथा-स्वास्तिक, श्री वत्स यावत् नेत्रों को प्रिय लगने वाले हैं। इन तोरणों पर काले चंवरों यावत् श्वेत चंवरों की बहुत सी ध्वजाएं शोभायमान हैं। ध्वजाओं के दण्ड वज्ररत्न निर्मित हैं। इनमें रूपहले वस्त्र लगे हैं। ये कमल की उत्तम सुगंध से युक्त है, सुरम्य एवं हृदयाह्लादक हैं। तोरण पर बहुत से छत्र, अतिछत्र, पताका, अतिपताका-पताका पर पताका, घंटाओं के युगल विद्यमान हैं। उन पर उत्पल, पद्म यावत् शत, सहस्रपत्र कमल के समूह स्थित हैं, जो पूर्णतः रत्नमय, उज्ज्वल यावत् प्रतिरूप हैं।

उस गंगा प्रताप कुण्ड के बीचों-बीच गंगाद्वीप संज्ञक विशाल द्वीप बतलाया गया है। इसकी आयाम-विस्तार आठ योजन तथा परिधि पच्चीस योजन से कुछ अधिक है। यह जल में दो कोस ऊपर उठा हुआ है, सर्वरत्नमय, उज्ज्वल एवं चिकना है। यह एक पद्मवरवेदिका एवं वनखण्ड द्वारा चारों ओर से घिरा हुआ है। इनका विस्तार पूर्ववत् कथनीय है। गंगाद्वीप के ऊपर अत्यंत समतल एवं रमणीय भूमिभाग बतलाया गया है। इसके ठीक मध्यवर्ती भाग में गंगादेवी का एक विशाल भवन है। यह लम्बाई में एक कोस, चौड़ाई में आधा कोस तथा ऊँचाई में एक कोस से कुछ कम है। यह अनेक खंभों पर सन्निविष्ट-स्थित है यावत् इसके मध्यवर्ती भाग में एक मणिपीठिका है, जिस पर शय्या है।

यह किस कारण से गंगाद्वीप कहलाता है? यावत् यहाँ गंगादेवी का आवास होने से इसका यह शाश्वत नाम बतलाया गया है।

उस गंगा प्रपात कुण्ड के दक्षिणवर्ती तोरण द्वार से निकलती हुई गंगा महानदी जब उत्तरार्द्ध भरतक्षेत्र की ओर आगे बढ़ती है तब उसमें सात सहस्र नदियाँ आकर गिरती हैं। तदनंतर खण्ड प्रपात गुफा से होते हुए, वैताढ्य पर्वत को विदीर्ण करती हुईं - चीरती हुईं दक्षिणार्द्ध भरत के बीचों बीच से निकलती हुई फिर पूर्व की ओर मुड़ती है। यहाँ चौदह हजार नदियों से संयुक्त होकर बहती हुई यह गंगामहानदी जंबूद्वीप की जगती-प्राचीर को चीरकर पूर्वीय लवण समुद्र में मिल जाती है।

गंगा महानदी जहाँ से निकलती है - उद्‌गम स्थान पर छह कोस से एक योजन अधिक प्रवाह युक्त है। वह आधे कोस की गहराई लिए हुए है। उसके बाद वह महानदी क्रमशः ओर अधिक विस्तार प्राप्त करती जाती है। जब वह समुद्र में मिलती है, तब उसकी चौड़ाई साढे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बासठ योजन हो जाती है तथा गहराई एक योजन एक कोस हो जाती है। वह दोनों तरफ से दो पद्मवर वेदिकाओं एवं वनखण्डों द्वारा घिरी हुई हैं। वेदिकाओं और वनखण्डों का वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है। सिंधु महानदी की लम्बाई-चौड़ाई भी गंगा महानदी के समान है यावत् इतना अंतर है–सिंधु महानदी उस पद्मद्रह के पश्चिम दिशावर्ती तोरण से उद्‌गत होती है तथा सिंधु आवर्तकूट से मुड़कर दक्षिणाभिमुख होकर बहती है आगे सिंधुप्रतापकुण्ड, सिंधुद्वीप आदि का वर्णन पूर्ववत् योजनीय है यावत् नीचे तिमिसगुफा से होती हुई, वैताढ्य पर्वत को चीरकर पश्चिम दिशा की ओर मुड़ती है। इसमें यहाँ चवदह हजार नदियाँ सम्मिलित होती हैं। फिर वह नीचे की ओर जगती को चीरती हुई यावत् पश्चिमदिग्वर्ती लवणसमुद्र में मिल जाती है। अवशिष्ट वर्णन गंगा महानदी के अनुरूप योजनीय है।

उस पद्मद्रह के उत्तरी तोरण से रोहितांशा संज्ञक महानदी निःसृत होती है। वह पर्वत पर उत्तर में २७६ $\frac{६}{१९}$ योजन प्रवाहित होती है। घड़े के मुख से निकलते हुए जल की तरह जोर से शब्द करती हुई वह वेगपूर्वक मुक्ताहार के सदृश आकार में पर्वत शिखर से प्रपात पर्यन्त एक सौ योजन से कुछ अधिक प्रमाणयुक्त प्रवाह के रूप में प्रपात में गिरती है। रोहितांशा महानदी जहाँ गिरती है, वहाँ एक जिह्वा सदृश प्रणालिका है। वह एक योजन लम्बी तथा साढे बारह योजन चौड़ी है। यह एक कोस गहरी है उसका आकार मगर के मुख सदृश है। वह संपूर्णतः वज्ररत्न–हीरों से निर्मित है, स्वच्छ-उज्ज्वल है।

रोहितांशा महानदी जहाँ गिरती है वहाँ रोहितांशा प्रपातकुण्ड संज्ञक विशालकुण्ड है। वह एक सौ बीस योजन आयाम-विस्तार युक्त है, इसकी परिधि १८३ योजन से कुछ कम है। यह दस योजन गहरा है। यह उज्ज्वल है यावत् तोरण तक इसका वर्णन पहले की तरह योजनीय है।

इस रोहितांशा प्रपातकुण्ड के बीचों बीच रोहितांश संज्ञक विशाल द्वीप है। इसका आयाम–विस्तार सोलह योजन है। उसकी परिधि पचास योजन से कुछ ज्यादा है। उसका पानी से बाहर उठा हुआ भाग दो कोस ऊँचाई लिए हुए हैं। यह सम्पूर्णतः रत्नरचित, स्वच्छ और चिकना है, यावत् भवन तक का अवशिष्ट वर्णन पूर्वानुसार कथनीय है। उस रोहितांश प्रपातकुण्ड के उत्तरी तोरण से रोहितांशा महानदी निर्गत होती है। वह हैमवत् क्षेत्र की ओर बहती हुई आगे बढ़ती है। वहाँ उसमें चौदह हजार नदियाँ सम्मिलित होती हैं। इनसे समायुक्त होती हुई यह शब्दापाती वृत्तवैताढ्य पर्वत से आधा योजन दूर रहने पर पश्चिम दिशा की ओर मुड़ती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगे वह हैमवत क्षेत्र को दो भागों में बांटती हुई बहती है। यहाँ उसमें २८००० नदियाँ सम्मिलित होती हैं। इस नदी परिवार के साथ वह नीचे की ओर बहती हुई, जगती-प्राचीर को चीरती हुई पश्चिम दिशावर्ती लवण समुद्र में मिल जाती है। रोहितांशा महानदी जहाँ से निःसृत होती है, वहां उसका विस्तार साढ़े बारह योजन प्रमाण होता है। यह एक कोस गहरी है। तदनंतर उसकी मात्रा-प्रमाण बढ़ता जाता है। समुद्र में जहाँ यह मिलती है, वहाँ उसका विस्तार एक सौ पच्चीस योजन तथा गहराई अढ़ाई योजन होती है। यह दोनों तरफ से दो पद्मवरवेदिकाओं तथा दो वनखण्डों से घिरी है।

चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत के शिखर

(९२)

चुल्लहिमवंते णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! इक्कारस कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धायययणकूडे १ चुल्लहिमवंतकूडे २ भरहकूडे ३ इलादेवीकूडे ४ गंगादेवीकूडे ५ सिरिकूडे ६ रोहियंसकूडे ७ सिंधुदेवीकूडे ८ सुरादेवीकूडे ९ हेमवयकूडे १० वेसमणकूडे ११।

कहि णं भंते! चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ता?

गोयमा! पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं चुल्लहिमवंतकूडस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते पंच जोयणसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं मूले पंच जोयणसयाइं विक्खंभेणं मज्झे तिण्णि य पण्णत्तरे जोयणसए विक्खंभेणं उप्पिं अड्ढाइज्जे जोयणसए विक्खंभेणं मूले एगं जोयणसहस्सं पंच य एगासीए जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं मज्झे एगं जोयणसहस्सं एगं च छलसीयं जोयणसयं किंचिविसेसूणं परिक्खेवेणं उप्पिं सत्तइक्काणउए जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, मूले विच्छिण्णे मज्झे संखित्ते उप्पिं तणुए गोपुच्छसंठाण-संठिए सव्वरयणामए अच्छे०, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धायययणस्स कूडस्स णं उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते, पण्णासं जोयणाइं आयामेणं पणवीसं जोयणाइं विक्खंभेणं छत्तीसं जोयणाइं उद्धं उच्चत्तेणं जाव जिणपडिमा वण्णओ भाणियव्वो।

कहि णं भंते! चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए चुल्लहिमवंतकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! भरहकूडस्स पुरत्थिमेणं सिद्धाययण-कूडस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए चुल्लहिमवंतकूडे णामं कूडे पण्णत्ते, एवं जो चेव सिद्धाययणकूडस्स उच्चत्तविक्खंभपरिक्खेवो जाव बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते बासट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च उच्चत्तेणं इक्कतीस जोयणाइं कोसं च विक्खंभेणं अब्भुग्गय-मूसियपहसिए विव विविहमणिरयणभत्तिचित्ते वाउद्धुय-विजयवेजयंती-पडागच्छत्ताइच्छत्तकलिए तुंगे गगणतलमभिलंघमाणसिहरे जालंतर-रयणपंजरुम्मीलिएव्व मणिरयणथूभियाए वियसियसयवत्तपुंडरीयतिलयरयणद्ध-चंदचित्ते णाणामणिमयदामालंकिए अंतो बाहिं च सण्हे वइरतवणिज्जरुइल-वालुयापत्थडे सुहफासे सस्सिरीयरूवे पासाईए जाव पडिरूवे, तस्स णं पासायवडेंसगस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव सीहासणं सपरिवारं।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-चुल्लहिमवंतकूडे २?

गोयमा! चुल्लहिमवंते णामं देवे महिड्ढिए जाव परिवसइ।

कहि णं भंते! चुल्लहिमवंतगिरिकुमारस्स देवस्स चुल्लहिमवंता णामं रायहाणी पण्णत्ता?

गोयमा! चुल्लहिमवंतकूडस्स दक्खिणेणं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे वीईवइत्ता अण्णं जंबुद्दीवं २ दक्खिणेणं बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता इत्थ णं चुल्लहिमवंतस्स गिरिकुमारस्स देवस्स चुल्लहिमवंता णामं रायहाणी पण्णत्ता,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बारस जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं, एवं विजयरायहाणीसरिसा भाणियव्वा..... एवं अवसेसाणवि कूडाणं वत्तव्वया णेयव्वा, आयामविक्खंभ-परिक्खेवपासायदेवयाओ सीहासणपरिवारो अट्ठो य देवाण य देवीण य रायहाणीओ णेयव्वाओ, चउसु देवा चुल्लहिमवंत १ भरह २ हेमवय ३ वेसमणकूडेसु ४, सेसेसु देवयाओ।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए २?

गोयमा! महाहिमवंतवासहरपव्वयं पणिहाय आयामुच्चत्तुव्वेहविक्खंभपरिक्खेवं पडुच्च ईसिं खुड्डतराए चेव हस्सतराए चेव णीयतराए चेव, चुल्लहिमवंते य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए २, अदुत्तरं च णं गोयमा! चुल्लहिमवंतस्स० सासए णामधेज्जे पण्णत्ते जं ण कयाइ णासि ३।

शब्दार्थ - **अद्धाइज्जे** - अढ़ाई-ढ़ाई, **परिक्खेव** - परिक्षेप-परिधि, **वाउद्धुय** - हवा द्वारा उड़ायी जाती हुई, **उम्मीलिए** - खोली हुई, **पत्थडे** - प्रसृत, **ईसिं** - कुछ, **हस्स** - ह्रस्व, **णीय** - निम्न, **उव्वेह** - जमीन में गहराई, **अट्ठो** - अर्थ वर्णन।

भावार्थ - हे भगवन्! चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत के कितने शिखर कहे गए हैं?

हे गौतम! उसके १. सिद्धायतनकूट २. चुल्लहिमवान् कूट ३. भरत कूट ४. इलादेवी कूट ५. गंगादेवी कूट ६. श्री कूट ७. रोहितांशा कूट ८. सिंधुदेवी कूट ९. सुरादेवी कूट १०. हैमवत कूट ११. वैश्रमण कूट। ये ग्यारह शिखर बतलाए गए हैं।

हे भगवन्! चुल्लहिमवान् पर्वत पर सिद्धायतन कूट किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! वह पूर्वी लवण समुद्र के पश्चिम में तथा चुल्लहिमवान् कूट के पूर्व में बतलाया गया है। उसकी ऊँचाई पांच सौ योजन है। यह मूल में पांच सौ योजन, मध्य में तीन सौ पिचहत्तर योजन एवं उपरितन भाग में दो सौ पचास योजन है। मूल में उसकी परिधि कुछ अधिक पन्द्रह सौ इकासी योजन, बीच में कुछ कम ग्यारह सौ छियासी योजन तथा उपरितन भाग में कुछ कम सात सौ इक्यानवें योजन प्रमाण हैं।

यह मूल में चौड़ा, मध्य में संकरा तथा ऊपरी भाग में पतला है। वह आकृति में गाय के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऊर्ध्वीकृत पूंछ जैसा है। वह सर्वरत्नमय एवं उज्ज्वल है। वह पद्मवर वेदिका तथा वनखंड से चारों ओर से घिरा हुआ है। सिद्धायतन कूट के ऊपर एक अत्यंत समतल तथा सुंदर भूमिभाग है। उस भूमिभाग के बीचों बीच एक विशाल सिद्धायतन है। वह लम्बाई में पचास योजन, चौड़ाई में पच्चीस योजन तथा ऊँचाई में छत्तीस योजन है यावत् उससे संबद्ध जिन प्रतिमा का वर्णन यहाँ योजनीय है।

हे भगवन्! चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत पर चुल्लहिमवान् संज्ञक शिखर कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! भरतकूट के पूर्व में तथा सिद्धायतन कूट के पश्चिम में चुल्लहिमवान् पर्वत पर यह बतलाया गया है।

यह ऊँचाई, चौड़ाई और परिधि में सिद्धायतन कूट के सदृश है यावत् उस पर अत्यंत सुंदर, रमणीय भूमिभाग है। उसके बीचोंबीच एक सुंदर प्रासाद है जो मानो भवनों का अलंकार हो। यह ऊँचाई में ६२$\frac{१}{२}$ योजन तथा चौड़ाई में ३१ योजन १ कोस है। वह आकाश में अत्यधिक ऊँचा उठा हुआ, उज्ज्वल आभा युक्त होने से हंसता हुआ सा प्रतीत होता है। उस पर बहुत प्रकार की मणियाँ तथा रत्न जड़ित हैं। अपने पर लगी हुई वायु से फहराती हुई विजय वैजयन्तियों, पताकाओं, छत्रों एवं अतिछत्रों से वह बड़ा ही शोभनीय प्रतीत होता है। उसके शिखर इतने ऊँचे हैं मानो वे आकाश को लांघना चाहते हों। उसकी जालियों में लगे हुए अनेकानेक रत्न ऐसे लगते हैं मानो प्रासाद ने अपनी आँखे खोल रखी हों। उस पर निर्मित स्तूपिकाएँ—गुमटियाँ मणि एवं रत्न निर्मित हैं। उस पर खिले हुए शतपत्र, पुंडरीक एवं तिलक के पुष्प, रत्न एवं अर्द्धचन्द्र के चित्र अंकित हैं। अनेक मणियों से बनी हुई मालाओं से वह विभूषित है। उसके अन्तर्भाग और बहिर्भाग में वज्ररत्न एवं तपनीय स्वर्णमय बालुका प्रसृत है। वह सुखप्रद स्पर्शयुक्त, शोभामय एवं आह्लादजनक है यावत् सुंदर रूप लिए हुए है।

उस उत्तम प्रासाद के भीतर अत्यंत समतल तथा सुंदर भूमिभाग कहा गया है यावत् अंगोपांग युक्त सिंहासन तक का वर्णन पूर्ववत् योजनीय हैं।

हे भगवन्! यह चुल्लहिमवान् कूट-इस नाम से क्यों जाना जाता है?

हे गौतम! इस पर चुल्लहिमवान् नामक देव महान् ऋद्धि यावत् वैभव पूर्वक वास करता है, इसलिए यह कूट इस नाम से जाना जाता है।

हे भगवन्! इस चुल्लहिमवान् गिरिकुमार देव की चुल्लहिमवंता नामक राजधानी कहाँ प्रज्ञप्त हुई है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! चुल्लहिमवान् कूट की दक्षिणी दिशा में, तिर्यक् लोकवर्ती असंख्यात द्वीपों, समुद्रों को पार करने पर, दूसरे जंबूद्वीप के दक्षिण में बारह योजन चलने पर चुल्लहिमवान् गिरिकुमार देव की चुल्लहिमवंता नामक राजधानी बतलाई गई है। इसकी लंबाई चौड़ाई बारह हजार योजन है। इस संबंध में शेष वर्णन विजय राजधानी के समान ज्ञेय है।

अवशिष्ट कूटों की लम्बाई, चौड़ाई, परिधि, प्रासाद, देव, सिंहासन, देवों तथा देवियों की राजधानियों का एवं इससे संबंधित अन्य वर्णन इसी प्रकार ज्ञातव्य है।

चार कूटों-चुल्लहिमवान्, भरत, हैमवत तथा वैश्रमण में देव निवास करते हैं, शेष में देवियाँ निवास करती हैं।

हे भगवन्! इसे चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत किस कारण कहा जाता है?

हे गौतम! चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत महाहिमवान वर्षधर पर्वत की अपेक्षा लम्बाई, चौड़ाई, गहराई, ऊँचाई परिधि में क्षुद्रतर, ह्रस्वतर एवं निम्नतर है। इसके अलावा यहाँ महान् ऋद्धिशाली यावत् एक पल्योपम स्थिति का चुल्लहिमवान् नामक देव निवास करता है।

हे गौतम! इसी कारण यह चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत कहा जाता है।

इसके अतिरिक्त हे गौतम! चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत संज्ञक यह नाम शाश्वत है, भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान तीनों ही में नष्ट न होने वाला है।

हेमवत क्षेत्र

(९३)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे हेमवए णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! महाहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिम-लवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे हेमवए णामं वासे पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे पलियंकसंठाणसंठिए दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे दोण्णि जोयणसहस्साइं एगं च पंचुत्तरं जोयणसयं पंच य एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खंभेणं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं छज्जोयणसहस्साइं सत्त य पणपण्णे जोयणसए तिण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स आयामेणं, तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया दुहओ लवणसमुद्दं पुट्ठा पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा पच्चत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठा सत्ततीसं जोयणसहस्साइं छच्च चउवत्तरे जोयणसए सोलस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स किंचिविसेसूणे आयामेणं, तस्स धणुं दाहिणेणं अट्ठतीसं जोयणसहस्साइं सत्त य चत्ताले जोयणसए दस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं।

हेमवयस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, एवं तइयसमाणुभावो णेयव्वोत्ति।

शब्दार्थ - पलियंक - पलंग, **पडोयारे** - प्रत्यवतार-प्राकट्य-अवस्थिति।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में हैमवत नामक वर्ष-क्षेत्र कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत के उत्तर में, पूर्वीदिग्वर्ती लवणसमुद्र के पश्चिम में तथा पश्चिमवर्ती लवणसमुद्र के पूर्व में हैमवत नामक वर्ष-क्षेत्र बतलाया गया है।

यह पूर्व पश्चिम में लम्बा तथा उत्तर दक्षिण में चौड़ा है। इसका आकार पलंग के सदृश है। यह दो तरफ से लवण समुद्र का संस्पर्श करता है। अपने पूर्वदिग्वर्ती किनारे में पूर्वी लवण समुद्र का एवं पश्चिमदिग्वर्ती किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र का संस्पर्श करता है। यह २१०५ $\frac{५}{१९}$ योजन चौड़ा है। उसकी बाहा ❖ की लम्बाई पूर्व से पश्चिम में ६७५५ $\frac{३}{१९}$ योजन है। उसकी जीवा✪ पूर्व में अपने पूर्वी किनारे से लवण समुद्र का तथा पश्चिम में पश्चिमी किनारे से पश्चिम लवण समुद्र का संस्पर्श करती है यावत् वह लम्बाई में ३७६७४ $\frac{१६}{१९}$ योजन से कुछ कम है। दक्षिण में उसका धनुष्य पृष्ठ ❂ ३८७४० $\frac{१०}{१९}$ योजन है। यह इसकी परिधि की अपेक्षा से है।

❖ बाहा - दक्षिणोत्तरायत वक्र आकाश-प्रदेश पंक्ति।

✪ जीवा - धनुष की प्रत्यंचा जैसी सीधी सर्वान्तिम प्रदेश पंक्ति।

❂ धनुष्य पृष्ठ - दक्षिणार्द्ध भरत के जीवोपमित भाग का पीछे का हिस्सा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! हैमवत क्षेत्र का स्वरूप, भाव-तदन्तर्गत पदार्थ एवं प्रत्यवतार-अवस्थिति कैसी है?

हे गौतम! उसका भूमिभाग बहुत समतल एवं रमणीय है तथा आकार आदि तृतीय आरक-सुषमा-दुःषमा काल के समान जानने चाहिए।

शब्दापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत

(६४)

कहि णं भंते! हेमवए वासे सद्दावई णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! रोहियाए महाणईए पच्चत्थिमेणं रोहियंसाए महाणईए पुरत्थिमेणं हेमवयवासस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं सद्दावई णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते एगं जोयणसहस्सं उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं उव्वेहेणं सव्वत्थसमे पल्लगसंठाणसंठिए एगं जोयणसहस्सं आयामविक्खंभेणं तिण्णि जोयणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोयणसयं किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं पण्णत्ते, सव्वरयणामए अच्छे०, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, वेइयावणसंडवण्णओ भाणियव्वो।

सद्दावइस्स णं वट्टवेयड्ढपव्वयस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते बावट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च उड्ढं उच्चत्तेणं इक्कतीसं जोयणाइं कोसं च आयामविक्खंभेणं जाव सीहासणं सपरिवारं।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-सद्दावई वट्टवेयड्ढपव्वए २?

गोयमा! सद्दावईवट्टवेयड्ढपव्वए णं खुड्डाखुड्डियासु वावीसु जाव बिलपंतियासु बहवे उप्पलाइं पउमाइं सद्दावइप्पभाइं सद्दावइवण्णाइं सद्दावइवण्णाभाइं सद्दावई य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव महाणुभावे पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से णं तत्थ चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं जाव रायहाणी मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं अण्णंमि जंबुद्दीवे दीवे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - **सव्वत्थसमे** - सर्वत्र समतल, **बिलपंतियासु** - वापिकाएँ।

भावार्थ - हे भगवन्! हैमवत क्षेत्र में शब्दापाती नामक वृतवैताढ्य पर्वत की स्थिति कहाँ बतलाई गई है?

हे गौतम! यह शब्दापाती वृतवैताढ्य पर्वत रोहिता महानदी के पश्चिम में, रोहितांशा महानदी के पूर्व में तथा हैमवत वर्ष के बिल्कुल मध्य में अवस्थित है। उसकी ऊँचाई और गहराई क्रमशः एक हजार योजन तथा अढाई सौ योजन है। यह पूर्णतः समतल है। पलंग के संस्थान में संस्थित उसको लम्बाई-चौड़ाई एक हजार योजन है। इसकी परिधि ३१६२ योजन से कुछ अधिक है। यह सर्व रत्नमय एवं उज्ज्वल है। यह एक उत्तम, कमलाकार वेदिका तथा एक वनखण्ड द्वारा चारों ओर से घिरा हुआ है। इन दोनों का वर्णन पूर्ववत् कहा गया है।

इस शब्दापाती वृत्तवैताढ्य पर्वत पर बहुत समतल एवं रमणीय भूमिभाग है, जिसके बीचों बीच एक विशाल प्रासादावतंसक-उत्तम महल है। इसकी ऊँचाई ६२$\frac{१}{२}$ योजन तथा लम्बाई-चौड़ाई ३१ योजन १ कोस है यावत् सिंहासन पर्यन्त वर्णन पूर्वानुसार जानना चाहिए।

हे भगवन्! यह 'शब्दापाती वृत्तवैताढ्य पर्वत संज्ञक' नाम से क्यों पुकारा जाता है?

हे गौतम! शब्दापाती वृत वैताढ्य पर्वत पर छोटी-छोटी बावड़ियों यावत् वापिकाओं में बहुत से उत्पल, पद्म हैं, जिनकी प्रभा, वर्ण एवं आभा शब्दापाती के समान है। इसके अलावा महान् ऋद्धिशाली यावत् परम प्रभावशाली पल्योपमस्थितिक शब्दापाती देव निवास करता है। इसके चार हजार सामानिक देव हैं यावत् इसकी राजधानी दूसरे जंबूद्वीप में मंदर पर्वत के दक्षिण में है। (इन्ही सब कारणों से इसका नाम शब्दापाती वृतवैताढ्य पर्वत विश्रुत है)।

(९५)

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-हेमवए वासे २?

गोयमा!...चुल्लहिमवंतेहिं वासहरपव्वएहिं दुहओ समवगूढे णिच्चं हेमं दलइ २ त्ता णिच्चं हेमं पगासइ हेमवए य इत्थ देवे महिड्डिए० पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-हेमवए वासे, हेमवए वासे।

शब्दार्थ - **समवगूढे** - समवस्थित, **पगासइ** - प्रकाशित करता है।

भावार्थ - हे भगवन्! हैमवत क्षेत्र को इस नाम से क्यों जाना जाता है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! यह हैमवत क्षेत्र चुल्लहिमवान् तथा वर्षधर पर्वत इन दोनों के मध्य स्थित है। यह हमेशा स्वर्ण देता है। इस प्रकार स्वर्ण की आभा से हैमवत क्षेत्र नित्य प्रकाशित रहता है। यहाँ अति वैभव सम्पन्न पल्योपमस्थितिक हैमवत संज्ञक देव निवास करता है।

इसी कारण से गौतम! यह हैमवत क्षेत्र इस नाम से पुकारा जाता है।

(९६)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे २ महाहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! हरिवासस्स दाहिणेणं हेमवयस्स वासस्स उत्तरेणं पुरत्थिम-लवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे महाहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिण-विच्छिण्णे पलियंकसंठाणसंठिए दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे पुरत्थिमिल्लाए कोडीए जाव पुट्ठे पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे दो जोयणसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं पण्णासं जोयणाइं उव्वेहेणं चत्तारि जोयणसहस्साइं दोण्णि य दसुत्तरे जोयणसए दस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खंभेणं, तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं णव जोयणसहस्साइं दोण्णि य छावत्तरे जोयणसए णव य एगूणवीसइभाए जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणं, तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा पच्चत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठा तेवण्णं जोयणसहस्साइं णव य एगतीसे जोयणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोयणस्स किंचिविसेसाहिए आयामेणं, तस्स धणुं दाहिणेणं सत्तावण्णं जोयणसहस्साइं दोण्णि य तेणउए जोयणसए दस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं, रुयगसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे० उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते। महाहिमवंतस्स णं वासहरपव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहि य तणेहि य उवसोभिए जाव आसयंति सयंति य।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में महाहिमवान् वर्षधर पर्वत कहाँ स्थित है?

हे गौतम! महाहिमवान् वर्षधर पर्वत हरिवर्षक्षेत्र के दक्षिण में, हैमवत क्षेत्र के उत्तर में पूर्वी लवण समुद्र के पश्चिम में तथा पश्चिम लवण समुद्र के पूर्व में स्थित है।

यह पूर्व से पश्चिम की ओर लम्बा तथा उत्तर से दक्षिण की ओर चौड़ा है। पलंग के संस्थान में संस्थित यह महाहिमवान् वर्षधर पर्वत दोनों ओर से लवण समुद्र से घिरा हुआ है। अपने पूर्वी किनारे से पूर्वी लवण समुद्र का यावत् पश्चिम किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र का संस्पर्श करता है। इसकी ऊँचाई दो सौ योजन, गहराई (भूमि में गड़ा हुआ भाग) पचास योजन तथा चौड़ाई-विस्तार ४२१०$\frac{१०}{१९}$ योजन है। इसकी बाहा पूर्व-पश्चिम में ९२७६$\frac{९॥}{१०}$ योजन लम्बी है। इसकी पूर्व से पश्चिम की ओर लम्बी जीवा अपने पूर्वी किनारे से पूर्वी लवण समुद्र का तथा पश्चिमी किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र का यावत् संस्पर्श करती है। इसकी लम्बाई ५३९३१$\frac{६}{१९}$ योजन से कुछ अधिक है। दक्षिण से स्थित इसका धनुष्य पृष्ठ परिधि की अपेक्षा से ५७२९३$\frac{१०}{१९}$ योजन है। यह रुचक संस्थान संस्थित, सर्वरत्नमय एवं उज्ज्वल है। इसके दोनों पार्श्वों में दो पद्मवर वेदिकाएं एवं दो वनखण्ड हैं।

इस महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के ऊपर अति समतल, मनोरम भूमिभाग बतलाया गया है यावत् जो अनेक प्रकार की पंचरंगी मणियों एवं तृणों से उपशोभित है यावत् देव और देवियाँ वहाँ विश्राम करते हैं, शयन करते हैं।

(९७)

महाहिमवंतस्स णं० बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं एगे महापउमद्दहे णामं दहे पण्णत्ते दो जोयणसहस्साइं आयामेणं एगं जोयणसहस्सं विक्खंभेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं अच्छे० रययामयकूले एवं आयामविक्खंभविहूणा जा चेव पउमद्दहस्स वत्तव्वया सा चेव णेयव्वा, पउमप्पमाणं दो जोयणाइं अट्ठो जाव महापउमद्दह-वण्णाभाइं हिरी य इत्थ देवी जाव पलिओवमट्ठिइया परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ०, अदुत्तरं च णं गोयमा! महापउमद्दहस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते जं ण कयाइ णासी ३....।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स णं महापउमद्दहस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं रोहिया महाणई पवूढा समाणी सोलस पंचुत्तरे जोयणसए पंच य एगूणवीसइभाए जोयणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगदोजोयणसइएणं पवाएणं पवडइ, रोहिया णं महाणई जओ पवडइ एत्थ णं महं एगा जिब्भिया प०, सा णं जिब्भिया जोयणं आयामेणं अद्धतेरसजोयणाइं विक्खंभेणं कोसं बाहल्लेणं मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिया सव्ववइरामई अच्छा०।

रोहिया णं महाणई जहिं पवडइ एत्थ णं महं एगे रोहियप्पवायकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते सवीसं जोयणसयं आयामविक्खंभेणं पण्णत्तं तिण्णि असीए जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं अच्छे सण्हे सो चेव वण्णओ वइरतले वट्टे समतीरे जाव तोरणा।

तस्स णं रोहियप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे रोहियदीवे णामं दीवे पण्णत्ते सोलस जोयणाइं आयामविक्खंभेणं साइरेगाइं पण्णासं जोयणाइं परिक्खेवेणं दो कोसे ऊसिए जलंताओ सव्ववइरामए अच्छे०, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, रोहियदीवस्स णं दीवस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे भवणे पण्णत्ते कोसं आयामेणं सेसं तं चेव पमाणं च अट्ठो य भाणियव्वो।

तस्स णं रोहियप्पवायकुंडस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं रोहिया महाणई पवूढा समाणी हेमवयं वासं एज्जेमाणी २ सद्दावइं वट्टवेयड्ढपव्वयं अद्धजोयणेणं असंपत्ता पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी हेमवयं वासं दुहा विभयमाणी २ अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, रोहिया णं० जहा रोहियंसा तहा पवाहे य मुहे य भाणियव्वा इति जाव संपरिक्खित्ता।

तस्स णं महापउमद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं हरिकंता महाणई पवूढा समाणी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोलस पंचुत्तरे जोयणसए पंच य एगूणवीसइभाए जोयणस्स उत्तराभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगदुजोयणसइएणं पवाएणं पवडइ।

हरिकंता णं महाणई जओ पवडइ एत्थ णं महं एगा जिब्भिया प० दो जोयणाइं आयामेणं पणवीसं जोयणाइं विक्खंभेणं अद्धं जोयणं बाहल्लेणं मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिया सव्वरयणामई अच्छा०।

हरिकंता णं महाणई जहिं पवडइ एत्थ णं महं एगे हरिकंतप्पवायकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते दोण्णि य चत्ताले जोयणसए आयामविक्खंभेणं सत्तअउणट्ठे जोयणसए परिक्खेवेणं अच्छे एवं कुंडवत्तव्वया सव्वा णेयव्वा जाव तोरणा।

तस्स णं हरिकंतप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे हरिकंतदीवे णामं दीवे पण्णत्ते बत्तीसं जोयणाइं आयामविक्खंभेणं एगुत्तरं जोयणसयं परिक्खेवेणं दो कोसे ऊसिए जलंताओ सव्वरयणामए अच्छे०, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं जाव संपरिक्खित्ते वण्णओ भाणियव्वोत्ति, पमाणं च सयणिज्जं च अट्ठो य भाणियव्वो। तस्स णं हरिकंतप्पवायकुंडस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं जाव पवूढा समाणी हरिवस्सं वासं एज्जेमाणी २ वियडावइं वट्टवेयड्ढं जोयणेणं असंपत्ता पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी हरिवासं दुहा विभयमाणी २ छप्पण्णाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, हरिकंता णं महाणई पवहे पणवीसं जोयणाइं विक्खंभेणं अद्धजोयणं उव्वेहेणं तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी २ मुहमूले अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं पंच जोयणाइं उव्वेहेणं, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।

शब्दार्थ - विहूणा - छोड़कर, जिब्भिया - जह्निका-प्रणालिका, विउट्ट - खुला हुआ, ऊसिए - ऊँचा उठा हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - महाहिमवान् पर्वत के बिल्कुल मध्य में एक महापद्मद्रह संज्ञक द्रह बतलाया गया है। इसकी लम्बाई दो हजार योजन, चौड़ाई एक हजार योजन तथा गहराई दस योजन है। यह स्वच्छ एवं रजतमय किनारों से युक्त है। इसकी लम्बाई एवं चौड़ाई के अलावा शेष वर्णन पद्मद्रह के समान वक्तव्य है, वहाँ से योजनीय है। इसके मध्य स्थित पद्म का प्रमाण दो योजन है यावत् महापद्मद्रह का एतद्विषयक सारा वर्णन, आभा आदि पद्मद्रह के समान ही है। यहाँ ह्री नामक देवी निवास करती है, जिसका आयुष्य एक पल्योपम है।

हे गौतम! इसी कारण यह महापद्मद्रह-इस नाम से पुकारा जाता है। इसके अलावा हे गौतम! महापद्मद्रह संज्ञक यह नाम शाश्वत बतलाया गया है, जो भूत, वर्तमान एवं भविष्य - तीनों में नष्ट न होने वाला है।

महापद्मद्रह के दक्षिणी तोरण से निकलती हुई रोहिता महानदी दक्षिणाभिमुखी होती हुई १६०५ $\frac{५}{१९}$ योजन बहती है। भरे हुए घड़े के मुख से निकलता हुआ जल जिस प्रकार शब्द करता है, उसी प्रकार यह तीव्र वेग पूर्वक शब्द करती हुई मुक्ता निर्मित हार के समान प्रताप में गिरती है। पर्वत शिखर से प्रपात तक इसका प्रवाह दो सौ योजन से कुछ अधिक होता है। रोहिता महानदी प्रपात में जहाँ गिरती है वहाँ एक विशाल जिह्विका-प्रणालिका कही गई है। यह एक योजन लम्बी, १२ $\frac{१}{२}$ योजन चौड़ी एवं एक कोस मोटी है। यह मगरमच्छ के खुले हुए मुख के समान संस्थान युक्त है, सर्वरत्नमय एवं उज्ज्वल है।

रोहिता महानदी जिस स्थान पर गिरती है, वहाँ एक विशाल 'रोहितप्रपात कुण्ड' नामक कुण्ड बतलाया गया है। इसकी लम्बाई एवं चौड़ाई १२० योजन है। इसकी परिधि तीन सौ अस्सी योजन से कुछ कम बतलाई गई है। इसकी गहराई दश योजन है तथा यह स्वच्छ एवं चिकना है, जैसा कि पूर्व में वर्णित हुआ है। इसका तल-पैंदा वज्ररत्नमय है, गोलाकार है। इसका तीर-तट समतल है यावत् तोरण पर्यन्त वर्णन यहाँ पूर्ववत् ग्राह्य है।

इस रोहित प्रपात कुण्ड के बिल्कुल मध्यभाग में एक रोहितद्वीप संज्ञक विशाल द्वीप बतलाया गया है। इसकी लम्बाई १६ योजन एवं परिधि ५० योजन से कुछ अधिक है। यह जल से दो कोस ऊँचा उठा हुआ है, सर्वरत्नमय एवं स्वच्छ है। यह एक पद्मवरवेदिका एवं एक वनखण्ड द्वारा चारों ओर से घिरा हुआ है। इस रोहितद्वीप पर बहुत समतल एवं मनोरम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भूमिभाग बतलाया गया है। इस भूमिभाग के बीचों बीच एक विशाल भवन है। इसकी लम्बाई एक कोश है। एतद्विषयक प्रमाणादि के वर्णन पूर्वानुसार योजनीय हैं।

उस रोहितप्रपात कुण्ड के दक्षिणी तोरण से रोहिता महानदी निकलती है। वह हैमवत क्षेत्र की ओर आगे बढ़ती है। शब्दापाती वृत्तवैताढ्य पर्वत जब आधा योजन दूर रह जाता है, तब वह पूर्व की ओर मुड़ती है और हैमवत क्षेत्र को दो भागों में बांटती हुई आगे बढ़ती है। उसमें २८००० नदियाँ मिलती हैं। वह उनसे आपूर्ण होकर नीचे जम्बूद्वीप की जगती को चीरती हुई - भेदती हुई पूर्वी लवणसमुद्र में मिल जाती है। रोहिता महानदी के उद्गम, संगम आदि सम्बन्धी सारा वर्णन रोहितांशा महानदी जैसा है।

उस महापद्मद्रह के उत्तरी तोरण से हरिकान्ता नामक महानदी निकलती है। वह उत्तराभिमुख होती हुई १६०५ $\frac{५}{१९}$ योजन पर्वत पर बहती है। फिर घड़े के मुंह से निकलते हुए जल की ज्यों जोर से शब्द करती हुई, वेगपूर्वक मोतियों से बने हार के आकार में प्रपात में गिरती है। उस समय ऊपर पर्वत-शिखर से नीचे प्रपात तक उसका प्रवाह कुछ अधिक दो सौ योजन का होता है।

हरिकान्ता महानदी जहाँ गिरती है, वहाँ एक विशाल जिह्विका - प्रणालिका बतलाई गई है। वह दो योजन लम्बी तथा पच्चीस योजन चौड़ी है। वह आधा योजन मोटी है। उसका आकार मगरमच्छ के खुले हुए मुख के आकार जैसा है। वह सर्वरत्नमय है, स्वच्छ है।

हरिकान्ता महानदी जिसमें गिरती है, उसका नाम हरिकान्ताप्रपात कुण्ड है। वह विशाल है। वह २४० योजन लम्बा-चौड़ा है। उसकी परिधि ७५९ योजन की है। वह निर्मल है। तोरणपर्यन्त कुण्ड का समग्र वर्णन पूर्ववत् जान लेना चाहिए।

हरिकान्ताप्रपातकुण्ड के बीचों-बीच हरिकान्त द्वीप नामक एक विशाल द्वीप है। वह ३२ योजन लम्बा-चौड़ा है। उसकी परिधि १०१ योजन है, वह जल से ऊपर दो कोश ऊँचा उठा हुआ है। वह सर्वरत्नमय है, स्वच्छ है। वह चारों ओर एक पद्मवरवेदिका द्वारा तथा एक वनखण्ड द्वारा घिरा हुआ है। तत्सम्बन्धी प्रमाण, शयनीय आदि का समस्त वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिए।

हरिकान्ताप्रपातकुण्ड के उत्तरी तोरण से हरिकान्ता महानदी आगे निकलती है। हरिवर्षक्षेत्र में बहती है, विकटापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत के एक योजन दूर रहने पर वह पश्चिम की ओर मुड़ती है। हरिवर्षक्षेत्र को दो भागों में बांटती हुई आगे बढ़ती है। उसमें ५६००० नदियाँ मिलती

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। वह उनसे आपूर्ण होकर नीचे की ओर जम्बूद्वीप की जगती को चीरती हुई पश्चिमी लवण समुद्र में मिल जाती है। हरिकान्ता महानदी जिस स्थान से उद्गम होती है - निकलती है, वहाँ उसकी चौड़ाई पच्चीस योजन तथा गहराई आधा योजन है। तदनन्तर क्रमशः उसकी मात्रा-प्रमाण बढ़ता जाता है। जब वह समुद्र में मिलती है, तब उसकी चौड़ाई २५० योजन तथा गहराई पांच योजन होती है। वह दोनों ओर दो पद्मवरवेदिकाओं से तथा दो वनखण्डों से घिरी हुई है।

महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के कूट

(९८)

महाहिमवंते णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! अट्ठ कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धाययणकूडे १ महाहिमवंतकूडे २ हेमवयकूडे ३ रोहियकूडे ४ हिरिकूडे ५ हरिकंतकूडे ६ हरिवासकूडे ७ वेरुलियकूडे ८, एवं चुल्लहिमवंतकूडाणं जा चेव वत्तव्वया सच्चेव णेयव्वा।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-महाहिमवंते वासहरपव्वए २?

गोयमा! महाहिमवंते णं वासहरपव्वए चुल्लहिमवंतं वासहरपव्वयं पणिहाय आयामुच्चत्तुव्वेहविक्खंभपरिक्खेवेणं महंततराए चेव दीहतराए चेव, महाहिमवंते य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ....।

भावार्थ - हे भगवन्! महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के कितने कूट बतलाए गए हैं?

हे गौतम! महाहिमवान् वर्षधर के १. सिद्धायतन कूट २. महाहिमवान् कूट ३. हैमवत कूट रोहित कूट ५. ह्री कूट ६. हरिकांत कूट ७. हरिवर्ष कूट तथा ८. वैडूर्यकूट। ये आठ कूट-शिखर कहे गए हैं। इनका विस्तृत वर्णन चुल्लहिमवान् कूट के अनुसार जानना चाहिये।

हे भगवन्! यह महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के नाम से क्यों पुकारा जाता है?

हे गौतम! यह महाहिमवान् वर्षधर पर्वत चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत की अपेक्षा अधिक लम्बा, ऊँचा, चौड़ा तथा परिधियुक्त है, इसकी अपेक्षा महत्तर विशाल है। इस पर अत्यंत ऋद्धिशाली यावत् पल्योपम स्थितिक महाहिमवान् देव का निवास है। इसलिए यह महाहिमवान् वर्षधर पर्वत कहा जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हरिवर्ष क्षेत्र

(६६)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे हरिवासे णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं महाहिमवंतवासहरपव्वयस्स उत्तरेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जंबुद्दीवे २ हरिवासे णामं वासे पण्णत्ते एवं जाव पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे अट्ठ जोयणसहस्साइं चत्तारि य एगवीसे जोयणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोयणस्स विक्खंभेणं, तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं तेरस जोयणसहस्साइं तिण्णि य एगसट्ठे जोयणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणंति, तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं जाव लवणसमुद्दं पुट्ठा तेवत्तरिं जोयणसहस्साइं णव य एगुत्तरे जोयणसए सत्तरस य एगुणवीसइभाए जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणं, तस्स धणुं दाहिणेणं चउरासीइं जोयणसहस्साइं सोलस जोयणाइं चत्तारि एगूणवीसइभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं।

हरिवासस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आगारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव मणीहिं तणेहि य उवसोभिए एवं मणीणं तणाण य वण्णो गंधो फासो सद्दो भाणियव्वो, हरिवासे णं० तत्थ २ देसे २ तहिं २ बहवे खुड्डाखुड्डियाओ एवं जो सुसमाए अणुभावो सो चेव अपरिसेसो वत्तव्वोत्ति।

कहि णं भंते! हरिवासे वासे वियडावई णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! हरीए महाणईए पच्चत्थिमेणं हरिकंताए महाणईए पुरत्थिमेणं हरिवासस्स २ बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं वियडावई णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते, एवं जो चेव सद्दावइस्स विक्खंभुच्चत्तुव्वेह-परिक्खेवसंठाणवण्णावासो य सो चेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वियडावइस्सवि भाणियव्वो, णवरं अरुणो देवो पउमाइं जाव वियडावइवण्णाभाइं अरुणे य इत्थ देवे महिड्डिए एवं जाव दाहिणेणं रायहाणी णेयव्वा।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-हरिवासे हरिवासे?

गोयमा! हरिवासे णं वासे मणुया अरुणा अरुणोभासा सेया णं संखदल-सण्णिगासा हरिवासे य इत्थ देवे महिड्डिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ...।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में हरिवर्ष क्षेत्र की स्थिति कहाँ बतलाई गई है?

हे गौतम! निषध वर्षधर पर्वत के दक्षिण में महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के उत्तर ं पूर्वी लवण समुद्र के पश्चिम में तथा पश्चिमी लवण समुद्र के पूर्व में जंबूद्वीप स्थित हरिवर्ष क्षेत्र बतलाया गया है। वह अपने पूर्वी किनारे से यावत् पश्चिमी किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र का स्पर्श करता है। यह ८४२१ $\frac{१}{१९}$ योजन विस्तृत है। इसकी बाहा की लम्बाई पूर्व-पश्चिम में १३३६१ $\frac{६॥}{१९}$ योजन है। उत्तर में स्थित इसकी जीवा दोनों ओर लवण समुद्र का स्पर्श करती हुई पूर्व-पश्चिम लंबी है। यह अपने पूर्वी किनारे से यावत् पश्चिम किनारे से पश्चिम लवण समुद्र का स्पर्श करती है। इसकी लम्बाई ७३९०१ $\frac{१७॥}{१९}$ योजन है। इसका धनुष्य पृष्ठ परिधि की अपेक्षा से दक्षिण में ८४०१६ $\frac{४}{१९}$ योजन है।

हे भगवन्! हरिवर्ष क्षेत्र का आकार, स्वरूप कैसा बतलाया गया है?

हे गौतम! उसका भूमिभाग अत्यंत समतल तथा रमणीय है यावत् वह मणियों एवं तृणों से उपशोभित है। इन मणियों एवं तृणों के वर्ण, गंध, स्पर्श, शब्द पूर्ववत् कथनीय है। इस हरिवर्ष क्षेत्र में यहाँ-वहाँ छोटे-छोटे गड्डे पुष्करिणियाँ एवं वापिकाएं हैं। यहाँ अवसर्पिणी काल के द्वितीय आरक सुषमा के अनुरूप स्थितियाँ बतलाई गई हैं। इस प्रकार शेष वर्णन उसी काल के अनुसार वक्तव्य है।

हे भगवन्! विकटापाती संज्ञक वृत्तवैताढ्य पर्वत हरिवर्ष क्षेत्र में कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! हरि महानदी की पश्चिम दिशा में हरिकांता महानदी के पूर्व में तथा हरिवर्ष क्षेत्र के बिल्कुल मध्य में वृत वैताढ्य पर्वत बतलाया गया है। विकटापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत चौड़ाई, ऊँचाई, गहराई, परिधि और संस्थान में शब्दापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत के सदृश है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विशेषता यह है-यहाँ अरुण संज्ञक देव वास करता है। यहाँ स्थित कमल आदि के यावत् वर्ण आभा विकटापाती वृत्त वैताढ्य के तुल्य हैं। यहाँ अत्यंत ऋद्धिशाली देव वास करता है, जिसकी राजधानी दक्षिण में बतलाई गई है।

हे भगवन्! इसका नाम हरिवर्ष क्षेत्र कैसे विश्रुत हुआ?

हे गौतम! हरिवर्ष क्षेत्र के मनुष्य रक्तवर्ण एवं रक्तप्रभा युक्त है तथा कुछ शंखदल के सदृश श्वेत है। यहाँ महान् ऋद्धिशाली यावत् पल्योपम आयुष्य युक्त हरिवर्ष देव निवास करता है।

हे गौतम! इसी कारण यह हरिवर्ष क्षेत्र कहा गया है।

निषध वर्षधर पर्वत

(१००)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे २ णिसहे णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! महाविदेहस्स वासस्स दक्खिणेणं हरिवासस्स उत्तरेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे णिसहे णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे पुरत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठे पच्चत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठे चत्तारि जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं चत्तारि गाउयसयाइं उव्वेहेणं सोलस जोयणसहस्साइं अट्ठ य बायाले जोयणसए दोण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खंभेणं, तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं वीसं जोयणसहस्साइं एगं च पणट्ठं जोयणसयं दुण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणं, तस्स जीवा उत्तरेणं जाव चउणवइं जोयणसहस्साइं एगं च छप्पण्णं जोयणसयं दुण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स आयामेणंति, तस्स धणुं दाहिणेणं एगं जोयणसयसहस्सं चउवीसं च जोयणसहस्साइं तिण्णि य छायाले जोयणसए णव य एगूणवीसइभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं रुयगसंठाणसंठिए सव्वतवणिज्जमए अच्छे०, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं जाव संपरिक्खित्ते।

णिसहस्स णं वासहरपव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आसयंति सयंति...., तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे तिगिंछिद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिण-विच्छिण्णे चत्तारि जोयणसहस्साइं आयामेणं दो जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं अच्छे सण्हे रययामयकूले०।

तस्स णं तिगिंच्छिद्दहस्स चउद्दिसिं चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता एवं जाव आयामविक्खंभविहूणा जा चेव महापउमद्दहस्स वत्तव्वया सा चेव तिगिंछिद्दहस्सवि वत्तव्वया तं चेव उपमद्दहप्पमाणं अट्ठो जाव तिगिंछिवण्णाइं, थिई य इत्थ देवी पलिओवमट्ठिइया परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-तिगिंछिद्दहे तिगिंछिद्दहे।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में निषध नामक वर्षधर पर्वत की स्थिति कहाँ बतलाई गई है?

हे गौतम! जंबूद्वीप के अंतर्गत, महाविदेहक्षेत्र के दक्षिण में, हरिवर्ष क्षेत्र के उत्तर में, पूर्वी लवण समुद्र के पश्चिम में तथा पश्चिमी लवण समुद्र के पूर्व में निषध संज्ञक वर्षधर पर्वत है। यह पूर्व से पश्चिम में लम्बा तथा उत्तर से दक्षिण में चौड़ा है। यह दोनों ओर से लवण समुद्र को स्पर्श करता है। अपने पूर्वी किनारे से यावत् पश्चिमी किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र को स्पर्श करता है। इसकी ऊँचाई ४०० योजन तथा जमीन में गहराई ४०० योजन है। इसकी चौड़ाई १६८४२$\frac{२}{१९}$ योजन है। इसकी बाहा की लम्बाई पूर्व-पश्चिम में २०१६५$\frac{२॥}{१९}$ योजन है। इसकी जीवा उत्तर में यावत् ९४१५६$\frac{२}{१९}$ योजन लम्बी है। इसके दक्षिणस्थ धनुष्य पृष्ठ की परिधि १२४३४६$\frac{९}{१९}$ योजन है। यह रुचक-विशेष प्रकार के आभूषण के संस्थान में संस्थित है। यह सर्वतः तपनीय स्वर्णनिर्मित है, उज्ज्वल है। यह दोनों पार्श्वों से दो पद्मवर वेदिकाओं तथा दो वनखंडों से यावत् घिरा हुआ है।

इस निषध वर्षधर पर्वत पर अत्यंत समतल एवं रमणीय भूमिभाग बतलाया गया है यावत् यहाँ देव और देवियाँ सुखपूर्वक आश्रय पाते हैं, निवास करते हैं। इस अति समतल, सुंदर भूमिभाग के बीचों-बीच तिगिंच्छद्रह नामक द्रह बतलाया गया है। यह पूर्व-पश्चिम लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण चौड़ा है। इसकी लम्बाई ४००० योजन, चौड़ाई २००० योजन तथा गहराई १० योजन है। यह स्वच्छ एवं स्निग्ध है। इसके किनारे रजत निर्मित है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस तिगिंछद्रह की चारों दिशाओं में त्रिसोपानमार्ग-तीन-ती॰ सीढियाँ बनी हुई हैं। लम्बाई-चौड़ाई को छोड़कर इसका अवशिष्ट वर्णन पद्मद्रह के सदृश जानना चाहिए यावत् इन पर स्थित पद्म आदि की आभा तिगिंछद्रह के समान है। यहाँ स्थित धृतिदेवी अत्यंत ऋद्धिशालिनी तथा एक पल्योपम आयुष्य युक्त है। हे गौतम! इसी कारण यह इस नाम से कहलाया है।

(१०१)

तस्स णं तिगिंछिद्दहस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं हरिमहाणई पवूढा समाणी सत्त जोयणसहस्साइं चत्तारि य एक्कवीसे जोयणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोयणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं जाव साइरेगचउजोयणसइएणं पवाएणं पवडइ, एवं जा चेव हरिकंताए वत्तव्वया सा चेव हरीएवि णेयव्वा, जिब्भियाए कुंडस्स दीवस्स भवणस्स तं चेव पमाणं अट्ठोऽवि भाणियव्वो जाव अहे जगइं दालइत्ता छप्पण्णाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमं लवणसमुद्दं समप्पेइ, तं चेव पवहे य मुहमुले य पमाणं उव्वेहो य जो हरिकंताए जाव वणसंडसंपरिक्खित्ता।

तस्स णं तिगिंछिद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं सीओया महाणई पवूढा समाणी सत्त जोयणसहस्साइं चत्तारि य एगवीसे जोयणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोयणस्स उत्तराभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं जाव साइरेगचउ-जोयणसइएणं पवाएणं पवडइ, सीओया णं महाणई जओ पवडइ एत्थ णं महं एगा जिब्भिया पण्णत्ता चत्तारि जोयणाइं आयामेणं पण्णासं जोयणाइं विक्खंभेणं जोयणं बाहल्लेणं मगरमुहविउट्ट-संठाणसंठिया सव्ववइरामई अच्छा०।

सीओया णं महाणई जहिं पवडइ एत्थ णं महं एगे सीओयप्पवायकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते चत्तारि असीए जोयणसए आयामविक्खंभेणं पण्णरसअट्ठारे जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं अच्छे एवं कुंडवत्तव्वया णेयव्वा जाव तोरणा।

तस्स णं सीओयप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे सीओयदीवे णामं दीवे पण्णत्ते चउसट्ठिं जोयणाइं आयामविक्खंभेणं दोण्णि वि उत्तरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोयणसए परिक्खेवेणं दो कोसे ऊसिए जलंताओ सव्ववइरामए अच्छे सेसं तहेव वेइयावणसंडभूमिभागभवणसय-णिज्जअट्ठो भाणियव्वो।

तस्स णं सीओयप्पवायकुंडस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं सीओया महाणई पवूढा समाणी देवकुरुं एज्जेमाणी २ चित्तविचित्तकूडे पव्वए णिसढदेवकुरुसूरसुलस-विज्जुप्पभदहे य दुहा विभयमाणी २ चउरासीए सलिला-सहस्सेहिं आपूरेमाणी २ भद्दसालवणं एज्जेमाणी २ मंदरं पव्वयं दोहिं जोयणेहिं असंपत्ता पच्चत्थिमाभिमुही आवत्ता समाणी अहे विज्जुप्पभं वक्खारपव्वयं दारइत्ता मंदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमेणं अवरविदेहं वासं दुहा विभयमाणी २ एगमेगाओ चक्कवट्टिविजयाओ अट्ठावीसाए २ सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ पंचहिं सलिलासयसहस्सेहिं दुतीसाए य सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जयंतस्स दारस्स जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ।

सीओया णं महाणई पवहे पण्णासं जोयणाइं विक्खंभेणं जोयणं उव्वेहेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी परिवड्ढमाणी मुहमूले पंच जोयणसयाइं विक्खंभेणं दस जोयणाइं उव्वेहेणं उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।

णिसढे णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धाययणकूडे १ णिसढकूडे २ हरिवासकूडे ३ पुव्वविदेहकूडे ४ हरिकूडे ५ धिईकूडे ६ सीओयाकूडे ७ अवरविदेहकूडे ८ रुयगकूडे ९ जो चेव चुल्लहिमवंतकूडाणं उच्चत्त-विक्खंभ-परिक्खेवो पुव्ववण्णिओ रायहाणी य सच्चेव इहंपि णेयव्वा।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-णिसहे वासहरपव्वए २?

गोयमा! णिसहे णं वासहरपव्वए बहवे कूडा णिसहसंठाणसंठिया उसभसंठाणसंठिया, णिसहे य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-णिसहे वासहरपव्वए २......।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - पवहे - प्रवह-उद्गम स्थान, **असंपत्ता** - असंप्राप्त-दूर, **मायाए** - मात्रा द्वारा, **परिवद्धमाणी** - बढ़ती हुई।

भावार्थ - उस तिगिंछद्रह के दक्षिणवर्ती तोरण द्वार से निकलती हुई हरि महानदी इस पर्वत पर दक्षिण की ओर ७४२१ $\frac{१}{१९}$ योजन बहती है। जब यह प्रपात में गिरती है तो घड़े से वेग पूर्वक निकलते हुए जल की तरह उच्च ध्वनि करती है। इस समय इसका प्रवाह चार सौ योजन से कुछ अधिक होता है। इसका अवशिष्ट वर्णन हरिकांता नदी की तरह ज्ञातव्य है। इसकी जिह्विका-प्रणालिका, कुण्ड, द्वीप एवं भवन आदि के प्रमाण भी इसी प्रकार कहे गए हैं यावत् यह जंबूद्वीप की प्राचीर को विदीर्ण कर - चीरती हुई ५६००० नदियों से सम्मिलित होकर पूर्वी लवण समुद्र में गिरती है। इसके उद्गम स्थान, मुख मूल - समुद्र से संगम तथा गहराई के प्रमाण भी हरिकांता महानदी की तरह ग्राह्य है यावत् वनखंड और पद्मवर वेदिका से घिरी हुई है।

इस तिगिंछद्रह के उत्तरवर्ती तोरणद्वार से शीतोदा महानदी बहती हुई उत्तराभिमुख होकर इस पर्वत पर ७४२१ $\frac{१}{१९}$ योजन बहती है। यह बहते समय घड़े के मुंह से वेगपूर्वक निकलते हुए पानी की तरह उच्च शब्द करती है यावत् प्रपात में गिरते समय ऊपर से नीचे तक इसका प्रवाह चार सौ योजन से कुछ अधिक होता है। शीतोदा महानदी के गिरने के स्थान पर एक विशाल जिह्विका-प्रणालिका बतलाई गई है। इसकी लम्बाई चार योजन, चौड़ाई पचास योजन तथा मोटाई १ योजन है। यह मगरमच्छ के खुले हुए मुख सदृश संस्थान में संस्थित है, सर्वरत्नमय एवं स्वच्छ है।

शीतोदा महानदी के गिरने के स्थान पर विशाल शीतोदाप्रपात कुण्ड बतलाया गया है। यह ४८० योजन लम्बा-चौड़ा है। इसकी परिधि १५१८ योजन से कुछ कम है। यह स्वच्छ है यावत् इस कुण्ड का तोरण पर्यन्त वर्णन पूर्ववत् ग्राह्य है।

शीतोदा प्रपातकुण्ड के बिल्कुल मध्य में शीतोदाद्वीप संज्ञक विशालद्वीप बतलाया गया है। यह ६४ योजन लम्बा-चौड़ा है। इसकी परिधि २०२ योजन है। यह जल से दो कोस ऊपर उठा हुआ है, सर्वथा वज्ररत्ननिर्मित एवं उज्ज्वल है। पद्मवरवेदिका, वनखण्ड, भूमिभाग, भवन एवं शयनीय आदि का वर्णन पूर्ववत् ग्राह्य है।

इस शीतोदाप्रपात कुण्ड के उत्तरवर्ती तोरण में निकलती हुई शीतोदा महानदी देवकुरु क्षेत्र में से आगे बढ़ती है। यहाँ चित्र-विचित्र कूटों, पर्वतों, निषध, देवकुरु, सूर, सुलस एवं विद्युत्प्रभ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नामक द्रहों को विभाजित करती हुई ८४००० नदियों से आपूरित होती हुई भद्रशालवन की ओर आगे बढ़ जाती है। मंदर पर्वत से दो योजन पूर्व ही यह पश्चिम दिशा में मुड़ती हुई विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार पर्वत को भेदती हुई, मंदर पर्वत के पश्चिमवर्ती अपर विदेह क्षेत्र को दो भागों में विभाजित करती है। इस प्रकार आगे बढ़ती हुई यह महानदी सोलह चक्रवर्ती विजयों में से प्रत्येक से निकलती हुई अट्ठाईस-अट्ठाईस हजार नदियों से आपूरित होती है। इस प्रकार कुल मिलाकर ५,३२००० नदियों (४,४८०००+८४०००) को अपने में समाए हुए यह शीतोदा महानदी जयन्त द्वार की जगती-प्राचीर को विदारित करती हुई पश्चिमी लवण समुद्र में मिल जाती है।

यह शीतोदा महानदी अपने उद्गम स्थान में पचास योजन चौड़ी तथा एक योजन गहरी है। तदनंतर यह क्रमशः बढ़ती-बढ़ती अपने समुद्रवर्ती संगम स्थान पर ५०० योजन चौड़ी और दस योजन गहरी हो जाती है। यह दोनों ओर से दो पद्मवर वेदिकाओं तथा दो वनखंडों से घिरी हुई है।

हे भगवन्! निषध वर्षधर पर्वत के कितने कूट कहे गए हैं?

हे गौतम! इसके १. सिद्धायतन कूट २. निषध कूट ३. हरिवर्ष कूट ४. पूर्वविदेह कूट ५. हरिकूट ६. धृति कूट ७. शीतोदाकूट ८. अपरविदेह कूट तथा ९. रुचक कूट। ये नौ कूट बतलाए गये हैं।

चुल्लहिमवान पर्वत के कूटों की ऊँचाई, चौड़ाई, परिधि एवं राजधानी का वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है।

हे भगवन्! यह निषध वर्षधर पर्वत-इस नाम से क्यों जाना जाता है?

हे गौतम! निषध वर्षधर पर्वत के बहुत से कूटों के संस्थान निषध वृषभ के संस्थान तुल्य है। यहाँ निषध नामक महान् ऋद्धिशाली यावत् पल्योपम स्थितिक देव निवास करता है। इसलिए हे गौतम! यह निषध वर्षधर पर्वत कहा जाता है।

महाविदेह : स्वरूप : संज्ञा

(१०२)

कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जंबुद्दीवे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ महाविदेहे णामं वासे पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे पलियंकसंठाणसंठिए दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे पुरत्थिम जाव पुट्ठे पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं जाव पुट्ठे तेत्तीसं जोयणसहस्साइं छच्च चुलसीए जोयणसए चत्तारि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खंभेणंति।

तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं तेत्तीसं जोयणसहस्साइं सत्त य सत्तसट्ठे जोयणसए सत्त य एगूणवीसइभाए जोयणस्स आयामेणंति, तस्स जीवा बहुमज्झदेसभाए पाईणपडीणायया दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं जाव पुट्ठा एवं पच्चत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठा एगं जोयणसयसहस्सं आयामेणंति, तस्स धणुं उभओ पासिं उत्तरदाहिणेणं एगं जोयणसयसहस्सं अट्ठावण्णं जोयणसहस्साइं एगं च तेरसुत्तरं जोयणसयं सोलस य एगूणवीसइभागे जोयणस्स किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणंति।

महाविदेहे णं वासे चउव्विहे चउप्पडोयारे पण्णत्ते, तंजहा-पुव्वविदेहे १ अवरविदेहे २ देवकुरा ३ उत्तरकुरा ४।

महाविदेहस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।

महाविदेहे णं भंते! वासे मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

तेसि णं मणुयाणं छव्विहे संघयणे छव्विहे संठाणे पंचधणुसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी आउयं पालेंति, पालेत्ता अप्पेगइया णिरयगामी जाव अप्पेगइया सिज्झंति जाव अंतं करेंति।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-महाविदेहे वासे २?

गोयमा! महाविदेहे णं वासे भरहेरवयहेमवयहेरण्णवयहरिवासरम्मगवासेहिंतो आयामविक्खम्भसंठाणपरिणाहेणं विच्छिण्णतराए चेव विपुलतराए चेव महंततराए चेव सुप्पमाणतराए चेव महाविदेहा य इत्थ मणूसा परिवसंति, महाविदेहे य इत्थ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-महाविदेहे वासे २।

अदुत्तरं च णं गोयमा! महाविदेहस्स वासस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते जं ण कयाइ णासि ३..।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में महाविदेह संज्ञक क्षेत्र किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! वह नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, निषध वर्षधर पर्वत के उत्तर में पूर्वदिग्वर्ती लवण समुद्र के पश्चिम में, पश्चिम लवणसमुद्र के पूर्व में, जंबूद्वीप के अंतर्गत बतलाया गया है। उसकी लम्बाई पूर्व-पश्चिम में तथा चौड़ाई उत्तर-दक्षिण में है। वह आकार में पलंग के समान है। वह दो तरफ से लवण समुद्र का स्पर्श करता है। पूर्वी किनारे से पूर्वी लवणसमुद्र का यावत् पश्चिम किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र का स्पर्श करता है यावत् उसका विस्तार ३३६८४ $\frac{४}{१९}$ योजन है। पूर्व-पश्चिम में उसकी बाहा ३३७६७ $\frac{७}{१९}$ योजन लम्बी है। उसके ठीक मध्य स्थित जीवा पूर्व-पश्चिम लम्बी है, दो तरफ से लवण समुद्र को छूती है। अपने पूर्वी किनारे से पूर्वीय लवण समुद्र को यावत् पश्चिमी किनारे से पश्चिमी लवण समुद्र को यावत् इसकी लम्बाई एक लाख योजन है। उत्तर-दक्षिण व्यापी उसका धनु पृष्ठ परिधि की दृष्टि से १५८११३ $\frac{१६}{१९}$ योजन से कुछ अधिक है।

१. पूर्व विदेह २. पश्चिम विदेह ३. देवकुरु तथा ४. उत्तरकुरु - महाविदेह क्षेत्र के ये चार भाग प्रतिपादित हुए हैं।

हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र का आकार-स्वरूप किस प्रकार का है?

हे गौतम! उसका भू भाग अत्यधिक समतल तथा सुंदर है यावत् वह भिन्न-भिन्न प्रकार के कृत्रिम तथा अकृत्रिम रत्नों से शोभायमान है।

हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत मनुष्यों का आकार स्वरूप कैसा प्रतिपादित हुआ है?

वहाँ के मनुष्य छह प्रकार के संहनन तथा छह प्रकार के संस्थान युक्त होते हैं। वे ऊँचाई में पांच सौ धनुष होते है। इनका आयुष्य-न्यूनतम अन्तर्मुहूर्त परिमित तथा अधिकतम एक पूर्व कोटि परिमित होता है। आयुष्य पूर्ण होने पर उनमें से कतिपय नरकगामी होते हैं यावत् कुछ सिद्धत्व प्राप्त करते हैं यावत् समस्त दुःखों का नाश करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! यह 'महाविदेह क्षेत्र' इस नाम से क्यों पुकारा जाता है?

हे गौतम! भरत, ऐरवत, हैमवत, हैरण्यवत, हरिवर्ष तथा रम्यक्-इन क्षेत्रों की अपेक्षा महाविदेह क्षेत्र लम्बाई, चौड़ाई, आकार और परिधि में अधिक विपुल, अधिक महान् तथा वृहद् प्रमाण युक्त है। इसमें बहुत विशाल देह युक्त मनुष्य निवास करते हैं। अत्यंत ऋद्धिशाली यावत् एक पल्योपम आयुष्य युक्त महाविदेह संज्ञक देव यहाँ निवास करता है। हे गौतम! यही कारण है कि वह महाविदेह क्षेत्र इस शाश्वत नाम से कहा जाता है। यह वर्तमान, भूत, भविष्यत् में कभी न रहा हो, ऐसा नहीं है।

गन्धमादन वक्षस्कार पर्वत

(१०३)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे गंधमायणे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपच्चत्थिमेणं गंधिलावइस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं उत्तरकुराए पच्चत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे गंधमायणे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते।

उत्तरदाहिणायए पाईणपडीण-विच्छिण्णे तीसं जोयणसहस्साइं दुण्णि य णउत्तरे जोयणसए छच्च य एगूण-वीसइभाए जोयणस्स आयामेणं णीलवंतवासहरपव्वयं तेणं चत्तारि जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं चत्तारि गाउयसयाइं उव्वेहेणं पंचजोयणसयाइं विक्खम्भेणं तयणंतरं च णं मायाए २ उस्सेहुव्वेह-परिवड्ढीए परिवड्ढमाणे २ विक्खम्भपरिहाणीए परिहायमाणे २ मंदरपव्वयंतेणं पंच जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पंच गाउयसयाइं उव्वेहेणं अंगुलस्स असंखिज्जइभागं विक्खम्भेणं पण्णत्ते गयदंतसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे०, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते।

गंधमायणस्स णं वक्खार-पव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे जाव आसयंति...।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गंधमायणे णं० वक्खारपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! सत्त कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धायययणकूडे १ गंधमायणकूडे २ गंधिलावईकूडे ३ उत्तरकुरुकूडे ४ फलिहकूडे ५ लोहियक्खकूडे ६ आणंदकूडे ७।

कहि णं भंते! गंधमायणे वक्खारपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपच्चत्थिमेणं गंधमायणकूडस्स दाहिणपुरत्थिमेणं एत्थ णं गंधमायणे वक्खारपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते, जं चेव चुल्लहिमवंते सिद्धाययणकूडस्स पमाणं तं चेव एएसिं सव्वेसिं भाणियव्वं, एवं चेव विदिसाहिं तिण्णि कूडा भाणियव्वा, चउत्थे तइयस्स उत्तरपच्चत्थिमेणं पंचमस्स दाहिणेणं, सेसा उ उत्तरदाहिणेणं, फलिहलोहियक्खेसु भोगंकरभोगवईओ देवयाओ सेसेसु सरिसणामया देवा, छसुवि पासायवडेंसगा रायहाणीओ विदिसासु।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-गंधमायणे वक्खारपव्वए २?

गोयमा! गंधमायणस्स णं वक्खारपव्वयस्स गंधे से जहाणामए कोट्ठपुडाण वा जाव पीसिज्जमाणाण वा उक्किरिज्जमाणाण वा विकिरिज्जमाणाण वा परिभुज्जमाणाण वा जाव ओराला मणुण्णा जाव गंधा अभिणिस्सवंति, भवे एयारूवे? णो इणट्ठे समट्ठे, गंधमायणस्स णं इत्तो इट्ठतराए चेव जाव गंधे पण्णत्ते, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-गंधमायणे वक्खारपव्वए २, गंधमायणे य इत्थ देवे महिड्ढिए.... परिवसइ, अदुत्तरं च णं० सासए णामधेज्जे...।

शब्दार्थ - **परिहायमाणे** - कम होती जाती है, **उक्किरिज्जमाण** - फटके जाते हुए, **विक्किरिज्जमाण** - बिखरे जाते हुए।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अंतर्गत गंधमादन संज्ञक वक्षस्कार पर्वत कहाँ प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, मंदर पर्वत के उत्तर-पश्चिम में, गंधिलावती विजय के पूर्व में एवं उत्तरकुरु के पश्चिम में महाविदेह क्षेत्र में गंधमादन वक्षस्कार पर्वत प्रतिपादित हुआ है। वह उत्तर-दक्षिण में लम्बा तथा पूर्व-पश्चिम में चौड़ा है। वह लम्बाई में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३०२०९ $\frac{६}{१९}$ योजन है। वह नीलवान् वर्षधर पर्वत के निकट ऊँचाई में ४०० योजन तथा भूमि में चार सौ कोस गहरा है। चौड़ाई में यह ५०० योजन है। उसके पश्चात् क्रमशः उसकी ऊँचाई और गहराई वृद्धिंगत होती जाती है तथा चौड़ाई कम होती जाती है। इस प्रकार वह मंदर पर्वत के समीप पांच सौ योजन ऊँचा तथा पाँच सौ कोस गहरा हो जाता है। अन्ततः उसकी चौड़ाई अंगुल के असंख्यातवें भाग जितनी रह जाती है। इसका आकार हाथी दांत के समान है यह सम्पूर्णतः रत्नमय एवं उज्ज्वल है। यह दोनों तरफ दो पद्मवर वेदिकाओं तथा दो वनखंडों से परिवेष्टित है।

गंधमादन वक्षस्कार पर्वत पर अत्यंत समतल एवं रमणीय भूमिभाग कहा गया है यावत् उसके शिखरों पर अनेक देव-देवियाँ निवास करते हैं।

हे भगवन्! गंधमादन वक्षस्कार पर्वत के कितने कूट प्रतिपादित हुए हैं?

हे गौतम! उसके सात कूट प्रतिपादित हुए हैं, वे इस प्रकार हैं - १. सिद्धायतन कूट २. गंधमादन कूट ३. गंधिलावतिकूट ४. उत्तरकुरु कूट ५. स्फटिक कूट ६. लोहिताक्ष कूट एवं ७. आनंदकूट।

हे भगवन्! गंधमादन पर्वत के ऊपर सिद्धायतन कूट किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के उत्तर-पश्चिम में, गंधमादन कूट के दक्षिण पूर्व में गंधमादन वक्षस्कार पर्वत पर सिद्धायतन कूट कहा गया है। यहाँ वर्णित इन सब कूटों का प्रमाण चुल्लहिमवान् पर्वत पर विद्यमान सिद्धायतन कूट के सदृश है। तीन कूट विदिशाओं-कोणवर्ती दिशाओं में कहे गए हैं। चौथा उत्तरकुरु कूट तीसरे के उत्तर-पश्चिम-वायव्य कोण में तथा पांचवें कूट के दक्षिण में है। अवशिष्ट तीन कूट उत्तर-दक्षिण श्रेणियों में विद्यमान है।

स्फटिककूट तथा लोटिताक्षकूट पर भोगंकरा तथा भोगवती संज्ञक दो दिक्कुमारी देवियाँ निवास करती हैं। शेष कूटों पर उन-उन कूटों के अनुरूप नामधारी देव रहते हैं। इन छहों कूटों पर इन इनके श्रेष्ठ प्रासाद हैं और विदिशाओं में राजधानियाँ हैं।

हे भगवन्! गंधमादन वक्षस्कार पर्वत का यह नाम किस प्रकार प्रख्यात हुआ?

हे गौतम! कूटे हुए यावत् पीसे हुए, उत्कीर्ण-विकीर्ण किए जाते हुए, परिभुक्त-अनुभूत किए जाते हुए यावत् कोष्ठपुटकों से निकलने वाले सौरभ के सदृश श्रेष्ठ, मनोज्ञ यावत् सुगंधि गंधमादन वक्षस्कार पर्वत से निकलती रहती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! क्या यह सुगंध ऐसी ही है?

हे गौतम! वास्तव में वह ऐसी नहीं है। गंधमादन से जो सुगंध निःसृत होती है, वह कोष्ठपुटक की सुगंध से भी अधिक प्रिय यावत् मनोरम है। इसलिए यह वक्षस्कार गंधमादन नाम से अभिहित हुआ है। यहाँ गंधमादन संज्ञक अत्यधिक समृद्धिशाली देव निवास करता है, इस वक्षस्कार का यह गंधमादन नाम शाश्वत है।

उत्तरकुरु

(१०४)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे उत्तरकुरा णामं कुरा पण्णत्ता?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं गंधमायणस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं उत्तरकुरा णामं कुरा पण्णत्ता, पाईणपडीणायया उदीणदाहिणविच्छिण्णा अद्ध-चंदसंठाणसंठिया इक्कारस जोयणसहस्साइं अट्ठ य बायाले जोयणसए दोण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खम्भेणंति।

तीसे जीवा उत्तरेणं पाईण-पडीणायया दुहा वक्खारपव्वयं पुट्ठा, तंजहा- पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं वक्खारपव्वयं पुट्ठा एवं पच्चत्थिमिल्लाए जाव पच्चत्थिमिल्लं वक्खारपव्वयं पुट्ठा तेवण्णं जोयणसहस्साइं आयामेणंति, तीसे णं धणुं दाहिणेणं सट्ठिं जोयणसहस्साइं चत्तारि य अट्ठारसे जोयणसए दुवालस य एगूणवीसइभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं।

उत्तरकुराए णं भंते! कुराए केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, एवं पुव्ववण्णिया जच्चेव सुसमसुसमावत्तव्वया सच्चेव णेयव्वा जाव पउमगंधा १ मियगंधा २ अममा ३ सहा ४ तेयतली ५ सणिंचारी ६।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत उत्तरकुरु नामक क्षेत्र किस स्थान पर बतलाया गया है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! मंदर पर्वत की उत्तरदिशा में, नीलवान् वर्षधर पर्वत की दक्षिण दिशा में, गंधमादन वक्षस्कार पर्वत की पूर्वदिशा में तथा माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत की पश्चिम दिशा में उत्तरकुरु संज्ञक क्षेत्र प्रतिपादित हुआ है यह पूर्व पश्चिम दिशाओं में लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण दिशाओं में चौड़ा है। वह आकार में आधे चंद्रमा के सदृश है। वह चौड़ाई में ११८४२ $\frac{२}{१६}$ योजन है।

उत्तर में उसकी जीवा पूर्व-पश्चिम लम्बी है। वह दोनों ओर से वक्षस्कार पर्वत का संस्पर्श करती है। पूर्वी किनारे से पूर्वी वक्षस्कार पर्वत को तथा पश्चिमी किनारे से यावत् पश्चिमी वक्षस्कार पर्वत को छूती है। यह लम्बाई में ५३००० योजन है। दक्षिण में उसके धनुपृष्ठ की परिधि ६०४१८ $\frac{१२}{१६}$ योजन है।

हे भगवन्! उत्तरकुरु क्षेत्र का आकार स्वरूप किस प्रकार का है?

हे गौतम! उसका भू भाग अत्यंत समतल तथा रमणीय है। इस संबंध में सुषम-सुषमानुरूप वक्तव्यता ग्राह्य है यावत् वहाँ के मनुष्य १. पद्मगंध - कमल के समान गंध युक्त। २. मृगगंध- कस्तूरी मृग से प्राप्त कस्तूरी की सुगंध के समान। ३. अमम - ममत्व रहित। ४. सक्षम - कार्य कुशल। ५. तेतली - विशिष्ट पुण्य प्रसूत तेजोमय तथा ६. शनैश्चरी - मंद-मंद गति से चलने वाले हैं।

यमक संज्ञक पर्वत द्वय

कहि णं भंते! उत्तरकुराए २ जमगा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता?

गोयमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठजोयणसए चोत्तीसे चत्तारि य सत्तभाए जोयणस्स अबाहाए सीयाए महाणईए उभओ कूले एत्थ णं जमगा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता जोयणसहस्सं उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं उव्वेहेणं मूले एगं जोयणसहस्सं आयामविक्खम्भेणं मज्झे अद्धट्ठमाइं जोयणसयाइं आयामविक्खम्भेणं उवरिं पंच जोयणसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं मूले तिण्णि जोयणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोयणसयं किंचि-बिसेसाहियं परिक्खेवेणं मज्झे दो जोयणसहस्साइं तिण्णि बावत्तरे जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं उवरिं एगं जोयणसहस्सं पंच य एकासीए जोयणसए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं मूले विच्छिण्णा मज्झे संखित्ता उप्पिं तणुया जमगसंठाणसंठिया सव्वकणगामया अच्छा सण्हा० पत्तेयं २ पउमवरवेइया-परिक्खित्ता पत्तेयं २ वणसंडपरिक्खित्ता, ताओ णं पउमवरवेइयाओ दो गाउयाइं उद्धं उच्चत्तेणं पंच धणुसयाइं विक्खम्भेणं, वेइयावणसण्डवण्णओ भाणियव्वो।

तेसि णं जमगपव्वयाणं उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं दुवे पासायवडेंसगा पण्णत्ता, ते णं पासायवडेंसगा बावट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च उद्धं उच्चत्तेणं इक्कतीसं जोयणाइं कोसं च आयामविक्खंभेणं पासायवण्णओ भाणियव्वो, सीहासणा सपरिवारा जाव एत्थ णं जमगाणं देवाणं सोलसण्हं आयारक्खदेव-साहस्सीणं सोलस भद्दासणसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-जमगा पव्वया २?

गोयमा! जमगपव्वएसु णं तत्थ २ देसे २ तहिं २ बहवे खुड्डाखुड्डियासु वावीसु जाव बिलपंतियासु बहवे उप्पलाइं जाव जमगवण्णाभाइं जमगा य इत्थ दुवे देवा महिड्ढिया०, ते णं तत्थ चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं जाव भुंजमाणा विहरंति, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-जमगपव्वया २ अदुत्तरं च णं सासए णामधेज्जे जाव जमगपव्वया २।

कहि णं भंते! जमगाणं देवाणं जमिगाओ रायहाणीओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! जम्बुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं अण्णंमि जंबुद्दीवे २ बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं जमगाणं देवाणं जमिगाओ रायहाणीओ पण्णत्ताओ बारस जोयणसहस्साइं आयामविक्खम्भेणं सत्ततीसं जोयणसहस्साइं णव य अडयाले जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं, पत्तेयं २ पायार-परिक्खित्ता, ते णं पागारा सत्ततीसं जोयणाइं अद्धजोयणं च उद्धं उच्चत्तेणं मूले अद्धतेरसजोयणाइं विक्खम्भेणं मज्झे छ सकोसाइं जोयणाइं विक्खम्भेणं उवरिं तिण्णि सअद्धकोसाइं जोयणाइं विक्खम्भेणं मूले विच्छिण्णा मज्झे संखित्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उप्पिं तणुया बाहिं वट्टा अंतो चउरंसा सव्वरयणामया अच्छा०, ते णं पागारा णाणामणिपंचवण्णेहिं कविसीसएहिं उवसोहिया, तंजहा-किण्हेहिं जाव सुक्किल्लेहिं, ते णं कविसीसगा अद्धकोसं आयामेणं देसूणं अद्धकोसं उड्ढं उच्चत्तेणं पंच धणुसयाइं बाहल्लेणं सव्वमणिमया अच्छा०।

जमिगाणं रायहाणीणं एगमेगाए बाहाए पणवीसं पणवीसं दारसयं पण्णत्तं, ते णं दारा बावट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च उड्ढं उच्चत्तेणं इक्कतीसं जोयणाइं कोसं च विक्खम्भेणं तावइयं चेव पवेसेणं, सेया वरकणगथूभियागा एवं रायप्पसेणइज्जविमाणवत्तव्वयाए दारवण्णओ जाव अट्ठट्ठमंगलगाइंति।

जमियाणं रायहाणीणं चउद्दिसिं पंच पंच जोयणसए अबाहाए चत्तारि वणसण्डा पण्णत्ता, तंजहा-असोगवणे १ सत्तिवण्णवणे २ चंपगवणे ३ चूयवणे ४, ते णं वणसंडा साइरेगाइं बारसजोयणसहस्साइं आयामेणं पंच जोयणसयाइं विक्खंभेणं पत्तेयं २ पागारपरिक्खित्ता किण्हा वणसण्डवण्णओ भूमीओ पासायवडेंसगा य भाणियव्वा।

जमिगाणं रायहाणीणं अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते वण्णगोत्ति, तेसि णं बहुसमरमणिज्जाणं भूमिभागाणं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं दुवे उवयारियालयणा पण्णत्ता बारस जोयणसयाइं आयामविक्खम्भेणं तिण्णि जोयणसहस्साइं सत्त य पंचाणउए जोयणसए परिक्खेवेणं अद्धकोसं च बाहल्लेणं सव्वजंबूणयामया अच्छा०, पत्तेयं पत्तेयं पउमवरवेइयापरिक्खित्ता, पत्तेयं पत्तेयं वणसंडवण्णओ भाणियव्वो, तिसोवाणपडिरूवगा तोरणचउद्दिसिं भूमिभागा य भाणियव्वत्ति।

तस्स णं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते बावट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च उड्ढं उच्चत्तेणं इक्कतीसं जोयणाइं कोसं च आयाम-विक्खम्भेणं वण्णओ उल्लोया भूमिभागा सीहासणा सपरिवारा, एवं पासाय-पंतीओ एत्थ पढमा पंती ते णं पासायवडिंसगा एक्कतीसं जोयणाइं कोसं च उड्ढं उच्चत्तेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साइरेगाइं अद्धसोलसजोयणाइं आयामविक्खंभेणं, बिइयपासायपंती ते णं पासायवडेंसया साइरेगाइं अद्धसोलसजोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं साइरेगाइं अद्धट्ठमाइं जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं, तइयपासायपंती ते णं पासायवडेंसया साइरेगाइं अद्धट्ठमाइं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं साइरेगाइं अद्धुट्ठजोयणाइं आयाम-विक्खम्भेणं वण्णओ सीहासणा सपरिवारा, तेसि णं मूलपासायवडिंसयाणं उत्तर-पुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं जमगाणं देवाणं सहाओ सुहम्माओ पण्णत्ताओ अद्धतेरस-जोयणाइं आयामेणं छस्सकोसाइं जोयणाइं विक्खम्भेणं णव जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अणेगखम्भसयसण्णिविट्ठा सभावण्णओ, तासि णं सभाणं सुहम्माणं तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता, ते णं दारा दो जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं जोयणं विक्खम्भेणं तावइयं चेव पवेसेणं, सेया वण्णओ जाव वणमाला।

तेसि णं दाराणं पुरओ पत्तेयं पत्तेयं तओ मुहमंडवा पण्णत्ता, ते णं मुहमंडवा अद्धतेरसजोयणाइं आयामेणं छस्सकोसाइं जोयणाइं विक्खम्भेणं साइरेगाइं दो जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं जाव दारा भूमिभागा य त्ति, पेच्छाघरमंडवाणं तं चेव पमाणं भूमिभागो मणिपेढियाओत्ति, ताओ णं मणिपेढियाओ जोयणं आयाम-विक्खम्भेणं अद्धजोयणं बाहल्लेणं सव्वमणिमईओ सीहासणा भाणियव्वा।

तेसि णं पेच्छाघरमंडवाणं पुरओ मणिपेढियाओ पण्णत्ताओ, ताओ णं मणिपेढियाओ दो जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं जोयणं बाहल्लेणं सव्व-मणिमईओ, तासि णं उप्पिं पत्तेयं २ तओ थूभा तेणं थूभा दो जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं दो जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं सेया संखतल जाव अट्ठट्ठमंगलगा।

तेसि णं थूभाणं चउद्दिसिं चत्तारि मणिपेढियाओ पण्णत्ताओ, ताओ णं मणिपेढियाओ जोयणं आयामविक्खम्भेणं अद्धजोयणं बाहल्लेणं जिणपडिमाओ वत्तव्वाओ, चेइयरुक्खाणं मणिपेढियाओ दो जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं जोयणं बाहल्लेणं चेइयरुक्ख वण्णओत्ति। तेसि णं चेइयरुक्खाणं पुरओ तओ मणिपेढियाओ पण्णत्ताओ, ताओ णं मणिपेढियाओ जोयणं आयाभविक्खम्भेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अद्धजोयणं बाहल्लेणं तासि णं उप्पिं पत्तेयं २ महिंदज्झया पण्णत्ता, ते णं महिंदज्झया अद्धट्ठमाइं जोयणाइं उद्धं उच्चत्तेणं अद्धकोसं उव्वेहेणं अद्धकोसं बाहल्लेणं वइरामयवट्टवण्णओ वेइयावणसंडतिसोवाणतोरणा य भाणियव्वा, तासि णं सभाणं सुहम्माणं छच्च मणोगुलिया-साहस्सीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-पुरत्थिमेणं दो साहस्सीओ पण्णत्ताओ पच्चत्थिमेणं दो साहस्सीओ, दक्खिणेणं एगा साहस्सी उत्तरेणं एगा जाव दामा चिट्ठंतित्ति, एवं गोमाणसियाओ, णवरं धूवघडियाओत्ति।

तासि णं सुहम्माणं सभाणं अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, मणिपेढिया दो जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं जोयणं बाहल्लेणं, तासि णं मणिपेढियाणं उप्पिं माणवए चेइयखम्भे महिंदज्झयप्पमाणे उवरिं छक्कोसे ओगाहित्ता हेट्ठा छक्कोसे वज्जित्ता जिणसकहाओ पण्णत्ताओत्ति, माणवगस्स पुव्वेणं सीहासणा सपरिवारा पच्चत्थिमेणं सयणिज्जवण्णओ, सयणिज्जाणं उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए खुड्डगमहिंदज्झया मणिपेढिया विहूणा महिंदज्झयप्पमाणा, तेसि अवरेणं चोप्फाला पहरणकोसा, तत्थ णं बहवे फलिहरयणपामुक्खा जाव चिट्ठंति, सुहम्माणं० उप्पिं अट्ठट्ठमंगलगा तासि णं उत्तरपुरत्थिमेणं सिद्धाययणा एस चेव जिणघराणवि गमोत्ति णवरं इमं णाणत्तं एएसिं णं बहुमज्झदेसभाए पत्तेयं २ मणिपेढियाओ दो जोयणाइं आयामविक्खंभेणं जोयणं बाहल्लेणं, तासिं उप्पिं पत्तेयं २ देवच्छंदया पण्णत्ता, दो जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं साइरेगाइं दो जोयणाइं उद्धं उच्चत्तेणं सव्वरयणामया जिणपडिमा वण्णओ जाव धूवकडुच्छगा एवं अवसेसाणवि सभाणं जाव उववायसभाए सयणिज्जं हरओ य।

अभिसेयसभाए बहु आभिसेक्के भंडे, अलंकारियसभाए बहु अलंकारियभंडे चिट्ठइ, ववसाय-सभासु पुरत्थयरयणा, णंदा पुक्खरिणीओ बलिपेढा दो जोयणाइं आयाम-विक्खम्भेणं जोयणं बाहल्लेणं जाव त्ति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववाओ संकप्पो अभिसेयविहूसणा य ववसाओ।

अच्चणिअ सुहम्मगमो जहा य परिवारणा इड्ढी॥१॥

जावइयंमि पमाणंमि हुंति जमगाओ णीलवंताओ।

तावइयमंतरं खलु जमगदहाणं दहाणं च॥२॥

शब्दार्थ - **चरिमंताओ** - अंतिम कोण, **पायार** - प्राकार-परकोटा, **तओ** - तीन, **मणोगुलिया** - आराम पूर्वक बैठने की आसनिका, **सकहाओ** - अस्थियाँ, **पहरणकोसा** - प्रहरणकोश-शस्त्रागार, **हरओ** - घर।

भावार्थ - हे भगवन्! उत्तर कुरु के अंतर्गत यमक संज्ञक दो पर्वत कहाँ कहे गए हैं?

हे गौतम! नीलवान वर्षधर पर्वत की दक्षिण दिशा के अंतिम कोण से ८३४$\frac{४}{७}$ योजन के अन्तर पर, शीतोदा नदी के पूर्वी एवं पश्चिमी तट पर यमक नामक दो पर्वत कहे गए हैं। वे एक हजार योजन ऊंचे, २५० योजन पृथ्वी में गहरे, मूल में एक हजार योजन, मध्य में ७५० योजन तथा ऊपर ५०० योजन आयाम-विस्तार युक्त हैं। उनकी परिधि मूल में ३१६२ योजन से कुछ अधिक, मध्य में २३७२ योजन से कुछ अधिक तथा ऊपर १५८१ योजन से कुछ अधिक है। वे मूल में चौड़े, बीच में संकरे तथा ऊपर पतले हैं। वे यमक संस्थान संस्थित, सहोत्पन्न दो भाइयों के आकार के समान हैं। वे सम्पूर्णतः स्वर्णमय, उज्ज्वल, साफ तथा सुकोमल है। उनमें से प्रत्येक एक-एक पद्मवर वेदिका तथा एक-एक वनखंड द्वारा परिवेष्टित है। वे पद्मवर वेदिकाएं ऊँचाई में दो-दो कोस तथा चौड़ाई में पांच-पांच सौ धनुष परिमित हैं। उन पद्मवर वेदिकाओं एवं वनखंडों का वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है।

उन यमक संज्ञक पर्वतों पर अत्यधिक समतल एवं सुंदर भूमिभाग है। उसके ठीक मध्य में दो उत्तम प्रासाद हैं। वे ऊँचाई में ६२$\frac{१}{२}$ योजन है। ३१ योजन एक कोस आयाम-विस्तार युक्त हैं यावत् सपरिवार-स्वसंबद्ध सामग्री सहित सिंहासन के वर्णन पर्यंत प्रासादों का वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है। यमक देवों के सोलह हजार आत्म रक्षक देव हैं, जिनके सोलह हजार श्रेष्ठ सिंहासन प्रतिपादित हुए हैं।

हे भगवन्! वे पर्वत यमक शब्द द्वारा क्यों पुकारे जाते हैं?

हे गौतम! उन पर्वतों पर यत्र-तत्र अनेक छोटी-छोटी वापियां यावत् बिल पंक्तियाँ-गुहाएं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं, जिनमें बहुत से कमल आदि विकसित हैं यावत् इनका वर्ण और आभा यमक पर्वत के तुल्य है। वहाँ अत्यंत समृद्धि युक्त यमक नामक दो देव रहते हैं। उनके चार सहस्त्र सामानिक देव हैं यावत् वे सुखभोग करते हुए वहाँ विहरणशील हैं।

हे गौतम! इस कारण वे यमक पर्वत के नाम से विख्यात है। इसके अलावा उनका यह नाम शाश्वत है।

हे भगवन्! यमक देवों की यमिका संज्ञक राजधानियाँ कहां बतलाई गई हैं?

हे गौतम! जंबूद्वीप के अंतर्गत मंदर पर्वत के उत्तर में अन्य जंबूद्वीप में बारह हजार योजन अवगाहन करने पर यमक देवों की यमिका संज्ञक राजधानियाँ आती है। वे बारह हजार योजन आयाम-विस्तार युक्त है। इनकी परिधि ३७९४८ योजन से कुछ अधिक है। प्रत्येक राजधानी परकोटे से घिरी हुई है। उनके परकोटे ३७$\frac{१}{२}$ योजन ऊंचे हैं। मूल में वे १२$\frac{१}{२}$ योजन, बीच में छह योजन एक कोस तथा ऊपर तीन योजन अर्द्धकोस विस्तार युक्त है। ये मूल में चौड़े बीच में संकरे तथा ऊपर पतले हैं। वे बाहर से गोलाकार तथा भीतर से चतुष्कोण हैं। वे सम्पूर्णतः रत्नमय तथा स्वच्छ हैं। वे प्राकार भिन्न-भिन्न प्रकार के पंचरंगे रत्नों से बने हुए कपिशीर्षकों-कंगूरों द्वारा सुशोभित हैं। वे कृष्ण यावत् शुक्ल आभामय हैं। वे आयाम में अर्द्ध कोस तथा ऊँचाई में अर्द्ध कोस से कुछ कम तथा मोटाई में पांच सौ धनुष प्रमाण हैं। वे सर्वथा मणिमय एवं स्वच्छ है। यमिका संज्ञक राजधानियों के प्रत्येक पार्श्व में सवा सौ-सवा सौ द्वार हैं। वे ऊंचाई में ६२$\frac{१}{२}$ योजन तथा चौड़ाई में इकतीस योजन एक कोस है। इनमें प्रवेश मार्ग भी इतने ही प्रमाण के हैं, श्रेष्ठ स्वर्णमय स्तूपिका द्वार यावत् अष्ट मंगलक पर्यन्त सारा वर्णन राजप्रश्नीय सूत्र के विमान वर्णन की वक्तव्यता के अनुसार ग्राह्य है।

यमिका राजधानियों के चारों ओर पांच-पांच सौ योजन की दूरी पर अशोक वन, सप्तपर्ण वन, चंपकवन तथा आम्र वन-ये चार वनखण्ड हैं। ये वनखंड लम्बाई में बारह हजार योजन से कुछ अधिक तथा चौड़ाई में पांच सौ योजन प्रमाण हैं। प्रत्येक वनखंड परकोटों द्वारा घिरा हुआ है। कृष्ण आभा युक्त वनखंड भूमिभाग, उत्तम प्रासाद आदि का वर्णन पूर्वानुरूप है। उन यमिका संज्ञक राजधानियों में से प्रत्येक में अत्यंत समतल एवं रमणीय भूमिभाग है। उनका वर्णन पूर्वानुसार कथनीय है। उन अत्यंत समतल भूमिभागों के बीचोंबीच दो उपकारिकालयन-प्रासाद पीठिकाएं बतलाई गई हैं। वे बारह सौ योजन आयाम-विस्तार युक्त हैं। इनकी परिधि ३७९५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

योजन परिमित है। ये मोटाई में अर्द्धकोस प्रमाण हैं। श्रेष्ठ जंबूनद जातीय स्वर्ण से निर्मित एवं उज्ज्वल है। इनमें से प्रत्येक एक-एक पद्मवर वेदिका एवं एक-एक वनखंड द्वारा घिरी हुई बतलाई गई है। त्रिसोपान एवं चारों दिशाओं में चार तोरण आदि का वर्णन पूर्व के वर्णन के अनुसार योजनीय है।

उनके ठीक मध्य में एक श्रेष्ठ प्रासाद है। वह ऊंचाई में ६२ $\frac{१}{२}$ योजन तथा ऊंचाई ३१ योजन एक कोस प्रमाण है। इसके उपरितन हिस्से, भूमिभाग, संबद्ध सामग्री युक्त सिंहासन मुख्य प्रासाद को चारों ओर से घेरने वाली छोटे प्रासादों की कतारें आदि का वर्णन अन्यत्र से ग्राह्य है।

छोटे प्रासादों की कतारों में से पहली कतार के प्रासाद ऊंचाई में ३१ योजन एक कोस प्रमाण हैं। वे १५ $\frac{१}{२}$ योजन से कुछ अधिक आयाम-विस्तार युक्त हैं। वे ७ $\frac{१}{२}$ योजन से कुछ अधिक आयाम-विस्तार युक्त है। तृतीय प्रासादपंक्ति के प्रासाद ७ $\frac{१}{२}$ योजन से कुछ अधिक ऊंचे तथा ३ $\frac{१}{२}$ योजन से कुछ अधिक आयाम-विस्तार वाले हैं। संबंधित अंगोपांग सहित सिंहासन पर्यंत सारा वर्णन पूर्वानुरूप कथनीय है।

मूल प्रासाद के उत्तरपूर्व दिक्भाग में यमक देवों की सुधर्मा सभाएं कही गई हैं। वे सभाएं १२ $\frac{१}{२}$ योजन लम्बी, छह योजन एक कोस चौड़ी तथा ९ योजन ऊँची हैं। वे सैकड़ों स्तंभों पर टिकी हुई है। इन सुधर्मा सभाओं की तीन दिशाओं में तीन द्वार कहे गए हैं। वे द्वार ऊंचाई में दो योजन, चौड़ाई में एक योजन हैं। उनके प्रवेश मार्गों का विस्तार भी उतना ही है यावत् वनमाला तक का वर्णन पूर्वानुरूप कथनीय है।

उन द्वारों में से प्रत्येक के आगे मुखमंडप—द्वारों के आगे निर्मित मंडप हैं। वे लम्बाई में १२ $\frac{१}{२}$ योजन, चौड़ाई में छह योजन एक कोस तथा ऊँचाई में दो योजन से कुछ अधिक हैं यावत् द्वार आदि का भूमिभाग पर्यन्त वर्णन पूर्वानुसार ग्राह्य है। मुख मंडपों के आगे विद्यमान प्रेक्षाग्रहों का प्रमाण मुखमंडपों के तुल्य है। भूमिभाग, मणिपीठिका आदि पहले ही वर्णित की जा चुकी है। ये मणिपीठिकाएं एक योजन आयाम-विस्तार युक्त तथा अर्द्ध योजन मोटाई युक्त हैं। ये सर्वथा मणिमय हैं। वहाँ स्थित सिंहासनों का वर्णन पहले की तरह योजनीय है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रेक्षाग्रह मण्डपों के आगे स्थित मणिपीठिकाएं दो योजन आयाम-विस्तार तथा मोटाई में एक योजन है। वे सर्वथा मणिनिर्मित है। उनमें से प्रत्येक पर तीन-तीन स्तूप-स्मारक या स्तंभ निर्मित हैं। वे स्तूप ऊँचाई और चौड़ाई-लम्बाई में दो-दो योजन हैं। वे शंख सदृश श्वेत हैं यावत् आठ-आठ मंगल प्रतीक पर्यन्त वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है। उन स्तूपों के चारों दिशा भागों में चार मणिपीठिकाएं हैं। वे लम्बाई-चौड़ाई में एक योजन तथा मौटाई में अर्द्ध योजन हैं। वहाँ विद्यमान जिनप्रतिमाओं का वर्णन पूर्वानुसार योज्य है।

वहाँ के चैत्य वृक्षों की मणिपीठिकाएं दो योजन लम्बी-चौड़ी एवं एक योजन मोटी है। चैत्य वृक्षों का का वर्णन पूर्ववत् कथनीय है। उन चैत्यवृक्षों के आगे तीन मणिपीठिकाएं प्रतिपादित हुई हैं। वे मणिपीठिकाएं एक योजन लम्बाई-चौड़ाई एवं अर्द्ध योजन मोटाई युक्त है। उनमें से प्रत्येक पर महेन्द्रध्वज हैं। वे साढे सात योजन ऊँचे एवं अर्द्ध कोस भूमि में गड़े हैं। ये हीरक निर्मित एवं गोलाकार हैं। इनका एवं वेदिका, वनखंड, सोपानमार्ग एवं तोरणों का वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है।

उन सुधर्मा सभाओं में छह हजार मनोगुलिकाएं--आराम पूर्वक बैठने की आसनिकाएं कही गई हैं। पूर्व एवं पश्चिम में दो-दो हजार तथा उत्तर-दक्षिण में एक-एक हजार हैं यावत् उन पर मालाएं लगी हुई हैं, तक का वर्णन पूर्ववत् ग्राह्य है। इसी प्रकार गोमानसिकाएं--शयनोपयोगी स्थान विशेष बने हुए हैं। अन्तर इतना है-यहाँ मालाओं के स्थान पर धूप-घटिकाएं बतलायी गई है। उन सुधर्मा सभाओं के अन्दर अत्यधिक समतल, रमणीय भू भाग हैं। यहाँ स्थित मणिपीठिकाएं दो-दो योजन आयाम-विस्तार वाली तथा एक योजन मोटी हैं। इन मणिपीठिकाओं के ऊपर महेन्द्रध्वज के सदृश प्रमाण वाले माणवक संज्ञक चैत्य स्तंभ हैं। उसमें ऊपर की ओर छह कोस अवगाहित कर तथा नीचे के छह कोस वर्णित कर मध्य में जिन अस्थियाँ कही गई हैं।

माणवक चैत्य स्तंभ के पूर्व में स्थित स्वकीय अंगोपांगात्मक उपकरणों सहित सिंहासन पश्चिम में विद्यमान शयनीय पूर्व वर्णन के अनुसार हैं। शयनीयों के उत्तर पूर्व दिग्भाग में छोटे महेन्द्रध्वज हैं। वे मणिपीठिका रहित हैं तथा महेन्द्रध्वज के प्रमाण तुल्य हैं। इनके पश्चिम में चोप्फाल नामक शस्त्रागार है। वहाँ बहुत से स्फटिक एवं रत्न निर्मित प्रमुख आयुध विद्यमान हैं।

सुधर्मा सभाओं के ऊपर आठ-आठ मांगलिक चिह्न रखे हुए हैं। इनके उत्तर-पूर्व दिशा भाग में सिद्धायतन है। जिनगृह संबंधी गम पाठ पूर्वानुसार है। केवल इतना अन्तर है - इन जिनगृहों में प्रत्येक के बीचों बीच में मणिपीठिका है। ये लम्बाई-चौड़ाई में दो योजन तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मोटाई में एक योजन हैं। इन मणिपीठिकाओं में प्रत्येक पर देवच्छंदक-दिव्य आसन हैं। ये लम्बाई-चौड़ाई में दो योजन तथा ऊँचाई में दो योजन से कुछ अधिक हैं, सम्पूर्णतः रत्नमय है। धूप के कुड़छों तक जिन प्रतिमाओं का वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है यावत् उपपात सभा आदि अवशिष्ट सभाओं का वर्णन शयनीय, गृह पर्यन्त पूर्वानुरूप है। अभिषेक सभा में बहुत से अभिषेक पात्र अलंकार सभा में आलंकारिक पात्र तथा व्यवसाय सभा में पुस्तक रत्न हैं। यहाँ नंदा पुष्करिणी एवं बलिपीठ पूजा पीठ है। यह दो योजन लम्बा-चौड़ा तथा एक योजन मोटा है।

गाथा - उपपात, संकल्प, अभिषेक, विभूषण सभा, अर्चनिका, सुधर्मा सभा में गमन, परिवारणा - तद्-तद् दिशाओं में परिवार स्थापना, ऋद्धि आदि यमक देवों का वर्णन क्रम है।१।

नीलवान् पर्वत से चमक पर्वतों का जितना अंतर है, उतनी ही दूरी यमक द्रहों से अन्य द्रहों की है।२।

नीलवान् द्रह

(१०६)

कहि णं भंते! उत्तरकुराए २ णीलवंतद्दहे णामं दहे पण्णत्ते?

गोयमा! जमगाणं० दक्खिणिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठसए चोत्तीसे चत्तारि य सत्तभाए जोयणस्स अबाहाए सीयाए महाणईए बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं णीलवंतद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, दाहिणउत्तरायए पाईणपडीणविच्छिण्णे जहेव पउमद्दहे तहेव वण्णओ णेयव्वो, णाणत्तं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते, णीलवंते णामं णागकुमारे देवे सेसं तं चेव णेयव्वं, णीलवंतद्दहस्स पुव्वावरे पासे दस २ जोयणाइं अबाहाए एत्थ णं वीसं कंचणगपव्वया पण्णत्ता, एगं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं।

गाहाओ - मूलंमि जोयणसयं, पण्णत्तरि जोयणाइं मज्झंमि।
उवरितले कंचणगा, पण्णासं जोयणा हुंति॥१॥
मूलंमि तिण्णि सोले, सत्तत्तीसाइं दुण्णि मज्झंमि।
अट्ठावण्णं च सयं, उवरितले परिरओ होइ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पढमित्थ णीलवंतो १, बिइओ उत्तरकुरू २ मुणेयव्वो।
चंदद्दहोत्थ तइओ ३ एरावय ४ मालवंतो य ॥३॥

एवं वण्णओ अट्ठो पमाणं पलिओवमट्ठिइया देवा।

भावार्थ - हे भगवन्! उत्तरकुरु के अंतर्गत नीलवान् संज्ञक पर्वत किस स्थान पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! यमक पर्वतों के दक्षिणवर्ती अंतिम छोर से ८३४$\frac{४}{७}$ योजन के अंतर पर सीता महानदी के ठीक बीच में नीलवान् संज्ञक द्रह आख्यात हुआ है। यह दक्षिण-उत्तर में लंबा तथा पूर्व-पश्चिम चौड़ा है। जैसा पद्म द्रह का वर्णन आया है, वैसा ही इसका वर्णन है, इतना भेद है - यह दो पद्मवर वेदिकाओं एवं दो वनखंडों द्वारा घिरा हुआ है। वहाँ नीलवान् संज्ञक नागकुमार देव निवास करता है। अवशिष्ट वर्णन पहले की तरह योजनीय है। नीलवान द्रह के पूर्वी-पश्चिमी पार्श्वों में दस-दस योजन के अंतर पर बीस कांचनक पर्वत हैं। वे सौ-सौ योजन ऊंचे हैं।

गाथाएं - कांचनक पर्वतों का विस्तार मूल में सौ, बीच में पचहत्तर तथा ऊपर पचास योजन प्रमाण है। उनकी परिधि मूल में तीन सौ सोलह योजन, बीच में दो सौ सैंतीस योजन तथा ऊपर एक सौ अट्ठावन योजन है। नीलवान्, उत्तरकुरु, चन्द्र, ऐरावत तथा माल्यवान् ये पांच द्रह हैं। ॥१-३॥

इन द्रहों का वर्णन नीलवान् द्रह के सदृश है। इन सभी पर एक पल्योपम आयुष्य युक्त देव निवास करते हैं।

जंबू पीठ एवं जंबू सुदर्शना

(१०७)

कहि णं भंते! उत्तरकुराए २ जम्बूपेढे णामं पेढे पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं मंदरस्स० उत्तरेणं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं सीयाए महाणईए पुरत्थिमिल्ले कूले एत्थ णं उत्तरकुराए जम्बूपेढे णामं पेढे पण्णत्ते पंच जोयणसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं पण्णरस एक्कासीयाइं जोयणसयाइं किंचिविसेसाहियाइं परिक्खेवेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बहुमज्झदेसभाए बारस जोयणाइं बाहल्लेणं तयणंतरं च णं मायाए २ पएसपरिहाणीए परिहायमाणे २ सव्वेसु णं चरिमपेरंतेसु दो दो गाउयाइं बाहल्लेणं सव्वजम्बूणयामए अच्छे०, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते दुण्हंपि वण्णओ, तस्स णं जम्बूपेढस्स चउद्दिसिं एए चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता वण्णओ जाव तोरणाइं, तस्स णं जम्बूपेढस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं मणिपेढिया पण्णत्ता अट्ठजोयणाइं आयाम-विक्खम्भेणं चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं, तीसे णं मणिपेढियाए उप्पिं एत्थ णं जम्बूसुदंसणा पण्णत्ता अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अद्धजोयणं उव्वेहेणं, तीसे णं खंधो दो जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अद्धजोयणं बाहल्लेणं, तीसे णं साला छ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं बहुमज्झदेसभाए अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं साइरेगाइं अट्ठ जोयणाइं सव्वग्गेणं।

तीसे णं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, वइरामया मूला रययसुपइट्ठिय-विडिमा जाव अहियमणणिव्वुइकरी पासाईया दरिसणिज्जा०, जम्बूए णं सुदंसणाए चउद्दिसिं चत्तारि साला पण्णत्ता, तेसि णं सालाणं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं सिद्धाययणे पण्णत्ते, कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खम्भेणं देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं अणेग-खम्भसयसण्णिविट्ठं जाव दारा पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं जाव वणमालाओ मणिपेढिया पंचधणुसयाइं आयामविक्खंभेणं अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेणं, तीसे णं मणिपेढियाए उप्पिं देवच्छंदए पंचधणुसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं साइरेगाइं पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं जिणपडिमावण्णओ णेयव्वोत्ति।

तत्थ णं जे से पुरत्थिमिल्ले साले एत्थ णं भवणे पण्णत्ते कोसं आयामेणं एवमेव णवरमित्थ सयणिज्जं सेसेसु पासायवडेंसया सीहासणा य सपरिवारा इति। जम्बू णं० बारसहिं पउमवरवेइयाहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता, वेइयाणं वण्णओ, जम्बू णं० अण्णेणं अट्ठसएणं जम्बूणं तदधुच्चत्ताणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता, तासि णं वण्णओ, ताओ णं जम्बू छहिं पउमवरवेइयाहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संपरिक्खित्ता, जम्बूए णं सुंदसणाए उत्तरपुरत्थिमेमं उत्तरेणं उत्तरपच्चत्थिमेणं एत्थ णं अणाढियस्स देवस्स चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं चत्तारि जम्बूसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, तीसे णं पुरत्थिमेणं चउण्हं अग्गमहिसीणं चत्तारि जम्बूओ पण्णत्ताओ,-

दाहिणपुरत्थिमे दक्खिणेण तह अवरदक्खिणेणं च।
अट्ठ दस बारसेव य भवंति जम्बूसहस्साइं॥१॥
अणियाहिवाण पच्चत्थिमेण सत्तेव होंति जम्बूओ।
सोलस साहस्सीओ चउद्दिसिं आयरक्खाणं॥२॥

जम्बूए णं० तिहिं सइएहिं वणसंडेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता, जम्बूए णं० पुरत्थिमेणं पण्णासं जोयणाइं पढमं वणसंडं ओगाहित्ता एत्थ णं भवणे पण्णत्ते कोसं आयामेणं सो चेव वण्णओ सयणिज्जं च, एवं सेसासु विदिसासु भवणा, जम्बूए णं० उत्तरपुरत्थिमेणं पढमं वणसण्डं पण्णासं जोयणाइं ओगाहित्ता एत्थ णं चत्तारि पुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-पउमा १ पउमप्पभा २ कुमुया ३ कुमुयप्पभा ४ ताओ णं कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खम्भेणं पंचधणुसयाइं उव्वेहेणं वण्णओ, तासि णं मज्झे पासायवर्डेसगा कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खम्भेणं देसूणं कोसं उद्धं उच्चत्तेणं वण्णओ सीहासणा सपरिवारा, एवं सेसासु विदिसासु

गाहा - पउमा पउमप्पभा चेव, कुमुया कुमुयप्पहा।
उप्पलगुम्मा णलिणा, उप्पला उप्पलुज्जला॥१॥
भिंगा भिंगप्पभा चेव, अंजणा कज्जलप्पभा।
सिरिकंता सिरिमहिया, सिरिचंदा चेव सिरिणिलया॥२॥

जम्बूए णं पुरत्थिमिल्लस्स भवणस्स उत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमिल्लस्स पासायवर्डेसगस्स दक्खिणेणं एत्थ णं कूडे पण्णत्ते अट्ठ जोयणाइं उद्धं उच्चत्तेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दो जोयणाइं उव्वेहेणं मूले अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं बहुमज्झदेसभाए छ जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं उवरिं चत्तारि जोयणाइं आयाम-विक्खम्भेणं

पणवीसट्ठारस बारसेव मूले य मज्झि उवरिं च।

सविसेसाइं परिरओ कूडस्स इमस्स बोद्धव्वो॥१॥

मूले विच्छिण्णे मज्झे संखित्ते उवरिं तणुए सव्व-कणगामए अच्छे० वेइयावणसंडवण्णओ, एवं सेसावि कूडा इति।

जम्बूए णं सुदंसणाए दुवालस णामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा-

सुदंसणा १ अमोहा २ य, सुप्पबुद्धा ३ जसोहरा ४।

विदेहजम्बू ५ सोमणसा ६, णियया ७ णिच्चमंडिया ८॥१॥

सुभद्दा य ९ विसाला य १०, सुजाया ११ सुमणा १२ विया।

सुदंसणाए जम्बूए, णामधेज्जा दुवालस॥२॥

जम्बूए णं० अट्ठट्ठमंगलगा०।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-जम्बू सुदंसणा २?

गोयमा! जम्बूए णं सुदंसणाए अणाढिए णामं देवे जम्बूद्दीवाहिवई परिवसइ महिड्ढिए०, से णं तत्थ चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं जाव आयरक्ख-देवसाहस्सीणं जम्बुद्दीवस्स णं दीवस्स जम्बूए सुदंसणाए अणाढियाए रायहाणीए अण्णेसिं च बहूणं देवाण य देवीण य जाव विहरइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ०, अदुत्तरं च णं गोयमा! जम्बूसुदंसणा जाव भुविं च ३ धुवा णियया सासया अक्खया जाव अवट्ठिया।

कहि णं भंते! अणाढियस्स देवस्स अणाढिया णामं रायहाणी पण्णत्ता?

गोयमा! जम्बुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं जं चेव पुव्वण्णियं जमिगापमाणं तं चेव णेयव्वं जाव उववाओ अभिसेओ य णिरवसेसोत्ति।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-उत्तरकुरा २?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! उत्तरकुराए० उत्तरकुरू णामं देवे परिवसइ महिड्डिए जाव पलिओवमट्ठिइए, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-उत्तरकुरा २, अदुत्तरं च णं जाव सासए....।

शब्दार्थ - साला - शाखा, **विडिमा** - मध्य से ऊपर की ओर निकली हुई शाखा।

भावार्थ - हे भगवन्! उत्तरकुरु के अंतर्गत जंबूपीठ संज्ञक पीठ कहाँ आख्यात हुआ है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, मंदर पर्वत के उत्तर में, माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में तथा शीता नाम की महानदी के पूर्वी तट पर उत्तर कुरु में जंबूद्वीप आख्यात हुआ है। यह लम्बाई-चौड़ाई में पांच सौ योजन प्रमाण है। इसकी परिधि पन्द्रह सौ इकासी योजन से कुछ अधिक है। यह पीठ मध्य में बारह योजन मोटा है। फिर क्रमशः उसका मोटापन कम होता हुआ, आखिरी शिखरों पर दो कोस मात्र रह जाता है। यह संपूर्णतः जंबूनद स्वर्ण से बना है, चमकीला है। यह एक पद्मवर वेदिका एवं एक वनखंड से चारों ओर से घिरा हुआ है। दोनों का वर्णन पूर्वानुसार ग्राह्य है। जम्बूपीठ की चारों दिशाओं में तीन-तीन सीढियाँ बतलाई गई हैं यावत् तोरण पर्यन्त इनका वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

इस जंबूपीठ के ठीक मध्य में एक मणिपीठिका है। यह लम्बाई चौड़ाई में आठ योजन तथा मोटाई में चार योजन है। इस मणिपीठिका के ऊपर जम्बू सुदर्शना नामक वृक्ष आख्यात हुआ है। वह ऊँचाई में आठ योजन तथा जमीन में आधा योजन गहरा है। इसका स्कन्ध-तना दो योजन ऊंचा तथा आधा योजन मोटा है। उसकी शाखा छह योजन ऊँची है। यह आठ योजन विस्तीर्ण है। यों सर्वांशतः इसका आयाम-विस्तार आठ योजन से कुछ अधिक होता है। इस सुदर्शना वृक्ष का विस्तृत वर्णन इस प्रकार हैं - इसकी जड़े वज्ररत्नमय हैं। उसकी विडिमा रजतघटित है यावत् यह मन के लिए अत्यंत शांति प्रद, उल्लासमय एवं दर्शनीय है।

जंबू सुदर्शना की चारों दिशाओं में चार शाखाएं प्रतिपादित हुई हैं। उनके ठीक मध्य में एक सिद्धायतन है। यह लम्बाई में एक कोस, चोड़ाई में अर्द्धकोस तथा ऊँचाई में एक कोस से कुछ कम है। वह सैकड़ों खंभों पर समाश्रित है यावत् उसके द्वार पांच सौ धनुष प्रमाण ऊंचे हैं यावत् वनमालाओं का वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

पूर्वोक्त मणिपीठिका पांच सौ धनुष लम्बी-चौड़ी तथा ढ़ाई सौ धनुष मोटी है। इस मणि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पीठिका पर देवच्छंदक-दिव्य आसन लगा है। यह लम्बाई-चौड़ाई में पांच सौ धनुष तथा ऊंचाई में पांच सौ धनुष से कुछ अधिक है। जिन प्रतिमा पर्यन्त आगे का वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है।

उपर्युक्त शाखाओं में से पूर्वी शाखा पर एक भवन आख्यात हुआ है। यह एक कोस लम्बा है। इतना अंतर है कि वहाँ शयनीय और बतलाया गया है। अवशिष्ट शाखाओं पर उत्तम प्रासाद हैं। अंगोपांग सहित सिंहासन तक का वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है।

वह जम्बू सुदर्शन बारह पद्मवर वेदिकाओं द्वारा सब ओर से परिवेष्टित है। वेदिकाओं का वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है। पुनश्च, वह जंबू सुदर्शन १०८ जम्बू वृक्षों से परिवेष्टित है, जो उससे आधी ऊँचाई के है। इनका भी वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है। ये जंबू वृक्ष छह पद्मवर-वेदिकाओं से परिवेष्टित है।

जम्बू सुदर्शन के उत्तरपूर्व दिग्भाग में, उत्तर में एवं उत्तर पश्चिम दिग्भाग में अनादृत नामक देव के चार सहस्र सामानिक देवों के चार सहस्त्र जम्बू वृक्ष आख्यात हुए हैं। पूर्व में चार अग्रमहीषियों के चार जम्बू बतलाए गए हैं।

गाथाएं - दक्षिण पूर्व दिग्भाग, दक्षिण दिशा एवं दक्षिण-पश्चिम दिग्भाग में क्रमशः आठ हजार, दस हजार एवं बारह हजार जम्बू वृक्ष हैं। पश्चिम में अनीकाधिपति-सेनापति देवों के सात जम्बू हैं। चारों दिशाओं में आत्म रक्षक देवों के सोलह हजार जम्बू हैं॥१, २॥

जम्बू सुदर्शन वृक्ष तीन सौ वन खण्डों द्वारा सब ओर से घिरा हुआ है। उसके पूर्व में पचास योजन पर विद्यमान प्रथम वन खंड में जाने पर एक भवन आता है, जो लम्बाई में एक कोस प्रमाण है। उसका तथा वहाँ स्थित शयनीय आदि का वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है। अवशिष्ट दिशाओं में भी इसी प्रकार भवन कहे गये हैं। जम्बू सुदर्शना के उत्तर-पूर्व में प्रथम वनखण्ड में पचास योजन की दूरी पर पद्मा, पद्मप्रभा, कुमुदा तथा कुमुदप्रभा संज्ञक चार पुष्पकरिणियाँ हैं। ये लम्बाई में एक कोस तथा चौड़ाई में अर्द्धकोस प्रमाण हैं। वे धरती में पांच सौ धनुष गहरी हैं। इनका विशेष वर्णन अन्यत्र से ग्राह्य है। इनके बीच-बीच में श्रेष्ठ प्रासाद बने हुए हैं, जो लम्बाई में एक कोस, चौड़ाई में अर्द्धकोस तथा ऊँचाई में एक कोस से कुछ कम हैं। संबंधित उपकरणों सहित सिंहासन पर्यन्त उनका वर्णन पहले की तरह योजनीय है। इसी प्रकार अवशिष्ट विदिशाओं में भी निम्नांकित पुष्पकरिणियाँ हैं -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाथाएँ - पद्मा, पद्मप्रभा, कुमुदा, कुमुदप्रभा, उत्पलगुल्मा, नलिना, उत्पला, उत्पलोज्ज्वला, भृंगा, भृंगप्रभा, अंजना, कज्जलप्रभा, श्रीकांता, श्रीमहिता, श्रीचंद्रा तथा श्रीनिलया॥ ४२॥

जंबू के पूर्वदिशावर्ती भवन के उत्तर में, उत्तरपूर्व-ईशान कोण में विद्यमान श्रेष्ठ प्रासाद के दक्षिण में एक पर्वत शिखर बतलाया गया है। यह ऊँचाई में आठ योजन तथा दो योजन भूमि में गहरा है। वह मूल में आठ योजन, मध्य में छह योजन तथा उपरितन भाग में चार योजन आयाम-विस्तार युक्त है।

गाथा - उस शिखर की परिधि मूल में पच्चीस योजन से कुछ अधिक, बीच में अठारह योजन से कुछ अधिक तथा उपरितन भाग में बारह योजन से कुछ अधिक है, ऐसा जानना चाहिए॥ १॥

वह मूल में विस्तीर्ण, मध्य में संकीर्ण तथा उपरितन भाग में पतला है। सर्वथा स्वर्णमय एवं उद्योतमय है। पद्मवरवेदिका एवं वनखंड का वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है। अन्य शिखर भी इसी प्रकार के हैं। जंबू सुदर्शना के निम्नांकित बारह नाम आख्यात हुए हैं -

गाथाएँ - १. सुदर्शना २. अमोघा ३. सुप्रबुद्धा ४. यशोधरा ५. विदेह जम्बू ६. सौमनस्या ७. नियता ८. नित्य मंडिता ६. सुभद्रा १०. विशाला ११. सुजाता एवं १२. सुमना।

जम्बू सुदर्शना पर आठ-आठ मांगलिक पदार्थ स्थापित हैं।

हे भगवन्! यह वृक्ष जंबू सुदर्शना नाम से क्यों विख्यात हुआ?

हे गौतम! वहाँ जम्बूद्वीप का अधिष्ठायक, परमसमृद्धिशाली अनादृत संज्ञक देव अपने चार सहस्र सामानिक देवों यावत् सोलह सहस्र आत्मरक्षक देवों का जंबूद्वीप, जंबू सुदर्शना, अनादृता संज्ञक राजधानी तथा अन्य देव-देवियों का आधिपत्य करता हुआ निवास करता है।

हे गौतम! इस कारण वह वृक्ष जंबू सुदर्शना के नाम से विख्यात है। अथवा हे गौतम! जंबू सुदर्शना नाम अतीत, वर्तमान एवं भविष्य यावत् कालत्रय में ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय यावत् अवस्थित है।

हे भगवन्! अनादृत देव की अनादृता राजधानी किस स्थान पर विद्यमान है?

हे गौतम! जंबूद्वीप के अन्तर्गत, मंदर पर्वत के उत्तर में अनादृता राजधानी कही गई है। उसका प्रमाण आदि से संबद्ध वर्णन पूर्व वर्णित यमिका राजधानी के तुल्य है यावत् देव का उपपात-जन्म, अभिषेक आदि सारा वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है।

हे भगवन्! उत्तरकुरु को इस नाम से क्यों पुकारा जाता है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! उत्तरकुरु में अत्यंत समृद्धिशाली यावत् एक पल्योपम आयुष्यधारी उत्तरकुरु नामक देव निवास करता है। हे गौतम! इसी कारण वह उत्तरकुरु के नाम से पुकारा जाता है। अथवा उत्तरकुरु नाम ध्रुव यावत् शाश्वत है।

माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत

(१०८)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे मालवंते णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं उत्तरकुराए० पुरत्थिमेणं कच्छस्स चक्कवट्टिविजयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे मालवंते णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणविच्छिण्णे जं चेव गंधमायणस्स पमाणं विक्खम्भो य णवरमिमं णाणत्तं सव्ववेरुलियामए अवसिट्ठं तं चेव जाव गोयमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा - सिद्धाययणकूडे -

गाहा - सिद्धे य मालवंते उत्तरकुरु कच्छसागरे रयए।
सीओय पुण्णभद्दे हरिस्सहे चेव बोद्धव्वे॥ १॥

कहि णं भंते! मालवंते वक्खारपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं मालवंतस्स कूडस्स दाहिण-पच्चत्थिमेणं एत्थ णं सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते पंच जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अवसिट्ठं तं चेव जाव रायहाणी, एवं मालवंतस्स कूडस्स उत्तरकुरुकूडस्स कच्छकूडस्स, एए चत्तारि कूडा दिसाहिं पमाणेहिं णेयव्वा, कूडसरिसणामया देवा।

कहि णं भंते! मालवंते० सागरकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! कच्छकूडस्स उत्तरपुरत्थिमेणं रययकूडस्स दक्खिणेणं एत्थ णं सागरकूडे णामं पण्णत्ते पंच जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अवसिट्ठं तं चेव सुभोगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवी रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं रययकूडे भोगमालिणी देवी रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं, अवसिट्ठा कूडा उत्तरदाहिणेणं णेयव्वा एक्केणं पमाणेणं।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र में माल्यवान् संज्ञक वक्षस्कार पर्वत कहाँ आख्यात हुआ है?

हे गौतम! माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत मंदर पर्वत के उत्तर-पूर्व में, नीलवान वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, उत्तरकुरु के पूर्व में तथा कच्छ नामक चक्रवर्ती विजय के पश्चिम में महाविदेह क्षेत्र में प्रतिपादित हुआ है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बा तथा पूर्व-पश्चिम चौड़ा है। गंधमादन पर्वत का जैसा प्रमाण और विस्तार बताया गया है, वैसा ही इसका है। इतनी विशेषता है - यह संपूर्णतः वैदूर्य-नीलम रत्न निर्मित है। अवशिष्ट सभी बातें उस जैसी ही है यावत् हे गौतम! निम्नांकित नौ कूट आख्यात हुए हैं -

गाथा - सिद्धायतन, माल्यवान्, उत्तरकुरु, कच्छ, सागर, रजत, शीतोद, पूर्णभद्र तथा हरिसहकूट॥ १॥

हे भगवन्! माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत पर सिद्धायतन कूट की अवस्थिति कहाँ बतलाई गई है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के उत्तर-पूर्व में तथा माल्यवान् कूट के दक्षिण-पश्चिम में सिद्धायतन कूट आख्यात हुआ है। वह ऊँचाई में पाँच सौ योजन प्रमाण है यावत् राजधानी पर्यन्त अवशिष्ट समस्त वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है।

माल्यवान्, उत्तरकुरु तथा कच्छकूट की दिशाएँ, प्रमाण आदि सिद्धायतन कूट के तुल्य हैं। यों चारों कूटों का वर्णन एक समान ज्ञातव्य है। इन कूटों के नामों के अनुरूप नामधारी देव इन-इन कूटों पर निवास करते हैं।

हे भगवन्! माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत पर सागरकूट किस स्थान पर प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! सागरकूट कच्छकूट के उत्तर-पूर्व तथा रजतकूट के दक्षिण में कहा गया है। यह ऊँचाई में पाँच सौ योजन है। अवशिष्ट सारा वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है। वहाँ सुभोगा नामक देवी रहती है। उत्तर-पूर्व में उसकी राजधानी है। रजतकूट पर भोगमालिनी संज्ञक देवी निवास करती है। उसकी राजधानी उत्तर-पूर्व में स्थित है।

अवशिष्ट कूट उत्तर-दक्षिण में है, यह ज्ञातव्य है। इनका प्रमाण एक समान है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हरिसहकूट

(१०९)

कहि णं भंते! मालवंते हरिस्सहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! पुण्णभद्दस्स उत्तरेणं णीलवंतस्स दक्खिणेणं एत्थ णं हरिस्सहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते एगं जोयणसहस्सं उड्ढं उच्चत्तेणं जमगप्पमाणेणं णेयव्वं, रायहाणी उत्तरेणं असंखेज्जे दीवे अण्णंमि जम्बुद्दीवे दीवे उत्तरेणं बारस-जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं हरिस्सहस्स देवस्स हरिस्सहा णामं रायहाणी पण्णत्ता चउरासीइं जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं बे जोयणसयसहस्साइं पण्णट्ठिं च सहस्साइं छच्च छत्तीसे जोयणसए परिक्खेवेणं, सेसं जहा चमरचंचाए रायहाणीए तहा पमाणं भाणियव्वं, महिड्ढिए महज्जुईए।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-मालवंते वक्खारपव्वए २?

गोयमा! मालवंते णं वक्खारपव्वए तत्थ तत्थ देसे २ तहिं २ बहवे सेरियागुम्मा णोमालियागुम्मा जाव मगदंतियागुम्मा, ते णं गुम्मा दसद्धवण्णं कुसुमं कुसुमेंति, जे णं तं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स बहुसमरमणिज्जं भूमिभागं वायविधुयग्ग-सालामुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं करेंति, मालवंते य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ० अदुत्तरं च णं जाव णिच्चे।

भावार्थ - हे भगवन्! माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत पर हरिसहकूट किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! पूर्णभद्र कूट के उत्तर में तथा नीलवान् पर्वत के दक्षिण में हरिसहकूट प्रतिपादित हुआ है। वह एक सहस्र योजन ऊँचा है। इसका आयाम-विस्तार आदि समस्त वर्णन यमक पर्वत की तरह ज्ञातव्य है। राजधानी, उत्तर में स्थित असंख्य द्वीप समुद्रों को लांघने पर दूसरे जम्बूद्वीप के अंतर्गत बारह हजार योजन जाने पर हरिसह देव की हरिसहा नामक राजधानी बतलाई गई है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उसका आयाम-विस्तार ८४००० योजन है। इसकी परिधि २,६५,६३६ योजन है। बाकी का वर्णन चमरचंचा राजधानी की ज्यों कथनीय है। वह अत्यंत समृद्धि तथा द्युतिमय है।

हे भगवन्! माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत यह नाम किस कारण से पड़ा?

हे गौतम! माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत पर यत्र-तत्र अनेकानेक सेविकाओं, नवमल्लिकाओं यावत् मगदंतिकाओं आदि भिन्न-भिन्न पुष्पलताओं के गुल्म-समूह हैं। इन लताओं पर पाँच वर्णों के कुसुम विकसित हैं। ये लताएँ हवा द्वारा कांपती हुई अपनी टहनियों के अग्रभाग से गिरे हुए फूलों द्वारा माल्यवान् वक्षस्कार के अत्यंत समतल तथा रमणीय भू भाग को अत्यधिक सुसज्ज करती हैं। वहाँ अत्यंत समृद्धि संपन्न यावत् एक पल्योपम आयुष्यधारी माल्यवान् संज्ञक देव रहता हैं। हे गौतम! इस कारण से वह माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के नाम से पुकारा जाता है। अथवा इसका यह नाम ध्रुव यावत् नित्य है।

कच्छ-विजय

(११०)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे कच्छे णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! सीयाए महाणईए उत्तरेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे कच्छे णामं विजए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणविच्छिण्णे पलियंकसंठाणसंठिए गंगासिंधूहिं महाणईहिं वेयड्ढेण य पव्वएणं छब्भागपविभत्ते सोलस जोयणसहस्साइं पंच य बाणउए जोयणसए दोण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स आयामेणं दो जोयणसहस्साइं दोण्णि य तेरसुत्तरे जोयणसए किंचिविसेसूणे विक्खंभेणंति।

कच्छस्स णं विजयस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं वेयड्ढे णामं पव्वए पण्णत्ते जे णं कच्छं विजयं दुहा विभयमाणे २ चिट्ठइ, तंजहा - दाहिणद्धकच्छं च उत्तरद्धकच्छं चेति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दाहिणद्धकच्छे णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! वेयद्धस्स पव्वयस्स दाहिणेणं सीयाए महाणईए उत्तरेणं चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दाहिणद्धकच्छे णामं विजए पण्णत्ते, उत्तर-दाहिणायए पाईणपडीणविच्छिण्णे अट्ठ जोयणसहस्साइं दोण्णि य एगसत्तरे जोयणसए एक्कं च एगूणवीसइभागं जोयणस्स आयामेणं दो जोयणसहस्साइं दोण्णि य तेरसुत्तरे जोयणसए किंचिविसेसूणे विक्खम्भेणं पलियंकसंठाणसंठिए।

दाहिणद्धकच्छस्स णं भंते! विजयस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, तंजहा- जाव कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।

दाहिणद्धकच्छे णं भंते! विजए मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

गोयमा! तेसि णं मणुयाणं छव्विहे संघयणे जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे कच्छे विजए वेयद्धे णामं पव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! दाहिणद्धकच्छविजयस्स उत्तरेणं उत्तरद्धकच्छस्स दाहिणेणं चित्तकूडस्स० पच्चत्थिमेणं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं कच्छे विजए वेयद्धे णामं पव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे दुहा वक्खारपव्वए पुट्ठे पुरत्थिमिल्लाए कोडीए जाव दोहि वि पुट्ठे भरहवेयद्धसरिसए णवरं दो बाहाओ जीवा धणुपट्ठं च ण कायव्वं, विजयविक्खम्भसरिसे आयामेणं, विक्खम्भो उच्चत्तं उव्वेहो तहेव य विज्जाहरआभिओगसेढीओ तहेव, णवरं पणपण्णं २ विज्जाहरणगरावासा पण्णत्ता, आभिओगसेढीए उत्तरिल्लाओ सेढीओ सीयाए ईसाणस्स सेसाओ सक्कस्सत्ति। कूडा -

गाहा - सिद्धे १ कच्छे २ खंडग ३ माणी ४ वेयद्ध ५ पुण्ण ६ तिमिसगुहा ७।
कच्छे ८ वेसमणे वा ९ वेयद्धे होंति कूडाइं॥ १॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे उत्तरद्धकच्छे णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! वेयड्ढस्स पव्वयस्स उत्तरेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे जाव सिज्झंति तहेव णेयव्वं सव्वं।

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे उत्तरद्धकच्छे विजए सिंधुकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते?

गोयमा! मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं उसभकूडस्स० पच्चत्थिमेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णियंबे एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे उत्तरद्धकच्छविजए सिंधुकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते सट्ठिं जोयणाइं आयामविक्खंभेणं जाव भवणं अट्ठो रायहाणी य णेयव्वा, भरहसिंधुकुंडसरिसं सव्वं णेयव्वं जाव तस्स णं सिंधुकुंडस्स दाहिणिल्लेणं तोरणेणं सिंधुमहाणई पवूढा समाणी उत्तरद्धकच्छविजयं एज्जमाणी २ सत्तहिं सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ अहे तिमिसगुहाए वेयड्ढपव्वयं दालइत्ता दाहिणकच्छविजयं एज्जमाणी २ चोद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं समग्गा दाहिणेणं सीयं महाणइं समप्पेइ, सिंधुमहाणई पवहे य मूले य भरहसिंधुसरिसा पमाणेणं जाव दोहिं वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।

कहि णं भंते! उत्तरद्धकच्छविजए उसभकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! सिंधुकुंडस्स पुरत्थिमेणं गंगाकुण्डस्स पच्चत्थिमेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णियंबे एत्थ णं उत्तरद्धकच्छविजए उसहकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं तं चेव पमाणं जाव रायहाणी से णवरं उत्तरेणं भाणियव्वा।

कहि णं भंते! उत्तरद्धकच्छे विजए गंगाकुण्डे णामं कुण्डे पण्णत्ते?

गोयमा! चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं उसहकूडस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णियंबे एत्थ णं उत्तरद्धकच्छे०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गंगाकुण्डे णामं कुण्डे पण्णत्ते सट्ठिं जोयणाइं आयामविक्खंभेणं तहेव जहा सिंधू जाव वणसंडेण य संपरिक्खित्ता।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-कच्छे विजए, कच्छे विजए?

गोयमा! कच्छे विजए वेयड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेणं सीयाए महाणईए उत्तरेणं गंगाए महाणईए पच्चत्थिमेणं सिंधूए महाणईए पुरत्थिमेणं दाहिणद्धकच्छविजयस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं खेमा णामं रायहाणी पण्णत्ता विणीयारायहाणीसरिसा भाणियव्वा, इत्थ णं खेमाए रायहाणीए कच्छे णामं राया समुप्पज्जइ, महया-हिमवंत जाव सव्वं भरहोअवणं भाणियव्वं णिक्खमणवज्जं सेसं भाणियव्वं जाव भुंजए माणुस्सए सुहे, कच्छ णामधेज्जे य कच्छे इत्थ देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-कच्छे विजए कच्छे विजए जाव णिच्चे।

शब्दार्थ - कायव्वं - करना चाहिए, **अवणं** - अन्य सारा वर्णन।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत कच्छ नामक विजय किस स्थान पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! सीता महानदी के उत्तर में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में, माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में, जंबूद्वीप के अंतर्गत, महाविदेह क्षेत्र में कच्छ संज्ञक विजय ❖ कहा गया है। वह लम्बाई में उत्तर-दक्षिण तथा चौड़ाई में पूर्व-पश्चिम में विस्तीर्ण है। पलंग की आकृति में स्थित है। गंगा महानदी एवं वैताढ्य पर्वत द्वारा वह छह भागों में बंटा हुआ है। यह १६५९२$\frac{२}{१९}$ योजन लम्बा है। २२१३ योजन से कुछ कम चौड़ा है। कच्छ विजय के ठीक मध्य में वैताढ्य पर्वत आख्यात हुआ है, जो दक्षिणार्द्ध और उत्तरार्द्ध कच्छ को दो भागों में विभक्त करता है।

हे भगवन्! जंबूद्वीप के अंतर्गत, महाविदेह क्षेत्र में दक्षिणार्द्ध कच्छ किस स्थान पर प्रतिपादित हुआ है?

❖ चक्रवर्ती द्वारा विजित किए जाने योग्य स्थान।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! वैताढ्य पर्वत के दक्षिण में, सीता महानदी के उत्तर में, चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में, माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में, जंबूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अंतर्गत दक्षिणार्द्ध कच्छ संज्ञक विजय आख्यात हुआ है। वह लम्बाई में उत्तर-दक्षिण तथा चौड़ाई में पूर्व-पश्चिम फैला हुआ है। वह $८२७१\frac{१}{१९}$ योजन लम्बा तथा २२१३ योजन से कुछ कम चौड़ा है। यह पलंग संस्थान संस्थित है।

हे भगवन्! दक्षिणार्द्ध कच्छ विजय का आकार, स्वरूप किस प्रकार का बतलाया गया है?

हे गौतम! वहाँ का भू भाग अत्यंत समतल एवं रमणीय है यावत् वह कृत्रिम और स्वाभाविक रत्न आदि से सुशोभित है।

हे भगवन्! दक्षिणार्द्ध कच्छ विजय के लोगों का आकार-प्रकार आदि किस प्रकार का कहा गया है?

हे गौतम! वहाँ छह प्रकार के संहननों से युक्त मनुष्य हैं यावत् उनमें से कतिपय सभी दुःखों का अंत कर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप के भीतर महाविदेह क्षेत्र में, कच्छ विजय के अंतर्गत वैताढ्य संज्ञक पर्वत किस स्थान पर स्थित है?

हे गौतम! दक्षिणार्द्ध कच्छ विजय के उत्तर में, उत्तरार्द्ध कच्छ विजय के दक्षिण में, चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में एवं माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में, कच्छ विजय में वैताढ्य पर्वत आख्यात हुआ है। यह लम्बाई में पूर्व-पश्चिम तथा चौड़ाई में उत्तर-दक्षिण फैला हुआ है। वह वक्षस्कार पर्वतों का दोनों ओर से संस्पर्श करता है। पूर्वी किनारे से पूर्वी वक्षस्कार पर्वत का तथा पश्चिमी किनारे से यावत् दोनों ही पर्वतों का संस्पर्श करता है, भरत क्षेत्र के वैताढ्य पर्वत के सदृश है। विशेषता यह है - वहाँ दो बाहाएँ, जीवा तथा धनुष पृष्ठ का कथन नहीं करना चाहिए। कच्छ आदि विजयों की जितनी चौड़ाई है, यह उतना ही लम्बा है। वह भरतक्षेत्रवर्ती वैताढ्य पर्वत के समान चौड़ा, ऊँचा और गहरा है। विद्याधरों और आभियोगिक देवों के भवनों की श्रेणियाँ भी उसी की तरह है। इतना अंतर है - इसमें दक्षिणी एवं उत्तरी श्रेणियों में पचपन-पचपन विद्याधर नगरावास आख्यात हुए हैं। आभियोगिक श्रेणियों के अंतर्गत, सीता महानदी के उत्तर में जो श्रेणियाँ हैं, वे ईशानेन्द्र की तथा अवशिष्ट श्रेणियाँ शक्र-प्रथम कल्पेन्द्र की है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गांथा - वहाँ विद्यमान कूट निम्नांकित रूप में हैं - १. सिद्धायतन २. दक्षिणार्द्ध कच्छ ३. खंडप्रपातगुहा ४. मणिभद्र ५. वैताढ्य ६. पूर्णभद्र ७. तमिस्रगुहा ८. उत्तरार्द्धकच्छ ६. वैश्रमणकूट॥ १॥

हे भगवन्! जंबूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत उत्तरार्द्ध कच्छ संज्ञक विजय कहाँ आख्यात हुआ है?

हे गौतम! वैताढ्य पर्वत के उत्तर में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में, चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में, जम्बूद्वीप के अन्तर्गत उत्तरार्द्धकच्छ विजय आख्यात हुआ है यावत् कतिपय यहाँ सिद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं पर्यन्त सारा विस्तृत वर्णन योजनीय है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत, उत्तरार्द्ध कच्छ विजय में सिंधुकुण्ड कहां प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में ऋषभकूट के पश्चिम में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिणी नितंब-मध्यभाग में, जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत, उत्तरार्द्धकच्छ विजय में सिंधुकुण्ड आख्यात हुआ है। वह लम्बाई चौड़ाई में साठ-साठ योजन है यावत् भवन, राजधानी आदि से संबंधित समस्त वर्णन भरतक्षेत्रवर्ती सिंधुकुण्ड के तुल्य योजनीय है यावत् उस सिंधुकुण्ड के दक्षिणी तोरण से सिंधु महानदी निकलती हुई उत्तरार्द्ध कच्छ विजय में बहती है। उसमें वहाँ सात हज़ार नदियाँ सम्मिलित होती हैं। वह उनसे समायुक्त होकर नीचे तिमिसगुफा से होती हुई, वैताढ्य पर्वत को चीरकर दक्षिणार्द्ध कच्छ विजय में जाती है। वहाँ उसमें १४००० नदियाँ मिल जाती हैं, जिनसे युक्त होकर वह दक्षिण में सीता महानदी में मिल जाती है। अपने मूल ओर उद्गम स्थल में इसका प्रवाह भरतक्षेत्र स्थित सिंधु महानदी के तुल्य है यावत् वह दो वनखंडों द्वारा परिवेष्टित है, यहाँ तक का सारा वर्णन पूर्ववत् है।

हे भगवन्! उत्तरार्द्ध कच्छ विजय के अन्तर्गत ऋषभकूट नामक पर्वत किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! सिंधुकूट के पूर्व में, गंगाकूट के पश्चिम में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण मध्य भाग में, उत्तरार्द्धकच्छ विजय के अन्तर्गत ऋषभकूट नामक पर्वत आख्यात हुआ है। वह ऊँचाई में आठ योजन प्रमाण है यावत् राजधानी पर्यन्त समग्र वर्णन पूर्वानुरूप है। अंतर इतना है - उसकी राजधानी उत्तर दिशा में स्थित है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! उत्तरार्द्ध कच्छ विजय में गंगाकुण्ड कहाँ प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में, ऋषभकूट पर्वत के पूर्व में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिणी मध्य भाग में, उत्तरार्द्ध कच्छ के अंतर्गत गंगाकुण्ड कहा गया है। वह साठ योजन आयाम-विस्तार युक्त है यावत् वह एक वनखंड द्वारा घिरा हुआ है, यहाँ तक का सारा वर्णन सिंधुकुण्ड के समान योजनीय है।

हे भगवन्! वह कच्छ विजय - इस नाम से क्यों पुकारा जाता है?

हे गौतम! कच्छ विजय के अंतर्गत, वैताढ्य पर्वत के दक्षिण में, सीता महानदी के उत्तर में, गंगा महानदी के पश्चिम में, सिंधु महानदी के पूर्व में, दक्षिणार्द्ध कच्छ विजय के ठीक मध्य में क्षेमा नामक राजधानी बतलाई गई है। इसका वर्णन विनीता राजधानी की तरह कथनीय है।

क्षेमा राजधानी में षट्खण्डाधिपति कच्छ नामक चक्रवर्ती राजा है। वह हिमालय की तरह अत्यंत गौरवशाली यावत् अभिनिष्क्रमण को छोड़कर मानुषिक भोग प्राप्त करने तक का सारा वर्णन भरत चक्रवर्ती की तरह योजनीय है। कच्छ विजय में अत्यंत वैभवशाली यावत् एक पल्योपम स्थितिक देव निवास करता है।

हे गौतम! यों कच्छ नामक देव के रहने से वह कच्छ विजय के नाम से विख्यात है यावत् इसका यह नाम नित्य एवं शाश्वत है।

चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत

(१११)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे चित्तकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! सीयाए महाणईए उत्तरेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं कच्छविजयस्स पुरत्थिमेणं सुकच्छविजयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे चित्तकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईण-पडीणविच्छिण्णे सोलसजोयणसहस्साइं पंच य बाणउए जोयणसए दुण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स आयामेणं पंच जोयणसयाइं विक्खंभेणं णीलवंत-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वासहरपव्वयंतेणं चत्तारि जोयणसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं चत्तारि गाउयसयाइं उव्वेहेणं तयणंतरं च णं मायाए २ उस्सेहुव्वेहपरिवुड्डीए परिवड्डमाणे २ सीयामहाणईअंतेणं पंच जोयणसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं पंच गाउयसयाइं उव्वेहेणं अस्सखंधसंठाणं संठिए सव्वरयणामए अच्छे सण्हे जाव पडिरूवे उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते, वण्णओ दुण्हवि, चित्तकूडस्स णं वक्खार-पव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव आसयंति०, चित्तकूडे णं भंते! वक्खारपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा- सिद्धाययणकूडे चित्तकूडे कच्छकूडे सुकच्छकूडे, समा उत्तरदाहिणेणं परुप्परंति, पढमं सीसाए उत्तेरणं चउत्थए णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं एत्थ णं चित्तकूडे णामं देवे महिड्डिए जाव रायहाणी सेत्ति।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत चित्रकूट नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! शीता महानदी के उत्तर में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, कच्छ विजय के पूर्व में, सुकच्छ विजय के पश्चिम में, जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत चित्रकूट नामक वक्षस्कार पर्वत कहा गया है।

वह उत्तर-दक्षिण दिग्भाग में लम्बा एवं पूर्व-पश्चिम दिग्भाग में चौड़ा है। वह १६५१२ $\frac{२}{१६}$ योजन लम्बा तथा ५०० योजन चौड़ा है। नीलवान वर्षधर पर्वत के निकट चार सौ योजन ऊंचा तथा चार सौ कोस भूमि में गहरा गड़ा है। तदनन्तर वह ऊँचाई और गहराई में क्रमशः वृद्धिंगत होता जाता है। शीता महानदी के समीप वह ५०० योजन ऊँचा तथा ५०० कोस भूमि में गहरा हो जाता है। उसका आकार अश्व के स्कन्ध सदृश है। वह सर्व रत्नमय है। निर्मल, सुकोमल, सुंदर है। वह अपने दोनों पार्श्वों में दो पद्मवरवेदिकाओं तथा दो वनखण्डों से आवृत्त है। दोनों का वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है। चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के ऊपर अति समतल तथा सुंदर भूमिभाग है। वहाँ देव-देवियाँ आश्रय लेते हैं, आवास करते हैं, विश्राम करते हैं।

हे भगवन्! चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के कितने कूट निरूपित हुए हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! उसके चार कूट कहे गये हैं - १. सिद्धायतन कूट २. चित्रकूट ३. कच्छकूट ४. सुकच्छकूट।

वे परस्पर उत्तर-दक्षिण में एक समान है। पहला सिद्धायतन कूट शीता महानदी की उत्तर दिशा में तथा चौथा सुकच्छकूट नीलवान् वर्षधर पर्वत की दक्षिण दिशा में है। चित्रकूट नामक परम समृद्धिमान् देव वहाँ निवास करता है। राजधानी तक का समस्त वर्णन यहाँ पहले की तरह योजनीय है।

सुकच्छविजय

(११२)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सुकच्छे णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! सीयाए महाणईए उत्तरेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं गाहावईए महाणईए पच्चत्थिमेणं चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सुकच्छे णामं विजए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए जहेव कच्छे विजए तहेव सुकच्छे विजए, णवरं खेमपुरा रायहाणी सुकच्छे राया समुप्पज्जइ तहेव सव्वं।

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे गाहावइकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते?

गोयमा! सुकच्छविजयस्स पुरत्थिमेणं महाकच्छस्स विजयस्स पच्चत्थिमेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णियम्बे एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे गाहावइकुंडे णामं कुण्डे पण्णत्ते, जहेव रोहियंसाकुण्डे तहेव जाव गाहावइदीवे भवणे, तस्स णं गाहावइस्स कुण्डस्स दाहिणिल्लेणं तोरणेणं गाहावई महाणई पवूढा समाणी सुकच्छमहाकच्छविजए दुहा विभयमाणी २ दाहिणेणं सीयं महाणइं समप्पेइ, गाहावई णं महाणई पवहे य मुहे य सव्वत्थ समा पणवीसं जोयणसयं विक्खंभेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणाइं उव्वेहेणं उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसण्डेहिं जाव दुण्हवि वण्णओ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप के अन्तर्गत सुकच्छ नामक विजय कहाँ प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! शीता महानदी की उत्तर दिशा में नीलवान् वर्षधर पर्वत की दक्षिण दिशा में, ग्राहावती महानदी के पश्चिम में तथा चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत की पूर्व दिशा में, जंबूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत सुकच्छ नामक विजय प्रतिपादित हुआ है।

वह उत्तर दक्षिण में कच्छ विजय की तरह विस्तार आदि युक्त है। इतना अन्तर है उसकी राजधानी क्षेमपुरा है। वहाँ सुकच्छ नामक राजा जन्म लेता है। अवशिष्ट समस्त वर्णन कच्छ विजय के सदृश है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत ग्राहावती कुंड कहा गया है?

हे गौतम! सुकच्छ विजय के पूर्व में, महाकच्छ विजय के पश्चिम में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण नितंब-ढालू भाग में, जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत ग्राहावती नामक कुण्ड कहा गया है। इसका समस्त वर्णन रोहितांशा कुण्ड के सदृश है यावत् ग्राहावती द्वीप, भवन तक का वर्णन यँहाँ ग्राह्य है। उस ग्राहावती कुण्ड के दक्षिणी तोरण भाग से ग्राहावती संज्ञक महानदी निकलती है। वह सुकच्छ-महाकच्छ विजय को दो भागों में बांटती हुई आगे बढ़ती है और दक्षिण में शीता महानदी में मिलती है। ग्राहावती नदी उद्गम स्थान से लेकर संगम स्थान तक एक समान है। वह एक सौ पच्चीस योजन चौड़ा है तथा अढ़ाई योजन भूमि में गहरा है। वह दोनों पार्श्वों में दो पद्मवर वेदिकाओं एवं दो वनखण्डों द्वारा घिरी हुई है। इसका वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

महाकच्छ विजय

(११३)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे महाकच्छे णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं सीयाए महाणईए उत्तरेणं पम्हकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं गाहावईए महाणईए पुरत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे महाकच्छे णामं विजए पण्णत्ते, सेसं जहा कच्छविजयस्स (णवरं अरिट्ठा रायहाणी) जाव महाकच्छे इत्थ देवे महिड्ढिए.......अट्ठो य भाणियव्वो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र में महाकच्छ नामक विजय कहां कहा गया है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत की दक्षिण दिशा में शीता महानदी की उत्तर दिशा में, पद्मकूट वक्षस्कार पर्वत की पश्चिम दिशा में तथा ग्राहावती महानदी की पूर्व दिशा में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत महाकच्छ नामक विजय कहा गया है। अवशिष्ट समस्त वर्णन कच्छ विजय की तरह है। (अन्तर यह है - उसकी राजधानी का नाम अरिष्टा है) यावत् परम ऋद्धिशाली महाकच्छ नामक देव निवास करता है। उसका वर्णन पूर्वानुसार है।

पद्मकूट वक्षस्कार पर्वत

(११४)

कहि णं भंते! महाविदेह वासे पम्हकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स० दक्खिणेणं सीयाए महाणईए उत्तरेणं महाकच्छस्स पुरत्थिमेणं कच्छावईए पच्चत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे पम्हकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाइणपडीणविच्छिण्णे सेसं जहा चित्तकूडस्स जाव आसयंति० पम्हकूडे चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा- सिद्धाययणकूडे पम्हकूडे महाकच्छकूडे कच्छावइकूडे एवं जाव अट्ठो, पम्हकूडे य इत्थ देवे महिड्ढिए० पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ०।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र में पद्मकूट नामक पर्वत कहां निरूपित हुआ है?

हे गौतम! नीलवान् वक्षस्कार पर्वत की दक्षिण दिशा में, शीता महानदी की उत्तर दिशा में, महाकच्छ विजय की पूर्व दिशा में कच्छावती विजय की पश्चिम दिशा में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत पद्मकूट संज्ञक वक्षस्कार पर्वत निरूपित हुआ है। वह उत्तर दक्षिण लम्बा तथा पूर्व पश्चिम चौड़ा है। शेष वर्णन चित्रकूट की तरह योजनीय है यावत् वहाँ देव विश्राम करते हैं। उसके चार कूट बतलाए गए हैं - १. सिद्धायतन कूट २. पद्म कूट ३. महाकच्छ कूट तथा ४. कच्छावती कूट यावत् इनका वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है।

एक पल्योपम आयुष्य युक्त पद्मकूट नामक परम ऋद्धिशाली देव वहां निवास करता है।

हे गौतम! वह इसी कारण से पद्मकूट वक्षस्कार पर्वत के नाम से अभिहित हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कच्छकावती विजय

(११५)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे कच्छगावई णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स० दाहिणेणं सीयाए महाणईए उत्तरेणं दहावईए महाणईए पच्चत्थिमेणं पम्हकूडस्स० पुरत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे कच्छगावई णामं विजए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणविच्छिण्णे सेसं जहा कच्छस्स विजयस्स जाव कच्छगावई य इत्थ देवे०।

कहि णं भंते! महाविदेह वासे दहावईकुण्डे णामं कुंडे पण्णत्ते?

गोयमा! आवत्तस्स विजयस्स पच्चत्थिमेणं कच्छगावईए विजयस्स पुरत्थिमेणं णीलवंतस्स० दाहिणिल्ले णियंबे एत्थ णं महाविदेहे वासे दहावईकुंडे णामं कुण्डे पण्णत्ते सेसं जहा गाहावईकुण्डस्स जाव अट्ठो, तस्स णं दहावईकुण्डस्स दाहिणेणं तोरणेणं दहावई महाणई पवूढा समाणी कच्छावई आवत्ते विजए दुहा विभयमाणी २ दाहिणेणं सीयं महाणइं समप्पेइ, सेसं जहा गाहावईए।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र में कच्छकावती नामक विजय कहाँ कहा गया है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, शीता महानदी के उत्तर में, द्रहावती महानदी के पश्चिम में, पद्मकूट वर्षधर पर्वत के पूर्व में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत कच्छकावती विजय कहा गया है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बा एवं पूव-पश्मिच चौड़ा है। अवशिष्ट समस्त वर्णन कच्छ विजय के समान है यावत् वहाँ कच्छकावती नामक ऋद्धिशाली देव निवास करता है।

हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र में द्रहावती नामक कुण्ड कहां बतलाया गया है?

हे गौतम! आवर्त विजय के पश्चिम में, कच्छकावती विजय के पूर्व में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिणी नितंब-ढालू भाग में महाविदेह क्षेत्र में, द्रहावती कुण्ड कहा गया है। शेष वर्णन यावत् ग्राहावती कुण्ड में तुल्य है।

उस द्रहावती कुण्ड के दक्षिणवर्ती तोरणद्वार से द्रहावती नामक महानदी निकलती है। वह कच्छकावती विजय तथा आवर्त्त विजय को दो भागों में विभक्त करती हुई दक्षिण में शीता महानदी में मिल जाती है। अवशिष्ट वर्णन ग्राहावती की तरह है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आवर्त्त विजय

(११६)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे आवत्ते णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं सीयाए महाणईए उत्तरेणं णलिणकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं दहावईए महाणईए पुरत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे आवत्ते णामं विजए पण्णत्ते, सेसं जहा कच्छस्स विजयस्स इति।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत आवर्त्त नामक विजय कहाँ कहा गया है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, शीता महानदी के उत्तर में, नलिनकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में तथा द्रहावती महानदी के पूर्व में, महाविदेह क्षेत्र के भीतर आवर्त्त नामक विजय कहा गया है। अवशिष्ट वर्णन कच्छ विजय के समान है।

नलिनकूट वक्षस्कार पर्वत

(११७)

कहि णं भंते महाविदेहे वासे णलिणकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स दाहिणेणं सीयाए उत्तरेणं मंगलावइस्स विजयस्स पच्चत्थिमेणं आवत्तस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे णलिणकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणविच्छिण्णे सेसं जहा चित्तकूडस्स जाव आसयंति०।

णलिणकूडे णं भंते!० कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धाययणकूडे णलिणकूडे आवत्तकूडे मंगलावत्तकूडे, एए कूडा पंचसइया रायहाणीओ उत्तरेणं।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत नलिनकूट वक्षस्कार पर्वत कहाँ बतलाया गया है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर - हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, शीता महानदी के उत्तर में, मंगलावती विजय के पश्चिम में तथा आवर्त्त विजय के पूर्व में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत नलिनकूट वक्षस्कार पर्वत बतलाया गया है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बा एवं पूर्व-पश्चिम चौड़ा है। शेष वर्णन चित्रकूट पर्वत जैसा है यावत् वहाँ देव निवास करते हैं।

हे भगवन्! नलिनकूट के कितने शिखर बतलाए गए हैं?

हे गौतम! उसके चार कूट बतलाए गए हैं - १. सिद्धायतन कूट २. नलिनकूट ३. आवर्त्तकूट ४. मंगलावर्त कूट, ये कूट पांच सौ योजन ऊंचे हैं। इनकी राजधानियाँ उत्तर में हैं।

मंगलावर्त्त विजय

(११८)

कहि णं भंते! महाविदेह वासे मंगलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स दक्खिणेणं सीयाए उत्तरेणं णलिणकूडस्स पुरत्थिमेणं पंकावईए पच्चत्थिमेणं एत्थ णं मंगलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते, जहा कच्छस्स विजए तहा एसो भाणियव्वो जाव मंगलावत्ते य इत्थ देवे० परिवसइ, से एएणट्ठेणं०।

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे पंकावईकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते?

गोयमा! मंगलावत्तस्स० पुरत्थिमेणं पुक्खलविजयस्स पच्चत्थिमेणं णीलवंतस्स दाहिणे णियंबे एत्थ णं पंकावई जाव कुण्डे पण्णत्ते तं चेव गाहावइकुण्डप्पमाणं जाव मंगलावत्त-पुक्खलावत्तविजए दुहा विभयमाणी २ अवसेसं तं चेव जं चेव गाहावईए।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत मंगलावर्त्त विजय कहां वर्णित हुआ है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में शीता महानदी के उत्तर में, नलिनकूट पर्वत के पूर्व में, पंकावती विजय के पश्चिम में, मंगलावर्त्त विजय कहा गया है। इसका शेष वर्णन कच्छ विजय के समान है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वहाँ मंगलावर्त्त नामक देव निवास करता है, इसी कारण वह मंगलावर्त्त विजय के नाम से अभिहित हुआ है।

हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र में पंकावती कुण्ड कहाँ कहा गया है?

हे गौतम! मंगलावर्त्त विजय के पूर्व में, पुष्कल विजय के पश्चिम में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिणी नितंब-ढालू प्रदेश में पंकावती कुण्ड अभिहित है। उसका प्रमाण ग्राहावती कुण्ड के तुल्य है यावत् इससे निकलती हुई पंकावती महानदी मंगलावर्त्त एवं पुष्कलावर्त्त विजय को दो भागों में बांटती हुई आगे बढ़ती है। इसका अवशिष्ट वर्णन ग्राहावती नदी के समान ज्ञापनीय है।

पुष्कलावती विजय

(११९)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे पुक्खलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स दाहिणेणं सीयाए उत्तरेणं पंकावईए पुरत्थिमेणं एगसेलस्स वक्खार-पव्वयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं पुक्खलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते जहा कच्छविजए तहा भाणियव्वं जाव पुक्खले य इत्थ देवे महिड्ढिए० पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से एएणट्ठेणं०।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र में पुष्कलावती विजय किस स्थान पर वर्णित हुआ है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में शीता महानदी के उत्तर में पंकावती विजय के पूर्व में, एकशैल वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत पुष्कलावर्त्त विजय कहा गया है। उसका वर्णन कच्छ विजय के सदृश है यावत् वहाँ एक पल्योपम स्थितिक महान् ऋद्धिशाली पुष्कल नामक देव निवास करता है। इस कारण वह पुष्कलावर्त्त विजय के नाम से अभिहित हुआ है।

एकशैल वक्षस्कार पर्वत

(१२०)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे एगसेले णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! पुक्खलावत्तचक्कवट्टिविजयस्स पुरत्थिमेणं पुक्खलावईचक्कवट्टि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विजयस्स पच्चत्थिमेणं णीलवंतस्स दक्खिणेणं सीयाए उत्तरेणं एत्थ णं एगसेले णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते चित्तकूडगमेणं णेयव्वो जाव देवा आसयंति०, चत्तारि कूडा, तंजहा-सिद्धाययणकूडे एगसेलकूडे पुक्खलावत्तकूडे पुक्खलावईकूडे, कडाणं तं चेव पंचसइयं परिमाणं जाव एगसेले य० देवे महिड्डिए०।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत एकशैल वक्षस्कार पर्वत किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! पुष्कलावर्त्त चक्रवर्ती विजय के पूर्व में, पुष्कलावर्ती चक्रवर्ती विजय के पश्चिम में, नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में तथा शीता महानदी के उत्तर में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत एकशैल वक्षस्कार पर्वत कहा गया है। देव-देवियाँ वहाँ आश्रय लेते हैं यावत् यहाँ तक का वर्णन चित्रकूट के सदृश है।

इसके चार शिखर हैं - १. सिद्धायतन कूट २. एकशैल कूट ३. पुष्कलावर्त्तकूट ४. पुष्कलावती कूट। ये ऊँचाई में पांच सौ योजन हैं यावत् यहाँ महान् ऋद्धिशाली एकशैल नामक देव निवास करता है।

पुष्कलावती विजय

(१२१)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे पुक्खलावई णामं चक्कवट्टिविजए पण्णत्ते? गोयमा! णीलवंतस्स दक्खिणेणं सीयाए उत्तरेणं उत्तरिल्लस्स सीयामुहवणस्स पच्चत्थिमेणं एगसेलस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे पुक्खलावई णामं विजए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए एवं जहा कच्छविजयस्स जाव पुक्खलावई य इत्थ देवे० परिवसइ, से एएणट्ठेणं०।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत पुष्कलावती नामक चक्रवर्ती विजय किस स्थान पर निरूपित हुआ है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, शीता महानदी के उत्तर में, उत्तर दिग्वर्ती शीतामुख वन के पश्चिम में तथा एकशैल वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुष्कलावती विजय निरूपित हुआ है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बा है यावत् सारा वर्णन कच्छ विजय की तरह योजनीय है। वहाँ पुष्कलावती नामक देव निवास करता है। इस कारण वह पुष्कलावती विजय के नाम से अभिहित हुआ है।

उत्तरवर्ती शीतामुख वन

(१२२)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे सीयाए महाणईए उत्तरिल्ले सीयामुहवणे णामं वणे पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स दक्खिणेणं सीयाए उत्तरेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पुक्खलावइ चक्कवट्टिविजयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं सीयामुहवणे णामं वणे पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणविच्छिण्णे सोलसजोयणसहस्साइं पंच य बाणउए जोयणसए दोण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स आयामेणं सीयाए महाणईए अंतेणं दो जोयणसहस्साइं णव य बावीसे जोयणसए विक्खंभेणं तयणंतरं च णं मायाए २ परिहायमाणे २ णीलवंतवासहरपव्वयंतेणं एगं एगूणवीसइभागं जोयणस्स विक्खंभेणंति, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसण्डेणं संपरिक्खित्ते वण्णओ सीयामुहवणस्स जाव देवा आसयंति०, एवं उत्तरिल्लं पासं समत्तं। विजया भणिया। रायहाणीओ इमाओ-

खेमा १ खेमपुरा २ चेव, रिट्ठा ३ रिट्ठपुरा ४ तहा।
खग्गी ५ मंजूसा ६ अवि य, ओसही ७ पुंडरीगिणी ८॥१॥

सोलस विज्जाहरसेढीओ तावइयाओ आभिओगसेढीओ सव्वाओ इमाओ ईसाणस्स, सव्वेसु विजएसु कच्छवत्तव्वया जाव अट्ठो रायाणो सरिसणामगा विजएसु सोलसण्हं वक्खारपव्वयाणं चित्तकूडवत्तव्वया जाव कूडा चत्तारि २ बारसण्हं णईणं गाहावइवत्तव्वया जाव उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं वणसण्डेहि य० वण्णओ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत शीता महानदी के उत्तर में शीतामुख संज्ञक वन किस स्थान पर बतलाया गया है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के दक्षिण में, शीता महानदी के उत्तर में पूर्ववर्ती लवण समुद्र के पश्चिम में, पुष्कलावती चक्रवर्ती विजय की पूर्व दिशा में, शीतामुख संज्ञक वन कहा गया है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बा तथा पूर्व-पश्चिम चौड़ा है। वह १६५९२ $\frac{२}{१९}$ योजन लम्बा है। शीतामहानदी के समीप २९२२ योजन चौड़ा है। तदनंतर इसका विस्तार क्रमशः कम होता गया। नीलवान् वर्षधर पर्वत के समीप केवल $\frac{१}{१९}$ योजन चौड़ा रह जाता है। यह वन एक पद्मवर वेदिका एवं एक वनखण्ड द्वारा घिरा हुआ है यावत् इस पर देव-देवियाँ विश्राम करते हैं यहाँ तक का सारा वर्णन पूर्वानुरूप है। विजयों के वर्णन के साथ उत्तरदिशावर्ती पार्श्वों का वर्णन यहाँ पूरा होता है। विभिन्न विजयों की राजधानियाँ इस प्रकार हैं -

गाथा - क्षेमा, क्षेमपुरा, अरिष्टा, अरिष्टपुरा, खडगी, मंजूषा, औषधि तथा पुण्डरीकिणी॥१॥

कच्छ आदि पूर्व वर्णित विजयों में सोलह विद्याधर श्रेणियाँ तथा उतनी ही आभियोग्य श्रेणियाँ हैं। ये सभी ईशानेन्द्र की हैं यावत् सब विजयों का वर्णन कच्छविजय के सदृश वक्तव्य है। उन विजयों के नामानुरूप वहाँ चक्रवर्ती राजा होते हैं। विजयों में जो सोलह वक्षस्कार पर्वत हैं, उनका वर्णन चित्रकूट के वर्णन के सदृश वक्तव्य है यावत् प्रत्येक वक्षस्कार के चार-चार कूट हैं। उनमें जो बारह नदियाँ हैं उनका वर्णन ग्राहावती नदी की तरह योजनीय है यावत् वे दोनों ओर दो पद्मवर वेदिकाओं और दो वनखण्डों द्वारा घिरे हुए हैं यहाँ तक का वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है।

दक्षिणवर्ती शीतामुख वन

(१२३)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सीयाए महाणईए दाहिणिल्ले सीयामुहवणे णामं वणे पण्णत्ते? एवं जह चेव उत्तरिल्लं सीयामुहवणं तह चेव दाहिणं पि भाणियव्वं, णवरं णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं सीयाए महाणईए दाहिणेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं वच्छस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सीयाए महाणईए दाहिणिल्ले सीयामुहवणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णामं वणे पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए तहेव सव्वं णवरं णिसहवासहरपव्वयंतेणं एगमेगूणवीसइभागं जोयणस्स विक्खंभेणं किण्हे किण्होभासे जाव महया गंधद्धणिं मुयंते जाव आसयंति० उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं० वण वण्णओ इति।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत, शीता महानदी के दक्षिण में, शीतामुख वन कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! शीता महानदी के उत्तर में विद्यमान शीतामुख वन के वर्णन समान ही दक्षिण दिशावर्ती शीतामुख वन का वर्णन कहाँ योजनीय है। इतना अन्तर है - दक्षिण दिशावर्ती शीतामुख वन निषेध वर्षधर पर्वत के उत्तर में, शीता महानदी के दक्षिण में, पूर्व दिशावर्ती लवण समुद्र के पश्चिम में, वत्स विजय की पूर्व दिशा में, जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत विद्यमान है।

वह उत्तर-दक्षिण लम्बा है। शेष वर्णन उत्तरदिशावर्ती शीतामुख वन के समान है। इतना अन्तर है - वह क्रमशः घटते-घटते निषध वर्षधर पर्वत के समीप $\frac{१}{१९}$ योजन चौड़ा रह जाता है। वह कृष्ण वर्ण एवं आभा युक्त है यावत् उससे बड़ी सुगन्ध प्रस्फुटित होती है यावत् देव-देवियाँ वहाँ विश्राम करते हैं। वह दोनों तरफ दो पद्मवर वेदिकाओं एवं दो वनखण्डों से परिवेष्टित है इत्यादि समस्त वर्णन पूर्ववत् कथनीय है।

वत्स आदि विजय

(१२४)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे वच्छे णामं विजए पण्णत्ते?

गोयमा! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं सीयाए महाणईए दाहिणेणं दाहिणिल्लस्स सीयामुहवणस्स पच्चत्थिमेणं तिउडस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे वच्छे णामं विजए पण्णत्ते तं चेव पमाणं सुसीमा रायहाणी १, तिउडे वक्खारपव्वए सुवच्छे विजए कुण्डला रायहाणी २, तत्तजलाणई महावच्छे विजए अपराजिया रायहाणी ३, वेसमणकूडे वक्खारपव्वए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वच्छावई विजए पभंकरा रायहाणी ४, मत्तजला णई रम्मे विजए अंकावई रायहाणी ५, अंजणे वक्खारपव्वए रम्मगे विजए पम्हावई रायहाणी ६, उम्मत्तजला महाणई रमणिज्जे विजए सुभा रायहाणी ७, मायंजणे वक्खारपव्वए मंगलावई विजए रयणसंचया रायहाणीति ८, एवं जह चेव सीयाए महाणईए उत्तरं पासं तह चेव दक्खिणिल्लं भाणियव्वं, दाहिणिल्लसीयामुहवणाइ, इमे वक्खारकूडा, तंजहा - तिउडे १ वेसमणकूडे २ अंजणे ३ मायंजणे ४, (णईउ तत्तजला १ मत्तजला २ उम्मत्तजला ३) विजया, तंजहा -

गाहा - वच्छे सुवच्छे महावच्छे, चउत्थे वच्छगावई।
रम्मे रम्मए चेव, रमणिज्जे मंगलावई॥१॥

रायहाणीओ, तंजहा-

गाहा - सुसीमा कुण्डला चेव, अवराइय पहंकरा।
अंकावई पम्हावई, सुभा रयणसंचया॥२॥

वच्छस्स विजयस्स णिसहे दाहिणेणं सीया उत्तरेणं दाहिणिल्लसीयामुहवणे पुरत्थिमेणं तिउडे पच्चत्थिमेणं सुसीमा रायहाणी पमाणं तं चेवेति, वच्छाणंतरं तिउडे तओ सुवच्छे विजए एएणं कमेणं तत्तजला णई महावच्छे वेसमणकूडे वक्खारपव्वए वच्छावई विजए मत्तजला णई रम्मे विजए अंजणे वक्खारपव्वए रम्मए विजए उम्मत्तजला णई रमणिज्जे विजए मायंजणे वक्खारपव्वए मंगलावई विजए।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत वत्स नामक विजय कहाँ प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! निषध वर्षधर पर्वत की उत्तर दिशा में शीता महानदी की दक्षिण दिशा में दक्षिणी शीतामुख वन की पश्चिम दिशा में तथा त्रिकूट वक्षस्कार पर्वत की पूर्व दिशा में जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत वत्स नामक विजय प्रतिपादित हुआ है। उसका प्रमाण पूर्वानुरूप है। उसकी सुसीमा नामक राजधानी है।

त्रिकूट वक्षस्कार पर्वत पर सुवत्स नामक विजय है। उसकी कुण्डला संज्ञक राजधानी है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वहाँ तप्तजला नामक नदी है। महावत्स विजय के अपराजिता नामक राजधानी है। वैश्रमणकूट वक्षस्कार पर्वत पर वत्सावती विजय है। उसकी प्रभाकरी नामक राजधानी है। वहाँ पर मत्त-जला नामक नदी है। रम्य विजय की अंकावती नामक राजधानी है। अंजन वक्षस्कार पर्वत पर रम्यक् विजय है, उसकी पद्मावती नामक राजधानी है। यहाँ उन्मत्तजला नामक महानदी है। रमणीय विजय की शुभा नामक राजधानी है। मातंजन वक्षस्कार पर्वत पर मंगलावती विजय है। उसकी रत्नसंचया नामक राजधानी है।

शीता महानदी का जैसा उत्तरी पार्श्व है, वैसा ही दक्षिण दिशावर्ती पार्श्व है। दक्षिणी शीतामुख वन उत्तरी शीतामुख वन के सदृश है। वहाँ वक्षस्कार इस प्रकार हैं -

त्रिकूट, वैश्रमणकूट, अंजनकूट, मातंजनकूट (तप्तजला, मत्तजला एवं उन्मत्तजला संज्ञक नदियाँ हैं।) विजय इस प्रकार हैं -

गाथा - वत्स विजय, सुवत्स विजय, महावत्स विजय, वत्सकावती विजय, रम्य विजय, रम्यक विजय, रमणीय विजय तथा मंगलावती विजय॥१॥

राजधानियाँ इस प्रकार हैं - १. सुसीमा २. कुण्डला ३. अपराजिता ४. प्रभंकरा ५. अंकावती ६. पद्मावती ७. शुभा एवं ८. रत्नसंचया।

वत्स विजय की दक्षिण दिशा में निषध पर्वत है। उत्तर दिशा में शीता महानदी है। पूर्व दिशा में दक्षिणी शीतामुख वन है तथा पश्चिमी दिशा में त्रिकूट वक्षस्कार पर्वत है। उसकी सुसीमा राजधानी है, जिसकी प्रमाण, वर्णन विनीता राजधानी के तुल्य है।

वत्स विजय के अनंतर त्रिकूट पर्वत उसके पश्चात् सुवत्स विजय, इसी क्रम से तप्तजला नदी महावत्सविजय, वैश्रमणकूट वक्षस्कार पर्वत, वत्सावती विजय, मत्तजला नदी, रम्य विजय, अंजन वक्षस्कार पर्वत, रम्यक् विजय, उन्मत्तजला नदी, रमणीय विजय, मातंजन वक्षस्कार पर्वत एवं मंगलावती विजय है।

सौमनस वक्षस्कार पर्वत

(१२५)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सोमणसे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं मंदरस्स पव्वयस्स दाहिण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुरत्थिमेणं मंगलावई विजयस्स पच्चत्थिमेणं देवकुराए० पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे सोमणसे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणविच्छिण्णे जहा मालवंते वक्खारपव्वए तहा णवरं सव्वरययामए अच्छे जाव पडिरूवे, णिसहवासहरपव्वयंतेणं चत्तारि जोयणसयाइं उद्धं उच्चत्तेणं चत्तारि गाउयसयाइं उव्वेहेणं सेसं तहेव सव्वं णवरं अट्ठो से गोयमा! सोमणसे णं वक्खारपव्वए बहवे देवा य देवीओ य सोमा सुमणा सोमणसे य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोयमा! जाव णिच्चे।

सोमणसे णं भंते! वक्खारपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! सत्त कूडा पण्णत्ता, तंजहा-

गाहा - सिद्धे १ सोमणसे २ वि य बोद्धव्वे मंगलावईकूडे ३
देवकुरु ४ विमल ५ कंचण ६ वसिट्ठकूडे ७ य बोद्धव्वे॥१॥

एवं सव्वे पंचसइया कूडा, एएसिं पुच्छा दिसिविदिसाए भाणियव्वा जहा गंधमायणस्स, विमलकंचणकूडेसु णवरं देवयाओ सुवच्छा वच्छमित्ता य अवसिट्ठेसु कूडेसु सरिसणामया देवा रायहाणीओ दक्खिणेणंति।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत सौमनस नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! निषध वर्षधर पर्वत के उत्तर में मंदर पर्वत के दक्षिण-पूर्व में, मंगलावती विजय के पश्चिम में, देवकुरु के पूर्व में जम्बूद्वीप के अन्तर्गत महाविदेह क्षेत्र में सौमनस नामक वक्षस्कार पर्वत निरूपित हुआ है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बा एवं पूर्व-पश्चिम चौड़ा है। वह माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत के सदृश है। इतना अन्तर है - वह सर्वथा रत्नमय, उज्ज्वल यावत् सुन्दर है। वह निषध वर्षधर पर्वत के निकट ४०० योजन ऊँचा है। वह भूमि के भीतर चार सौ कोस गहरा गड़ा है। बाकी समस्त वर्णन माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत जैसा है।

हे गौतम! सौमनस वक्षस्कार पर्वत पर बहुत से सौम्य, सुमना-उत्तम मन भावनामय देव-देवियाँ आश्रय लेते हैं, विश्राम करते हैं यावत् उनका अधिष्ठाता अत्यन्त समृद्धिशाली सौमनस देव वहाँ रहता है। हे गौतम! उसका यह नाम नित्य यावत् शाश्वत है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! सौमनस वक्षस्कार पर्वत के कितने कूट निरूपित हुए हैं?

हे गौतम! उसके सात कूट निरूपित हुए हैं -

गाथा - १. सिद्धायतन कूट २. सौमनसकूट ३. मंगलावतीकूट ४. देवकुरूकूट ५. विमलकूट ६. कंचनकूट ७. वशिष्टकूट।

ये सभी कूट ५०० योजन ऊंचे हैं। इनका विस्तृत वर्णन गंधमादन वक्षस्कार पर्वत के कूटों के तुल्य है। इतना अंतर है - विमलकूट एवं कंचनकूट पर सुवत्सा एवं वत्समित्रा नामक देवियाँ निवास करती हैं। अवशिष्ट कूटों पर उनके नामानुरूप देव निवास करते हैं। दक्षिण में इनकी राजधानियाँ हैं।

देवकुरु

(१२६)

कहि णं भंते! महाविदेहे वासे देवकुरा णामं कुरा पण्णत्ता?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं विज्जुप्पहस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं सोमणसवक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे देवकुरा णामं कुरा पण्णत्ता, पाईणपडीणायया उदीणदाहिण-विच्छिण्णा इक्कारस्स जोयणसहस्साइं अट्ठ य बायाले जोयणसए दुण्णि य एगूणवीसइभाए जोयणस्स विक्खम्भेणं जहा उत्तरकुराए वत्तव्वया जाव अणुसज्जमाणा पम्हगंधा मियगंधा अममा सहा तेयतली सणिचारीति ६।

भावार्थ - हे भगवन्! महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत देवकुरु का स्थान कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के दक्षिण में, निषध वर्षधर पर्वत के उत्तर में, विद्युतप्रभ वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में तथा सौमनस वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम में महाविदेह क्षेत्र में देवकुरु का स्थान बतलाया गया है।

देवकुरु पूर्व-पश्चिम लम्बा एवं उत्तर-दक्षिण चौड़ा है। वह ११८४२ $\frac{२}{१९}$ योजन विस्तार युक्त है। इसका शेष वर्णन उत्तरकुरु के तुल्य है यावत् यहाँ कमल सौरभ एवं कस्तूरीमृग की सुगंधि से युक्त, ममत्वरहित, सहिष्णु, विशिष्ट तेज युक्त तथा शनैश्चारी-धीमी गति से युक्त ये छह प्रकार के मनुष्य कहे गये हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चित्र विचित्र कूट पर्वत

(१२७)

कहि णं भंते! देवकुराए २ चित्तविचित्तकूडा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता?

गोयमा! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठचोत्तीसे जोयणसए चत्तारि य सत्तभाए जोयणस्स अबाहाए सीओयाए महाणईए पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं उभओकूले एत्थ णं चित्तविचित्तकूडा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता, एवं जच्चेव जमगपव्वयाणं० सच्चेव०, एएसिं रायहाणीओ दक्खिणेणंति।

भावार्थ - हे भगवन्! देवकुरु के अन्तर्गत चित्र एवं विचित्र नामक दो पर्वत किस स्थान पर बतलाए गए हैं?

हे गौतम! निषध पर्वत के उत्तरी अंतिम छोर से ८३४$\frac{४}{७}$ योजन की दूरी पर शीतोदा महानदी के पूर्व-पश्चिम के अंतराल में, उसके दोनों किनारों पर चित्रकूट एवं विचित्रकूट नामक दो पर्वत बतलाए गए हैं। यमक पर्वतों का जिस प्रकार का वर्णन है, उसी प्रकार इनका है। इनकी राजधानियाँ दक्षिण में हैं।

निषधद्रह

(१२८)

कहि णं भंते! देवकुराए २ णिसढद्दहे णामं दहे पण्णत्ते?

गोयमा! तेसिं चित्तविचित्तकूडाणं पव्वयाणं उत्तरिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठ-चोत्तीसे जोयणसए चत्तारि य सत्तभाए जोयणस्स अबाहाए सीओयाए महाणईए बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं णिसहद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, एवं जच्चेव णीलवंत-उत्तरकुरुचंदेरावमालवंताणं वत्तव्वया सच्चेव णिसहदेवकुरुसूरसुलसविज्जुप्पभाणं णेयव्वा, रायहाणीओ दक्खिणेणंति।

भावार्थ - हे भगवन्! देवकुरु में निषध नामक द्रह कहाँ बतलाया गया है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! चित्र-विचित्र नामक दो पर्वतों के उत्तरी अन्तिम छोर से ८३४$\frac{४}{७}$ योजन की दूरी पर, शीतोदा महानदी के ठीक बीच में निषधद्रह का स्थान बतलाया गया है। नीलवान्, उत्तरकुरु, चंद्र, ऐरावत एवं माल्यवान् - इन द्रहों का जैसा वर्णन कहा गया है, वैसा ही निषध, देवकुरु सूर, सुलस तथा विद्युत्प्रभ द्रहों के सम्बन्ध में कथनीय है। इनकी राजधानियाँ दक्षिण में हैं।

कूटशाल्मली पीठ

(१२६)

कहि णं भंते! देवकुराए २ कूडसामलिपेढे णामं पेढे पण्णत्ते?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं विज्जुप्पभस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं सीओयाए महाणईए पच्चत्थिमेणं देवकुरुपच्चत्थिमद्धस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं देवकुराए कूडसामलीपेढे णामं पेढे पण्णत्ते, एवं जच्चेव जम्बूए सुदंसणाए वत्तव्वया सच्चेव सामलीएवि भाणियव्वा णामविहूणा गरुलदेवे रायहाणी दक्खिणेणं अवसिट्ठं तं चेव जाव देवकुरू य इत्थ देवे० पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-देवकुरा २, अदुत्तरं च णं० देवकुराए०॥

भावार्थ - हे भगवन्! देवकुरु में कूटशाल्मली पीठ या सेमल पेड़ के आकार में शिखर रूप पीठ कहाँ बतलाया गया है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के दक्षिण-पश्चिम में, निषध वर्षधर पर्वत के उत्तर में, विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत के पूर्व में तथा शीतोदा महानदी के पश्चिम में, देवकुरु के पश्चिमार्द्ध के बीचोंबीच कूट शाल्मली पीठ का स्थान बतलाया गया है। कूट शाल्मली पीठ के वर्णन हेतु जम्बू सुदर्शना के स्थान पर कूट शाल्मली पीठ का नाम योजनीय है। गरुड़ इसका अधिष्ठाता देव है। राजधानी दक्षिण में है। शेष वर्णन जम्बू सुदर्शना के तुल्य है यावत् यहाँ पल्योपम स्थितिक देव निवास करता है।

हे गौतम! इस कारण वह देवकुरु (देवकुरा) के नाम से अभिहित हुआ है अथवा इसका यह नाम पड़ा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत

(१३०)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे विज्जुप्पभे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं मंदरस्स पव्वयस्स दाहिण-पच्चत्थिमेणं देवकुराए० पच्चत्थिमेणं पम्हस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे विज्जुप्पभे० वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए एवं जहा मालवंते णवरि सव्वतवणिज्जमए अच्छे जाव देवा आसयंति०।

विज्जुप्पभे णं भंते! वक्खारपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धाययणकूडे विज्जुप्पभकूडे देवकुरुकूडे पम्हकूडे कणगकूडे सोवत्थियकूडे सीओयाकूडे सयज्जलकूडे हरिकूडे।

सिद्धे य विज्जुणामे देवकुरु पम्हकणग-सोवत्थी।
सीओया य सयज्जलहरिकूडे चेव बोद्धव्वे॥ १॥

एए हरिकूडवज्जा पंचसइया णेयव्वा, एएसिं कूडाणं पुच्छा दिसिविदिसाओ णेयव्वाओ जहा मालवंतस्स हरिस्सहकूडे तह चेव हरिकूडे रायहाणी जह चेव दाहिणेणं चमररायहाणी तह णेयव्वा, कणगसोवत्थियकूडेसु वारिसेणबलाहयाओ दो देवयाओ अवसिट्ठेसु कूडेसु कूडसरिसणामया देवा रायहाणीओ दाहिणेणं,

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-विज्जुप्पभे वक्खारपव्वए २?

गोयमा! विज्जुप्पभे णं वक्खारपव्वए विज्जुमिव सव्वओ समन्ता ओभासेइ उज्जोवेइ पभासइ विज्जुप्पभे य इत्थ देवे जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-विज्जुप्पभे० २ अदुत्तरं च णं जाव णिच्चे।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अनतर्गत विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ बतलाया गया है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! निषध वर्षधर पर्वत के उत्तर में, मंदर पर्वत के दक्षिण-पश्चिम में, देवकुरु के पश्चिम में एवं पद्मविजय के पूर्व में, जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार पर्वत कहा गया है। वह उत्तर-दक्षिण में लम्बा है। इसका अवशिष्ट वर्णन माल्यवान् पर्वत के सदृश है। इतनी विशेषता है - वह सर्वथा तपनीय-उच्च जातीय स्वर्ण विशेष से निर्मित है यावत् उज्ज्वल है। देव-देवियाँ वहाँ आश्रय लेते हैं।

हे भगवन्! विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत के कितने कूट निरूपित हुए हैं?

हे गौतम! उसके नौ कूट निरूपित हुए हैं - १. सिद्धायतन कूट २. विद्युत्प्रभ कूट ३. देवकुरु कूट ४. पक्ष्म कूट ५. कनक कूट ६. सौवत्सिक कूट ७. शीतोदा कूट ८. सतज्ज्वल कूट ९. हरि कूट।

एतद्विषयक गाथा में इन्हीं नामों का उल्लेख हुआ है।

हरिकूट के सिवाय सभी कूट ५०० योजन ऊँचे हैं। दिशा-विदिशाओं में इनकी स्थिति आदि सारा वर्णन माल्यवान् पर्वत के तुल्य है। हरिकूट हरिस्सह कूट के समान है। चमरचंचा राजधानी के समान ही दक्षिण में इनकी राजधानी है।

कनककूट एवं सौवत्सिक कूट में वारिषेणा तथा बलाहका नामक दो देवियाँ निवास करती हैं। अवशिष्ट कूटों पर उनके कामानुरूप देव निवास करते हैं। उनकी राजधानियाँ दक्षिण में हैं।

हे भगवन्! वह विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत किस कारण अभिहित हुआ है?

हे गौतम! विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत विद्युत-बिजली की तरह सब ओर से अवभासित, उद्योतित एवं प्रभासित होता है यावत् वहाँ पल्योपम आयुष्य युक्त विद्युत्प्रभ नामक देव निवास करता है। इसलिये वह पर्वत विद्युत्प्रभ नाम से अभिहित हुआ है अथवा हे गौतम! इसका यह नाम शाश्वत है।

पक्ष्मादि विजय

(१३१)

एवं पम्हे विजए अस्सुपुरा रायहाणी अंकावई वक्खारपव्वए १, सुपम्हे विजए सीहपुरा रायहाणी खीरोया महाणई २, महापम्हे विजय महापुरा रायहाणी पम्हावई वक्खारपव्वए ३, पम्हगावई विजय विजयपुरा रायहाणी सीयसोया महाणई ४,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संखे विजए अवराइया रायहाणी आसीविसे वक्खारपव्वए ५, कुमुए विजए अरया रायहाणी अंतोवाहिणी महाणई ६, णलिणे विजए असोगा रायहाणी सुहावहे वक्खारपव्वए ७, णलिणावई विजए वीयसोगा रायहाणी ८ दाहिणिल्ले सीओयामुहवणसंडे, उत्तरिल्लेवि एमेव भाणियव्वे जहा सीयाए, वप्पे विजए विजया रायहाणी चंदे वक्खारपव्वए १, सुवप्पे विजए जयंती रायहाणी उम्मिमालिणी णई २, महावप्पे विजए जयंती रायहाणी सूरे वक्खारपव्वए ३, वप्पावई विजए अपराइया रायहाणी फेणमालिणी णई ४, वग्गू विजए चक्कपुरा रायहाणी णागे वक्खारपव्वए ५, सुवग्गू विजए खग्गपुरा रायहाणी गंभीरमालिणी अंतरणई ६, गंधिले विजए अवज्झा रायहाणी देवे वक्खारपव्वए ७, गंधिलावई विजए अओज्झा रायहाणी ८, एवं मंदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमिल्लं पासं भाणियव्वं तत्थ ताव सीओयाए णईए दक्खिणिल्ले णं कूले इमे विजया, तंजहा-

गाहा - पम्हे सुपम्हे महापम्हे, चउत्थे पम्हगावई।
संखे कुमुए णलिणे, अट्ठमे णलिणावई॥१॥
इमाओ रायहाणीओ, तंजहा

गाहा - आसपुरा सीहपुरा महापुरा चेव हवइ विजयपुरा।
अवराइया य अरया असोग तह वीयसोगा य॥२॥

इमें वक्खारा, तंजहा-अंके पम्हे आसीविसे सुहावहे, एवं इत्थ परिवाडीए दो दो विजया कूडसरिसणामया भाणियव्वा दिसा विदिसाओ य भाणियव्वाओ, सीओयामुहवणं च भाणियव्वं सीओयाए दाहिणिल्लं उत्तरिल्लं च, सीओयाए उत्तरिल्ले पासे इमे विजया, तंजहा-

वप्पे सुवप्पे महावप्पे, चउत्थे वप्पयावई।
वग्गू य सुवग्गू य, गंधिले गंधिलावई॥१॥
रायहाणीओ इमाओ, तंजहा-
विजया वेजयंती जयंती अपराजिया।
चक्कपुरा खग्गपुरा हवइ अवज्झा अउज्झा य॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इमे वक्खारा, तंजहा-चंदपव्वए १ सूरपव्वए २ णागपव्वए ३ देवपव्वए ४। इमाओ णईओ सीओयाए महाणईए दाहिणिल्ले कूले-खीरोया सीहसोया अंतरवाहिणीओ णईओ ३, उम्मिमालिणी १ फेणमालिणी २ गंभीरमालिणी ३ उत्तरिल्लविजयाणंतराउत्ति, इत्थ परिवाडीए दो-दो कूडा विजयसरिसणामया भाणियव्वा, इमे दो-दो कूडा अवट्ठिया तंजहा-सिद्धाययणकूडे पव्वयसरिस-णामकूडे।

भावार्थ - इसी प्रकार १. पक्ष्म विजय, अश्वपुरी राजधानी तथा अंकावती वक्षस्कार पर्वत है।

२. सूपक्ष्म विजय सिंहपुरी राजधानी तथा क्षीरोदा महानदी है।

३. महापक्ष्म विजय महापुरी विजय तथा पक्ष्मावती वक्षस्कार पर्वत हैं।

४. पक्ष्मकावती विजय, विजयपुरी राजधानी तथा शीतस्त्रोता राजधानी है।

५. शंखविजय, अपराजिता राजधानी तथा आशिविष वक्षस्कार पर्वत है।

६. कुमुद विजय, अरजा राजधानी तथा अन्तर्वाहिनी महानदी है।

७. नलिन विजय अशोका राजधानी तथा सुखावह वक्षस्कार पर्वत है।

८. नलिनावती विजय (सलिलावती विजय) वीतशोका राजधानी है।

९. दक्षिणात्य शीतोदामुख नामक वनखण्ड है। उत्तरशीतोदा वनखण्ड भी इसी प्रकार कथनीय है।

उत्तरी शीतोदामुख वन खण्ड के अंतर्गत-

१. वप्रविजय, विजयाराजधानी तथा चन्द्रवक्षस्कार पर्वत हैं।

२. सुवप्रविजय, जयंती राजधानी एवं उर्मिमालिनी नदी है।

३. महावप्रविजय, जयंती राजधानी तथा सूर वक्षस्कार पर्वत है।

४. वप्रावती विजय, अपराजिता राजधानी तथा फेनमालिनी नदी है।

५. वल्गुविजय, चक्रपुरी राजधानी तथा नाग वक्षस्कार पर्वत है।

६. सुवल्गुविजय, खडगपुरी राजधानी तथा गंभीर मालिनी अर्न्तनदी है।

७. गंधिल विजय, अवध्या राजधानी एवं देव वक्षस्कार पर्वत है।

८. गंधिलावती विजय तथा अयोध्या राजधानी है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार मंदर पर्वत के पश्चिमी पार्श्व का वर्णन योजनीय है। वहाँ शीतोदानदी के दक्षिणी तट पर ये विजय कहे गए हैं -

गाथा - १. पक्ष्म २. सूपक्ष्म ३. महापद्म ४. पक्ष्मकावती ५. शंख ६. कुमुद ७. नलिन ८. नलिनावती॥१॥

इनकी राजधानियाँ इस प्रकार हैं - **गाथा** - १. अश्वपुरी २. सिंहपुरी ३. महापुरी ४. विजयपुरी ५. अपराजिता ६. अरजा ७. अशोका ८. वीतशोका॥२॥

वक्षस्कार पर्वत ये हैं - १. अंक २. पक्ष्म ३. आशीविष ४. सुखावह।

इस कम से कूटों के तुल्य नाम युक्त दो-दो विजय, दिशा-विदिशाएं शीतोदा का दक्षिणी एवं उत्तरीमुख वन ये सब परिज्ञेय हैं।

शीतोदा के उत्तरी पार्श्व में ये विजय अभिहित हुए हैं -

गाथा - १. वप्र २. सुवप्र ३. महावप्र ४. वप्रकावती ५. वल्गु ६. सुवल्गु ७. गंधिल ८. गंधिलावती ॥१॥

राजधानियाँ निम्नांकित हैं - १. विजया २. वैजयंती ३. जयंती ४. अपराजिता ५. चक्रपुरी ६. खड्गपुरी ७. अवध्या ८. अयोध्या॥२॥

वक्षस्कार पर्वत ये हैं - १. चन्द्र २. सूर ३. नाग ४. देवपर्वत।

क्षीरोदा तथा शीत स्त्रोता नामक नदियाँ शीतोदा महानदी के दक्षिणी किनारे पर अन्तर्वाहिनी नदियाँ हैं।

उर्मिमालिनी, फेनमालिनी तथा गंभीरमालिनी नदियाँ शीतोदामहानदी के उत्तर दिशावर्ती विजयों की अन्तर्वाहिनी नदियाँ हैं। इस क्रम में दो-दो कूट अपने-अपने विजय के अनुरूप नाम वाले बतलाए गए हैं - वे दो-दो कूट स्थिर हैं- १. सिद्धायतन कूट तथा २. वक्षस्कार पर्वत सदृश नामक युक्त कूट।

मंदर पर्वत

(१३२)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे मंदरे णामं पव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! उत्तरकुराए दक्खिणेणं देवकूराए उत्तरेणं पुव्वविदेहस्स वासस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पच्चत्थिमेणं अवरविदेहस्स वासस्स पुरत्थिमेणं जम्बुद्दीवस्स २ बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे मंदरे णामं पव्वए पण्णत्ते णवणउइजोयणसहस्साइं उद्धं उच्चत्तेणं एगं जोयणसहस्सं उव्वेहेणं मूले दसजोयणसहस्साइं णवइं च जोयणाइं दस य एगारसभाए जोयणस्स विक्खम्भेणं धरणियले दस जोयणसहस्साइं विक्खम्भेणं तयणंतरं च णं मायाए २ परिहायमाणे परिहायमाणे उवरितले एगं जोयणसहस्सं विक्खम्भेणं मूले एक्कतीसं जोयणसहस्साइं णव य दसुत्तरे जोयणसए तिण्णि य एगारसभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं धरणियले एक्कतीसं जोयणसहस्साइं छच्च तेवीसे जोयणसए परिक्खेवेणं उवरितले तिण्णिजोयणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोयणसयं किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं मूले विच्छिण्णे मज्झे संखित्ते उवरिं तणुए गोपुच्छसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे सण्हेत्ति। से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते वण्णओत्ति।

मंदरे णं भंते! पव्वए कइ वणा पण्णत्ता?

गोयमा! चत्तारि वणा पण्णत्ता, तंजहा-भद्दसालवणे १ णंदणवणे २ सोमणसवणे ३ पंडगवणे ४।

कहि णं भंते! मंदरे पव्वए भद्दसालवणे णामं वणे पण्णत्ते?

गोयमा! धरणियले एत्थ णं मंदरे पव्वए भद्दसालवणे णामं वणे पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे सोमणसविज्जुप्पह-गंधमायणमालवंतेहिं वक्खारपव्वएहिं सीयासीओयाहि य महाणईहिं अट्ठभाग-पविभत्ते मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं बावीसं बावीसं जोयणसहस्साइं आयामेणं उत्तरदाहिणेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खम्भेणंति, से णं एगाए पउमवर-वेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते दुण्हवि वण्णओ भाणियव्वो किण्हे किण्होभासे जाव देवा आसयंति सयंति०।

मंदरस्स णं पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं भद्दसालवणं पण्णासं जोयणाइं ओगाहित्ता एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते पण्णासं जोयणाइं आयामेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पणवीसं जोयणाइं विक्खंभेणं छत्तीसं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अणेगखंभसय-सण्णिविट्ठे वण्णओ, तस्स णं सिद्धाययणस्स तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता, ते णं दारा अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं चत्तारि जोयणाइं विक्खम्भेणं तावइयं चेव पवेसेणं सेया वरकणगथूभियागा जाव वणमालाओ भूमिभागो य भाणियव्वो।

तस्स णं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगा मणिपेढिया पण्णत्ता अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वरयणामई अच्छा, तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं देवच्छंदए अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं साइरेगाइं अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं जाव जिणपडिमा वण्णओ देवच्छंदगस्स जाव धूवकडुच्छुयाणं इति।

मंदरस्स णं पव्वयस्स दाहिणेणं भद्दसालवणं पण्णासं एवं चउद्दिसिं पि मंदरस्स भद्दसालवणे चत्तारि सिद्धाययणा भाणियव्वा, मदरस्स णं पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं भद्दसालवणं पण्णासं जोयणाइं ओगाहित्ता एत्थ णं चत्तारि णंदापुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-पउमा १ पउमप्पभा २ चेव, कुमुया ३ कुमुयप्पभा ४, ताओ णं पुक्खरिणीओ पण्णासं जोयणाइं आयामेणं पणवीसं जोयणाइं विक्खंभेणं दसजोयणाइं उव्वेहेणं वण्णओ वेइयावणसंडाणं भाणियव्वो, चउद्दिसिं तोरणा जाव तासि णं पुक्खरिणीणं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो पासायवडिंसए पण्णत्ते पंचजोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खम्भेणं अब्भुग्गयमूसिय एवं सपरिवारो पासाय-वडिंसओ भाणियव्वो, मंदरस्स णं एवं दाहिणपुरत्थिमेणं पुक्खरिणीओ उप्पलगुम्मा णलिणा उप्पला उप्पलुज्जला तं चेव पमाणं मज्झे पासायवडिंसओ सक्कस्स सपरिवारो तेणं चेव पमाणेणं दाहिणपच्चत्थिमेणवि पुक्खरिणीओ भिंगा भिंगणिभा चेव, अंजणा अंजणप्पभा। पासायवडिंसओ सक्कस्स सीहासणं सपरिवारं। उत्तरपच्चत्थिमेणं पुक्खरिणीओ-सिरिकंता १ सिरिचंदा २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिरिमहिया ३ चेव सिरिणिलया ४। पासायवडिंसओ ईसाणस्स सीहासणं सपरिवारंति।

मंदरे णं भंते! पव्वए भद्दसालवणे कइ दिसाहत्थिकूडा पण्णत्ता?

गोयमा! अट्ठ दिसाहत्थिकूडा पण्णत्ता, तंजहा-

पउमुत्तरे १ णीलवंते २, सुहत्थी ३, अंजणागिरी ४,

कुमुए य ५, पलासे य ६, वडिंसे ७, रोयणागिरी ८॥१॥

कहि णं भंते! मंदरे पव्वए भद्दसालवणे पउमुत्तरे णामं दिसाहत्थिकूडे पण्णत्ते?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं पुरत्थिमिल्लाए सीयाए उत्तरेणं एत्थ णं पउमुत्तरे णामं दिसाहत्थिकूडे पण्णत्ते पंचजोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पंचगाउयसयाइं उव्वेहेणं एवं विक्खम्भपरिक्खेवो भाणियव्वो चुल्लहिमवंतसरिसो, पासायाण य तं चेव पउमुत्तरो देवो रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं १, एवं णीलवंतदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपुरत्थिमेणं पुरत्थिमिल्लाए सीयाए दक्खिणेणं एयस्सवि णीलवंतो देवो रायहाणी दाहिणपुरत्थिमेणं २, एवं सुहत्थिदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपुरत्थिमेणं दक्खिणिल्लाए सीओयाए पुरत्थिमेणं एयस्सवि सुहत्थी देवो रायहाणी दाहिणपुरत्थिमेणं ३, एवं चेव अंजणागिरिदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं दक्खिणिल्लाए सीओयाए पच्चत्थिमेणं एयस्सवि अंजणागिरी देवो रायहाणी दाहिणपच्चत्थिमेणं ४, एवं कुमुए विदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमिल्लाए सीओयाए दक्खिणेणं एयस्सवि कुमुओ देवो रायहाणी दाहिणपच्चत्थिमेणं ५, एवं पलासे विदिसा हत्थिकूडे मंदरस्स उत्तरपच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमिल्लाए सीओयाए उत्तरेणं एयस्सवि पलासो देवो रायहाणी उत्तरपच्चत्थिमेणं ६, एवं वडेंसे विदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स० उत्तरपच्चत्थिमेणं उत्तरिल्लाए सीयाए महाणईए पच्चत्थिमेणं एयस्सवि वडेंसो देवो रायहाणी उत्तरपच्चत्थिमेणं ७, एवं रोयणागिरि दिसाहत्थिकूडे मंदरस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तरपुरत्थिमेणं उत्तरिल्लाए सीयाए पुरत्थिमेणं एयस्सवि रोयणागिरि देवो रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत मंदर नामक पर्वत किस स्थान पर अभिहित हुआ है?

हे गौतम! उत्तरकुरु के दक्षिण में, देवकुरु के उत्तर में, पूर्वविदेह के पश्चिम में तथा पश्चिम विदेह के पूर्व में, जम्बूद्वीप के बीचोंबीच मंदर नामक पर्वत अभिहित हुआ है। वह ९९ हजार योजन ऊँचा है तथा एक हजार योजन भूमि में गहरा है। वह मूल में १००९० $\frac{१०}{११}$ योजन तथा धरणितल पर दस हजार योजन चौड़ा है। उसके पश्चात् वह चौड़ाई में क्रमशः कम होता जाता है। ऊपर के तल पर एक हजार योजन चौड़ा रह जाता है। इसकी परिधि मूल में ३१९१० $\frac{३}{११}$ योजन, भूमितल पर ३१६२३-योजन एवं ऊपरी तल पर ३१६२ योजन से कुछ अधिक है। वह मूल में चौड़ा, मध्य में संकड़ा तथा ऊपरी भाग में पतला है।

इस प्रकार इसकी आकृति गाय की पूँछ के सदृश है। वह सर्वथा रत्नमय उज्ज्वल तथा सुकोमल है। वह एक पद्मवरवेदिका एवं एक वनखंड द्वारा चारों ओर से समावृत है। उसका वर्णन पूर्वानुरूप योजनीय है।

हे भगवन्! मंदर पर्वत पर कितने वन कहे गये हैं?

हे गौतम! वहां चार वन कहे गए हैं, वे इस प्रकार हैं - १. भद्रशाल वन २. नंदन वन ३. सौमनस वन ४. पंडक वन।

हे भगवन्! मंदर पर्वत पर भद्रशाल वन की स्थिति कहाँ बतलाई गई है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के भूमिभाग पर भद्रशाल नामक वन अभिहित हुआ है।

वह पूर्व-पश्चिम लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण में चौड़ा है। वह सौमनस, विद्युत्प्रभ, गंधमादन एवं माल्यवान् नामक वक्षस्कार पर्वतों द्वारा तथा शीता और शीतोदा महानदियों द्वारा आठ भागों में बंटा है। वह मंदर पर्वत के पूर्व-पश्चिम कोण में बाईस-बाईस सहस्र योजन लम्बा है। उत्तर-दक्षिण कोण में अढाई सौ-अढ़ाई सौ योजन चौड़ा है। वह एक पद्मवरवेदिका एवं एक वनखंड द्वारा चारों ओर से समावृत्त है। दोनों का वर्णन पूर्वानुसार योजनीय है। वह कृष्ण वर्ण एवं कृष्ण आभा युक्त वृक्षों की पत्तियों से आच्छादित है यावत् वहाँ देव-देवियाँ आश्रय लेते हैं, विश्राम लेते हैं, इत्यादि वर्णन पूर्व वर्णन के अनुसार है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मंदर पर्वत की पूर्व दिशा में, भद्रशाल वन में, पचास योजन पार करने पर एक विशाल सिद्धायतन आता है। उसकी लम्बाई पचास योजन, चौड़ाई पच्चीस योजन तथा ऊँचाई छत्तीस योजन है। वह सैंकड़ों स्तंभों पर अवस्थित है। उसका विस्तृत वर्णन पूर्वानुरूप वक्तव्य है। उस सिद्धायतन की तीन दिशाओं में तीन द्वार कहे गए हैं। वे द्वार ऊँचाई में आठ योजन तथा चौड़ाई में चार योजन हैं। उनके प्रवेश मार्ग भी उतने ही हैं। उसके शिखर उज्ज्वल एवं उत्तम स्वर्ण निर्मित यावत् वनमाला भूमिभाग आदि का एतत्संबंधी वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है। उनके ठीक बीच में एक विशाल मणिपीठिका स्थित है। वह आठ योजन लम्बी-चौड़ी, चार योजन मोटी एवं सर्वरत्नमय, स्वच्छ है। उस मणिपीठिका के ऊपर देवासन है। वह आठ योजन लम्बा-चौड़ा तथा आठ योजन से कुछ अधिक ऊँचा है यावत् जिन प्रतिमा यावत् देवासन, धूपदान आदि का वर्णन पूर्वानुसार कथनीय है।

मंदर पर्वत के दक्षिण में, भद्रशाल वन के भीतर पचास योजन जाने पर उसकी (मंदर पर्वत की) चारों दिशाओं में चार सिद्धायतन हैं। मंदर पर्वत के उत्तर पूर्व में, भद्रशालवन में पचास योजन जाने पर पद्मा, पद्मप्रभा, कुमुदा एवं कुमुदप्रभा - ये चार नंदा पुष्करिणियाँ बतलाई गई है।

वे पचास योजन लम्बी, पच्चीस योजन चौड़ी तथा दस योजन जमीन में गहरी हैं यावत् पद्मवरवेदिकाओं, वनखण्ड, चारों दिशाओं में तोरण द्वार आदि का वर्णन पूर्वानुरूप ग्राह्य है। उन पुष्करिणियों के मध्य में देवराज ईशानेन्द्र का उत्तम भवन है। वह पाँच सौ योजन ऊँचा तथा अढाई सौ योजन चौड़ा है। अपने से संबंधित सामग्री सहित उस प्रासाद का विशद वर्णन पहले की ज्यों ग्राह्य है।

मंदर पर्वत के दक्षिण-पूर्व में उत्पल, गुल्मा, नलिना, उत्पला एवं उत्पलोज्ज्वला संज्ञक पुष्करिणियां हैं। उनका विस्तार-प्रमाण पूर्वानुरूप है। इनके मध्य श्रेष्ठ भवन है। देवराज शैलेन्द्र वहाँ सपरिवार-सपरिजन निवास करता है।

मंदर पर्वत के दक्षिण-पश्चिम में भृंगा, भृंगनिभा, अंजना एवं अंजनप्रभा नामक पुष्करिणियां हैं, जिनका प्रमाण पूर्ववत् वाच्य है। प्रासाद, शक्रेन्द्र एवं सिंहासन आदि का वर्णन सपरिवार, अंगोपांगों सहित ग्राह्य हैं।

मंदर पर्वत के उत्तर-पूर्व में श्रीकांता, श्रीचंदा, श्रीमहिता तथा श्रीनिलया संज्ञक पुष्करिणियाँ हैं। मध्य में उत्तम भवन, अधिष्ठायक देव ईशानेन्द्र का सिंहासन, सपरिवार सहित वर्णन पूर्ववत् कथनीय है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! भद्रशाल वन में दिशाहस्तिकूट–हाथी जैसी आकृति से युक्त शिखर कितने कहे गये हैं?

हे गौतम! वहाँ आठ दिग्हस्तिकूट बतलाए गए हैं - १. पद्मोत्तर २. नीलवान ३. सुहस्ती ४. अंजनगिरी ५. कुमुद ६. पलाश ७. अवतंस ८. रोचनागिरी॥ १॥

हे भगवन्! मंदर पर्वत पर, भद्रशाल वन में पद्मोत्तर संज्ञक दिग्हस्तिकूट किस स्थान पर प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के उत्तर-पूर्व में तथा पूर्व दिशावर्तिनी शीता महानदी के उत्तर में पद्मोत्तर संज्ञक दिग्हस्तिकूट कहा गया है। वह ऊँचाई में पाँच सौ योजन एवं जमीन में पाँच सौ योजन गहरा है। उसकी चौड़ाई एवं परिधि चुल्लहिमवान पर्वत के तुल्य है। प्रासाद आदि का वर्णन पहले की ज्यों है। वहाँ पद्मोत्तर नामक देव रहता है। इसकी राजधानी उत्तर-पूर्व में स्थित है।

नीलवान् नामक दिग्हस्तिकूट मंदर पर्वत के दक्षिण-पूर्व में तथा पूर्व-दिशावर्तिनी शीता महानदी के दक्षिण में है। वहाँ नीलवान् नामक देव रहता है। उसकी राजधानी दक्षिण-पूर्व में है।

सुहस्ती नामक दिग्हस्तिकूट मंदर पर्वत के दक्षिण-पूर्व में है तथा दक्षिण दिशावर्तिनी शीतोदा महानदी की पूर्व दिशा में है। वहाँ सुहस्ती नामक देव निवास करता है। उसकी राजधानी दक्षिण-पूर्व में है।

इसी प्रकार अंजनगिरी नामक दिग्हस्तिकूट मंदर पर्वत के दक्षिण-पश्चिम में तथा दक्षिण दिशावर्तिनी शीतोदा महानदी के पश्चिम में है। उसका अधिष्ठायक देव अंजनगिरी है, जिसकी राजधानी दक्षिण-पश्चिम में है। कुमुद नामक दिशागत हस्तिकूट मंदर पर्वत के दक्षिण-पश्चिम में एवं पश्चिमदिग्वर्तिनी शीतोदा महानदी के दक्षिण में है। वहाँ कुमुद नामक देव निवास करता है। उसकी राजधानी दक्षिण-पश्चिम में अवस्थित है।

पलाश नामक विदिशागत हस्तिकूट मंदर पर्वत के उत्तर-पश्चिम में तथा पश्चिम दिग्वर्तिनी शीतोदा महानदी के उत्तर में है। वहाँ पलाश नामक देव निवास करता है। उसकी राजधानी उत्तर-पश्चिम में विद्यमान है।

इसी प्रकार अवतंस विदिशागत हस्तिकूट मंदर पर्वत के उत्तर-पश्चिम में तथा उत्तर दिशावर्तिनी शीता महानदी के पश्चिम में है। वहाँ अवतंस नामक देव निवास करता है। उसकी राजधानी उत्तर-पश्चिम में है।

रोचनागिरी नामक दिग्हस्तिकूट मंदर पर्वत के उत्तर-पूर्व में, उत्तरवर्ती शीता महानदी के पूर्व में है। वहाँ रोचनागिरी नामक देव अपनी उत्तर-पूर्व में स्थित राजधानी के साथ निवास करता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नंदन वन

(१३३)

कहि णं भंते! मंदरे पव्वए णंदणवणे णामं वणे पण्णत्ते?

गोयमा! भद्दसालवणस्स बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ पंचजोयणसयाइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं मंदरे पव्वए णंदणवणे णामं वणे पण्णत्ते पंचजोयणसयाइं चक्कवाल-विक्खम्भेणं वट्टे वलयागारसंठाणसंठिए जे णं मंदरं पव्वयं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ताणं चिट्ठइत्ति णवजोयणसहस्साइं णव य चउप्पण्णे जोयणसए छच्चेगारसभाए जोयणस्स बाहिं गिरिविक्खम्भो एगत्तीसं जोयणसहस्साइं चत्तारि य अउणासीए जोयणसए किंचिविसेसाहिए बाहिं गिरिपरिरएणं अट्ठ जोयण-सहस्साइं णव य चउप्पण्णे जोयणसए छच्चेगारसभाए जोयणस्स अंतो गिरि-विक्खम्भो अट्ठावीसं जोयणसहस्साइं तिण्णि य सोलसुत्तरे जोयणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोयणस्स अंतो गिरिपरिरएणं, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते वण्णओ जाव देवा आसयंति०।

मंदरस्स णं पव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते एवं चउद्दिसिं चत्तारि सिद्धाययणा विदिसासु पुक्खरिणीओ तं चेव पमाणं सिद्धाययणाणं पुक्खरिणीणं च पासायवडिंसगा तह चेव सक्केसाणाणं तेणं चेव पमाणेणं।

णंदणवणे णं भंते! कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा-णंदणवणकूडे १ मंदरकूडे २ णिसहकूडे ३ हिमवयकूडे ४ रययकूडे ५ रुयगकूडे ६ सागरचित्तकूडे ७ वइरकूडे ८ बलकूडे ९।

कहि णं भंते! णंदणवणे णंदणवणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमिल्लसिद्धाययणस्स उत्तरेणं उत्तर-पुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसयस्स दक्खिणेणं एत्थ णं णंदणवणे णंदणवण कूडे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णामं कूडे पण्णत्ते० पंचसइया कूडा पुव्ववण्णिया भाणियव्वा, देवी मेहंकरा रायहाणी विदिसाएत्ति १ एयाहिं चेव पुव्वाभिलावेणं णेयव्वा इमे कूडा इमाहिं दिसाहिं पुरत्थिमिल्लस्स भवणस्स दाहिणेणं दाहिणपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स उत्तरेणं मंदरे कूडे मेहवई देवी रायहाणी पुव्वेणं २ दक्खिणिल्लस्स भवणस्स पुरत्थिमेणं दाहिणपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पच्चत्थिमेणं णिसहे कूडे सुमेहा देवी रायहाणी दक्खिणेणं दक्खिणिल्लस्स भवणस्स पच्चत्थिमेणं दक्खिणपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पुरत्थिमेणं हेमवए कूडे हेममालिणी देवी रायहाणी दक्खिणेणं पच्चत्थिमिल्लस्स भवणस्स दक्खिणेणं दाहिणपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स उत्तरेणं रयए कूडे सुवच्छा देवी रायहाणी पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमिल्लस्स भवणस्स उत्तरेणं उत्तरपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स दक्खिणेणं रुयगे कुडे वच्छमित्ता देवी रायहाणी पच्चत्थिमेणं उत्तरिल्लस्स भवणस्स पच्चत्थिमेणं उत्तरपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पुरत्थिमेणं सागरचित्ते कूडे वइरसेणा देवी रायहाणी उत्तरेणं उत्तरिल्लस्स भवणस्स पुरत्थिमेणं उत्तरपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पच्चत्थिमेणं वइरकूडे बलाहया देवी रायहाणी उत्तरेणंति।

कहि णं भंते! णंदणवणे बलकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं णंदणवणे बलकूडे णामं कूडे पण्णत्ते, एवं जं चेव हरिस्सहकुडस्स पमाणं रायहाणी य तं चेव बलकूडस्सवि, णवरं बलो देवो रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणंति।

भावार्थ - हे भगवन्! मंदर पर्वत पर नंदनवन किस स्थान पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! भद्रशालवन के अति समतल एवं रम्य भूमिभाग से ५०० योजन ऊपर की ओर जाने पर मंदर पर्वत पर नंदनवन आता है। चक्रवाल विष्कंभ-पहिए की तरह सममंडल विस्तार युक्त परिधि की अपेक्षा से वह पांच सौ योजन गोलाकार है। उसकी आकृति वलय-कंकण के समान है। इस कारण उसने मंदर पर्वत को चारों ओर से आवृत्त कर रखा है। नंदनवन के बाहर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मेरु पर्वत का विस्तार फैलाव ९९५४ $\frac{६}{११}$ योजन है। उसकी परिधि ३१,४७९ से कुछ अधिक है। नंदन वन के भीतर उसका विस्तार ८९४४ $\frac{८}{११}$ योजन है। उसकी भीतरी परिधि २८३१६ $\frac{८}{११}$ योजन है। वह एक पद्मवर वेदिका तथा वनखण्ड द्वारा चारों ओर से घिरा हुआ है यावत् वहाँ देव-देवियाँ विश्राम करते हैं इत्यादि सारा वर्णन पहले की तरह वाच्य है।

मंदर पर्वत के पूर्व में एक विशाल सिद्धायतन है। चारों दिशाओं में वैसे चार सिद्धायतन हैं। विदिशाओं में पुष्करिणियाँ है। सिद्धायतन, पुष्करिणियाँ श्रेष्ठ भवन एवं शक्रेन्द्र सभी का वर्णन पहले की तरह योजनीय है।

हे भगवन्! नंदनवन में कितने कूट कहे गए हैं?

हे गौतम! वहाँ नौ कूट कहे गये हैं, जो इस प्रकार हैं - १. नंदनवन कूट २. मंदर कूट ३. निषध कूट ४. हिमवत कूट ५. रजत कूट ६. रुचक कूट ७. सागर चित्रकूट ८. वज्र कूट ९. बल कूट।

हे भगवन्! नंदनवन में नंदन वन कूट किस स्थान पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! मंदर पर्वत पर पूर्व दिशावर्ती सिद्धायतन के उत्तर में उत्तर पूर्ववर्ती श्रेष्ठ प्रासाद के दक्षिण में, नंदनवन में, नंदन कूट आख्यात हुआ है।

ये सभी कूट ५०० योजन ऊँचे हैं। इनका विस्तृत वर्णन पहले की ज्यों वर्णनीय है। नंदनवन कूट पर मेघंकरा नामक देवी रहती है। उसकी राजधानी विदिशा-ईशान कोण में है। अवशेष वर्णन पूर्वानुसार ग्राह्य है।

इन दिशाओं के अन्तर्गत-पूर्व दिशावर्ती प्रासाद के दक्षिण में, दक्षिण पूर्ववर्ती उत्तर प्रासाद के उत्तर में, मंदर कूट पर मेघवती नामक देवी निवास करती है। उसकी राजधानी पूर्वानुरूप है।

दक्षिण दिशावर्ती भवन के पूर्व में, दक्षिण पूर्ववर्ती श्रेष्ठ प्रासाद के पश्चिम में, निषधकूट पर सुमेधा नामक देवी निवास करती है। इसकी राजधानी दक्षिण में है।

दक्षिण दिशावर्ती भवन के पश्चिम में, दक्षिण-पश्चिमवर्ती उत्तम प्रासाद के पूर्व में हैमवत कूट पर हेममालिनी नामक देवी निवास करती है। उसकी राजधानी दक्षिण में है।

पश्चिम दिशावर्ती भवन के दक्षिण में दक्षिण पशिचमवर्ती प्रासाद के उत्तर में रजत कूट पर सुवत्सा नामक देवी निवास करती है। पश्चिम में उसकी राजधानी है।

पश्चिम दिग्वर्ती भवन के उत्तर में, उत्तर पश्चिमवर्ती श्रेष्ठ प्रासाद के दक्षिण में रुचक नामक कूट पर वत्समित्रा नामक देवी रहती है। उसकी राजधानी पश्चिम में है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर दिशावर्ती भवन के पश्चिम में, उत्तर पश्चिमवर्ती श्रेष्ठ प्रासाद के पूर्व में सागर चित्र नामक कूट पर वज्रसेना नामक देवी रहती है। उसकी राजधानी उत्तर में है।

उत्तर दिशावर्ती भवन के पूर्व में उत्तरपूर्ववर्ती उत्तम प्रासाद के पश्चिम में वज्रकूट पर बलाहका नामक देवी निवास करती है। इसकी राजधानी उत्तर में है।

हे भगवन्! नंदनवन में बलकूट किस स्थान पर बतलाया गया है?

हे गौतम! मंदर पर्वत के उत्तर पूर्व में नंदनवन के भीतर यह कूट बतलाया गया है।

इसका एवं इसकी राजधानी का प्रमाण विस्तार हरिस्सहकूट के तुल्य है। इतना अंतर है- इसका अधिष्ठाता बल नामक देव है। उसकी राजधानी उत्तर-पूर्व में अवस्थित है।

सौमनस वन

(१३४)

कहि णं भंते! मंदरए पव्वए सोमणसवणे णामं वणे पण्णत्ते?

गोयमा! णंदण-वणस्स बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ अद्धतेवट्ठिं जोयणसहस्साइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं मंदरे पव्वए सोमणसवणे णामं वणे पण्णत्ते पंचजोयणसयाइं चक्कवालविक्खम्भेणं वट्टे वलयागारसंठाणसंठिए जे णं मंदरं पव्वयं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ताणं चिट्ठइ चत्तारि जोयणसहस्साइं दुण्णि य बावत्तरे जोयणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोयणस्स बाहिं गिरिविक्खम्भेणं तेरस जोयणसहस्साइं पंच य एक्कारे जोयणसए छच्च इक्कारसभाए जोयणस्स बाहिं गिरिपरिरएणं तिण्णि जोयणसहस्साइं दुण्णि य बावत्तरे जोयणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोयणस्स अंतो गिरिविक्खम्भेणं दस जोयणसहस्साइं तिण्णि य अउणापण्णे जोयणसए तिण्णि य इक्कारसभाए जोयणस्स अंतो गिरिपरिरएणंति। से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते वण्णओ किण्हे किण्होभासे जाव आसयंति० एवं कूडवज्जा सच्चेव णंदणवणवत्तव्वया भाणियव्वा, तं चेव ओगाहिऊण जाव पासायवडेंसगा सक्कीसाणाणंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - ओगाहिऊण - आगे जाकर।

भावार्थ - हे भगवन्! मंदर पर्वत पर सौमनस वन किस स्थान पर प्रतिपादित हुआ है?

हे गौतम! नंदनवन के अत्यधिक समतल एवं सुंदर भूमिभाग में ६२५०० योजन ऊपर जाने पर मंदर पर्वत पर सौमनसवन आता है। वह चक्रवत विस्तार की दृष्टि से ५०० योजन विस्तीर्ण है। इस प्रकार कंकण के आकार का है। वह चारों ओर से मंदर पर्वत को घेरे हुए है। वह पर्वत से बाहर की ओर ४२७२$\frac{८}{११}$ योजन विस्तीर्ण है। पर्वत के बाहरी भाग से लगी हुई उसकी परिधि १३५११$\frac{६}{११}$ योजन है। वह पर्वत के भीतरी भाग में ३२७२$\frac{८}{११}$ योजन विस्तार युक्त है। पर्वत के भीतरी भाग से लगी हुई-उसकी परिधि १०३४९$\frac{३}{११}$ योजन है।

वह एक पद्मवरवेदिका एवं वनखण्ड द्वारा चारों ओर से आवृत्त है। इसका विस्तार युक्त वर्णन पूर्ववत् योजनीय है। वह वन कृष्ण वर्ण, कृष्ण आभा से आपूर्ण है यावत् देव-देवियाँ विश्राम करते हैं, आश्रय लेते हैं। कूटों के सिवाय अन्य सारा वर्णन नंदनवन के तुल्य है। उसके आगे जाकर शक्रेन्द्र यावत् ईशानेन्द्र के सुंदर प्रासाद हैं।

पंडक वन

(१३५)

कहि णं भंते! मंदरपव्वए पंडगवणे णामं वणे पण्णत्ते?

गोयमा! सोमणसवणस्स बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ छत्तीसं जोयण-सहस्साइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं मंदरे पव्वए सिहरतले पंडगवणे णामं वणे पण्णत्ते चत्तारि चउणउए जोयणसए चक्कवालविक्खंभेणं वट्टे वलयागार-संठाणसंठिए, जे णं मंदरचूलियं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ताणं चिट्ठइ तिण्णि जोयणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोयणसयं किंचिविसेसाहिय परिक्खेवेणं, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं जाव किण्हे० देवा आसयंति०, पंडगवणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं मंदरचूलिया णामं चूलिया पण्णत्ता चत्तालीसं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं मूले बारस जोयणाइं विक्खंभेणं मज्झे अट्ठ जोयणाइं विक्खंभेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उप्पिं चत्तारि जोयणाइं विक्खंभेणं मूले साइरेगाइं सत्ततीसं जोयणाइं परिक्खेवेणं मज्झे साइरेगाइं पणवीसं जोयणाइं परिक्खेवेणं उप्पिं साइरेगाइं बारस जोयणाइं परिक्खेवेणं मूले विच्छिण्णा मज्झे संखित्ता उप्पिं तणुया गोपुच्छसंठाणसंठिया सव्ववेरुलियामई अच्छा०, सा णं एगाए पउमवरवेइयाए जाव संपरिक्खित्ता इति उप्पिं बहुसमरणिज्जे भूमिभागे जाव सिद्धाययणं बहुमज्झदेसभाए कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खंभेणं देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं अणेगखंभसय जाव धूवकडुच्छुगा मंदर चूलियाए णं पुरत्थिमेणं पंडगवणं पण्णासं जोयणाइं ओगाहित्ता एत्थ णं महं एगे भवणे पण्णत्ते एवं जच्चेव सोमणसे पुव्ववण्णिओ गमो भवणाणं पुक्खरिणीणं पासायवडेंसगाण य सो चेव णेयव्वो जाव सक्कीसाणवडेंसगा तेणं चेव परिमाणेणं।

भावार्थ - हे भगवन्! मंदर पर्वत पर पंडकवन किस स्थान पर वर्णित हुआ है?

हे गौतम! सौमनस वन के अति समतल एवं सुन्दर भूमिभाग से ३६००० योजन ऊपर जाने पर मंदर पर्वत के शिखर पर पंडकवन वर्णित हुआ है। चक्र की तरह गोलाकार यह ४९४ योजन विस्तीर्ण है। इस प्रकार यह कंकण के आकार का है। यह मंदर पर्वत की चूलिकाओं को चारों ओर से घेरे हुए हैं। उसकी परिधि ३१६२ योजन से कुछ अधिक है। वह एक पद्मवरवेदिका एवं वनखण्ड द्वारा आवृत्त है। वह कृष्णवर्ण एवं कृष्ण आभा लिए हुए है यावत् देव-देवियाँ वहाँ आश्रय लिये हुए हैं। पंडकवन के ठीक बीच में मंदर-चूलिका बतलाई गई है। वह चालीस योजन ऊंची है। वह मूल में बारह योजन, मध्य में आठ तथा ऊपर चार योजन चौड़ी है। मूल में उसकी परिधि सैंतीस योजन से कुछ अधिक तथा ऊपर बारह योजन से कुछ अधिक है। यह मूल में चौड़ी, मध्य में संकड़ी तथा ऊपर पतली है। इसका संस्थान गोपुच्छ के तुल्य है। यह सर्वथा वैदूर्य-नीलम रत्न निर्मित स्वच्छ एवं उज्ज्वल यावत् वह एक पद्मवर वेदिका (तथा एक वनखण्ड) द्वारा चारों ओर से घिरी है।

ऊपर अतिसमतल तथा रमणीय भूमिभाग है यावत् उसके बीचोंबीच सिद्धायतन है। वह एक कोश लम्बा, अर्द्धकोश चौड़ा तथा एक कोश से कुछ ऊँचा है। यह सैकड़ों खंभों पर अवस्थित है यावत् धूपदानों से सुरभित है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मंदर पर्वत की चूलिका के पूर्व में, पंडकवन में पचास योजन जाने पर अवगाहित करने पर एक विशाल भवन आता है। सौमनस वन के भवन, पुष्करिणियाँ प्रासाद इत्यादि के प्रमाण विस्तार इत्यादि से सम्बन्धि पाठ-वर्णन पूर्ववत् ज्ञातव्य है यावत् शक्रेन्द्र, ईशानेन्द्र एवं उनके भवन आदि का वर्णन प्रमाण-विस्तार भी पूर्ववत् है।

अभिषेक शिलाएं

(१३६)

पण्डगवणे णं भंते! वणे कइ अभिसेयसिलाओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! चत्तारि अभिसेयसिलाओ पण्णत्ताओ, तंजहा-पंडुसिला १ पण्डुकंबलसिला २ रत्तसिला ३ रत्तकम्बलसिलेति ४।

कहि णं भंते! पण्डगवणे पण्डुसिला णामं सिला पण्णत्ता?

गोयमा! मंदरचूलियाए पुरत्थिमेणं पंडगवणपुरत्थिमपेरंते एत्थ णं पंडगवणे पंडुसिला णामं सिला पण्णत्ता, उत्तरदाहिणायया पाईणपडीण-विच्छिण्णा अद्धचंदसंठाण-संठिया पंचजोयणसयाइं आयामेणं अड्डाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खम्भेणं चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वकणगामई अच्छा वेइयावणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता वण्णओ, तीसे णं पण्डुसिलाए चउद्दिसिं चत्तारि तिसोवाण-पडिरूवगा पण्णत्ता जाव तोरणा वण्णओ, तीसे णं पण्डुसिलाए उप्पिं बहुसमर-मणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव देवा आसयंति०।

तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए उत्तरदाहिणेणं एत्थ णं दुवे सीहासणा पण्णत्ता पंच धणुसयाइं आयामविक्खम्भेणं अड्डाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेणं सीहासणवण्णओ भाणियव्वो विजयदूसवज्जोत्ति। तत्थ णं जे से उत्तरिल्ले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवणवइवाणमंतरजोइसियवेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य कच्छाइया तित्थयरा अभिसिच्चंति, तत्थ णं जे से दाहिणिल्ले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवण जाव वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य वच्छाइया तित्थयरा अभिसिच्चंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहि णं भंते! पण्डगवणे पण्डुकंबलसिला णामं सिला पण्णत्ता?

गोयमा! मंदरचूलियाए दक्खिणेणं पण्डगवणदाहिणपेरंति एत्थ णं पण्डगवणे पण्डुकंबलसिला णामं सिलापण्णत्ता, पाईणपडीणायया उत्तरदाहिणविच्छिण्णा एवं तं चेव पमाणं वत्तव्वया य भाणियव्वा जाव तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झ-देसभाए एत्थ णं महं एगे सीहासणे पण्णत्ता तं चेव सीहासणप्पमाणं तत्थ णं बहूहिं भवणवइ जाव भारहगा तित्थयरा अहिसिच्चंति,

कहि णं भंते! पण्डगवणे रत्तसिला णामं सिला पण्णत्ता?

गोयमा! मंदरचूलियाए पच्चत्थिमेणं पण्डगवण-पच्चत्थिमपेरंते एत्थ णं पण्डगवणे रत्तसिला णामं सिला पण्णत्ता, उत्तरदाहिणायया पाईणपडीण-विच्छिण्णा जाव तं चेव पमाणं सव्वतवणिज्जमई अच्छा० उत्तरदाहिणेणं एत्थ णं दुवे सीहासणा पण्णत्ता, तत्थ णं जे से दाहिणिल्ले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवण० पम्हाइया तित्थयरा अहिसिच्चंति, तत्थ णं जे से उत्तरिल्ले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवण जाव वप्पाइया तित्थयरा अहिसिच्चंति,

कहि णं भंते! पण्डगवणे रत्तकंबलसिला णामं सिला पण्णत्ता?

गोयमा! मंदरचूलियाए उत्तरेणं पण्डगवणउत्तरचरिमंते एत्थ णं पण्डगवणे रत्तकंबलसिला णामं सिला पण्णत्ता, पाईणपडीणायया उदीणदाहिणविच्छिण्णा सव्वतवणिज्जमई अच्छा जाव मज्झदेसभाए सीहासणं, तत्थ णं बहूहिं भवणवइ जाव देवेहिं देवीहि य एरावयगा तित्थयरा अहिसिच्चंति।

भावार्थ - हे भगवन्! पंडकवन में कियत्संख्यक अभिषेक शिलाएं हैं?

हे गौतम! वहाँ चार अभिषेक शिलाएं वर्णित हुई हैं - १. पण्डुशिला २. पण्डुक बल-शिला ३. रक्तशिला ४. रक्तकंबल शिला।

हे भगवन्! पंडकवन में पण्डुशिला कहाँ वर्णित हुई है?

हे गौतम! मंदर पर्वत की चूलिका के पूर्व में, पंडकवन के पूर्वी किनारे पर, पंडकवन में पण्डुशिला वर्णित हुई है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बी एवं पूर्व-पश्चिम चौड़ी है। उसकी आकृति आधे चन्द्रमा के समान है। वह ५०० योजन लम्बी, २५० योजन चौड़ी एवं चार योजन मोटी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। वह संपूर्णतः स्वर्ण निर्मित एवं उद्योतमय है। पद्मवर वेदिका एवं वनखण्ड के चारों ओर से घिरी हुई है इत्यादि वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

पंडुशिला के चारों ओर चार त्रिसोपानमार्ग (तीन-तीन सीढ़ियों के मार्ग) बने हैं यावत् तोरण पर्यन्त उनका सारा वर्णन पूर्वानुरूप है। उस पण्डुशिला पर अतिसमतल एवं रमणीय भूमिभाग बतलाया गया है यावत् उस पर देव-देवियाँ आश्रय लेते हैं। उस अतीव समतल एवं सुंदर भूमिभाग के बीचों-बीच, उत्तर-दक्षिण में दो सिंहासन बतलाए गए हैं। वे ५००-५०० धनुष लम्बे चौड़े एवं २५०-२५० योजन ऊँचे हैं। विजय संज्ञक वस्त्र के सिवाय सिंहासन विषयक समस्त वर्णन पूर्ववत् योजनीय है।

वहाँ जो उत्तर दिशावर्ती सिंहासन है वहाँ बहुत से भवनपति, वाणव्यंतर ज्योतिष्कं तथा वैमानिक देव देवियाँ कच्छ आदि विजयों में समुत्पन्न तीर्थंकरों का अभिषेक करते हैं। वहाँ स्थित दक्षिण दिशावर्ती सिंहासन पर भी बहुत से भवनपति यावत् वैमानिक आदि देव-देवियाँ वत्स आदि विजयों में उत्पन्न तीर्थंकरों का अभिषेक करते हैं।

हे भगवन्! पण्डकवन में पण्डुकंबल शिला किस स्थान पर बतलाई गई है?

हे गौतम! मंदर पर्वत की चूलिका के दक्षिण में, पंडक वन के दक्षिणी किनारे पर पण्डुकबल शिला कही गई है। वह पूर्व-पश्चिम लम्बी एवं उत्तर-दक्षिण चौड़ी है। उसका प्रमाण विस्तार पूर्ववत् योजनीय है।

उसके अति समतल एवं सुंदर भूमिभाग के ठीक मध्य में एक विशाल सिंहासन आख्यात हुआ है उसका वर्णन पहले की ज्यों है। वहाँ बहुत से भवनपति यावत् वैमानिक देव-देवियाँ भरत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थंकरों का अभिषेक करते हैं।

हे भगवन्! पंडकवन में रक्त शिला कहाँ बतलाई गई है?

हे गौतम! मंदर पर्वत की चूलिका के पश्चिम में तथा पंडकवन के पश्चिमी किनारे पर रक्तशिला बतलाई गई है। वह उत्तर-दक्षिण लम्बी तथा पूर्व-पश्चिम चौड़ी है। उसका प्रमाण-विस्तार-पूर्वानुसार-योजनीय है।

वह सर्वथा तपनीय जाति के उच्च स्वर्ण से निर्मित है, स्वच्छ है। उसके उत्तर एवं दक्षिण में दो सिंहासन वर्णित हुए हैं।

इनमें जो दक्षिणी सिंहासन है वहाँ बहुत से भवनपति यावत् वैमानिक देव-देवियाँ द्वारा पक्ष्मादि विजयों में समुत्पन्न तीर्थंकरों का अभिषेक किया जाता है। वहाँ जो उत्तर सिंहासन है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वहाँ बहुत से भवनपति यावत् वैमानिक देव-देवियों द्वारा वप्रादि विजयों के समुत्पन्न तीर्थंकरों का अभिषेक किया जाता है।

हे भगवन्! पडकवन में रक्तकंबल शिला कहां बतलाई गई है?

हे गौतम! मंदर पर्वत की चूलिका के उत्तर में पंडकवन के उत्तरी किनारे पर रक्त कंबल शिला का वर्णन हुआ है। यह सर्वथा तपनीय जाति के उच्च स्वर्ण से निर्मित है, उज्ज्वल है इसके ठीक मध्य में सिंहासन है, यहां भवनपति यावत् वैमानिक देव-देवियाँ एरावत क्षेत्र में प्रादुर्भूत तीर्थंकरों का अभिषेक करते हैं।

मंदर पर्वत के काण्ड

(१३७)

मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स कइ कण्डा पण्णत्ता?

गोयमा! तओ कंडा पण्णत्ता, तंजहा-हिट्ठिल्ले कंडे मज्झिल्ले कण्डे उवरिल्ले कण्डे।

मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स हिट्ठिल्ले कण्डे कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा-पुढवी १ उवले २ वइरे ३ सक्करा ४।

मज्झिमिल्ले णं भंते! कण्डे कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा-अंके १ फलिहे २ जायरूवे ३ रयए ४।

उवरिल्ले० कंडे कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! एगागारे पण्णत्ते सव्वजम्बूणयामए।

मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स हेट्ठिल्ले कण्डे केवइयं बाहल्लेणं पण्णत्ते?

गोयमा! एगं जोयणसहस्सं बाहल्लेणं पण्णत्ते।

मज्झिमिल्ले० कण्डे पुच्छा?

गोयमा! तेवट्ठिं जोयणसहस्साइं बाहल्लेणं प०।

उवरिल्ले पुच्छा?

गोयमा! छत्तीसं जोयणसहस्साइं बाहल्लेणं प०, एवामेव सपुव्वावरेणं मंदरे पव्वए एगं जोयणसयसहस्सं सव्वग्गेणं पण्णत्ते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - **कण्डा** - काण्ड-विशिष्ट परिमाणानुगत विच्छेद-विभाग, **पुढवी** - मृतिका रूप, **उवले** - पाषाण रूप, **वइरे** - हीरकमय, **सक्करा** - कंकड रूप।

भावार्थ - हे भगवन्! मंदरपर्वत के कितने काण्ड कहे गये हैं?

हे गौतम! उसके तीन काण्ड कहे गये हैं। वे इस प्रकार हैं - **१. अधस्तन काण्ड** - नीचे का विभाग। **२. मध्यम काण्ड** - बीच का विभाग। **३. उपरितन काण्ड** - ऊपर का विभाग।

हे भगवन्! मंदर पर्वत का अधस्तन काण्ड कितने प्रकार का परिज्ञापित हुआ है?

हे गौतम! वह चार प्रकार का परिज्ञापित हुआ है -

१. पृथ्वीमय २. पाषाणमय ३. हीरकमय एवं ४. शर्करामय।

हे भगवन्! उसका मध्यम विभाग कितने तरह का कहा गया है?

हे गौतम! वह चार तरह का कहा गया है-१. अंकरत्नमय २. स्फटिकमय ३. स्वर्णमय एवं ४. रजतमय।

हे भगवन्! उसका उपरितन विभाग कितने प्रकार का वर्णित हुआ है?

हे गौतम! वह एक प्रकार का वर्णित हुआ है। वह सर्वथा जंबूनद संज्ञक उच्च जातीय स्वर्ण निर्मित है।

हे भगवन्! मंदर पर्वत का अधस्तन विभाग ऊँचाई में कितना बतलाया गया है?

हे गौतम! वह ऊँचाई में एक हजार योजन बतलाया गया है।

हे भगवन्! मंदर पर्वत के मध्य काण्ड की ऊँचाई कितनी है?

हे गौतम! उसकी ऊँचाई तिरेसठ हजार योजन बतलाई गई है।

हे भगवन्! मंदर पर्वत के ऊपर के विभाग की ऊँचाई कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! उसकी ऊँचाई छत्तीस हजार योजन बतलाई गई है।

इस प्रकार उसकी कुल ऊँचाई का परिमाण एक लाख योजन है।

मंदर पर्वत के नाम

(१३८)

मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स कइ णामधेज्जा पण्णत्ता?

गोयमा! सोलस णामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाहाओ - मंदर १ मेरु, २ मणोरम, ३ सुदंसण, ४ सयंपभे य, ५ गिरिराया,
६ रयणोच्चय, ७ सिलोच्चय, ८ मज्झे लोगस्स, ६ णाभी य १०॥१॥
अच्छे य ११, सूरियावत्ते १२, सूरियावरणे १३, तिया।
उत्तमे १४, य दिसादी य १५, वडेंसेति १६ य सोलसे॥२॥

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-मंदरे पव्वए २?

गोयमा! मंदरे पव्वए मंदरे णामं देवे परिवसइ महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-मंदरे पव्वए २, अदुत्तरं तं चेवत्ति।

भावार्थ - हे भगवन्! मंदर पर्वत में कितने नाम वर्णित हुए हैं?

हे गौतम! मंदर पर्वत के सोलह नाम कहे गए हैं - १. मंदर २. मेरु ३. मनोरम ४. सुदर्शन ५. स्वयंप्रभ ६. गिरिराज ७. रत्नोच्चय ८. शिलोच्चय ६. लोकमध्य १०. लोकनाभि ११. अच्छ १२. सूर्यावर्त १३. सूर्यावरण १४. उत्तम १५. दिगादि १६. अवतंस।

हे भगवन्! वह मंदर पर्वत किस कारण कहलाता है?

हे गौतम! मंदर पर्वत पर मंदर नामक अत्यन्त समृद्धिशाली यावत् एक पल्योपम आयुष्य युक्त देव निवास करता है। इसलिए वह मंदर नाम से अभिहित हुआ है अथवा उसका यह नाम शाश्वत है।

नीलवान् वर्षधर पर्वत

(१३९)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे णीलवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! महाविदेहस्स वासस्स उत्तरेणं रम्मगवासस्स दक्खिणेणं पुरत्थिमिल्ल लवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ णीलवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे णिसह-वत्तव्वया णीलवंतस्स भाणियव्वा, णवरं जीवा दाहिणेणं धणुं उत्तरेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एत्थ णं केसरिद्दहो, दाहिणेणं सीया महाणई पवूढा समाणी उत्तरकुरुं एज्जमाणी ३ जमगपव्वए णीलवंतउत्तरकुरुचंदेरावयमालवंतद्दहे य दुहा विभयमाणी २ चउरासीए सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ भद्दसालवणं एज्जमाणी २ मंदरं पव्वयं दोहिं जोयणेहिं असंपत्ता पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी अहे मालवंतवक्खारपव्वयं दालइत्ता मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं पुव्वविदेहवासं दुहा विभयमाणी २ एगमेगाओ चक्कवट्टिविजयाओ अट्ठावीसाए २ सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ पंचहिं सलिलासयसहस्सेहिं बत्तीसाए य सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे विजयस्स दारस्स जगइं दालइत्ता पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, अवसिट्ठं तं चेवत्ति। एवं णारिकंतावि उत्तराभिमुही णेयव्वा, णवरमिमं णाणत्तं गंधावइवट्टवेयड्ढपव्वयं जोयणेणं असंपत्ता पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी अवसिट्ठं तं चेव पवहे य मुहे य जहा हरिकंतासलिला इति।

णीलवंते णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धाययणकूडे०।

सिद्धे १ णीले २ पुव्वविदेहे ३ सीया य ४ कित्ति ५ णारी य ६।

अवरविदेहे ७ रम्मगकूडे ८ उवदंसणे चेव ९।।१।।

सव्वे एए कूडा पंचसइया रायहाणीउ उत्तरेणं।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-णीलवंते वासहरपव्वए २?

गोयमा! णीले णीलोभासे णीलवंते य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव परिवसइ सव्ववेरुलियामए णीलवंते जाव णिच्चेत्ति।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में नीलवान् वर्षधर पर्वत किस स्थान पर बतलाया गया है?

हे गौतम! महाविदेह क्षेत्र के उत्तर में रम्यक् क्षेत्र के दक्षिण में पूर्ववर्ती लवण समुद्र के पश्चिम में, पश्चिमी लवण समुद्र के पूर्व में, जम्बूद्वीप के अन्तर्गत नीलवान वर्षधर पर्वत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बतलाया गया है। वह पूर्व-पश्चिम लम्बा एवं उत्तर-दक्षिण चौड़ा है। इसका वर्णन निषध पर्वत के सदृश ही कहा गया है।

इतना अन्तर है-इसकी जीवा दक्षिण में है तथा धनुपृष्ठ भाग उत्तर में है। उसमें केसरी नामक द्रह है। दक्षिण में उससे शीता महानदी निकलती है। वह उत्तरकुरु में बहती-बहती आगे यमक पर्वत तथा नीलवान उत्तर कुरु चन्द्र ऐरावत और माल्यवान द्रह को दो भागों में विभक्त करती हुई आगे बढ़ती है। उसमें ८४००० नदियाँ निकलती हैं। उससे आपूरित होकर वह भद्रशाल नामक वन में बहती है। जब मंदर पर्वत दो योजन दूर रहता है तब वह पूर्व की ओर मुड़ती है। नीचे माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत को विभाजित कर मंदर पर्वत के पूर्व में पूर्व विदेह क्षेत्र को दो भागों में बांटती हुई अग्रसर होती है। एक-एक चक्रवर्ती विजय में उसमें २८-२८ सहस्त्र नदियाँ मिलती हैं। यों कुल (२८०००×१६+८४०००) ५,३२,००० नदियों से आपूरित वह नीचे विजय द्वार की जगती को विदीर्ण करती हुई पूर्वी लवण समुद्र में मिल जाती है। अवशिष्ट वर्णन पहले की तरह योजनीय है।

नारीकांता नदी उत्तराभिमुख होती हुई बहती है। उसका वर्णन इसी के तुल्य है। इतना अंतर है - जब गंधापाती वत्त वैताढ्य पर्वत एक योजन दूर रह जाता है तब वह वहाँ से पश्चिम की ओर घूम जाती है। अवशिष्ट वर्णन पहले की तरह ग्राह्य है। उद्गम एवं संगम के समय उसके बहाव का विस्तार हरिकांता नदी के समान होता है।

हे भगवन्! नीलवान् वर्षधर पर्वत के कितने कूट कहे गए हैं?

हे गौतम! उसके नौ कूट कहे गये हैं -

१. सिद्धायतन कूट २. नीलवान् कूट ३. पूर्व विदेह कूट ४. शीता कूट ५. कीर्ति कूट ६. नारीकांता कूट ७. अपरविदेह कूट ८. रम्यक् कूट ९. उपदर्शन कूट।

ये सभी कूट ५००-५०० योजन ऊँचे हैं। इनके अधिष्ठायक देवों की राजधानियाँ उत्तर में हैं।

हे भगवन्! नीलवान् वर्षधर पर्वत का यह नाम किस कारण पड़ा है?

हे गौतम! वहाँ नील आभामय यावत् परम समृद्धिशाली नीलवान् नामक देव निवास करता है यावत् संपूर्णतः नीलम रत्न निर्मित है। अतएव वह नीलवान् कहा जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रम्यक् वर्ष

(१४०)

कहि णं भंते! जंबूद्दीवे २ रम्मए णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! णीलवंतस्स उत्तरेणं रुप्पिस्स दक्खिणेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एवं जह चेव हरिवासं तह चेव रम्मयं वासं भाणियव्वं, णवरं दक्खिणेणं जीवा उत्तरेणं धणुं अवसेसं तं चेव।

कहि णं भंते! रम्मए वासे गंधावई णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! णरकंताए पच्चत्थिमेणं णारीकंताए पुरत्थिमेणं रम्मगवासस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं गंधावई णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते, जं चेव वियडावइस्स तं चेव गंधावइस्सवि वत्तव्वं, अट्ठो बहवे उप्पलाइं जाव गंधावईवण्णाइं गंधावइप्पभाइं पउमे य इत्थ देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, रायहाणी उत्तरेणंति।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-रम्मए वासे २?

गोयमा! रम्मगवासे णं रम्मे रम्मए रमणिज्जे रम्मए य इत्थ देवे जाव परिवसइ, से तेणट्ठेणं०।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप के अंतर्गत रम्यक् वर्ष नामक क्षेत्र कहा बतलाया गया है?

हे गौतम! नीलवान् वर्षधर पर्वत के उत्तर में रुक्मी पर्वत के दक्षिण में पूर्ववर्ती लवण समुद्र के पश्चिम में एवं पश्चिमवर्ती लवण समुद्र के पूर्व में रम्यक् नामक क्षेत्र कहा गया है। उसका वर्णन हरिवर्ष नामक क्षेत्र के सदृश है।

इतना अंतर है-इसकी जीवा दक्षिण में तथा धनुपृष्ठ भाग उत्तर में है। अवशिष्ट वर्णन पूर्ववत् है।

हे भगवन्! रम्यक् क्षेत्र में गंधापाती नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत किस स्थान पर अभिहित हुआ है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! नरकांता नदी के पश्चिम में, नारीकांता नदी के पूर्व में तथा रम्यक् क्षेत्र के ठीक बीच में गंधापाती संज्ञक वृत्तवैताढ्य पर्वत कहा गया है।

विकटापाती वृत्तवैताढ्य पर्वत के जैसा ही इसका वर्णन है। गंधापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत पर उसी के समान वर्ण एवं आभायुक्त यावत् अनेक उत्पल आदि हैं। यहां अत्यन्त समृद्धिमान यावत् एक पल्योपम आयुष्य धारक पद्म नामक देव रहता है। उसकी राजधानी उत्तर में है।

हे भगवन्! वह क्षेत्र रम्यक् वर्ष के नाम से क्यों कहा जाता है?

हे गौतम! रम्यक् वर्ष रमणीय एवं सुंदर है यावत् वहाँ रम्यक् नामक देव का निवास है। इसी कारण वह इस नाम से पुकारा जाता है।

रुक्मी वर्षधर पर्वत

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे रुप्पी णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते?

रम्मगवासस्स उत्तरेणं हेरण्णवयवासस्स दक्खिणेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे रुप्पी णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे, एवं जा चेव महाहिमवंत-वत्तव्वया सा चेव रुप्पिस्सवि, णवरं दाहिणेणं जीवा उत्तरेणं धणुं अवसेसं तं चेव महापुण्डरीए दहे णरकंता णई दक्खिणेणं णेयव्वा जहा रोहिया पुरत्थिमेणं गच्छइ, रुप्पकूला उत्तरेणं णेयव्वा जहा हरिकंता पच्चत्थिमेणं गच्छइ, अवसेसं तं चेवत्ति।

रुप्पिंमि णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! अट्ठ कूडा पण्णत्ता, तंजहा सिद्धे १ रुप्पी २ रम्मग ३ णरकंता ४ बुद्धि ५ रुप्पकूला य ६। हेरण्णवय ७ मणिकंचण ८ अट्ट य रुप्पिंमि कूडाइं॥१॥

सव्वेवि एए पंचसइया रायहाणीो उत्तरेणं।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-रुप्पी वासहरपव्वए २?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! रुप्पी णाम वासहरपव्वए रुप्पी रुप्पपट्टे रुप्पोभासे सव्वरुप्पामए रुप्पी य इत्थ देवे.....पलिओवमट्ठिइए परिवसइ से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ त्ति।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत रुक्मी वर्षधर पर्वत किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! रम्यक् वर्ष की उत्तर दिशा में, हैरण्यवत वर्ष की दक्षिण दिशा में, पूर्ववर्ती लवण समुद्र की पश्चिम दिशा में, पश्चिमवर्ती लवण समुद्र की पूर्व दिशा में जम्बूद्वीप के अन्तर्गत रुक्मी संज्ञक वर्षधर पर्वत कहा गया है। पूर्व-पश्चिम लम्बा एवं उत्तर दक्षिण चौड़ा है। वह महाहिमवान् वर्षधर पर्वत के तुल्य है। इतना अंतर है उसकी जीवा दक्षिण दिशा में है। उसका धनुपृष्ठ भाग उत्तर दिशा में है। अवशिष्ट समग्र वर्णन महाहिमवान् के सदृश है।

वहाँ महापुण्डरीक संज्ञक द्रह है। उसके दक्षिणी तोरण से नरकांता संज्ञक नदी उद्गत होती है। वह रोहिता नदी के सदृश पूर्वी लवण समुद्र से मिल जाती है। नरकांता नदी का समस्त वर्णन रोहिता नदी के समान ज्ञातव्य है।

रुप्यकूला नामक नदी महापुण्डरीक द्रह के उत्तरी तोरण से उद्गत होती है। वह हरिकांता नदी के समान पश्चिमवर्ती लवण समुद्र में मिल जाती है। अवशिष्ट सारा वर्णन पूर्वानुरूप है।

हे भगवन्! रुक्मी वर्षधर पर्वत के कितने कूट अभिहित हुए हैं?

हे गौतम! उसके आठ कूट कहे गये हैं -

१. सिद्धायतन कूट २. रुक्मी कूट ३. रम्यक् कूट ४. नरकांता कूट ५. बुद्धि कूट ६. रुप्यकूला कूट ७. हैरण्यवत् कूट ८. मणिकांचन कूट।

ये सभी कूट ५००-५०० योजन ऊँचे हैं। इनकी राजधानियाँ उत्तर दिशा में हैं।

हे भगवन्! यह रुक्मी वर्षधर पर्वत इस नाम से किस कारण पुकारा जाता है?

हे गौतम! रुक्मी वर्षधर पर्वत रजत निर्मित, रजत की तरह द्युतिमय एवं सम्पूर्णतः रजतमय है यावत् यहाँ पल्योपम आयुष्य युक्त रुक्मी संज्ञक देव निवास करता है। हे गौतम! इसी कारण यह इस नाम से पुकारा जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैरण्यवत वर्ष

(१४२)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे हेरण्णवए णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! रुप्पिस्स उत्तरेणं सिहरिस्स दक्खिणेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिम-लवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे हेरण्णवए णामं वासे पण्णत्ते, एवं जह चेव हेमवयं तह चेव हेरण्णवयंपि भाणियव्वं, णवरं जीवा दाहिणेणं उत्तरेणं धणुं अवसिट्ठं तं चेवत्ति।

कहि णं भंते! हेरण्णवए वासे मालवंतपरियाए णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ता?

गोयमा! सुवण्णकूलाए पच्चत्थिमेणं रुप्पकूलाए पुरत्थिमेणं एत्थ णं हेरण्णवयस्स वासस्स बहुमज्झदेसभाए मालवंतपरियाए णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ता जह चेव सद्दावइ० तह चेव मालवंत परियाएवि, अट्ठो उप्पलाइं पउमाइं मालवंतप्पभाइं मालवंतवण्णाइं मालवंतवण्णाभाइं पभासे य इत्थ देवे महिड्ढिए.....पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से एएणट्ठेणं० रायहाणी उत्तरेणंति।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-हेरण्णवए वासे २?

गोयमा! हेरण्णवए णं वासे रुप्पीसिहरीहिं वासहरपव्वएहिं दुहओ समवगूढे णिच्चं हिरण्णं दलइ णिच्चं हिरण्णं मुंचइ णिच्चं हिरण्णं पगासइ हेरण्ण वए य इत्थ देवे परिवसइ०, से एएणट्ठेणंति।

शब्दार्थ - **पगासइ** - प्रकाशित करता है।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अंदर हैरण्यवत क्षेत्र किस स्थान पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! रुक्मी नामक वर्षधर पर्वत की उत्तर दिशा में, शिखरी नामक वर्षधर पर्वत की दक्षिण दिशा में, पूर्ववर्ती लवण समुद्र के पश्चिम में एवं पश्चिमदिग्वर्ती लवण समुद्र के पूर्व में, जम्बूद्वीप के अंतर्गत हैरण्यवत क्षेत्र आख्यात हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैमवत क्षेत्र की तरह ही हैरण्यवत क्षेत्र का वर्णन ज्ञातव्य है। इतना अन्तर है - इसकी जीवा दक्षिण दिशा में है तथा धनुपृष्ठ भाग उत्तर दिशा में है। अवशिष्ट समस्त वर्णन हैमवत क्षेत्र के समान है।

हे भगवन्! हैरण्यवत क्षेत्र में माल्यवत् पर्याय नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत किस स्थान पर कहा गया है?

हे गौतम! सुवर्णकूला महानदी की पश्चिम दिशा में, रुप्यकूला महानदी की पूर्व दिशा में तथा हैरण्यवत क्षेत्र के ठीक बीच में वृत्त वैताढ्य संज्ञक पर्वत आख्यात हुआ है।

शब्दापाती वृत्तवैताढ्य पर्वत के समान ही माल्यवत् पर्याय वृत्त वैताढ्य पर्वत का वर्णन है। उस पर उस जैसे प्रभा, वर्ण एवं आभायुक्त उत्पल एवं पद्म आदि विविध प्रकार के कमल है। वहाँ अत्यंत समद्धिमान यावत् एक पल्योपम स्थितिक प्रभास नामक देव रहता है। यही कारण है कि वह पर्वत इस नाम से पुकारा जाता है। इस देव की राजधानी उत्तर दिशा में है।

हे भगवन्! हैरण्यवत् क्षेत्र इस नाम से क्यों पुकारा जाता है?

हैरण्यवत् क्षेत्र रुक्मी एवं शिखरी संज्ञक वर्षधर पर्वतों से दो तरफ से घिरा हुआ है। वह नित्य हिरण्यस्वर्ण देता है, छोड़ता है, विसर्जित करता है तथा प्रकाशित करता है।

वहाँ हैरण्यवत नामक देव रहता है। इसी कारण वह इस नाम से आख्यात हुआ है।

शिखरी वर्षधर पर्वत

(१४३)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे सिहरी णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते?

गोयमा! हेरण्णवयस्स उत्तरेणं एरावयस्स दाहिणेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स० पच्चत्थिम-लवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एवं जह चेव चुल्लहिमवंतो तह चेव सिहरीवि णवरं जीवा दाहिणेणं धणुं उत्तरेणं अवसिट्ठं तं चेव पुण्डरीए दहे सुवण्णकूला महाणई दाहिणेणं णेयव्वा जहा रोहियंसा पुरत्थिमेणं गच्छइ, एवं जह चेव गंगासिन्धुओ तह चेव रत्तारत्तवईओ णेयव्वाओ पुरत्थिमेणं रत्ता पच्चत्थिमेणं रत्तवई अवसिट्ठं तं चेव (अवसेसं भाणियव्वंति)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिहरिम्मि णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

गोयमा! इक्कारस कूडा पण्णत्ता, तंजहा-सिद्धाययणकूडे १ सिहरिकूडे २ हेरण्णवयकूडे ३ सुवण्णकूलाकूडे ४ सुरादेवीकूडे ५ रत्ताकूडे ६ लच्छीकूडे ७ रत्तवईकूडे ८ इलादेवीकूडे ९ एरवयकूडे १० तिगिच्छिकूडे ११ एवं सव्वेविकूडा पंचसइया रायहाणीओ उत्तरेणं।

से केणट्ठेणं भंते! एवमुच्चइ-सिहरिवासहरपव्वए २?

गोयमा! सिहरिंमि वासहरपव्वए बहवे कूडा सिहरिसंठाणसंठिया सव्व-रयणामया सिहरी य इत्थ देवे जाव परिवसइ, से तेणट्ठेणं०।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में शिखरी संज्ञक वर्षधर पर्वत किस स्थान पर बतलाया गया है?

हे गौतम! हैरण्यवत की उत्तर दिशा में ऐरावत की दक्षिण दिशा में, पूर्वदिग्वर्ती लवण समुद्र की पश्चिम दिशा में एवं पश्चिम दिग्वर्ती लवण समुद्र की पूर्व दिशा में शिखरी संज्ञक वर्षधर पर्वत बतलाया गया है। वह चुल्लहिमवान् पर्वत के समान है।

इतना अन्तर है – उसकी जीवा दक्षिण दिशा में तथा उसका धनुपृष्ठ भाग उत्तर दिशा में है। अवशिष्ट वर्णन चुल्ल हिमवान वर्षधर पर्वत के समान है। इस पर्वत पर पुण्डरीक नामक द्रह है। उसके दक्षिणी-तोरण से सुवर्णकूला नामक महानदी उद्गत होती है। वह रोहितांश के सदृश पूर्व दिग्वर्ती लवण समुद्र में मिलती है। यहाँ रक्ता और रक्तवती का वर्णन भी गंगा और सिंधु के सदृश ज्ञातव्य है। रक्ता महानदी पूर्व दिशा में तथा रक्तवती पश्चिम दिशा में बहती है। अवशिष्ट वर्णन उन्हीं – गंगा सिन्धु के सदृश है।

हे भगवन्! शिखरी वर्षधर पर्वत के कितने कूट आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! उसके ११ कूट कहे गए हैं -

१. सिद्धायतन कूट २. शिखरी कूट ३. हैरण्यवत कूट ४. सुवर्णकूला कूट ५. सुरादेवी कूट ६. रक्ता कूट ७. लक्ष्मी कूट ८. रक्तावती कूट ९. इलादेवी कूट १०. ऐरावत कूट ११. तिगिच्छ कूट।

ये समस्त कूट ५००-५०० योजन ऊँचे हैं। इनके अधिष्ठायक देवों की राजधानियाँ उत्तर की ओर हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! यह वर्षधर पर्वत शिखरी नाम से क्यों पुकारा जाता है?

हे गौतम! शिखरी वर्षधर पर्वत पर बहुत से शिखर उसे जैसी आकृति में विद्यमान हैं, सम्पूर्णतः रत्नमय हैं यावत् वहाँ शिखरी संज्ञक देव निवास करता है। इसी कारण यह इस नाम से अभिहित हुआ है।

ऐरावत वर्ष

(१४४)

कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे एरावए णामं वासे पण्णत्ते?

गोयमा! सिहरिस्स० उत्तरेणं उत्तरलवणसमुद्दस्स दक्खिणेणं पुरत्थिमलवण-समुद्दस्स पच्चत्थिमेणं पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे एरावए णामं वासे पण्णत्ते, खाणुबहुले कंटगबहुले एवं जच्चेव भरहस्स वत्तव्वया सच्चेव सव्वा णिरवसेसा णेयव्वा सओअवणा सणिक्खमणा सपरिणिव्वाणा णवरं एरावओ चक्कवट्टी एरावओ देवो, से तेणट्ठेणं० एरावए वासे २।

॥ चउत्थो वक्खारो समत्तो॥

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में ऐरावत नामक वर्ष-क्षेत्र कहाँ कहा गया है?

हे गौतम! शिखरी वर्षधर पर्वत की उत्तर दिशा में उत्तरवर्ती लवण समुद्र की दक्षिण दिशा में, पूर्व दिग्वर्ती लवण समुद्र की पश्चिम दिशा में एवं पश्चिमवर्ती लवण समुद्र के पूर्व में जम्बूद्वीप के भीतर ऐरावत नामक क्षेत्र बतलाया गया है। वह स्थाणु-सूखे काठ की बहुलता से युक्त है तथा वहाँ कांटों की भरमार है, इत्यादि इसका समस्त वर्णन भरत क्षेत्र के तुल्य है। वह षट्खण्ड साधन, निष्क्रमण-दीक्षा एवं परिनिर्वाण-मोक्ष सहित है अथवा ये वहाँ साध्य हैं। इतना अन्तर है - वहाँ ऐरावत नामक चक्रवर्ती होता है। वहाँ का ऐरावत नामक अधिष्ठायक देव है। इसी कारण वह इस नाम से पुकारा जाता है।

॥ चौथा वक्षस्कार समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पंचमो वक्खारो - पंचम वक्षस्कार

अधोलोक की दिक्कुमारियों द्वारा समारोह

(१४५)

जया णं एक्कमेक्के चक्कवट्टिविजए भगवंतो तित्थयरा समुप्पज्जंति तेणं कालेणं तेणं समएणं अहोलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ सएहिं २ कूडेहिं सएहिं २ भवणेहिं सएहिं २ पासायवडेंसएहिं पत्तेयं २ चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं महत्तरियाहिं सपरिवाराहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं सोलसएहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अण्णेहि य बहूहिं भवणवइ-वाणमंतरेहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडाओ महया हयणट्टगीयवाइय जाव भोगभोगाइं भुंजमाणीओ विहरंति, तंजहा -

भोगंकरा १ भोगवई २, सुभोगा ३, भोगमालिणी ४,
तोयधारा ५, विचित्ता य, पुप्फमाला ७, अणिंदिया ८।।१।।

तए णं तासिं अहेलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारीणं मयहरियाणं पत्तेयं पत्तेयं आसणाइं चलंति, तए णं ताओ अहेलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ पत्तेयं २ आसणाइं चलियाइं पासंति २ त्ता ओहिं पउंजंति, पउंजित्ता भगवं तित्थयरं ओहिणा आभोएंति २ त्ता अण्णमण्णं सद्दाविंति २ त्ता एवं वयासी–उप्पण्णे खलु भो! जम्बुद्दीवे दीवे भयवं तित्थयरे तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्ण-मणागयाणं अहेलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारी महत्तरियाणं भगवओ तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करेत्तए, तं गच्छामो णं अम्हेवि भगवओ जम्मणमहिमं करेमोत्तिकट्टु एवं वयंति २ त्ता पत्तेयं २ आभिओगिए देवे सद्दावेंति २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अणेगखम्भसयसण्णिविट्ठे लीलट्ठिय० एवं विमाणवण्णओ भाणियव्वो जाव जोयणविच्छिण्णे दिव्वे जाणविमाणे विउव्वित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणहत्ति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं ते आभिओगा देवा अणेगखम्भसय जाव पच्चप्पिणंति, तए णं ताओ अहेलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरियाओ हट्ठतुट्ठ० पत्तेयं २ चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं महत्तरियाहिं जाव अण्णेहिं बहूहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडाओ ते दिव्वे जाणविमाणे दुरूहंति दुरूहित्ता सव्विड्ढीए सव्वजुईए घणमुइंगपणवपवाइयरवेणं ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणणगरे जेणेव० तित्थयरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छंति २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणस्स तेहिं दिव्वेहिं जाव विमाणेहिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति २ त्ता उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए ईसिं चउरंगुलमसंपत्ते धरणियले ते दिव्वे जाणविमाणे ठविंति, ठवित्ता पत्तेयं २ चउहिं सामाणिय-साहस्सीहिं जाव सद्धिं संपरिवुडाओ दिव्वेहिंतो जाणविमाणेहिंतो पच्चोरुहंति २ त्ता सव्विड्ढीए जाव णाइएणं जेणेव भगवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति २ त्ता पत्तेयं २ करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-णमोऽत्थु ते रयणकुच्छिधारिए जगप्पईवदाईए सव्वजग मंगलस्स चक्खुणो य मुत्तस्स सव्वजगजीववच्छलस्स हियकारगमग्ग-देसियवागिद्धिविभुपभुस्स जिणस्स णाणिस्स णायगस्स बुहस्स बोहगस्स सव्वलोगणाहस्स णिम्ममस्स पवरकुलसमुब्भवस्स जाईए खत्तियस्स जंसि लोगुत्तमस्स जणणी धण्णासि तं पुण्णासि कयत्थासि अम्हे णं देवाणुप्पिए! अहेलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारी महत्तरियाओ भगवओ तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करिस्सामो तण्णं तुब्भाहिं ण भाइयव्वं तिकट्टु उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति २ त्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणंति २ त्ता संखिज्जाइं जोयणाइं दंडं णिसिरंति, तंजहा-रयणाणं जाव संवट्टगवाए विउव्वंति २ त्ता तेणं सिवेणं मउएणं मारुएणं अणुद्धुएणं भूमितल-विमलकरणेणं मणहरेणं सव्वोउय-सुरहिकुसुमगंधाणुवासिएणं पिण्डिमणीहारिमेणं गंधुद्धुएणं तिरियं पवाइएणं भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणस्स सव्वओ समंता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोयणपरिमण्डलं से जहाणामए-कम्मगरदारए सिया जाव तहेव जं तत्थ तणं वा पत्तं वा कट्ठं वा कयवरं वा असुइमचोक्खं पूइयं दुब्भिगंधं तं सव्वं आहुणिय २ एगंते एडेंति २ त्ता जेणेव भगवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमायाए य अदूरसामंते आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।

शब्दार्थ - **वत्थव्वया** - वास्तव्य-निवासिनी, **महत्तरियाओ** - महत्तरिकाएं-गौरवशालिनी, **कुच्छि** - कोख (कुक्षि), **जगप्पईवदाइए** - जगत् को तीर्थंकर रूप प्रदीपक देने वाली, **चक्खुणो**- नेत्र स्वरूप, **मुत्तस्स** - मूर्त्त-प्रत्यक्ष, **वच्छल** - वात्सल्यमय, **मग्गदेसिय** - मार्गदेशक, **वागिद्धिविभुपभुस्स** - वाणी वैभव के व्यापक प्रभाव से युक्त, **जिणस्स** - राग-द्वेष विजेता, **वाणिस्स** - अतिशय-ज्ञान युक्त, **णायगस्स** - नायक-धार्मिक जगत् के स्वामी, **बुहस्स** - स्वयंबुद्ध, **बोहगस्स** - तत्त्वबोध प्रदायक, **णाहस्स** - नाथ, **णिम्ममस्स** - ममत्वशून्य, **जंसि**- यशस्वी, **कत्थासि** - कृतार्थ, **अहेलोगवत्थाओ** - अधोलोकवर्तिनी, **भाइयव्वं** - डरना चाहिए, **सिवेण** - कल्याणकारी, **मउएणं** - मृदुल, **मारुएणं** - वायुद्वारा, **अणुद्धुएणं** - ऊपर नहीं जाने वाले, **पिण्डिम** - पुंजी भूत, **णीहारिमेणं** - प्रसृत होने वाले, **आगायमाणीओ** - मंद स्वर से गान प्रारम्भ करती हुईं।

भावार्थ - जब एक-एक चक्रवर्ती विजय में तीर्थंकर समुत्पन्न होते हैं उस काल - तीसरे चौथे आरक में, उस समय-आधी रात के समय भोगकरा, भोगवती, सुभोगा, भोगमालिनी, तोयधारा, विचित्रा, पुष्पमाला एवं अनिंदिता संज्ञक अधोलोकवासिनी आठ दिक्कुमारियों के जो अपने-अपने कूटों पर, अतीव सुंदर अलंकृत प्रासादों में चार-चार सहस्त्र सामानिक देवों, परिवार सहित चार-चार महत्तरिकाओं सात-सात सेनाओं, सात-सात सेनाधिपतियों, सोलह-सोलह सहस्त्र आत्मरक्षक देवों एवं अन्य अनेकानेक भवनपति तथा वाणव्यंतर देवों एवं देवियों से घिरी हुई नृत्य, गीत, वाद्य यावत् सुखोपभोग में निरत रहती हैं, आसन चलायमान होते हैं। जब यह देखती हैं तो अपने अवधिज्ञान का प्रयोग कर भगवान् तीर्थंकर को देखती है। वे परस्पर संबोधित कर कहती हैं - जम्बूद्वीप में भगवान् तीर्थंकर का जन्म हुआ है। भूत, वर्तमान एवं भविष्य में होने वाली अधोलोक निवासिनी हम आठ महत्तरिका दिशाकुमारियों का यह परम्परा प्रसूत आचार है कि हम भगवान् तीर्थंकर का जन्मोत्सव मनाएं। परस्पर यों संलाप कर उनमें से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येक दिशाकुमारी अपने-अपने आभियोगिक देवों को आहूत करती हैं उनसे कहती हैं - हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही सैकड़ों स्तंभों पर समवस्थित क्रीड़ारत शालभंजिकाओं आदि से समवेत यान-विमानों की रचना करो। यान-विमानों का वर्णन पूर्ववत् कथनीय है यावत् वे आभियोगिक देवों को पूर्व वर्णित योजन विस्तार युक्त सुंदर यान विमान की विकुर्वणा कर जानकारी देने का आदेश देती हैं।

तब आभियोगिक देवों ने अनेक स्तंभ समाश्रित यावत् यान विमान की रचना कर देवियों को अवगत कराया, तब वे अधोलोकवासिनी आठ गरिमाशालिनी दिशाकुमारियाँ बड़ी ही हर्षित, परितुष्ट और प्रसन्न हुईं। उनमें से प्रत्येक अपने-अपने चार-चार सहस्त्र सामानिक देवों चार चार महत्तरिकाओं यावत् अन्यान्य देवों तथा देवियों से संपरिवृत अपने दिव्य यान विमानों पर सवार होती है। सर्वविध समृद्धि एवं वैभव युक्त वे देवियाँ बादलों की तरह बजते मृदंग आदि वाद्यों की ध्वनि के साथ उत्तम, दिव्यगति द्वारा तीर्थंकर के जन्म स्थान पर आती हैं। फिर जन्म भवन के निकट आती हैं। दिव्य यान विमानों में अवस्थित यावत् वे तीन आदक्षिण-प्रदक्षिणा करती हैं, वैसा कर उत्तर पूर्व दिशा में अपने विमानों को जमीन से चार अंगुल से कुछ कम ऊँचाई पर ठहरा देती है। अपने अपने चार-चार सहस्र सामानिक देवों यावत् अन्य बहुत से देवों और देवियों से घिरी हुई अपने विमानों से नीचे उतरती हैं। वे समस्त ऋद्धियुक्त यावत् गाजोंबाजों के साथ तीर्थंकर एवं उनकी माता के समीप आती हैं। तीन बार उन दोनों की आदक्षिणा-प्रदक्षिणा करती हैं, प्रत्येक अपने अंजलिबद्ध हाथों को मस्तक पर घुमाकर यों कहती हैं - रत्नकुक्षि धारिके! जगत् प्रदीप प्रदायिके! हम आपको नमन करती हैं। समस्त जगत् के लिए मंगलमय, देवस्वरूप, प्रत्यक्ष जगत् के प्राणियों के लिए वात्सल्यमय, हितप्रद धर्ममार्ग के उपदेष्टा, व्यापक वाग्वैभव युक्त रागद्वेष विजेता, अतिशय ज्ञानी, धर्म साम्राज्य के अधिनायक, स्वयं बुद्ध, ओरों के लिए बोधप्रदायक, समग्र धार्मिक जगत् के स्वामी ममत्व शून्य, उत्तम कुल एवं क्षत्रिय जाति में उत्पन्न जगत् में सर्वोत्तम तीर्थंकर भगवान् की आप माता हैं, धन्य हैं, पवित्र हैं, कृतकृत्य हैं। देवानुप्रिये! हम अधोलोक में निवास करने वाली प्रमुख आठ दिशाकुमारियाँ भगवान् तीर्थंकर का जन्मोत्सव मनाएंगीं। अतः आप भयभीत न हों, इस प्रकार कह कर वे उत्तर-पूर्व दिग्भाग में जाती हैं, वैक्रिय समुद्घात द्वारा आत्म-प्रदेशों को निष्क्रांत करती हैं एवं संख्यात योजन परिमित दंड के रूप में परिणत करती है। रत्नमय बादर पुद्गलों को छोड़ती है सूक्ष्म पुद्गल गृहीत करती है यावत् पुनः वैक्रिय समुद्घात द्वारा संवर्त्तक वायु की विकुर्वणा करती हैं। वैसा कर उस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कल्याणकारी, मृदुल, अनुर्ध्वगामी, भूमितल को स्वच्छ करने वाले, सभी ऋतुओं में खिलने वाले फूलों के सौरभ से युक्त सुगंध को पुंजीभूत रूप में दूर-दूर तक फैलाने वाले, तिरछे बहते हुए वायु द्वारा भगवान् तीर्थंकर के भवन के योजन परिमित घेरे को जिस प्रकार एक कार्यनिपुण सेवन का पुत्र यावत् तिनके, पत्ते, लकड़ियाँ, कचरा, अशुचि-गंदे पदार्थ मैले एवं सड़े-गले दुर्गन्ध युक्त पदार्थों को एक तरफ डाल देता है, उसी प्रकार चारों ओर से एकत्रित कर एक तरफ डाल देती हैं। फिर वे दिक्कुमारियाँ भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता से न अधिक दूर न अधिक निकट स्थित होती हुईं, मंद स्वर से गान आरम्भ करती हुई क्रमशः उच्च स्वर में संगानरत रहती हैं।

ऊर्ध्वलोकवर्तिनी दिक्कुमारिकाओं द्वारा समारोह

(१४६)

तेणं कालेणं तेणं समएणं उद्धलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरियाओ सएहिं २ कूडेहिं सएहिं २ भवणेहिं सएहिं २ पासायवडेंसएहिं पत्तेयं २ चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं एवं तं चेव पुव्ववण्णियं जाव विहरंति, तंजहा-

मेहंकरा १, मेहवई २, सुमेहा ३, मेहमालिणी ४।

सुवच्छा ५, वच्छमित्ता य ६, वारिसेणा ७, बलाहगा ८॥१॥

तए णं तासिं उद्धलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारी-महत्तरियाणं पत्तेयं २ आसणाइं चलंति, एवं तं चेव पुव्ववण्णियं भाणियव्वं जाव अम्हे णं देवाणुप्पिए! उद्धलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरियाओ जेणं भगवओ तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करिस्सामो तेणं तुब्भाहिं ण भाइयव्वंति-कट्टु उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति २ त्ता जाव अब्भवद्दलए विउव्वंति २ त्ता जाव तं णिहयरयं णट्ठरयं भट्ठरयं पसंतरयं उवसंतरयं करेंति २ त्ता खिप्पामेव पच्चुवसमंति, एवं पुप्फवद्दलंसि पुप्फवासं वासंति वासित्ता जाव कालागुरुपवर जाव सुरवराभिगमणजोग्गं करेंति २ त्ता जेणेव भयवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति २ त्ता जाव आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - **पच्चुवसमंति** - प्रत्युपशांत-उपरत होते हैं।

भावार्थ - उस काल, उस समय ऊर्ध्वलोक निवासिनी, महिमामयी मेघंकरा, मेघवती, सुमेघा, मेघमालिनी, सुवत्सा, वत्समित्रा, वारिषेणा, बलाहका संज्ञक आठ दिक्कुमारिकाओं के जो अपनों कूटों पर अपने भवनों में, श्रेष्ठ प्रासादों में, अपने चार सहस्त्र सामानिक देवों के साथ यावत् पूर्व वर्णित सुखोपभोग में अभिरत थीं। प्रत्येक के आसन चलित हुए। एतद्विषयक वर्णन पूर्ववत् योजनीय है यावत् उन्होंने तीर्थंकर की माता से कहा - देवानुप्रिये! हम ऊर्ध्वलोकवासिनी आठ दिक्कुमारिकाएं भगवान् तीर्थंकर का जन्म महोत्सव आयोजित करेंगी। अतः आप भयभीत मत होना। इस प्रकार कहकर वे उत्तर-पूर्व दिशा भाग में - ईशान कोण में जाती हैं यावत् आकाश में बादलों की विकुर्वणा करती हैं यावत् जल वर्षण द्वारा उस स्थान की धूल जम जाती है, नष्ट हो जाती है, प्रशान्त हो जाती है, उपशांत हो जाती है। ऐसा होने पर वे उपरत होती है।

ऐसा कर वे पुष्प मेघों द्वारा पुष्पवर्षा करती है यावत् काले अगर, उत्तम कुंदरुक्क आदि द्वारा उस स्थान को सुगंधित बना देती हैं। यावत् उसे देवताओं के अभिगमन योग्य बना देती है। वैसा कर भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता के निकट आती हैं यावत् विविध रूप में आगान-परिगान करती हुई स्थित होती हैं।

रुचकवासिनी दिक्कुमारिकाओं द्वारा उत्सव

(१४७)

तेणं कालेणं तेणं समएणं पुरत्थिमरुयगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारी-महत्तरियाओ सएहिं २ कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा-

गाहा - णंदुत्तरा य १, णंदा २, आणंदा ३, णंदिवद्धणा ४।
विजया य ५, वेजयंती ६, जयंती ७, अपराजिया ८॥१॥

सेसं तं चेव जाव तुब्भाहिं ण भाइयव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमायाए य पुरत्थिमेणं आयंसहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति। तेणं कालेणं तेणं समएणं दाहिणरुयगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारी-महत्तरियाओ तहेव जाव विहरंति, तंजहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाहा - समाहारा १, सुप्पइण्णा २, सुप्पबुद्धा ३, जसोहरा ४।
लच्छिमई ५, सेसवई ६, चित्तगुत्ता ७, वसुंधरा ८॥१॥

तहेव जाव तुब्भाहिं ण भाइयव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य दाहिणेणं भिंगारहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।

तेणं कालेणं तेणं समएणं पच्चत्थिमरुयगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारी-महत्तरियाओ सएहिं २ जाव विहरंति, तंजहा-

इलादेवी १, सुरादेवी २, पुहवी ३, पुणावई ४।
एगणासा ५, णवमिया ६, भद्दा ७, सीया य ८, अट्ठमा॥१॥

तहेव जाव तुब्भाहिं ण भाइयव्वंतिकट्टु जाव भगवओ तित्थयरस्स तित्थयर-माऊए य पच्चत्थिमेणं तालियंटहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।

तेणं कालेणं तेणं समएणं उत्तरिल्लरुयगवत्थव्वाओ जाव विहरंति तंजहा-

अलंबुसा १, मिस्सकेसी २, पुण्डरीया य ३, वारुणी ४,
हासा ५, सव्वप्पभा ६, चेव, सिरि ७, हिरि ८, चेव उत्तरओ॥१॥

तहेव जाव वंदित्ता भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य उत्तरेणं चामरहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।

तेणं कालेणं तेणं समएणं विदिसि-रुयगवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारी-महत्तरियाओ जाव विहरंति, तंजहा-चित्ता य १ चित्तकणगा २ सतेरा ३ य सोदामिणी ४। तहेव जाव ण भाइयव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य चउसु विदिसासु दीवियाहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंतित्ति।

तेणं कालेणं तेणं समएणं मज्झिमरुयगवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारी-महत्तरियाओ सएहिं २ कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा-रूया रूयासिया चेव, सुरूया रूयगावई। तहेव जाव तुब्भाहिं ण भाइयव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउरंगुलवज्जं णाभिणालं कप्पंति कप्पेत्ता विवरगं खणंति, खणित्ता वियरगे णाभिं णिहरंति, णिहणित्ता रयणाण य वइराण य पूरेंति २ त्ता हरियालियाए पेढं बंधंति २ त्ता तिदिसिं तओ कयलीहरए विउव्वंति, तए णं तेसिं कयलीहरगाणं बहुमज्झदेसभाए तओ चाउस्सालए विउव्वंति, तए णं तेसिं चाउस्सालगाणं बहु मज्झदेसभाए तओ सीहासणे विउव्वंति, तेसि णं सीहासणाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते सव्वो वण्णगो भाणियव्वो।

तए णं ताओ रुयगमज्झवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारीओ (महत्तराओ) जेणेव भयवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति २ त्ता भगवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं गिण्हंति तित्थयरमायरं च बाहाहिं गिण्हंति २ त्ता जेणेव दाहिणिल्ले कयलीहरए जेणेव चाउस्सालए जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे णिसीयावेंति २ त्ता सयपागसहस्सपागेहिं तिल्लेहिं अब्भगेंति २ त्ता सुरभिणा गंधवट्टएणं उव्वट्टेंति २ त्ता भगवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं तित्थयरमायरं च बाहासु गिण्हंति २ त्ता जेणेव पुरत्थिमिल्ले कयलीहरए जेणेव चाउस्सालए जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे णिसीयावेंति २ त्ता तिहिं उदएहिं मज्जावेंति, तंजहा-गंधोदएणं १, पुप्फोदएणं २, सुद्धोदएणं ३, मज्जावित्ता सव्वालंकारविभूसियं करेंति २ त्ता भगवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं तित्थयरमायरं च बाहाहिं गिण्हंति २ त्ता जेणेव उत्तरिल्ले कयलीहरए जेणेव चाउस्सालए जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे णिसीयाविंति २ त्ता आभिओगे देवे सद्दाविंति २ त्ता एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! चुल्लहिमवंताओ वासहरपव्वयाओ गोसीसचंदणकट्ठाइं साहरह।

तए णं ते आभिओगा देवा ताहिं रुयगमज्झवत्थव्वाहिं चउहिं दिसाकुमारी महत्तरियाहिं एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव विणएणं वयणं पडिच्छंति २ त्ता खिप्पामेव चुल्लहिमवंताओ वासहरपव्वयाओ सरसाइं गोसीसचंदणकट्ठाइं

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

साहरंति, तए णं ताओ मज्झिमरुयगवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारीमहत्तरियाओ सरगं करेंति २ त्ता अरणिं घडेंति अरणिं घडित्ता सरएणं अरणिं माहति २ त्ता अग्गिं पाडेति २ त्ता अग्गिं संधुक्खंति २ त्ता गोसीसचंदणकट्ठे पक्खिवंति २ त्ता अग्गिं उज्जालंति २ त्ता समिहाकट्ठाइं पक्खिविंति २ त्ता अग्गिहोमं करेंति २ त्ता भूइकम्मं करेंति २ त्ता रक्खापोट्टलियं बंधंति, बंधेत्ता णाणामणिरयणभत्तिचित्ते दुविहे पाहाणवट्टगे गहाय भगवओ तित्थयरस्स कण्णमूलंमि टिट्टियाविंति भवउ भयवं पव्वयाउए २।

तए णं ताओ रुयगमज्झवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारीमहत्तरियाओ भयवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं तित्थयरमायरं च बाहाहिं गिण्हंति, गिण्हित्ता जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छंति २ त्ता तित्थयरमायरं सयणिज्जंसि णिसीयावेंति, णिसीयावित्ता भयवं तित्थयरं माऊए पासे ठवेंति, ठवित्ता आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंतीति।

शब्दार्थ - **कप्पंति** - काटती हैं, **विवरगं** - खड्डा, **खणंति** - खोदती हैं, **णिहणंति** - रखती है, **सरगं** - बाण जैसे नुकीले।

भावार्थ - उस काल, उस समय पूर्वदिशावर्तिनी आठ दिक्कुमारिकायें अपने-अपने कूटों पर यावत् उसी प्रकार (पूर्ववत्) सुखोपभोग में अभिरत थी। उनके नाम-नरोत्तरा नंदा, आनंदा, नंदिवर्धना, विजया, वैजयंती, जयंती एवं अपराजिता थे। बाकी सारा वर्णन पूर्ववत् है। उन्होंने तीर्थंकर की माता से कहा - आप डरना मत यावत् पूर्व दिशा में हाथों में दर्पण लिए आगान-परिगान करती हुई स्थित रहती हैं।

उस काल, उस समय दक्षिण रुचक वासिनी आठ दिक्कुमारिकाएं अपने-अपने प्रासादों में उसी प्रकार यावत् सुखोपभोग में अभिरत थीं। उनके नाम-समाहारा, सुप्रदत्ता, सुप्रबुद्धा, यशोधरा, लक्ष्मीमति, शेषवती, चित्रगुप्ता एवं वसुंधरा हैं।

वे भगवान् तीर्थंकर की माता से यावत् कहती हैं-आप भयभीत न हों यावत् भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता की दक्षिण दिशा में हाथ में झारी लिए आगान-संगान करने लगी।

उस काल, उस समय पश्चिम रुचकवासिनी, महिमाशालिनी आठ दिक्कुमारिकाएं अपने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवनों में यावत् सुखोपभोग पूर्वक विरहणशील थीं। इनके नाम-इलादेवी, सुरादेवी, पृथ्वी, पद्मावती, एकनासा, नवमिका, भद्रा तथा शीता हैं। ये उसकी प्रकार यावत् भगवान् तीर्थंकर की माता से कहती हैं यावत् भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता के पश्चिम की ओर हाथों में पंखे लिए हुए आगान संगान करने लगी।

उस काल, उस समय उत्तर रुचक कूटवास्तव्या दिक्कुमारियाँ यावत् विहरणशील थीं। अलंबुसा, मिस्रीकेशी, पुण्डरिका, वारुणी, हासा, सर्वप्रभा श्री एवं ह्री - इनके नाम हैं। अवशिष्ट वर्णन पहले की तरह है।

उसी प्रकार वंदन कर यावत् तीर्थंकर एवं उनकी माता के उत्तर में, हाथ में चंवर लेकर आगान-संगान निरत होती हैं।

उस काल, उस समय चारों विदिशाओं में निवास करने वालीं महान् दिशाकुमारिकाएं यावत् सुखपूर्वक विहरणशील थीं। इनके नाम इस प्रकार हैं - चित्रा, चित्रकनका, शतेरा, सौदामिनी।

शेष वर्णन पूर्वानुसार है यावत् तीर्थंकर की माता से भयभीत न होने का कहकर, भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता के चारों दिक्कोणों में हाथों में दीपक लेकर संगान करने लगी।

उस काल उस समय मध्य रुचकवासिनी चार महत्तरिका दिक्कुमारिकाएं यावत् सुखपूर्वक विहरणशील थीं। उनके नाम निम्नांकित हैं - रूपा, रूपासिका, स्वरूपा एवं रूपकावती। शेष वर्णन पूर्वानुसार है। वे भगवान् तीर्थंकर की माता से भयभीत न होने का कह कर भगवान् तीर्थंकर के नाभिनाल को चार अंगुल छोड़कर काटती हैं। वैसा कर जमीन में खड्डा करती हैं तथा उसमें नाल को रखती हैं। खड्डे को हीरों एवं रत्नों से भरती हैं, हरिताल द्वारा उस स्थान पर पीठिका बना देती है। ऐसा कर तीनों दिशाओं में कदली ग्रहों की विकुर्वणा करती हैं। उन केले के झुरमुटों के मध्य में तीन चतुःशाल-चारों ओर मकान युक्त भवनों की विकुर्वणा करती हैं। वहाँ तीन सिंहासनों की विकुर्वणा करती हैं। सिंहासनों का वर्णन पहले की तरह योजनीय है।

तदनंतर मध्यरुचकवासिनी चारों दिक्कुमारिकाएं भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता के समीप आती हैं। भगवान् तीर्थंकर को करतल संपुट - जोड़ी हुई हथेलियों में लेती हैं तथा तीर्थंकर की माता को भुजाओं द्वारा ग्रहण करती हैं। ऐसा कर वे दक्षिण दिशावर्ती कदलीग्रह में, जहाँ चतुःशाल भवन एवं सिंहासन हैं, आती हैं तथा उनके आसनों पर सभासीन करती हैं। उनका शतपाक एवं सहस्त्रपाक तेल द्वारा अभ्यंगन करती हैं - मृदुल, कोमल मालिश करती है। फिर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुगंधित गंधाटक से उबटन करती है। वैसा कर दोनों को पूर्ववत् ग्रहण कर पूर्वदिशावर्ती कदली गृह के अन्तर्गत चतुःशालभवन में स्थित सिंहासन पर बिठलाती है। वैसा कर सुगंधित पदार्थ मिले हुए जल, पुष्प मिले हुए जल एवं शुद्ध जल-तीन प्रकार के जल से स्नान कराती हैं। तत्पश्चात् सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित करती हैं। पूर्व की ज्यों दोनों को लेकर उत्तर दिग्वर्ती कदली गृह के अन्तरवर्ती चतुःशाल भवन में स्थित सिंहासन पर बिठाती हैं। वैसा कर अपने आभियोगिक देवों को बुलाती हैं, आदेश देती हैं। हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत से गोशीर्ष चंदन काष्ठ लाओ। तब मध्यरुचक वासिनी महनीया देवियों द्वारा यों आदिष्ट होने पर आभियोगिक देव बड़े हर्षित और परितुष्ट हुए यावत् सविनय आदेश को स्वीकार किया। शीघ्र ही चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत से ताजा गोशीर्षचन्दन काष्ठ ले आए। मध्यरुचकवासिनी चारों दिक्कुमारिकाओं ने उनसे तीखे सरकने बनाएं अग्नि उत्पादक काष्ठ बनाएं। सरकनों-सरकण्डों से अरणिकाष्ठ को घिसा तथा अग्नि उत्पन्न की एवं आग को धुकाया। इसमें गोशीर्षचंदन काष्ठ को प्रक्षिप्त किया, अग्नि को प्रज्वलित किया। उसमें समिधाकाष्ठ-हवनोपयोगी काष्ठ डाला। अग्नि में हवन किया। वैसा कर भूतिकर्म किया। उससे दोनों के रक्षा पोटलिकाएं बांधी। फिर भिन्न-भिन्न प्रकार के मणिरत्नांकित दो पाषाण गोलक लिए, भगवान् तीर्थंकर के कर्णमूल में उन्हें टकराकर आवाज की। जिससे वे उनकी शुभकामना सुन सके और कहां - 'हे भगवन्! आप पर्वत की तरह दीर्घायु हों।'

फिर मध्यरुचकवासिनी वे चार महिमामयी दिक्कुमारिकाएं भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता को पूर्ववत् हाथों में ग्रहण कर जन्म स्थान में ले आती हैं और शय्या पर लिटाती हैं। भगवान् तीर्थंकर को उनकी माता के पार्श्व में सुलाती हैं और मंगल गीतों का आगान-संगान करती हैं।

विवेचन - यहाँ शतपाक और सहस्त्रपाक तेल का उल्लेख हुआ है। इस सम्बन्ध में यह ज्ञातव्य है कि दैहिक पुष्टि और मार्दव आदि की दृष्टि से आयुर्वेद में विविध प्रकार के तेलों का प्रयोग बतलाया गया है। यहाँ तक कि तैल चिकित्सा के रूप में विविधरोग विनाशिनी आयुर्वेद मूलक प्रक्रिया भी रही है। आज भी तमिलनाडु में कोयम्बटूर के समीप तैल चिकित्सा का सुप्रसिद्ध केन्द्र है।

शतपाक और सहस्त्रपाक तेलों का उपासकदशांग आदि आगमों में भी उल्लेख हुआ है। वहाँ भगवान् महावीर के प्रमुख श्रावक आनंद द्वारा मर्दन विधि में इन दोनों को अपवाद स्वरूप रखे जाने का उल्लेख है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य शांतिचन्द्र ने अपनी वृत्ति में इस सम्बन्ध में उल्लेख किया है - जिसमें सौ प्रकार के द्रव्य डालकर सौ बार जिसका पाक किया जाता है, उसे शतपाक तैल कहा जाता है। सहस्त्रपाक तैल में सौ के स्थान पर सहस्त्र पदार्थों एवं सहस्त्र बार परिपाक की विधि है। इससे तेल में विशेष गुण निष्पन्न होते हैं। वह दैहिक पुष्टि कोमलता और आभा की वृद्धि करता है।

(१४८)

तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के णामं देविंदे देवराया वज्जपाणी पुरंदरे सयक्कऊ सहस्सक्खे मघवं पागसासणे दाहिणड्ढलोगाहिवई बत्तीसविमाणावाससयसहस्साहिवई एरावणवाहणे सुरिंदे अरयंबरवत्थधरे आलइयमालमउडे णवहेमचारुचित्तचंचलकुण्डलविलिहिज्जमाणगंडे भासुरबोंदी पलम्बवणमाले महिड्ढिए महज्जुइए महाबले महायसे महाणुभागे महासोक्खे सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसाहस्सीणं चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं चउण्हं चउरासीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अण्णेसिं च बहूणं सोहम्मकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महया हयणट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंग-पडुपडहवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ।

तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो आसणं चलइ, तए णं से सक्के जाव आसणं चलियं पासइ २ त्ता ओहिं पउंजइ पउंजित्ता भगवं तित्थयरं ओहिणा आभोएइ २ त्ता हट्ठतुट्ठचित्ते आणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए धाराहयकयंब-कुसुम-चंचुमालइयऊसवियरोमकूवे वियसियवरकमलणयणवयणे पयलियवरकडगतुडियकेऊरमउडे कुण्डलहारविरायंतवच्छे पालम्बपलम्बमाणघोलंतभूसणधरे ससंभमं तुरियं चवलं सुरिंदे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ २ त्ता वेरुलियवरिट्ठरिट्ठअंजणणिउणोवियमिसिमिसिंत-मणिरयणमंडियाओ पाउयाओ ओमुयइ २ त्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ २ त्ता अंजलिमउलियग्गहत्थे तित्थयराभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ २ त्ता वामं जाणुं अंचेइ २ त्ता दाहिणं जाणुं धरणीयलंसि साहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणियलंसि णिवेसेइ २ त्ता ईसिं पच्चुण्णमइ २ त्ता कडगतुडियथंभियाओ भुयाओ साहरइ २ त्ता करयलपरिग्गहियं० सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-णमोऽत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं, आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुण्डरीयाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं लोगणाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं, अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं, धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मणायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं, दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा अप्पडिहयवरणाणदंसणधराणं वियट्टछउमाणं, जिणाणं जावयाणं तिण्णाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं, सव्वण्णूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरुय-मणंतमक्खय-मव्वाबाहमपुणरावित्ति-सिद्धिगइणामधेयं ठाणं संपत्ताणं णमो जिणाणं जियभयाणं, णमोऽत्थु णं भगवओ तित्थयरस्स आइगरस्स जाव संपाविउकामस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए, पासउ मे भयवं! तत्थगए इहगयंतिकट्टु वंदइ णमंसइ वं० २ त्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे।

तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अयमेयारूवे जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था-उप्पण्णे खलु भो! जम्बुद्दीवे दीवे भगवं तित्थयरे तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्णमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं तित्थयराणं जम्मणमहिमं करेत्तए, तं गच्छामि णं अहंपि भगवओ तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करेमित्तिकट्टु एवं संपेहेइ २ त्ता हरिणेगमेसिं पायत्ताणीयाहिवइं देवं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सभाए सुहम्माए मेघोघरसियगंभीरमहुरयरसद्दं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोयणपरिमण्डलं सुघोसं सूसरं घंटं तिक्खुत्तो उल्लालेमाणे २ महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणे २ एवं वयाहि-आणवेइ णं भो! सक्के देविंदे देवराया गच्छइ णं भो! सक्के देविंदे देवराया जम्बुद्दीवे २ भगवओ तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करित्तए, तं तुब्भेवि णं देवाणुप्पिया! सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वायरेणं सव्वविभूईए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं सव्वणाडएहिं सव्वोवरोहेहिं सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारविभूसाए सव्वदिव्वतुडियसद्दसण्णिणाएणं महया इड्ढीए जाव रवेणं णिययपरियालसंपरिवुडा सयाइं २ जाणविमाणवाहणाइं दुरूढा समाणा अकालपरिहीणं चेव सक्कस्स जाव अंतियं पाउब्भवह।

तए णं से हरिणेगमेसी देवे पायत्ताणीयाहिवई सक्केणं ३ जाव एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ जाव एवं देवोत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ २ त्ता सक्कस्स ३ अंतियाओ पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव सभाए सुहम्माए मेघोघरसिय-गम्भीरमहुरयरसद्दा जोयणपरिमण्डला सुघोसा घण्टा तेणेव उवागच्छइ २ त्ता तं मेघोघरसियगम्भीरमहुयरयरसद्दं जोयणपरिमण्डलं सुघोसं घण्टं तिक्खुत्तो उल्लालेइ, तए णं तीसे मेघोघरसिय गम्भीरमहुरयरसद्दाए जोयण-परिमण्डलाए सुघोसाए घण्टाए तिक्खुत्तो उल्लालियाए समाणीए सोहम्मे कप्पे अण्णेहिं एगूणेहिं बत्तीसविमाणा-वाससय सहस्सेहिं अण्णाइं एगूणाइं बत्तीसं घण्टासयसहस्साइं जमगसमगं कणक-णारावं काउं पयत्ताइं चावि हुत्था, तए णं सोहम्मे कप्पे पासायविमाणणिक्खुडा-वडियसद्दसमुट्ठियघण्टापडिसुया-सयसहस्ससंकुले जाए यावि होत्था।

तए णं तेसिं सोहम्मकप्पवासीणं बहूणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य एगंतरइपसत्त-णिच्चप्पमत्तविसयसुहमुच्छियाणं सूसरघंटारसियविउल-बोलपूरिय-चवलपडिबोहणे कए समाणे घोसणकोऊहल-दिण्ण-कण्णएग-चित्तउवउत्तमाणसाणं से पायत्ताणीयाहिवई देवे तंसि घंटारवंसि णिसंतपडिसंतंसि समाणंसि तत्थ २ देसे २ तहिं २ महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणे २ एवं वयासी-हंत!

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुणंतु भवंतो बहवे सोहम्मकप्पवासी वेमाणियदेवा देवीओ य सोहम्मकप्पवासी वेमाणियदेवा देवीओ य सोहम्मकप्पवइणो इणमो वयणं हियसुहत्थं-आणवेइ णं भो! सक्के तं चेव जाव अंतियं पाउब्भवहत्ति, तए णं ते देवा देवीओ य एयमट्ठं सोच्चा हट्ठतुट्ठ जाव हियया अप्पेगइया वंदणवत्तियं एवं पूयणवत्तियं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं दंसणवत्तियं कोऊहलवत्तियं जिणभत्तिरागेणं अप्पेगइया सक्कस्स वयणमणुवट्ट-माणा अप्पेगइया अण्णमण्णमणुवट्टमाणा अप्पेगइया तं जीयमेयं एवमाइत्तिकट्टु जाव पाउब्भवंतित्ति।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया ते वेमाणिए देवे देवीओ य अकालपरिहीणं चेव अंतियं पाउब्भवमाणे पासइ २ त्ता हट्ठ० पालयं णामं आभिओगियं देवं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अणेगखम्भसयसण्णिविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियाकलियं ईहामिय-उसभ-तुरग-णर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्तं खंभुग्गय-वइरवेइया-परिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजुयल-जंतुजुत्तं पिव अच्चीसहस्स-मालिणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयणलेसं सुहफासं सस्सिरीयरूवं घण्टावलियमहुरमणहरसरं सुहं कंतं दरिसणिज्जं णिउणो-वियमिसिमिसिंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं जोयण-सयसहस्सविच्छिण्णं पंचजोयणसयमुव्विद्धं सिग्घं तुरियं जइणणिव्वाहिं दिव्वं जाण-विमाणं विउव्वाहि २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि।

शब्दार्थ - **उड्ढलोग** - ऊर्ध्वलोक, **सयक्कऊ** - शतक्रतु-पूर्वभव में कार्तिक श्रेष्ठी के रूप में सौ बार श्रावक की पंचम प्रतिमा के आराधक, **सहस्सक्खे** - सहस्राक्ष-अपने पांच सौ मंत्रियों के एक सहस्र नेत्रों के सहयोग द्वारा कार्यशील, **पागसासणे** - पाकशासन - पाक संज्ञक दैत्य का विनाश करने वाले, **अरयं** - रज रहित, **आलइय** - आलंबित-लटकती हुई, **विलिहिज्जमाण** - शोभायमान होते हुए, **बोंदि** - देह, **आभोएइ** - देखता है, **पयलिऊ** - प्रचलित, **ओमुयइ** - उतारी, **उल्लालेइ** - बजाया, **दूसं** - दूष्य-वस्त्र, **लंबूसग** - कंदुक के आकार के आवरण-लूम्बे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - उस काल, उस समय शक्र संज्ञक देवेन्द्र, देवराज, वज्रपाणि, पुरंदर-असुरों के नगरों के विनाशक, सहस्त्राक्ष, मघवा-मेघों के नियामक, पाकशासक, दक्षिणार्द्ध लोकाधिपति, बत्तीसलक्ष विमानों के अधिनायक, ऐरावत हस्ती पर आरोहण करने वाले, सुरेन्द्र निर्मल वस्त्र धारण करने वाले, लटकती हुई मालाओं के मुकुट को धारण करने वाले, दीप्तिमय स्वर्ण के सुंदर, चित्रित, हिलते हुए कुंडलों से शोभायमान कपोल युक्त, उद्योतमय देहधारी, लम्बी-लम्बी पुष्पमालाएं धारण करने वाले, परम समृद्धि शाली, अत्यधिक द्युतिमय, प्रबल शक्तिमान, महान् कीर्तिशाली, अत्यन्त प्रभावापन्न, अत्यन्त सुखी, बत्तीस लाख वैमानिक, चौरासी हजार सामानिक, तैतीस गुरुस्थानीय त्रायस्त्रिंशक, चार लोकपाल सपरिवार आठ अग्रमहीषियाँ-प्रमुख इन्द्राणियाँ तीन परिषदें सात सेनाएं, सात सेनाधिपति, चारों ओर चौरासी-चौरासी हजार अंग रक्षक देव तथा अन्य बहुत से सौधर्मकल्पवासी वैमानिक देव एवं देवियाँ, इन सबका आधिपत्य, स्वामित्व, प्रभुत्व, महत्तरत्व-अधिनायकत्व, आज्ञेश्वरत्व - आज्ञा देने का अधिकार तथा सेनापतित्व धारण करते हुए, इन सबका परिपालन करे हुए, नृत्य, गीत तथा बजाए जाते हुए वीणा, झांझ, मृदंग तथा ढोल की मधुर ध्वनि के दिव्य भोगों के आनंदानुभव में अभिरत था।

तब एकाएक देवेन्द्र देवराज शक्र का आसन चलायमान हुआ। शक्र ने यावत् जब अपने आसन को चलायमान देखा तो अपने अवधिज्ञान के प्रयोग द्वारा भगवान् तीर्थंकर को देखा। वह हर्षित, परितुष्ट और मन में प्रसन्न हुआ। सौम्य मनोभाव एवं हर्षातिरेक से उसका हृदय विकसित हो उठा। बादलों द्वारा बरसाई जाती पानी की धारा से आहत कदंब के पुष्पों की तरह वह रोमांचित हो उठा। खिले हुए उत्तम कमल के समान उसके नेत्र और मुख विकसित हो उठे।

हर्षाधिक्यवश हिलते हुए उत्तम कड़े भुजबन्द, बाजूबंद, मुकुट, कुण्डल, वक्षस्थल पर शोभित हार, लटकते हुए लम्बे-लम्बे आभूषणों से युक्त देवराज इन्द्र सहसा शीघ्रतापूर्वक सिंहासन से उठा। पादपीठ पर पैर रखकर नीचे उतरा एवं नीलम, रिष्ट एवं अंजन संज्ञक रत्नों द्वारा कलापूर्ण विधि से बनाई हुई, देदीप्यमान, मणिमंडित पादुकाएं उतारीं। अखंडित वस्त्र का उत्तरासंग किया, हाथ जोड़े, जहाँ तीर्थंकर भगवान् विराजित थे, उस दिशा की ओर सात-आठ कदम आगे बढा तथा बाएं घुटने को ऊँचा किया एवं दाहिने घुटने को भूमि पर टिकाया, तीन बार अपना मस्तक भूमि पर लगाया। फिर कुछ ऊँचा उठाया, कटक, त्रुटित से सुस्थिर भुजाओं को उठाया अंजलिबद्ध हाथों को सिर पर घुमाते हुए इस प्रकार कहा - अर्हत् - इन्द्रादि द्वारा पूजित भगवान् आध्यात्मिक ऐश्वर्य सम्पन्न, आदिकर - अपने युग में धर्म के आद्य संप्रवर्तक,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थंकर - साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध धर्मसंघ के सप्रतिष्ठापक, स्वयंसंबुद्ध - स्वयं बोध प्राप्त, पुरुषों में उत्तम, पुरुषसिंह, पुरुषवर पुण्डरीक - सर्वविध-मालिन्य रहित होने के कारण पुरुषों में उत्तम कमल की तरह श्रेष्ठ निर्विकार, निर्लिप्त, उत्तम गंधहस्ती के सदृश, लोकोत्तम, लोकनाथ, लोकहितकर, लोकप्रदीप, लोकप्रद्योत, अभयप्रद, चक्षुप्रद, मार्गदर्शक, शरणप्रद, जीवन दायक-आध्यात्मिक जीवन देने वाले, बोधि प्रदायक, धर्मप्रद, धर्मोपदेष्टा, धर्मनायक, धर्मरथ के सारथि चक्रवर्ती सम्राट की तरह धर्म साम्राज्य के शासक, संसार सागर में डूबते लोगों के लिए द्वीप की तरह शरणभूत, अप्रतिहत ज्ञान, दर्शन के धारक, व्यावर्तछद्मा - अज्ञान आदि आवरणों से रहित, जिन - राग द्वेष विजेता, ज्ञायक-अध्यात्म तत्त्व वेत्ता, ज्ञापक-अध्यात्म तत्त्व को बतलाने वाले, तीर्ण - संसार सागर को पार करने वाले, तारक - ओरों को संसार सागर से पार उतारने वाले, बुद्ध-बोधक, मुक्त-मोचक - कर्मबंध से छूटने का मार्ग बताने वाले, सर्वज्ञ सर्वदर्शी, शिव-कल्याणकारी, अचल - स्थिर, अरुक - बाधा रहित, अनंत, अक्षय, अबाध, अपुनरावृत्ति - जहाँ से वापस न आना पड़े, जन्म-मरण रूप संसार में न लौटना पड़े, सिद्धगति प्राप्त जिनेश्वरों को नमस्कार हो। आदिकर यावत् सिद्धावस्था प्राप्ति हेतु यत्नशील तीर्थंकर देव को नमस्कार हो। यहाँ विद्यमान मैं अपने जन्मस्थान में स्थित भगवान् को वंदना करता हूँ। वहाँ स्थित भगवान् यहाँ स्थित मुझ शक्रेन्द्र को देखें। यों कहकर वह भगवान् को वंदन, नमन करता है। फिर पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन हो जाता है। तब देवेन्द्र, देवराज शक्र के मन में ऐसा भावोद्वेलन संकल्प उत्पन्न हुआ - जम्बूद्वीप में भगवान् तीर्थंकर का जन्म हुआ है। अतीत, वर्तमान एवं भविष्यवर्ती देवेन्द्रों देवराजों का यह परम्परा से आया हुआ आचार है कि वे तीर्थंकरों का विशाल जन्मोत्सव आयोजित करते हैं। अतः मैं भी तीर्थंकर देव के जन्मोत्सव का समायोजन करूँ।

ऐसा विचार, निश्चय कर देवराज शक्र ने अपने हरिनिगमैषी संज्ञक देव को बुलाया और उससे कहा - हे देवानुप्रिय! शीघ्र ही सुधर्मा सभा में बादलों की गर्जना के समान गंभीर, अत्यन्त मधुर शब्द युक्त, एक योजन गोलाकार, सुंदर स्वर सभा युक्त सुघोषा नामक घण्टा को तीन बार बजाते हुए जोर से यह उद्घोषणा करो-देवराज शक्र की आज्ञा है वे जम्बूद्वीप में भगवान् तीर्थंकर का महान् जन्मोत्सव समायोजित करने जा रहे हैं। देवानुप्रियो! आप सभी अपनी सब प्रकार की समृद्धि, द्युति, ऐश्वर्य, बल, प्रभाव, आदर, विभूषा अलंकरण, नाटक और नृत्यादि के साथ किसी भी अवरोध या विघ्न की चिन्ता न करते हुए सर्वविध फूलों,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अलंकारों मालाओं से विभूषित होते हुए, समस्त दिव्य वाद्यों की ध्वनि के साथ, अत्यन्त समृद्धिपूर्वक यावत् गाजों-बाजों के साथ अपने पारिवारिकजनों, संबंधियों सहित अपने-अपने यान विमानों पर आरूढ होकर अविलम्ब शक्रेन्द्र के समक्ष यावत् हाजिर हों।

देवेन्द्र शक्र द्वारा यावत् यों कहे जाने पर पदातिसेना के अधिपति हरिनिगमैषी देव हर्षित, परितुष्ट तथा प्रसन्न हुआ यावत् स्वामिन्! जैसी आज्ञा, यों कहकर विनय पूर्वक उसने शक्रेन्द्र का आदेश स्वीकार किया। वह शक्रेन्द्र के पास से निकला एवं जहाँ सुधर्मा सभा थी, बादलों के गर्जन की तरह गंभीर स्वर करने वाली, एक योजन परिमित सुघोषा घण्टा थी, वहाँ आया तथा उसे तीन बार बजाया। मेघ समूह के गर्जन सदृश गंभीर एवं मधुर ध्वनि युक्त एक योजन वर्तुलाकार सुघोषा घण्टा को तीन बार बजाए जाने पर सौधर्म कल्प में एक कम बत्तीस लाख विमानों में स्थित एक कम बत्तीस लाख घण्टाएं एक ही साथ उच्च स्वर में बजने लगी। सौधर्म कल्प में प्रासादों, विमानों, निष्कुटों में आपतित - पहुँचे हुए शब्दवर्गणा के पुद्गल लाखों प्रतिध्वनियों के रूप में प्रकट होने लगे।

इसके परिणाम स्वरूप भोगासक्त प्रमत्त, मूर्च्छित देव और देवियाँ शीघ्र ही प्रतिबुद्ध होते हैं - जागते हैं। उस ओर वे एकाग्रता पूर्वक कान लगाते हैं। जब घंटा ध्वनि मंद और प्रशांत हो जाती है तब शक्रेन्द्र की पदाति सेना के अधिनायक हरिनिगमैषी देव ने स्थान स्थान पर जोर जोर से यह उद्घोषणा की - सौधर्म कल्प में रहने वाले देवों और देवियों (आप सभी) सौधर्म कल्पाधिनायक शक्रेन्द्र का यह सुखप्रद वचन श्रवण करें - उनका आदेश है यावत् आप शक्रेन्द्र के समक्ष उपस्थित हों। यह सुनकर वे देव-देवियाँ बड़े हर्षित, परितुष्ट एवं मन में आनंदित हुए। उनमें से कतिपय भगवान् तीर्थंकर के वंदन, अभिवादन, कतिपय पूजन-अर्चन, कुछेक स्तवनादि द्वारा सत्कीर्तन, कुछ समादर प्रदर्शन द्वारा अपने मन को आह्लादित करने हेतु, कुछेक उनके दर्शन की उत्कंठा से, कुछ उत्सुकतावश, कतिपय भक्तिवश एवं कुछ अपने परंपरागत आचारानुकूल शक्रेन्द्र के समक्ष उपस्थित हो गए। शक्रेन्द्र ने वैमानिक देवों और देवियों को अविलंब अपने पास उपस्थित देखा तो अत्यन्त प्रसन्न हुआ। अपने 'पालक' नामक आभियोगिक देव को बुलाया और कहा - हे देवानुप्रिय! शीघ्र ही सैकड़ों स्तम्भों पर अवस्थित क्रीड़ारत शालभंजिकाओं से सुशोभित व्रक, वृषभ, अश्व, मनुष्य, मकर, पक्षी, सर्प, किन्नर, रुरु, शरभ - अष्टापद, चमरी गाय, हस्ती, वनलता, पद्मलता आदि के चित्रों से अंकित स्तम्भों पर उत्कीर्ण वज्ररत्न मय वेदिका द्वारा सुशोभित, सहजात, संचरणशील विद्याधर युगलों से समन्वित, रत्नों की द्युति से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चमकती हुई, सहस्त्रों किरणों से उद्दीप्त हजारों चित्रों से अंकित, देदीप्यमान, नेत्रप्रिय, सुखद स्पर्श युक्त, सुखमय कांत, दर्शनीय, कलामय, कौशलपूर्वक निर्मित, मणिरत्न मयी, घंटिकाओं से व्याप्त, एक हजार योजन विस्तृत, पांच सौ योजन ऊंचे, शीघ्र, त्वरित, वेग युक्त, दिव्य यान - विमान की विकुर्वणा करो एवं ऐसा कर मुझे सूचित करो।

विवेचन - यहाँ आया 'हरिनिगमेषी' शब्द विशेष रूप से विवेचनीय है। संस्कृति में हरि शब्द के अनेक अर्थ है। उनमें एक अर्थ इन्द्र भी है। यहाँ वही अर्थ गृहीत हुआ है। आचार्य शांतिचन्द्र ने इसी सूत्र की वृत्ति में हरिनिगमैषी के व्युत्पत्तिपरक अर्थ का उल्लेख करते हुए लिखा हैं - हरे-इन्द्रस्य, निगमम्-आदेशमिच्छतीति हरिनिगमेषी-तम् हरिनिगमेषी,

अथवा - इन्द्रस्य नैगमेषी नामा देवः-हरिनिगमेषी।

इसका तात्पर्य यह है, जो इन्द्र की आज्ञा का पालन करने की इच्छा लिए रहता है, वह इस संज्ञा द्वारा अभिहित हुआ है अथवा इन्द्र का नैगमेषी नामक देव।

(१४६)

तए णं से पालयदेवे सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ जाव वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणित्ता तहेव करेइ इति, तस्स णं दिव्वस्स जाणविमाणस्स तिदिसिं तओ तिसोवाणपडिरूवगा वण्णओ, तेसि णं पडिरूवगाणं पुरओ पत्तेयं २ तोरणा वण्णओ जाव पडिरूवा।

तस्स णं जाणविमाणस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे०, से जहाणामए-आलिंगपुक्खरेइ वा जाव दीवियचम्मेइ वा अणेगसंकुकीलगसहस्सवियए आवडपच्चावडसेढिप्प-सेढिसुत्थियसोवत्थियवद्धमाणपूसमाणव-मच्छंडग-मगरंडग-जारमार-फुल्लावलि-पउमपत्त-सागर-तरंग-वसंतलय-पउमलय-भत्तिचित्तेहिं सच्छाएहिं सप्पभेहिं समरीइएहिं सउज्जोएहिं णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं उवसोभिए, तेसि णं मणीणं वण्णे गंधे फासे य भाणियव्वे जहा रायप्पसेणइज्जे।

तस्स णं भूमिभागस्स बहुमज्झ-देसभाए पेच्छाघरमण्डवे अणेगखम्भसय-सण्णिविट्ठे वण्णओ जाव पडिरूवे, तस्स उल्लोए पउमलयभत्तिचित्ते जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सव्वतवणिज्जमए जाव पडिरूवे, तस्स णं मण्डवस्स बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभागंसि महं एगा मणिपेढिया० अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वमणिमई वण्णओ, तीए उवरिं महं एगे सीहासणे वण्णओ, तस्सुवरिं महं एगे विजयदूसे सव्वरयणामए वण्णओ, तस्स मज्झदेसभाए एगे वइरामए अंकुसे, एत्थ णं महं एगे कुम्भिक्के मुत्तादामे, से णं अण्णेहिं तदद्धुच्चत्तप्पमाणमित्तेहिं चउहिं अद्धकुम्भिक्केहिं मुत्तादामेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, ते णं दामा तवणिज्ज-लंबूसगा सुवण्णपयरगमण्डिया णाणामणिरयणविविहहारद्धहारउवसोभियसमुदया ईसिं अण्णमण्णमसंपत्ता पुव्वाइएहिं वाएहिं मंदं २ एइज्जमाणा जाव णिव्वुइकरेणं सद्देणं ते पएसे आपूरेमाणा २ जाव अईव २ उवसोभेमाणा २ चिट्ठंति।

तस्स णं सीहासणस्स अवरुत्तरेणं उत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं सक्कस्स० चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं चउरासीइभद्दासणसाहस्सीओ पुरत्थिमेणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं एवं दाहिणपुरत्थिमेणं अब्भिंतरपरिसाए दुवालसण्हं देवसाहस्सीणं दाहिणेणं मज्झिमाए० चउदसण्हं देवसाहस्सीणं दाहिणपच्चत्थिमेणं बाहिरपरिसाए सोलसण्हं देवसाहस्सीणं पच्चत्थिमेणं सत्तण्हं अणियाहिवईणंति, तए णं तस्स सीहासणस्स चउद्दिसिं चउण्हं चउरासीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं एवमाई विभासियव्वं सूरियाभगमेणं जाव पच्चप्पिणंतित्ति।

भावार्थ - देवेन्द्र, देवराज शक्र द्वारा इस प्रकार आदिष्ट किए जाने पर पालक देव अत्यन्त हर्षित परितुष्ट हुआ यावत् उसने वैक्रिय समुद्घात द्वारा यान - विमान की विकुर्वणा की। तीनों दिशाओं में त्रिसोपानमार्ग बनाकर उनके आगे तोरण द्वारों की रचना की। इनका वर्णन यावत् प्रतिरूप पर्यन्त पूर्ववत् योजनीय है। उस यान विमान के भीतर बड़ा ही सुंदर, समतल भू भाग था। वह ढोलक के उपरितन चर्मनद्ध की तरह यावत् चीते के चर्म के समान समतल और मुलायम था। अनेक कीलों और मेखों द्वारा वह आवर्त-प्रत्यावर्त, श्रेणी-प्रश्रेणी रूपों में प्रतिबद्ध था। स्वस्तिक, वर्द्धमान, पुष्यमानव, मत्स्याण्ड, मकरांडक, जार, मार-कामदेव, पुष्पावलि, कमल पत्र, सागर-तरंग, वासंतीलता तथा पद्मलता के चित्रों से अंकित, आभा - प्रभामय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किरणों से सुशोभित, उद्योतित, नानाविद्य पांच रंगों की मणियों से सुशोभित था, जैसा राजप्रश्नीय सूत्र में वर्णन आया है।

उस भूमिभाग के बीचों बीच एक प्रेक्षागृह था। वह सैकड़ों स्तम्भों पर अवस्थित था यावत् उसका वर्णन प्रतिरूप पर्यन्त योजनीय है। उस प्रेक्षागृह मण्डप के ऊपर का भाग पद्मलता आदि के चित्रों से युक्त यावत् सर्वथा तपनीय स्वर्ण निर्मित यावत् बड़ा ही सुन्दर था। उस मण्डप के अत्यन्त समतल भूमिभाग के ठीक मध्य में आठ योजन लम्बी-चौड़ी, चार योजन मोटी सर्वथा मणिमय मणिपीठिका बतलाई गयी है। इसका वर्णन पूर्ववत् योजनीय है। इसके ऊपर बड़ा सिंहासन बतलाया गया है। इसका विशेष वर्णन भी पूर्व की तरह कथनीय है। इसके ऊपर एक सर्वरत्नमय विजयदूष्य था, इसका वर्णन भी पहले की तरह हैं। इनके मध्य में एक हीरों से बना हुआ अंकुश है। वहाँ एक कुंभिकाकृति युक्त विशाल माला समूह है। वह माला अपने से आधे ऊंचे, अर्द्धकुंभिका युक्त चार मुक्ता मालाओं से चारों ओर से परिवेष्टित थी। उन मालाओं में तपनीय कोटि के उच्च स्वर्ण से बने हुए लम्बूषक-लूम्बे लटकते थे। वे स्वर्णपातों से मढ़े हुए थे। वे तरह-तरह की मणियों तथा रत्नों से बने हुए एक-दूसरे से थोड़ी-थोड़ी दूरी पर अवस्थित अठारह लड़ के हारों तथा नौ लड़े अर्द्धहारों से विभूषित थे। पूर्वीय वायु के झोखों से वे धीरे-धीरे हिलती हुईं, आपस में एक दूसरे से टकराने के कारण उत्पन्न यावत् कर्णप्रिय शब्दों से आस-पास के स्थानों को भरती हुईं यावत् बड़ी सुहावनी लगती थीं। उस सिंहासन के पश्चिमोत्तर, उत्तर एवं उत्तरपूर्व दिशोपदिशाओं में शक्रेन्द्र के चौरासी हजार सामानिक देवों के चौरासी हजार आसन थे। पूर्व में आठ इन्द्राणियों के आठ, दक्षिण पूर्व में आभ्यंतर परिषद् के बारह हजार देवों के बारह हजार, दक्षिण में मध्यम परिषद के चवदह हजार देवों के चवदह हजार, दक्षिण पश्चिम में बाह्य परिषद के सोलह हजार देवों के सोलह हजार तथा पश्चिम में सात सेनाधिपतियों के सात श्रेष्ठ आसन थे। उस सिंहासन की चारों दिशाओं में चौरासी-चौरासी सहस्त्र देवों के चौरासी-चौरासी हजार आसन थे। ये सभी सूर्याभ देव के विमान विषयक पाठ से यावत् देव आकर सूचना करते हैं, पर्यन्त ग्राह्य हैं।

(१५०)

तए णं से सक्के हट्ठ जाव हियए दिव्वं जिणेंदाभिगमणजुग्गं सव्वालंकार-विभूसियं उत्तरवेउव्वियं रूवं विउव्वइ २ त्ता अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णट्टाणीएणं गंधव्वाणीएण य सद्धिं तं विमाणं अणुप्पयाहिणी करेमाणे २ पुव्विल्लेणं तिसोवाणेणं दुरूहइ २ त्ता जाव सीहासणंसि पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णेत्ति, एवं चेव सामाणियावि उत्तरेणं तिसोवाणेणं दुरूहित्ता पत्तेयं २ पुव्वण्णत्थेसु भद्दासणेसु णिसीयंति, अवसेसा देवा य देवीओ य दाहिणिल्लेणं तिसोवाणेणं दुरूहित्ता तहेव जाव णिसीयंति, तए णं तस्स सक्कस्स तंसि० दुरूढस्स० इमे अट्ठट्ठमंगलगा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया०, तयणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगारं दिव्वा य छत्तपडागा सचामरा य दंसणरइयआलोयदरिसणिज्जा वाउद्धुयविजयवेजयंती य समूसिया गगणतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयणंतरं...छत्तभिंगारं०, तयणंतरं च ण वइरामयवट्टलट्ठसंठिय-सुसिलिट्ठपरिघट्ठमट्ठसुपइट्ठिए विसिट्ठे अणेगवरपंचवण्णकुडभीसहस्स परिमण्डिया-भिरामे वाउद्धुय-विजयवेजयंती-पडागा-छत्ताइच्छत्तकलिए तुंगे गयणतल-मणुलिहंत-सिहरे जोयणसहस्समूसिए महइमहालए महिंदज्झए पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिए तयणंतरं च णं सरूवणेवत्थपरियच्छिसुसज्जा सव्वालंकारविभूसिया पंच अणिया पंच अणियाहिवइणो जाव संपट्ठिया, तयणंतरं च णं बहवे आभिओगिया देवा य देवीओ य सएहिं सएहिं रूवेहिं जाव णिओगेहिं सक्कं देविंदं देवरायं पुरओ य मग्गओ य पासओ य अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तयणंतरं च णं बहवे सोहम्मकप्पवासी देवा य देवीओ य सव्विड्ढीए जाव दुरूढा समाणा० मग्गओ य जाव संपट्ठिया।

तए णं से सक्के तेणं पंचाणियपरिक्खित्तेणं जाव महिंदज्झएणं पुरओ पकड्ढिज्जमाणेणं चउरासीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव परिवुडे सव्विड्ढीए जाव रवेणं सोहम्मस्स कप्पस्स मज्झंमज्झेणं तं दिव्वं देविड्ढिं जाव उवदंसेमाणे २ जेणेव सोहम्मस्स कप्पस्स उत्तरिल्ले णिज्जाणमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जोयणसयसाहस्सिएहिं विग्गहेहिं ओवयमाणे २ ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए वीईवयमाणे २ तिरियमसंखिज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जेणेव णंदीसरवरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दीवे जेणेव दाहिणपुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वए तेणेव उवागच्छइ २ त्ता एवं जा चेव सूरियाभस्स वत्तव्वया णवरं सक्काहिगारो वत्तव्वो जाव तं दिव्वं देविड्ढिं जाव दिव्वं जाणविमाणं पडिसाहरमाणे २ जाव जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणणगरे जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणं तेणं दिव्वेणं जाण विमाणेणं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसिभागे चउरंगुलमसंपत्तं धरणियले तं दिव्वं जाणविमाणं ठवेइ २ त्ता अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं दोहिं अणीएहिं गंधव्वाणीएण य णट्टाणीएण य सद्धिं ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहइ, तए णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो चउरासीइसामाणियसाहस्सीओ ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ उत्तरिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहंति, अवसेसा देवा य देवीओ य ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ दाहिणिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहंतित्ति।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया चउरासीए सामाणियसाहस्सिएहिं जाव सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए जाव दुंदुहिणिग्घोस-णाइयरवेणं जेणेव भगवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छइ २ त्ता आलोए चेव पणामं करेइ २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ २ त्ता करयल जाव एवं वयासी-णमोऽत्थु ते रयणकुच्छिधारिए एवं जहा दिसाकुमारीओ जाव धण्णासि पुण्णासि तं कयत्थासि, अहण्णं देवाणुप्पिए! सक्के णामं देविंदे देवराया भगवओ तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करिस्सामि, तं णं तुब्भाहिं ण भाइयव्वंतिकट्टु ओसोवणिं दलयइ २ त्ता तित्थयरपडिरूवगं विउव्वइ २ त्ता तित्थयरमाउयाए पासे ठवेइ २ त्ता पंच सक्के विउव्वइ, विउव्वित्ता एगे सक्के भगवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं गिण्हइ एगे सक्के पिट्ठओ आयवत्तं धरेइ दुवे सक्का उभओ पासिं चामरुक्खेवं करेंति एगे सक्के पुरओ वज्जपाणी पकट्ठइत्ति, तए णं से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सक्के देविंदे देवराया अण्णेहिं बहूहिं भवणवइ-वाणमंतर-जोइस-वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए जाव णाइयरवेणं ताए उक्किट्ठाए जाव वीईवयमाणे २ जेणेव मंदरे पव्वए जेणेव पंडगवणे जेणेव अभिसेयसिला जेणेव अभिसेयसीहासणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णेत्ति।

शब्दार्थ - पकड्डिज्जमाणे - हाथ में पकड़े हुए, **ओवयमाणे** - अवक्रांत करते हुए, **विग्गहेहिं** - गंतव्य स्थान हेतु गमन क्रम, **ओसोवणिं** - अवस्वापिनी-देवऋद्धि जनित मायामयी निद्रा।

भावार्थ - पालक देव से यान-विमान की विकुर्वणा का संवाद सुनकर शक्रेन्द्र हर्षित यावत् चित्त में आनंदित हुआ। उसने जिनेन्द्र भगवान् के समक्ष जाने योग्य सब प्रकार के दिव्य अलंकारों से विभूषित उत्तर-वैक्रिय रूप की विकुर्वणा की। वैसा कर परिवार सहित आठ इन्द्राणियाँ, नाट्यमण्डलियों, गांधर्व-संगीत प्रवण देव मण्डलियों के साथ यान-विमान की अनुप्रदक्षिणा की। पूर्वदिग्वर्ती तीन सीढियों के रास्ते से विमान में चढ़ा यावत् पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन हुआ। इसी प्रकार सामानिक आदि देव भी उत्तर दिशावर्ती त्रिसोपानमार्ग से होते हुए प्रत्येक अपने-अपने पूर्व वर्णित उत्तम आसनों पर बैठे। बाकी के सभी देव और देवियाँ दक्षिणवर्ती त्रिसोपान मार्ग से होते हुए उसी प्रकार यावत् सिंहासनों पर बैठे।

शक्रेन्द्र के यों विमान में आरूढ़ हो जाने के बाद आठ-आठ मांगलिक द्रव्य यथाक्रम रवाना किए गए। फिर शुभ शकुन के रूप में जलपूर्ण कलश, झारी, चंवर सहित दिव्य छत्र, दिव्य पताका तथा वायु द्वारा उड़ायी जाती दर्शनीय तथा आकाश स्पर्शी विजय वैजयन्ती लिए देवगण यथाक्रम चले।

तत्पश्चात् छत्र, विशिष्ट वर्णकों एवं चित्रों द्वारा विभूषित झारी, वज्ररत्नमय गोलाकार सुन्दर संस्थान युक्त चिकनी, घिसी हुई, तरासी हुई प्रतिमा की तरह सुकोमल, मृदुल, अनेक प्रकार की पंचरंगी सहस्त्रों पताकाओं से विभूषित, सुंदर हवा द्वारा उड़ायी जाती विजय - वैजयन्ती ध्वजा, छत्र और अतिछत्र से सुशोभित, उन्नत, आकाश का स्पर्श करते हुए से शिखर से युक्त एक सहस्त्र योजन उच्च, अतिविशाल, महेन्द्रध्वज यथाक्रम आगे आगे चले।

उसके पश्चात् अपने कार्य के अनुरूप वेश से सुसज्ज सब प्रकार के आभरणों से विभूषित पांच सेनाओं और उनके सेनापतियों ने यावत् प्रस्थान किया। फिर बहुत से आभियोगिक देव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और देवी अपने-अपने रूप यावत् अपने नियोग उपकरणों सहित देवेन्द्र देवराज शक्र के पहले, आगे एवं दोनों पार्श्वों में चले।

इसके बाद सौधर्म कल्पवासी अनेक देव-देवियों ने सब प्रकार की ऋद्धि यावत् वैभव के साथ आरूढ़ होकर देवराज के आगे यावत् प्रस्थान किया।

इस प्रकार देवराज शक्र पांच सेनाओं से घिरे हुए यावत् भरेन्द्र ध्वज हाथ में धारण किए हुए, चौरासी हजार सामानिक देवों सहित यावत् समस्त ऋद्धि वैभव पूर्वक यावत् वाद्यनिनाद के साथ सौधर्मकल्प के ठीक मध्य में से होते हुए दिव्य देवऋद्धि यावत् लोगों द्वारा देखे जाते हुए सौधर्म कल्प के उत्तरवर्ती निर्याण मार्ग - बाहर निकलने के रास्ते पर पहुँचे। वहाँ एक-एक लाख योजन प्रमाण अतिक्रमणोन्मुख गमनक्रम से उत्कृष्ट यावत् देवगति से चलता हुआ असंख्यतिर्यक् द्वीपों एवं समुद्रों के मध्य से होता हुआ, उत्तम नंदीश्वर द्वीप एवं दक्षिण पूर्व दिग्वर्ती रतिकर पर्वत पर आता है। राजप्रश्नीय सूत्र में जैसा सूर्याभदेव का वर्णन है वैसा ही यहाँ वक्तव्य है। अन्तर यह है - शक्रेन्द्र दिव्य देवऋद्धि यावत् यान-विमान का संकोचन करता है यावत् भगवान् तीर्थंकर के जन्म स्थान में उनके भवन में आता है यावत् दिव्य यान-विमान से यावत् भगवान् को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा पूर्वक वंदना करता है। वैसा कर भगवान् तीर्थंकर के जन्म भवन से उत्तर-पूर्व दिशा में धरती से चार अंगुल ऊपर अपने दिव्य विमान को ठहराता है। अपनी आठ प्रधान देवियों तथा गंधर्वों-संगीतकारों एवं नाटककारों की दो सेनाओं-विशाल समूहों के साथ दिव्ययान की पूर्व दिशावर्ती तीन सीढ़ियों से नीचे उतरता है। तदनंतर देवराज शक्र के चौरासी सहस्त्र सामानिक देव उस दिव्य यान-विमान के उत्तरदिशावर्ती त्रिसोपानमार्ग से नीचे उतरते हैं। बाकी अन्य देव और देवियाँ उस दिव्य यान-विमान के दक्षिण दिशावर्ती त्रिसोपानमार्ग से नीचे उतरते हैं।

तदनंतर देवेन्द्र देवराज शक्र चौरासी सहस्त्र सामानिक देव समुदाय से यावत् घिरा हुआ अत्यन्त समृद्धि यावत् नगाड़ों एवं दुंदुभि के निर्घोष सहित भगवान् तीर्थंकर एवं उनकी माता के समीप आता है। देखते ही उन्हें प्रणाम करता है एवं आदक्षिण-प्रदक्षिणा पूर्वक अंजलिबद्ध हाथों को घुमाते हुए उनसे निवेदन करता है। अपनी कुक्षि में तीर्थंकर रूप नररत्न को धारण करने वाली यावत् दिक्कुमारिका देवियों की तरह उसने कहा - 'तुम धन्या, पुण्यशालिनी एवं कृतार्था हो।'

हे देवानुप्रिये! मैं देवेन्द्र, देवराज शक्र भगवान् तीर्थंकर का जन्म महोत्सव समायोजित करने जा रहा हूँ, आप भयभीत मत होना। यों कहकर वह तीर्थंकर की माता को अवस्वापिनी निद्रा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में सुला देता है। फिर वह तीर्थंकर सदृश प्रतिरूपक शिशु की विकुर्वणा करता है। उसे तीर्थंकर की माता के पार्श्व में लिटा देता है। शक्रेन्द्र फिर पांच शक्र विकुर्वित करता है - वह स्वयं पांच शक्रों में परिवर्तित हो जाता है। एक शक्र भगवान् तीर्थंकर को अपने करसंपुट द्वारा गृहीत करता है, दूसरा पीछे छत्र ताने रहता है। दो शक्र दोनों और चंवर डुलाते हैं तथा एक हाथ में वज्र लिए आगे चलता है।

तत्पश्चात् देवेन्द्र, देवराज शक्र दूसरे बहुत से भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिष्क तथा वैमानिक देवों एवं देवियों से संपरिवृत होता हुआ यावत् विपुल वाद्य ध्वनिपूर्वक उत्कृष्ट यावत् देवगति से चलता हुआ-मंदर पर्वत पंडकवन स्थित अभिषेक शिला एवं अभिषेक सिंहासन के निकट आता है। पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन होता है।

ईशान आदि इन्द्रों का आगमन

(१५१)

तेणं कालेणं तेणं समएणं ईसाणे देविंदे देवराया सूलपाणी वसभवाहणे सुरिंदे उत्तरड्ढलोगाहिवई अट्ठावीसविमाणवाससयसहस्साहिवई अरयंबरवत्थधरे एवं जहा सक्के इमं णाणत्तं-महाघोसा घण्टा लहुपरक्कमो पायत्ताणियाहिवई पुप्फओ विमाणकारी दक्खिणे णिज्जाणमग्गे उत्तरपुरत्थिमिल्लो रइकरगपव्वओ मंदरे समोसरिओ जाव पज्जुवासइत्ति, एवं अवसिट्ठावि इंदा भाणियव्वा जाव अच्चुओत्ति, इमं णाणत्तं-

चउरासीइ असीई बावत्तरि सत्तरी य सट्ठी य।
पण्णा चत्तालीसा तीसा वीसा दस सहस्सा॥ १॥
एए सामाणियाणं, बत्तीसट्ठावीसा बारसट्ठ चउरो सय सहस्सा।
पण्णा चत्तालीसा छच्च सहस्सा सहस्सारे॥१॥
आणयपाणय कप्पे चत्तारि सयाऽऽरणच्चुए तिण्णि।
एए विमाणाणं, इमे जाणविमाणकारी देवा, तंजहा -
पालय १ पुप्फे य २ सोमणसे ३ सिरिवच्छे य ४ णंदियावत्ते ५।
कामगमे ६ पीइगमे ७ मणोरमे ८ विमल ९ सव्वओभद्दे १०॥ १॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोहम्मगाणं सणंकुमारगाणं बंभलोयगाणं महासुक्कयाणं पाणयगाणं इंदाणं सुघोसा घण्टा हरिणेगमेसी पायत्ताणीयाहिवई उत्तरिल्ला णिज्जाणभूमी दाहिण-पुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वए।

ईसाणगाणं माहिंदलंतगसहस्सारअच्चुयगाण य इंदाण महाघोसा घण्टा लहुपरक्कमो पायत्ताणीयाहिवई दक्खिणिल्ले णिज्जाणमग्गे उत्तरपुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वए, परिसा णं जहा जीवाभिगमे आयरक्खा सामाणियचउग्गुणा सव्वेसिं जाणविमाणा सव्वेसिं जोयणसयसहस्सविच्छिण्णा उच्चत्तेणं सविमाणप्पमाणा महिंदज्झया सव्वेसिं जोयणसाहस्सिया, सक्कवज्जा मंदरे समोयरंति जाव पज्जुवासंतित्ति।

भावार्थ - उस काल, उस समय हाथ में त्रिशूल लिए हुए, बैल पर सवार, सुरेन्द्र, उत्तरार्द्ध लोकाधिपति, २८ लाख विमानों का अधिनायक आकाश की तरह निर्मल वस्त्र धारण किए हुए, देवेन्द्र, देवराज ईशान मंदर पर्वत पर समवसृत होता है। उसका अन्य सारा वर्णन सौधर्मेन्द्र शक्र के समान है। इतना अन्तर है, उनकी घंटा का नाम महाघोषा है। उनके पैदल सेनानायक देव का नाम लघुपराक्रम एवं विमानकारी देव का नाम पुष्पक है। उसका निर्याण मार्ग - विमान से निकलने का रास्ता दक्षिणवर्ती है। रतिकर पर्वत उत्तर पूर्ववर्ती है यावत् तीर्थंकर का पर्युपासना करने तक का वर्णन पूर्ववत् है।

अच्युतेन्द्र पर्यन्त अवशिष्ट सभी इन्द्र इसी प्रकार आते हैं यावत् सारा वर्णन पूर्व की ज्यों है। उनमें अन्तर यह है - सौधर्मेन्द्र शक्र के चौरासी सहस्र, ईशानेन्द्र के अस्सी सहस्र, सनत्कुमारेन्द्र के बहत्तर सहस्र, माहेन्द्र के सत्तर सहस्र, ब्रह्मेन्द्र के साठ सहस्र, लान्तकेन्द्र के पचास सहस्र, शक्रेन्द्र के चालीस सहस्र, सहस्रारेन्द्र के तीस सहस्र आनत-प्राणत कल्पद्विकेन्द्र (आनत-प्राणत संज्ञक कल्पद्वय के इन्द्र) के बीस सहस्र तथा आरण-अच्युत कल्पद्वयेन्द्र के दस सहस्र सामानिक देव हैं॥ १॥

सौधर्मेन्द्र के बत्तीस लाख, ईशानेन्द्र के अट्ठाईस लाख, सनत्कुमारेन्द्र के बारह लाख, ब्रह्मलोकेन्द्र के चार लाख, लान्तकेन्द्र के पचास सहस्र, शक्रेन्द्र के चालीस सहस्र, सहस्रारेन्द्र के छह सहस्र, आनत-प्राणत कल्पद्वयेन्द्र के चार सौ तथा आरण-अच्युतेन्द्र के तीन सौ विमान होते हैं। यान-विमानों की विकुर्वणा करने वाले देवों के क्रमशः ये नाम हैं - पालक, पुष्पक, सौमनस, श्रीवत्स, नंदावर्त्त, कामगम, प्रीतिगम, मनोरम, विमल एवं सर्वतोभद्र।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सौधर्मेन्द्र, सनत्कुमारेन्द्र, ब्रह्मलोकेन्द्र, महाशक्रेन्द्र एवं प्राणकेन्द्र की सुघोषा घंटा, हरिनिगमेषी पदाति सेनापति उत्तरवर्ती निर्याणमार्ग तथा दक्षिणपूर्ववर्ती रतिकर पर्वत हैं।

ईशानेन्द्र, माहेन्द्र, लांतकेन्द्र, सहस्रारेन्द्र एवं अच्युतेन्द्र की महाघोषा घण्टा, लघुपराक्रम पदाति सेनाधिपति, दक्षिणवर्ती निर्याण मार्ग एवं उत्तर पूर्ववर्ती रतिकर पर्वत है।

इन इन्द्रों की परिषदों के सम्बन्ध में वैसा ही वर्णन है, जैसा जीवाभिगम सूत्र में आया है। इन्द्रों के जितने-जितने सामानिक देव होते हैं, अंगरक्षक देव उनसे चार गुने अधिक होते हैं। सबके यान-विमान एक-एक लाख योजन विस्तारयुक्त होते हैं तथा उनकी ऊंचाई अपने विस्तार के अनुरूप होती है। सबके महेन्द्र ध्वज एक-एक योजन विस्तार युक्त होते हैं। शक्र के अतिरिक्त सब मंदर पर्वत पर समवसृत होते हैं यावत् भगवान् तीर्थंकर की पर्युपासना करते हैं।

चमरेन्द्र आदि का आगमन

(१५२)

तेणं कालेणं तेणं समएणं चमरे असुरिंदे असुरराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसेहिं चउहिं लोगपालेहिं पंचहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं तिहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं चउहिं चउसट्ठीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अण्णेहि य जहा सक्के णवरं इमं णाणत्तं - दुमो पायत्ताणीयाहिवई ओघस्सरा घण्टा विमाणं पण्णासं जोयणसहस्साइं महिंदज्झओ पंचजोयणसयाइं विमाणकारी आभिओगिओ देवो अवसिट्ठं तं चेव जाव मंदरे समोसरइ पज्जुवासइत्ति।

तेणं कालेणं तेणं समएणं बली असुरिंदे असुरराया एवमेव णवरं सट्ठी सामाणिय-साहस्सीओ चउग्गुणा आयरक्खा महादुमो पायत्ताणीयाहिवई महाओहस्सरा घण्टा सेसं तं चेव परिसाओ जहा जीवाभिगमे।

तेणं कालेणं तेणं समएणं धरणे तहेव णाणत्तं-छसामाणियसाहस्सीओ छअग्गमहिसीओ चउग्गुणा आयरक्खा मेघस्सरा घण्टा भद्दसेणो पायत्ताणीयाहिवई विमाणं पणवीसं जोयणसहस्साइं महिंदज्झओ अड्ढाइज्जाइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोयणसयाइं एवमसुरिंदवज्जियाणं भवणवासिइंदाणं, णवरं असुराणं ओघस्सरा घण्टा णागाणं मेघस्सरा सुवण्णाणं हंसस्सरा विज्जूणं कोंचस्सरा अग्गीणं मंजुस्सरा दिसाणं मंजुघोसा उदहीणं सुस्सरा दीवाणं महुरस्सरा वाउणं णंदिस्सरा थणियाणं णंदिघोसा।

चउसट्ठी सट्ठी खलु छच्च सहस्सा उ असुरवज्जाणं।
सामाणिया उ एए चउग्गुणा आयरक्खा उ॥ १॥

दाहिणिल्लाणं पायत्ताणीयाहिवई भद्दसेणो उत्तरिल्लाणं दक्खोत्ति। वाणमंतरजोइसिया णेयव्वा, एवं चेव, णवरं चत्तारि सामाणियसाहस्सीओ चत्तारि अग्गमहिसीओ सोलस आयरक्खसहस्सा विमाणा सहस्सं महिन्दज्झया पणवीसं जोयणसयं घण्टा दाहिणाणं मंजुस्सरा उत्तराणं मंजुघोसा पायत्ताणीयाहिवई विमाणकारी य आभिओगा देवा जोइसियाणं सुस्सरा सुस्सरणिग्घोसाओ घण्टाओ मंदरे समोसरणं जाव पज्जुवासंतित्ति।

भावार्थ - उस काल, उस समय चमरचंचा राजधानी के अन्तर्गत, सुधर्मा सभा में चमर नामक सिंहासन पर अवस्थित असुरेन्द्र, असुरराज चमर अपने चौसठ हजार सामानिक देवों, तैंतीस त्रायस्त्रिंश देवों, चार लोकपालों, सपरिवार पाँच प्रधान देवियों, तीन परिषदों, सात सेनाओं, सात अनीकाधिपति देवों से घिरा हुआ, सौधर्मेन्द्र शक्र की ज्यों आता है। इतना अन्तर है - उसके पैदल सेनाधिपति का नाम द्रुम है। उसकी घंटा का नाम ओघस्वरा है। उसका विमान पचास हजार योजन विस्तार युक्त है। महेन्द्र ध्वज का विस्तार ५०० योजन है। विमानकारी आभियोगिक देव हैं। अवशिष्ट समस्त वर्णन पूर्वानुरूप है यावत् वह मंदर पर्वत पर आता है, पर्युपासना करता है।

उस काल, उस समय असुरेन्द्र, असुरराज बलि उसी प्रकार मंदर पर्वत पर उपस्थित होता है। इतना अन्तर है-उसके सामानिकदेव साठ सहस्त्र हैं, आत्म रक्षक देव उनसे चार गुने हैं। पैदल सेना के अधिपति का नाम महाद्रुम है। घंटा का नाम महोघस्वरा है। अवशिष्ट परिषद् आदि विषयक वर्णन जीवाभिगम सूत्र के अनुसार है।

उसी तरह धरणेन्द्र के आने का वृत्तान्त है। इतना अन्तर है-उसके सामानिक देव छह सहस्त्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। प्रधान देवियाँ छह हैं। अंगरक्षक देव सामानिक देवों से चार गुने हैं। घंटा का नाम मेघस्वरा है। पदाति सेनानायक का नाम भद्रसेन है। इसके विमान का विस्तार पच्चीस सहस्त्र योजन है। उसका महेन्द्र ध्वज अढाई सौ योजन विस्तीर्ण है। असुरेन्द्र रहित सभी भवनवासी इन्द्रों का ऐसा ही वर्णन है। इतना अन्तर है - असुरकुमारों, नागकुमारों, सुपर्णकुमारों, विद्युतकुमारों, अग्निकुमारों, दिक्कुमारों, उदधिकुमारों, द्वीपकुमारों तथा वायुकुमारों की घंटाएं क्रमशः ओघस्वरा, मेघस्वरा, हंसस्वरा, क्रौंचस्वरा, मंजुस्वरा, मंजुघोसा, सुस्वरा, मधुरस्वरा, नंदिस्वरा, नंदिघोषा हैं।

चमरेन्द्र के चौसठ तथा बलीन्द्र के साठ सहस्त्र सामानिक देव हैं। असुरेन्द्रों को छोड़कर धरणेन्द्र आदि अठारह भवनवासी देवों के छह-छह सहस्त्र सामानिक देव हैं। उनके अंग रक्षक देव सामानिक देवों से चार गुने हैं।

चमरेन्द्र को छोड़कर दक्षिण दिशावर्ती भवनपति इन्द्रों के भद्रसेन नामक पदाति सेनापति हैं। बलीन्द्र को छोड़कर उत्तर दिशावर्ती भवनपति इन्द्रों के दक्ष नामक पदाति सेनापति है। वानव्यंतरेन्द्रों तथा ज्योतिष्केन्द्रों का वृत्तान्त पूर्ववत् ग्राह्य है। इतना अन्तर है - उनके चार-चार सहस्त्र सामानिक देव चार-चार प्रमुख देवियाँ एवं सोलह-सोलह सहस्त्र अंगरक्षक देव हैं। उनके विमान एक-एक सहस्त्र योजन विस्तार युक्त हैं। दक्षिण दिशावर्ती देवों की मंजुस्वरा संज्ञक घंटाएं हैं। उनके पदाति सेनापति तथा विमानकारी देव 'आभियोगिक देव' हैं। ज्योतिष्क देवों-चन्द्रों एवं सूर्यों की क्रमशः सुस्वरा एवं सुस्वर निर्घोषा घंटाएं हैं। ये मंदर पर्वत पर आते हैं यावत् पर्युपासना करते हैं।

अभिषेक द्रव्यों का आनयन

(१५३)

तए णं से अच्चुए देविंदे देवराया महं देवाहिवे आभिओगे देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! महत्थं महग्घं महरिहं विउलं तित्थयराभिसेयं उवट्ठवेह।

तए णं ते आभिओगा देवा हट्ठतुट्ठ जाव पडिसुणित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति २ त्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं जाव समोहणित्ता अट्ठसहस्सं सोवण्णिय-कलसाणं एवं रुप्पमयाणं मणिमयाणं सुवण्णरुप्पमयाणं सुवण्णमणिमयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रुप्पमणिमयाणं सुवण्णरुप्पमणिमयाणं अट्ठसहस्सं भोमिज्जाणं अट्ठसहस्सं चंदणकलसाणं एवं भिंगाराणं आयंसाणं थालाणं पाईणं सुपइट्ठगाणं चित्ताणं रयणकरंडगाणं वायकरगाणं पुप्फचंगेरीणं, एवं जहा सूरियाभस्स सव्वचंगेरीओ सव्वपडलगाइं विसेसियतराइं भाणियव्वाइं सीहासणछत्तचामर-तेल्लसमुग्गा जाव सरिसवसमुग्गा तालियंटा जाव अट्ठसहस्सं कडुच्छुयाणं विउव्वंति विउव्वित्ता साहाविए वेउव्विए य कलसे जाव कडुच्छुए य गिण्हित्ता जेणेव खीरोदए समुद्दे तेणेव आगम्म खीरोदगं गिण्हंति २ त्ता जाइं तत्थ उप्पलाइं पउमाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं गिण्हंति, एवं पुक्खरोदाओ जाव भरहेरवयाणं मागहाइ-तित्थाणं उदगं मट्टियं च गिण्हंति २ त्ता एवं गंगाईणं महाणईणं जाव चुल्लहिम-वंताओ सव्वतुवरे सव्वपुप्फे सव्वगंधे सव्वमल्ले जाव सव्वोसहीओ सिद्धत्थए य गिण्हंति २ त्ता पउमद्दहाओ दहोदगं उप्पलाईणि य०, एवं सव्वकुलपव्वएसु वट्टवेयड्ढेसु सव्वमहद्दहेसु सव्ववासेसु सव्वचक्कवट्टिविजएसु वक्खारपव्वएसु अंतरणईसु विभासिज्जा जाव उत्तरकुरुसु जाव सुदंसणभद्दसालवणे सव्वतुवरे जाव सिद्धत्थए य गिण्हंति, एवं णंदणवणाओ सव्वतुवरे जाव सिद्धत्थए य सरसं च गोसीचंदणं दिव्वं च सुमणदामं गेण्हंति, एवं सोमणसपंडगवणाओ य सव्वतुवरे जाव सुमणदामं दद्दरमलयसुगंधे य गिण्हंति २ त्ता एगओ मिलंति २ त्ता जेणेव सामी तेणेव उवागच्छंति २ त्ता महत्थं जाव तित्थयराभिसेयं उवट्ठवेंतित्ति।

शब्दार्थ - **महत्थ** - महार्थ-मणि, स्वर्ण रत्नादिमय, **महग्घं** - महार्घ-बहुमूल्य सामग्री, **महरिहं** - महार्ह-विराट उत्सवोपयोगी, **आगम्म** - आकर, **तुवर** - आंवला आदि कषैले पदार्थ, **सिद्धत्थए** - सफेद सरसों।

भावार्थ - देवेन्द्र, देवराज, महान् देवाधिप अच्युत अपने आभियोगिक देवों को बुलाता है, आदेश देता है - हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही उत्सवोपयोगी महत्त्वपूर्ण, बहुमूल्य, विपुल, तीर्थंकराभिषेक योग्य सामग्री लाओ। यह सुनकर आभियोगिक देव बड़े हर्षित, परितुष्ट होते हैं यावत् आज्ञा शिरोधार्य कर उत्तर-पूर्व दिशा भाग में जाते हैं, वैक्रिय समुद्घात द्वारा आत्मप्रदेशों को प्रतिनिष्क्रांत करते हैं यावत् १००८ स्वर्ण के, १००८ चांदी के, १००८ रत्नों के, १००८

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोने व चांदी दोनों के, १००८ स्वर्ण-मणिमय, १००८ चांदी और रत्नों के, १००८ सोने-चांदी-रत्न निर्मित, १००८ मृतिकामय, १००८ चंदन चर्चित मंगल कलश, १००८ झारियाँ, १००८ दर्पण, १००८ छोटे पात्र, १००८ सुप्रतिष्ठक - प्रसाधन मंजूषाएं, १००८ रत्नकरंडिकाएं, १००८ रिक्तकरवे, १००८ फूलों की टोकरियाँ तथा राजप्रश्नीय सूत्र में सूर्याभदेव के प्रसंग में गृहीत सब प्रकार की टोकरियाँ, पुष्पपटल-गुच्छे आदि यहाँ विशेष रूप से विकुर्वित करते हैं।

१००८ सिंहासन, छत्र, चंवर, तेल, समुद्गर्मक - तेल पात्र यावत् १००८ सरसों के पात्र, पंखे यावत् १००८ धूप के कुड़छों की विकुर्वणा करते हैं तत्पश्चात् स्वाभाविक एवं विकुर्वित कलशों से यावत् धूपदान तक सारी वस्तुएं लेकर क्षीरोदक समुद्र के पास आते हैं, क्षीरोदक ग्रहण करते हैं। फिर उत्पल, पद्म यावत् सहस्त्रपत्र कमल लेते हैं, पुष्करोद समुद्र से जल लेते हैं यावत् भरत-ऐरावत क्षेत्र के मागध आदि तीर्थों का जल एवं मिट्टी लेते हैं, गंगा आदि महानदियों का जल लेते हैं यावत् चुल्लहिमवान् पर्वत से आमलक आदि काषायिक द्रव्य, सब प्रकार के पुष्प, सुगंधित पदार्थ सर्वविध मालाएं, यावत् सर्वविध औषधियाँ एव सफेद सरसों लेते हैं। वैसा कर पद्मद्रह से उसका जल एवं कमल आदि लेते हैं। इसी प्रकार समस्त कुल पर्वतों - समस्त क्षेत्रों को विभक्त करने वाले हिमवान आदि पर्वतों, वृत्तवैताढ्य पर्वतों, पद्म आदि समस्त महाद्रहों, भरत आदि समस्त क्षेत्रों, कच्छ आदि चक्रवर्ती विजयों, माल्यवान् आदि वक्षस्कार पर्वतों ग्राहावती आदि अन्तर्नदियों से तद्-तद् विशिष्ट द्रव्य लेते हैं यावत् उत्तरकुरु से यावत् सुदर्शन पूर्वार्द्ध मेरु के भद्रशाल वन पर्यन्त सभी स्थानों से समस्त कषाय द्रव्य यावत् सफेद सरसों लेते हैं। इसी तरह नंदनवन के सभी तरह के कषायद्रव्य यावत् श्वेत सरसों, सरसगोशीर्ष चंदन तथा दिव्य पुष्प मालाएं लेते हैं। इसी तरह सौमनस एवं पंडकवन से सर्वकषाय द्रव्य यावत् पुष्पमालाएं एवं दर्दर-सघन, सुरभिमय चंदन कल्क तथा मलय पर्वत के सुगंधित द्रव्य ग्रहण करते हैं, परस्पर मिलते हैं तथा भगवान् तीर्थंकर के पास आते हैं। वहाँ आकर महत्त्वपूर्ण यावत् तीर्थंकर अभिषेक हेतु प्रयोज्य पदार्थ अच्युतेन्द्र के समक्ष उपस्थापित करते हैं।

अभिषेक समारोह

(१५४)

तए णं से अच्चुए देविंदे देवराया दसहिं सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तायत्तीसएहिं चउहिं लोगपालेहिं तिहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं चत्तालीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीहिं सद्धिं संपरिवुडे तेहिं साभाविएहिं वेउव्विएहि य वरकमलपइट्ठाणेहिं सुरभिवरवारिपडिपुण्णेहिं चंदण-कयचच्चाएहिं आविद्धकण्ठेगुणेहिं पउमुप्पलपिहाणेहिं करयलसुकुमालपरिग्गहिएहिं अट्ठसहस्सेणं सोवण्णियाणं कलसाणं जाव अट्ठसहस्सेणं भोमेज्जाणं जाव सव्वोदएहिं सव्वमट्टियाहिं सव्वतुवरेहिं जाव सव्वोसहिसिद्धत्थएहिं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया २ तित्थयराभिसेएणं अभिसिंचइ, तए णं सामिस्स महया २ अभिसेयंसि वट्टमाणंसि इंदाइया देवा छत्तचामर-धूवकडुच्छुए-पुप्फगंध जाव हत्थगया हट्ठतुट्ठ जाव वज्जसूलपाणी पुरओ चिट्ठंति पंजलिउडा इति, एवं विजयाणुसारेण जाव अप्पेगइया देवा आसियसंमज्जिओवलित्तसित्तसुइसम्मट्ठरत्थं-तरावणवीहियं करेंति जाव गंधवट्टिभूयंति, अप्पेग० हिरण्णवासं वासिंति एवं सुवण्णरयण-वइर-आभरण-पत्तपुप्फफल - बीय-मल्ल-गंधवण्ण जाव चुण्णवासं वासंति, अप्पेगइया हिरण्णविहिं भाइंति एवं जाव चुण्णविहिं भाइंति, अप्पेगइया चउव्विहं वज्जं वाएंति, तंजहा-ततं १ विततं २ घणं ३ झुसिरं ४ अप्पेगइया चउव्विहं गेयं गायंति, तंजहा-उक्खित्तं १ पायत्तं २ मंदाइयं ३ रोइयावसाणं ४ अप्पेगइया चउव्विहं णट्टं णच्चंति, तंजहा-अंचियं १ दुयं २ आरभडं ३ भसोलं ४ अप्पेगइया चउव्विहं अभिणयं अभिणएंति, तंजहा-दिट्ठंतियं पडिस्सुइयं सामण्णोवणिवाइयं लोगमज्झावसाणियं, अप्पेगइया बत्तीसइविहं दिव्वं णट्टविहिं उवदंसेंति, अप्पेगइया उप्पयणिवयं णिवयउप्पयं संकुचियपसारियं जाव भंतसंभंतणामं दिव्वं णट्टविहिं उवदंसंतीति,अप्पेगइया तंडवेंति अप्पेगइया लासेंति।

अप्पेगइया पीणेंति, एवं बुक्कारेंति अप्फोडेंति वग्गंति सीहणायं णदंति अप्पे० सव्वाइं करेंति, अप्पे० हयहेसियं एवं हत्थिगुलुगुलाइयं रहघणघणाइयं अप्पे० तिण्णिवि, अप्पे० उच्छोलंति अप्पे० पच्छोलंति अप्पे० तिवइं छिंदंति पायदद्दरयं करेंति भूमिचवेडे दलयंति अप्पे० महया २ सद्देणं रवेंति एवं संजोगावि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भासियव्वा, अप्पे० हक्कारेंति, एवं पुक्कारेंति थक्कारेंति ओवयंति उप्पयंति परिवयंति जलंति तवंति पयवंति गज्जंति विज्जुयायंति वासिंति....., अप्पेगइया देवुक्कलियं करेंति एवं देवकहकहगं करेंति अप्पे० दुहुदुहुगं करेंति अप्पे० विकियभूयाइं रूवाइं विउव्वित्ता पणच्चंति एवमाइ विभासेज्जा जहा विजयस्स जाव सव्वओ समंता आधावेंति परिधावेंतित्ति।

शब्दार्थ - भाइति - भेंट करते हैं, **तिवई** - त्रिपदिं-पैंतरे बदलते हैं।

भावार्थ - जब अभिषेक योग्य समस्त सामग्री लाई जा चुकी तब देवराज देवेन्द्र, अच्युत अपने दस सहस्त्र सामानिक देवों, तैंतीस त्रायस्त्रिंश देवों, चार लोकपालों, तीन परिषदों, सात सेनाओं, सात सेनानायकों एवं चालीस सहस्त्र अंगरक्षक देवों से घिरा हुआ, स्वाभाविक एवं विक्रिया जनित उत्तम कमलों पर रखे हुए, सुगंधित उत्तम जल से आपूर्ण, चंदन-चर्चित गलवे (ऊपरी भाग) में मोली बांधे हुए, कमलों-उत्पलों से ढके हुए, करसंपुटों से उठाए हुए १००८ स्वर्ण कलशों यावत् १००८ मिट्टी के कलशों यावत् सब प्रकार के जल, मृतिकाओं, काषायिक द्रव्यों यावत् सब प्रकार की औषधियों एवं सफेद सरसों द्वारा सब प्रकार की ऋद्धि वैभव यावत् तुमुल वाद्य निनादपूर्वक भगवान् तीर्थंकर का महान् अभिषेक करता है।

अच्युतेन्द्र द्वारा अभिषेक किए जाते समय अत्यन्त हर्ष एवं प्रसन्नता के साथ अन्य इन्द्र आदि देव छत्र, चंवर, धूपदान, पुष्पगंध युक्त पदार्थ यावत् इन्हें हाथों में लिए परितोष पूर्वक यावत् वज्र त्रिशूल हाथ में लिए हुए, हाथ जोड़े खड़े रहते हैं। इससे सम्बन्धित वर्णन जीवाभिगम सूत्र में आए हुए विजय देव के अभिषेक वृत्तांत के सदृश है यावत् कतिपय देव वहाँ जल का छिड़काव करते हैं, सम्मार्जन करते हैं, उपलिप्त करते हैं।

यों उसे पवित्र एवं उत्तम बनाकर सभी गलियों को बाजार की तरह स्वच्छ बना देते हैं यावत् वह स्थान गंधवर्तिका की तरह महक से गमगमा उठता है।

कतिपय-कतिपय देव चाँदी, सुवर्ण हीरे, आभूषण, पत्र, पुष्प, फल, बीज, मालाएं, सुगंधित द्रव्य, हिंगुल यावत् सुगंधित पदार्थों का चूर्ण बरसाते हैं। कुछेक मांगलिक द्रव्य स्वरूप चांदी के प्रतीक भेंट करते हैं यावत् कई सुगंधित पदार्थों का चूर्ण भेंट करते हैं। कुछ चार प्रकार के वाद्य बजाते हैं-यथा १. तंतुवाद्य, वीणा आदि २. वितत - ढोल, मृदंग आदि ३. घन - नगाड़े आदि ४. सुषिर - बांसुरी आदि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कतिपय देव उत्क्षिप्त - प्रारंभिक प्रयोगमय, पादात्र, पादबद्ध, मंदायतिक - बीच-बीच में मूर्च्छना आदि के प्रयोग के कारण मंदता युक्त तथा रोचितावसान - यथोचित लक्षण युक्त, आदि - अंत संगत गीत प्रस्तुत करते हैं।

कतिपय अञ्चित, द्रुत, आरभट एवं भसोल संज्ञक नृत्य विद्याओं में नाचते हैं। कई चार प्रकार की दार्ष्टान्तिक प्रातिश्रुतिक, सामन्यतोविनिपातिक एवं लोक मध्यावसानिक - ये चार प्रकार की अभिनय विद्याएं प्रस्तुत करते हैं। कई बत्तीस प्रकार की दिव्य नाट्य विधि का प्रदर्शन करते हैं। कई उत्पात-निपात, निपात-उत्पात, संकुचित-प्रसारित यावत् भ्रांत-सभ्रांत नामक दिव्य नाट्यविधि को उपदर्शित करते हैं।

कुछेक तांडव-प्रोद्धत कई लास्य-सुकोमल नृत्य करते हैं। कुछ अपने को स्थूल बनाते हैं, कुछेक उच्च स्वर से तेज आवाज करते हैं आस्फालन-बैठते हुए भूमि का स्पर्श करते हैं, वल्गन-मल्लों की तरह परस्पर भीड़ जाते हैं, सिंहनाद करते हैं। कुछ इन तीनों को एक साथ करते हैं। कई घोड़ों की तरह हिनहिनाते हैं, गजों की तरह मंद-मंद स्वर से चिंघाड़ते हैं, रथों की तरह गड़गड़ाहट करते हैं, कुछ क्रमशः तीनों करते हैं।

कई आगे की ओर तथा कई पीछे की ओर उछलते हैं। कुछेक पैंतरे बदलते हैं, कई पैर भूमि पर पटकते हैं, भूमि को रौंदते हैं, जोर-जोर से आवाजे करते हैं, इस प्रकार इन सभी क्रियाओं के समवेत रूप भी यहाँ कहे गए हैं।

कतिपय हुंकार करते हैं, पुकारते हैं, मुंह से थक्-थक् की आवाजे करते हैं, अवपतित होते हैं, ऊपर उछलते हैं, तिरछे गिरते हैं, स्वयं को ज्वालामय रूप में दिखलाते हैं, गर्जन करते हैं, तीव्र अंगारों से तप्त दिखलाते हैं, विद्युत की तरह द्युतिमय होते हैं, वर्षा के रूप में परिणत होते हैं...।

कुछेक उत्कलित-वातूल की तरह चक्कर लगाते हैं। कई अत्यन्त आनंद पूर्ण स्वर में कह-कहाहट करते हैं। कई उल्लासवश दुहु-दुहु की ध्वनि करते हैं, कुछ लटकते होंठ, मुंह खोले, आंखें फाड़ें भूत-प्रेत आदि जैसे रूप की विकुर्वणा करते हैं, तेजी से नाचते हैं। इस प्रकार के विविध प्रकार से नाट्यादि विधि का प्रदर्शन करते हैं। शेष वर्णन विजय देव के वर्णन के अनुरूप यहाँ ज्ञातव्य है यावत् सब चारों और आधावण - प्रधावन करते हैं - इधर-उधर विभिन्न रूप में दौड़ लगाते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभिषेक-समायोजन

(१५५)

तए णं से अच्चुइंदे सपरिवारे सामिं तेणं महया महया अभिसेएणं अभिसिंचइ २ त्ता करयलपरिग्गहियं जाव मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ २ त्ता ताहिं इट्ठाहिं जाव जयजयसद्दं पउंजइ पउंजित्ता जाव पम्हलसुकुमालाए सुरभीए गंधकासाईए गायाइं लूहेइ २ त्ता एवं जाव कप्परुक्खगंपिव अलंकियविभूसियं करेइ २ त्ता जाव णट्टविहिं उवदंसेइ २ त्ता अच्छेहिं सण्हेहिं रययामएहिं अच्छरसातंदुलेहिं भगवओ सामिस्स पुरओ अट्ठट्ठ मंगलगे आलिहइ, तंजहा-

दप्पण भद्दासण वद्धमाण वरकलस मच्छ सिरिवच्छा, सोत्थिय णंदावत्ता लिहिया अट्ठट्ठ मंगलगा॥१॥

लिहिऊण करेइ उवयारं किं ते? पाडल-मल्लिय-चंपगसोगपुण्णाग-चूयमंजरि-णवमालिय-बउल-तिलय-कणवीर-कुंद-कुज्जग-कोरंटपत्त-दमणगवरसुरभिगंधगंधियस्स कयग्गहगहिय करयलपब्भट्ठविप्पमुक्कस्स दसद्धवण्णस्स कुसुमणियरस्स तत्थचित्तं जाणुस्सेहपमाणमित्तं ओहिणिकरं करेइ २ त्ता चंदप्पभरयणवइरवेरुलियविमलदंडं कंचणमणिरयणभत्तिचित्तं कालागुरु-पवरकुंदरुक्क-तुरुक्कधूवगंधूत्तमाणुविद्धं च धूमवट्टिं विणिम्मुयंतं वेरुलियमयं कडुच्छुयं पग्गहित्तु पयएणं धूवं दाऊण जिणवरिंदस्स सत्तट्ठपयाइं ओसरित्ता दसंगुलियं अंजलिं करिय मत्थयंसि पयओ अट्ठसयविसुद्धगंथजुत्तेहिं महावित्तेहिं अपुणरुत्तेहिं अत्थजुत्तेहिं संथुणइ २ त्ता वामं जाणुं अंचेइ २ त्ता जाव करयल-परिग्गहियं० मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-णमोऽत्थु ते सिद्ध-बुद्ध-णीरय-समण-समाहिय-समत्त-समजोगि-सल्लगत्तण-णिब्भय-णीराग-दोसणिम्मम-णिस्संग-णीसल्ल-माणमूरण-गुणरयण-सीलसागर-मणंत-मप्पमेयभविय-धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी णमोऽत्थु ते अरहओत्तिकट्टु एवं वंदइ णमंसइ वं० २ त्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे जाव पज्जुवासइ, एवं जहा अच्चुयस्स तहा जाव ईसाणस्स भाणियव्वं, एवं भवणवइवाणमंतर जोइसिया य सूरपज्जवसाणा सएणं २ परिवारेणं पत्तेयं २ अभिसिंचंति।

तए णं से ईसाणे देविंदे देवराया पंच ईसाणे विउव्वइ २ त्ता एगे ईसाणे भगवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं गिण्हइ २ त्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे एगे ईसाणे पिट्ठओ आयवत्तं धरेइ, दुवे ईसाणा उभओ पासिं चामरुक्खेवं करेंति एगे ईसाणे पुरओ सूलपाणी चिट्ठइ।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया आभिओगे देवे सद्दावेइ २ त्ता एसोवि तह चेव अभिसेयाणत्तिं देइ तेऽवि तह चेव उवणेंति, तए णं से सक्के देविंदे देवराया भगवओ तित्थयरस्स चउद्दिसिं चत्तारि धवलवसभे विउव्वइ सेए संखदल-विमल-णिम्मल-दधिघण-गोखीर-फेणरयय-णिगरप्पगासे पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे, तए णं तेसिं चउण्हं धवलवसभाणं अट्ठाहिं सिंगेहिंतो अट्ठ तोयधाराओ णिग्गच्छंति, तए णं ताओ अट्ठ तोयधाराओ उड्ढं वेहासं उप्पयंति २ त्ता एगओ मिलायंति २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स मुद्धाणंसि णिवयंति। तए णं से सक्के देविंदे देवराया चउरासीईए सामाणियसाहस्सीहिं एयस्सवि तहेव अभिसेओ भाणियव्वो जाव णमोऽत्थु ते अरहओत्तिकट्टु वंदइ णमंसइ जाव पज्जुवासइ।

शब्दार्थ - **पउंजंति** - प्रयुक्त करते हैं, **लिहिऊण** - आलेखन करता है, **जाणुस्सेहपमाणमित्त** - घुटने के प्रमाण तुल्य, **णिकर** - समूह, **पग्गहित्तु** - पकड़ कर, **पयएणं** - प्रयत्नेन - सावधानी पूर्वक, **अपुणरुत्तेहिं** - पुनरुक्ति रहित, **संथुणइ** - संस्तुति करता है, **णीरज** - कर्मरज रहित, **वेहासं** - आकाश।

भावार्थ - परिवार सहित अच्युतेन्द्र विशाल वृहद् अभिषेक सामग्री द्वारा भगवान् तीर्थंकर का अभिषेक करता है। वैसा कर वह हाथ जोड़ता है, अंजलि बांधे हाथों को मस्तक पर ले जाता है यावत् जय-विजय शब्दों द्वारा उन्हें वर्धापित करता है यावत् जय-विजय शब्दों को पुनः प्रयुक्त करता है यावत् रौंएदार कोमल कसैले (त्रिफला आदि के धुएं से सुवासित) वस्त्र से भगवान के शरीर का प्रोंछन करता है यावत् उन्हें कल्पवृक्ष की तरह अलंकृत, विभूषित करता है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यावत् नाट्य विधि दिखलाता है, उज्ज्वल, श्लक्ष्ण-चिकने, रजतमय, उत्तम रसयुक्त चावलों से भगवान् के आगे आठ-आठ मंगल प्रतीकों का आलेखन करता है। वे हैं - दर्पण, भद्रासन, वर्द्धमान, उत्तमकलश, मत्स्य, श्रीवत्स, स्वस्तिक एवं नंद्यावर्त॥१॥

इनका आलेखन कर, पूजा विधि संपादित करता है। गुलाब, मल्लिका, चंपक, अशोक, पुन्नाग, आम्रमंजरी, नवमल्लिका, नकुल, तिलक, कनेर, कंद, कुब्जग कोरंट पत्रक तथा दमनक के उत्तम, सुरभि युक्त पुष्पों को कचग्रह-प्रियतम द्वारा प्रेयसी के केशों को कोमलता पूर्वक ग्रहण किए जाने की तरह कोमलता पूर्वक पुष्पों को हाथ में लेता है तथा केशपाश से गिरते पुष्पों की तरह अच्युतेन्द्र के हाथों से ये धीरे-धीरे (भगवान् के चरणों में) गिरते हैं। इस प्रकार पंचरंगे पुष्पों का जानु प्रमाण जितना ढेर लग जाता है। चन्द्रकांत आदि रत्न, हीरे एवं नीलम से निर्मित चमकीले दण्ड युक्त स्वर्ण, मणि एवं रत्नमय चित्रांकित काले अगर, श्रेष्ठ कुंदरुक्क, लोबान तथा धूप से निकलती धुएं की लहर छोड़ते हुए नीलम निर्मित धूपदान को पकड़ कर सावधानी से धूप देता है। जिनेश्वर देव के सम्मुख-सात-आठ कदम चल कर, अंजलिबद्ध हाथों को मस्तक से लगाकर सस्वर, अर्थ युक्त १०८ महावृत्तों - छन्दबद्ध कविताओं द्वारा उनकी संस्तुति करता है। फिर अपना बायां घुटना ऊँचा करता है यावत् हाथ जोड़कर अंजलि बांधकर मस्तक पर लगाता है एवं कहता है - सिद्धगति पाने की दिशा में समुद्यत, ज्ञान तत्त्व, कर्मरूप, रज से रहित, श्रमण-तपश्चरण रूप श्रम में निरत, समाधि युक्त, कृतकृत्य, समयोगी - मनो वाक् काय योगों के समत्व से युक्त, शल्यकर्त्तन - कर्मरूपी कांटों को विध्वस्त करने वाले निर्भय, राग-द्वेष विवर्जित, ममत्व रहित, आसक्ति शून्य निःशल्य - अन्तर्द्वन्द्व रहित, अहंकार का मर्दन करने वाले, गुण-रत्न-शील ब्रह्मचर्य के समुद्र, अखण्ड ब्रह्मचारी अनंत, अप्रमेय - अपरिमित ज्ञान गुण समायुक्त, भावी चातुरंत चक्रवर्ती - चारों गतियों पर विजय प्राप्त करने वाले, उनका अन्त करने वाले धर्मचक्र के संप्रवर्त्तक, अर्हत्-परम गुणोत्कर्ष से जगत्पूज्य अथवा कर्मरिपुओं के आप नाशक हैं, इन शब्दों में वह भगवान् का वंदन, नमन करता है। उनसे न अधिक दूर न अधिक निकट समुचित दूरी पर स्थित होता हुआ यावत् सुश्रूषा, पर्युपासना करता है।

अच्युतेन्द्र की ही तरह ईशानेन्द्र का वर्णन यहाँ योजनीय है। इसी प्रकार भवनपति, वाणव्यंतर एवं चन्द्र, सूर्य आदि ज्योतिष्क देव भी अपने-अपने परिवारों के साथ अभिषेक कृत्य निष्पादित करते हैं।

तदनंतर देवेन्द्र, देवराज ईशानेन्द्र वैक्रियलब्धि द्वारा पांच ईशानेन्द्रों की विकुर्वणा करता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक ईशानेन्द्र भगवान् को करसंपुटों द्वारा गृहीत करता है, पूर्वाभिमुख होकर सिंहासनासीन करता है, दूसरा पीछे छत्र धारण किए रहता है। दो ईशानेन्द्र दोनों पार्श्वों में चंवर डुलाते हैं। अन्य हाथ में त्रिशूल धारण किए आगे खड़ा रहता है। फिर देवेन्द्र देवराज शक्र अपने आभियोगिक देवों को आहूत करता है, उन्हें अच्युतेन्द्र की तरह अभिषेक सामग्री लाने का आदेश देता है। वे उसी प्रकार सामग्री उपस्थापित करते हैं।

तत्पश्चात् देवेन्द्र, देवराज शक्र चारों दिशाओं में चार श्वेत वृषभों की विकुर्वणा करता है। जो शंख के चूर्ण, जमे हुए दधिपिण्ड, गोदुग्ध के झाग, चन्द्र ज्योत्स्ना के समान श्वेत, विमल, निर्मल, चित्तप्रसादक, दर्शनीय मनोज्ञ और प्रतिरूप हैं। उन चारों वृषभों के आठ सींगों में से आठ जल-धाराएं निःसृत होती हैं, जो ऊपर आकाश में जाती हैं तथा परस्पर मिलकर एक हो जाती हैं एवं भगवान् तीर्थंकर के मस्तक पर गिरती है। अपने चौरासी सहस्त्र सामानिक आदि देव परिवार से घिरा हुआ देवेन्द्र देवराज शक्र भगवान् तीर्थंकर का अभिषेक करता है, जिसका वर्णन पूर्ववत् है यावत् प्रभु अर्हत् को नमस्कार करता है यावत् पर्युपासनारत होता है।

अभिषेक की संपन्नता

(१५६)

तए णं से सक्के देविंदे देवराया पंच सक्के विउव्वइ २ त्ता एगे सक्के भगवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं गिण्हइ एगे सक्के पिट्ठओ आयवत्तं धरेइ दुवे सक्का उभओ पासिं चामरुक्खेवं करेंति एगे सक्के वज्जपाणी पुरओ पकड्ढइ, तए णं से सक्के चउरासीईए सामाणियसाहस्सीहिं जाव अण्णेहि य० भवणवइवाणमंतर-जोइसवेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए जाव णाइयरवेणं ताए उक्किट्ठाए जाव जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणणयरे जेणेव० जम्मण-भवणे जेणेव तित्थयरमाया तेणेव उवागच्छइ २ त्ता भगवं तित्थयरं माऊए पासे ठवेइ २ त्ता तित्थयरपडिरूवगं पडिसाहरइ २ त्ता ओसोवणिं पडिसाहरइ २ त्ता एगं महं खोमजुयलं कुंडलजुयलं च भगवओ तित्थयरस्स उस्सीसगमूले ठवेइ २ त्ता एगं महं सिरिदामगंडं तवणिज्जलंबूसगं सुवण्णपयरगमंडियं णाणामणिरयण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविहहारद्धहारउवसोहियसमुदयं भगवओ तित्थयरस्स उल्लोयंसि णिक्खिवइ तण्णं भगवं तित्थयरे अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणे २ सुहंसुहेणं अभिरममाणे २ चिट्ठइ।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया वेसमणं देवं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! बत्तीसं हिरण्णकोडीओ बत्तीसं सुवण्णकोडीओ बत्तीसं रयणकोडीओ बत्तीसं णंदाइं बत्तीसं भद्दाइं सुभगे सुभगरूवजुव्वणलावण्णे य भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणंसि साहराहि २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि।

तए णं से वेसमणे देवे सक्केणं जाव विणएणं वयणं पडिसुणेइ २ त्ता जंभए देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! बत्तीस हिरण्णकोडीओ जाव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणंसि साहरह साहरित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

तए णं ते जंभगा देवा वेसमणेणं देवेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव खिप्पामेव बत्तीसं हिरण्णकोडीओ जाव भगवओ तित्थगरस्स जम्मणभवणंसि साहरंति २ त्ता जेणेव वेसमणे देवे तेणेव जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से वेसमणे देवे जेणेव सक्के देविंदे देवराया जाव पच्चप्पिणइ।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया आभिओगे देवे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! भगवओ तित्थयरस्स जम्मणणयरंसि सिंघाडग जाव महापहपहेसु महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा २ एवं वदह - हंदि सुणंतु भवंतो बहवे भवणवइवाणमंतरजोइस-वेमाणिया देवा य देवीओ य जे णं देवाणुप्पिया!० तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए वा असुभं मणं पधारेइ तस्स णं अज्जगमंजरिया इव सयहा मुद्धाणं फुट्टउत्तिकट्टु घोसणं घोसेह २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणहत्ति।

तए णं ते आभिओगा देवा जाव एवं देवोत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति २ त्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियाओ पडिणिक्खमंति २ त्ता खिप्पामेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणणगरंसि सिंघाडग जाव एवं वयासी-हंदि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुणंतु भवंतो बहवे भवणवइ जाव जे णं देवाणुप्पिया!० तित्थयरस्स जाव फुट्टिहीतिकट्टु घोसणगं घोसेंति २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

तए णं ते बहवे भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिया देवा भगवओ तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करेंति २ त्ता जेणेव णंदीसरदीवे तेणेव उवागच्छंति २ त्ता अट्ठाहियाओ महामहिमाओ करेंति २ त्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

॥ पंचमो वक्खारो समत्तो॥

शब्दार्थ - **खोमजुलयं** - दो रेशमी वस्त्र, **उस्सीगमूले** - सिरहाने, **पधारेइ** - धारण करेगा-लायेगा।

भावार्थ - तदनंतर देवेन्द्र, देवराज शक्र वैक्रिय लब्धि द्वारा पांच शक्रों की विकुर्वणा करता है। एक शक्र भगवान् तीर्थंकर को अपने करसंपुट द्वारा ग्रहीत करता है। दूसरा उनके पीछे छत्र धारण किए रहता है। दो शक्र दोनों पार्श्वों में चंवर डूलाते हैं। एक शक्र हाथ में वज्र धारण किए हुए आगे खड़ा होता है।

तत्पश्चात् शक्र अपने चौरासी सहस्त्र सामानिक देवों यावत् अन्य भवनपति, वानव्यंतर, ज्योतिष्क एवं वैमानिक देव-देवियों से घिरा हुआ, सर्वविधि विपुल वैभव एवं समृद्धि से समायुक्त यावत् वाद्यों की तुमुल ध्वनि के बीच उत्कृष्ट, तीव्र गति द्वारा यावत् भगवान् तीर्थंकर के जन्म नगर में स्थित भवन में उनकी माता के पार्श्व में भगवान् को सुलाता है। वैसा कर भगवान् तीर्थंकर के प्रतिरूपक का, जो माता के पार्श्व में रखा था, प्रतिसंहरण करता है। तीर्थंकर की माता की अवस्वापिनी निद्रा का भी प्रतिसंहरण कर लेता है। तदनंतर भगवान् तीर्थंकर के सिरहाने दो रेशमी वस्त्र एवं दो कुंडल रख देता है। तपनीय जाति के उत्तम स्वर्ण से बने हुए लूम्बे, स्वर्ण के पत्तों से निर्मित, नाना प्रकार की मणियों एवं रत्नों से निर्मित हार-अठारह लड़े - बड़े हार, अर्द्धहार - नौ लड़ों के छोटे हार-इनसे उपशोभित श्री दामकाण्ड भगवान् तीर्थंकर के ऊपर तनी हुई चांदनी में लटकाता है। भगवान् तीर्थंकर इसका निर्निमेष दृष्टि से अवलोकन करते हुए सुखपूर्वक क्रीड़ा करते हैं।

तदनंतर देवेन्द्र, देवराज शक्र वैश्रमण देव को आह्वान करता है एवं कहता है - हे देवानुप्रिय! शीघ्र ही बत्तीस कोटि रोप्य मुद्राएं, बत्तीस कोटि स्वर्ण मुद्राएं, बत्तीस कोटि रत्न एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सौभाग्य सूचक सुंदर रूप, शोभा एवं लावण्य सम्पन्न बत्तीस भद्रासन, बत्तीस नंदासन, तीर्थंकर के जन्म भवन में लाओ, मेरे आज्ञानुरूप कार्य हो जाने की सूचना दो।

वैश्रमण देव, देवराज शक्र के आदेश को विनयपूर्वक स्वीकार करता है, जृंभक देव को बुलाता है और कहता है-देवानुप्रियो! शीघ्र ही बत्तीस कोटि रजत मुद्राएं यावत् भगवान् तीर्थंकर के जन्म स्थान में लाओ, आज्ञानुरूप कार्य सम्पन्नता की सूचना दो।

वैश्रमण द्वारा आदिष्ट किए जाने पर जृंभक देव बहुत हर्षित होते हैं यावत् शीघ्र ही बत्तीस कोटि रोप्यमुद्रा यावत् भगवान् तीर्थंकर के जन्म स्थान में ले आते हैं यावत् वैश्रमण देव को कार्य हो जाने की सूचना देते हैं।

तब वैश्रमण देव देवराज शक्र के पास आता है यावत् आज्ञानुसार कार्य हो जाने की जानकारी देता है।

तदनंतर देवेन्द्र, देवराज शक्र अपने आभियोगिक देवों को आहूत करता है और उन्हें आज्ञा देता है - हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही भगवन् तीर्थंकर के जन्म नगर के तिराहों यावत् विशाल मार्गों पर जोर-जोर से उद्घोषणा करते हुए कहो-बहुत से भवनपति, वानव्यंतर, ज्योतिष्क एवं वैमानिक देव-देवियो! सुनो, तुम में से जो कोई तीर्थंकर एवं उनकी माता के प्रति अपने मन में अशुभ भाव लाएगा, आर्जवमंजरी की तरह उसका मस्तक सौ टुकड़ों में फट जायेगा। यह घोषित कर मुझे ज्ञापित करो।

यो कहे जाने पर वे आभियोगिक देव यावत् जो आज्ञा यों कहकर अनुनय-विनयपूर्वक आदेश को स्वीकार करते हैं। देवराज शक्र के यहाँ से रवाना होकर भगवान् तीर्थंकर के जन्म नगर के तिराहों यावत् महत्त्वपूर्ण स्थानों पर पहुँच कर यो कहते हैं - बहुत से भवनपति यावत् देव-देवियो! आप में से जो कोई तीर्थंकर एवं उनकी माता के प्रति अशुभ भाव लायेगा यावत् उसके मस्तक के टुकड़े हो जायेंगे, ऐसी घोषणा कर वे देवराज शक्र को उनके आदेश पालन की सूचना देते हैं।

तत्पश्चात् बहुत से भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिष्क एवं वैमानिक देव भगवान् तीर्थंकर का जन्म-समारोह मनाते हैं। फिर वे नंदीश्वर द्वीप पर आते हैं और वहाँ अष्ट दिवसीय विराट जन्म महोत्सव समायोजित करते हैं, उसे संपन्न कर जिन-जिन दिशाओं से आए थे, उन्हीं में लौट जाते हैं।

॥ पांचवां वक्षस्कार समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छठो वक्खारो - षष्ठ वक्षस्कार

स्पर्श एवं जीवोत्पत्ति

(१५७)

जंबुद्दीवस्स णं भंते! दीवस्स पएसा लवणसमुद्दं पुट्ठा?

हंता! पुट्ठा।

ते णं भंते! किं जंबुद्दीवे दीवे लवणसमुद्दे?

गोयमा! जंबुद्दीवे णं दीवे णो खलु लवणसमुद्दे, एवं लवणसमुद्दस्सवि पएसा जंबुद्दीवे दीवे पुट्ठा भाणियव्वा।

जंबुद्दीवे णं भंते!० दीवे जीवा उद्दाइत्ता २ लवणसमुद्दे पच्चायंति?

गोयमा! अत्थेगइया पच्चायंति अत्थेगइया णो पच्चायंति, एवं लवण-समुद्दस्सवि जंबुद्दीवे दीवे णेयव्वमिति।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या जम्बूद्वीप के प्रदेश लवण समुद्र का स्पर्श करते हैं?

हाँ, गौतम! वे लवण समुद्र का स्पर्श करते हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप के जो प्रदेश लवण समुद्र का स्पर्श करते हैं, क्या वे जम्बूद्वीप के ही कहलाते हैं?

हाँ, गौतम! वे प्रदेश जम्बूद्वीप के ही कहे जाते हैं, लवण समुद्र के नहीं कहे जाते।

हे भगवन्! क्या जम्बूद्वीप के जीव मरण प्राप्त कर लवण समुद्र में पैदा होते हैं?

हे गौतम! कई पैदा होते हैं, कई नहीं होते।

इसी प्रकार यह ज्ञातव्य है, लवण समुद्र के कतिपय जीव मरकर जम्बूद्वीप में उत्पन्न होते हैं, कतिपय नहीं होते।

जम्बूद्वीप के खण्ड आदि

(१५८)

खंडा १ जोयण २ वासा ३ पव्वय ४ कूडा ५ य तित्थ ६ सेढीओ ७।
विजय ८ द्दह ९ सलिलाओ १० पिंडए होइ संगहणी॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भरहप्पमाणमेत्तेहिं खंडेहिं केवइयं खंडगणिएणं प०?

गोयमा! णउयं खंडसयं खंडगणिएणं पण्णत्ते।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइयं जोयणगणिएणं पण्णत्ते?

गोयमा!

गाहा - सत्तेव य कोडिसया णउया छप्पण्ण सयसहस्साइं।
चउणवइं च सहस्सा सयं दिवड्ढं च गणियपयं॥१॥

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे कइ वासा पण्णत्ता?

गोयमा! सत्त वासा पव्वया, तंजहा-भरहे एरवए हेमवए हेरण्णवए हरिवासे रम्मगवासे महाविदेहे।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया वासहरा पव्वया केवइया मंदरा पव्वया पण्णत्ता केवइया चित्तकूडा केवइया विचित्तकूडा केवइया जमगपव्वया केवइया कंचणगपव्वया केवइया वक्खारपव्वया केवइया दीहवेयड्ढा केवइया वट्टवेयड्ढा पण्णत्ता?

गोयमा! जंबुद्दीवे २ छ वासहरपव्वया एगे मंदरे पव्वए एगे चित्तकूडे एगे विचित्तकूडे दो जमगपव्वया दो कंचणगपव्वयसया वीसं वक्खारपव्वया चोत्तीसं दीहवेयड्ढा०, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे दुण्णि अउणत्तरा पव्वयसया भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया वासहरकूडा केवइया वक्खारकूडा केवइया वेयड्ढकूडा केवइया मंदरकूडा पण्णत्ता ?

गोयमा!.....छप्पण्णं वासहरकूडा छण्णउइं वक्खारकूडा तिण्णि छलुत्तरा वेयड्ढकूडसया णव मंदरकूडा पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे २ चत्तारि सत्तट्ठा कूडसया भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भरहे वासे कइ तित्था पण्णत्ता ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! तओ तित्था पण्णत्ता, तंजहा-मागहे वरदामे पभासे, जंबुद्दीवे० एरवए वासे कइ तित्था पण्णत्ता?

गोयमा! तओ तित्था पण्णत्ता, तंजहा-मागहे वरदामे पभासे।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे महाविदेहे वासे एगमेगे चक्कवट्टिविजए कइ तित्था पण्णत्ता?

गोयमा! तओ तित्था पण्णत्ता, तंजहा-मागहे वरदामे पभासे, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे २ एगे बिउत्तरे तित्थसए भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइयाओ विज्जाहरसेढीओ केवइयाओ आभिओगसेढीओ पण्णत्ता?

गोयमा! जंबुद्दीवे दीवे अट्ठसट्ठी विज्जाहरसेढीओ अट्ठसट्ठी आभिओगसेढीओ पण्णत्ताओ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे छत्तीसे सेढीसए भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया चक्कवट्टिविजया केवइयाओ रायहाणीओ केवइयाओ तिमिसगुहाओ केवइयाओ खंडप्पवायगुहाओ केवइया कयमालया देवा केवइया णट्टमालया देवा केवइया उसभकूडा० पण्णत्ता?

गोयमा! जंबुद्दीवे दीवे चोत्तीसं चक्कवट्टि विजया चोत्तीसं रायहाणीओ चोत्तीसं तिमिसगुहाओ चोतीसं खंडप्पवायगुहाओ चोतीसं कयमालया देवा चोतीसं णट्टमालया देवा चोतीस उसभकुडा पव्वया पण्णत्ता।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया महद्दहा पण्णत्ता?

गोयमा! सोलस महद्दहा पण्णत्ता, जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइयाओ महाणईओवासहरपवहाओ केवइयाओ महाणईओ कुंडप्पवहाओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! जंबुद्दीवे २ चोद्दस महाणईओ वासहरपवहाओ छावत्तरिं महाणईओ कुंडप्पवहाओ एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे णउइं महाणईओ भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे.... भरहेवएसु वासेसु कइ महाणईओ पण्णत्ता?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा-गंगा सिंधू रत्ता रत्तवई, तत्थ णं एगमेगा महाणई चउद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु छप्पण्णं सलिलासहस्सा भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे हेमवयहेरण्णवएसु वासेसु कइ महाणईओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा - रोहिया रोहियंसा सुवण्णकूला रुप्पकूला, तत्थ णं एगमेगा महाणई अट्ठावीसाए अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे २ हेमवयहेरण्णवएसु वासेसु बारसुत्तरे सलिलासयसहस्से भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे हरिवासरम्मगवासेसु कइ महाणईओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा - हरी हरिकंता णरकंता णारिकंता, तत्थ णं एगमेगा महाणई छप्पण्णाए २ सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे २ हरिवासरम्मगवासेसु दो चउवीसा सलिलासयसहस्सा भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे महाविदेहे वासे कइ महाणईओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! दो महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा - सीया य सीओया य, तत्थ णं एगमेगा महाणई पंचहिं २ सलिलासयसहस्सेहिं बत्तीसाए य सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दस सलिलासयसहस्सा चउसट्ठिं च सलिलासहस्सा भवंतीतिमक्खायं।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दक्खिणेणं केवइया सलिला-सयसहस्सा पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! एगे छण्णउए सलिलासयसहस्से पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहे लवणसमुद्दं समप्पेइ।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं केवइया सलिलासयसहस्सा पुरत्थिम-पच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?

गोयमा! एगे छण्णउए सलिलासयसहस्से पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहे जाव समप्पेइ।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया सलिलासयसहस्सा पुरत्थाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?

गोयमा! सत्त सलिलासयसहस्सा अट्ठावीसं च सहस्सा जाव समप्पेंति।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया सलिलासयसहस्सा पच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?

गोयमा! सत्त सलिलासयसहस्सा अट्ठावीसं च सहस्सा जाव समप्पेंति। एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे चोद्दस सलिला-सयसहस्सा छप्पण्णं च सहस्सा भवंतीतिमक्खायं।

॥ छट्ठो वक्खारो समत्तो॥

भावार्थ - खंड, योजन, वर्ष, पर्वत, कूट, तीर्थ, श्रेणियाँ, विजय, द्रह एवं नदियाँ - इनका इस सूत्र में वर्णन हुआ है, जिनकी यह संग्राहिका-संसूचिका गाथा है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र के प्रमाण जितने खंड किए जायँ तो वह कितने खण्डों में विभक्त होगा?

हे गौतम! खण्ड गणित - खण्ड गणना के अनुसार वह १९० खण्डों में विभक्त होगा।

हे भगवन्! योजन गणित - योजन विषयक गणना के अनुसार जम्बूद्वीप का प्रमाण कितना कहा गया है?

गाथा - हे गौतम! जम्बूद्वीप के क्षेत्रफल का प्रमाण सात अरब नब्बे करोड़ छप्पन लाख चौरानवे हजार एक सौ पचास योजन निरूपित हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अंतर्गत कितने क्षेत्र प्रतिपादित हुए हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत सात क्षेत्र निरूपित हुए हैं, जो इस प्रकार हैं - १. भरत २. ऐरावत ३. हैमवत ४. हैरण्यवत ५. हरिवर्ष ६. रम्यक् वर्ष ७. महाविदेह।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में कितने वर्षधर मंदर, चित्रकूट, विचित्रकूट, यमक, कांचन, वक्षस्कार पर्वत, दीर्घ वैताढ्य एवं वृत्त वैताढ्य पर्वत कहे गए हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत छह वर्षधर, एक मंदर, एक चित्रकूट, एक विचित्रकूट, दो यमक, दो सौ पचास कांचन, बीस वक्षस्कार, चौंतीस दीर्घ वैताढ्य तथा चार वृत्त वैताढ्य पर्वत कहे गए हैं।

इस प्रकार जंबूद्वीप में पर्वतों की कुल संख्या २६९ है, ऐसा आख्यात हुआ है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में कितने वर्षधर कूट, वक्षस्कारकूट, वैताढ्यकूट एवं मंदर कूट आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत छप्पन वर्षधरकूट, छियानवें वक्षस्कारकूट, तीन सौ छह वैताढ्य कूट एवं नौ मंदरकूट आख्यात हुए हैं।

इस प्रकार कूटों की कुल संख्या ४६७ बतलाई गई है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र में कितने तीर्थ कहे गए हैं?

हे गौतम! जंबूद्वीप में भरत क्षेत्र के अन्तर्गत तीन तीर्थ कहे गए हैं - १. मागध २. वरदाम एवं ३. प्रभासतीर्थ।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत ऐरावत क्षेत्र में कितने तीर्थ निरूपित हुए हैं?

जम्बूद्वीप में ऐरावत क्षेत्र के अन्तर्गत भरत क्षेत्र की तरह तीन तीर्थ बतलाए गए हैं - १. मागध २. वरदाम ३. प्रभास तीर्थ।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अंतर्गत एक-एक चक्रवर्ती विजय में कितने तीर्थ आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! जंबूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अंतर्गत एक-एक चक्रवर्ती विजय में तीन-तीन तीर्थ आख्यात हुए हैं - ये भरत क्षेत्र की तरह - मागध, वरदाम, प्रभासतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। यों जंबूद्वीप के चौंतीस विजयों में कुल मिलाकर एक सौ दो तीर्थ हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में विद्याधर श्रेणियाँ एवं आभियोगिक श्रेणियाँ कितनी-कितनी कही गई हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! जम्बूद्वीप में विद्याधर श्रेणियाँ और आभियोगिक श्रेणियाँ अड़सठ-अड़सठ कही गई हैं। इस तरह दोनों मिलाकर १३६ श्रेणियाँ होती हैं। ऐसा कहा गया है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में कितने चक्रवर्ती विजय, राजधानियाँ, तिमिसगुफाएँ, खंडप्रताप गुफाएं, कृतमालकदेव, नृतमालक देव एवं ऋषभकूट प्रतिपादित हुए हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में ये सभी चौंतीस-चौंतीस बतलाए गए हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में महाद्रह कितने कहे गए हैं?

हे गौतम! उसमें सोलह महाद्रह कहे गए हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में वर्षधर पर्वतों से कितनी महानदियाँ एवं कुंडों से कितनी महानदियाँ उद्गत होती हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में वर्षधर पर्वतों से चवदह महानदियाँ एवं कुण्डों से छियत्तर महानदियाँ उद्गत होती हैं।

इस प्रकार सब मिलाकर जम्बूद्वीप में नब्बे महानदियाँ हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में भरत क्षेत्र एवं ऐरावत क्षेत्र - दोनों में मिलाकर कितनी महानदियाँ बतलाई गई हैं?

हे गौतम! उन दोनों में गंगा, सिन्धु रक्ता एवं रक्तवती - ये चार महानदियाँ बतलाई गई हैं। एक-एक महानदी में १४-१४ सहस्र नदियाँ मिलती हैं। उनसे आपूरित होकर वे महानदियाँ पूर्वी तथा पश्चिमी लवणसमुद्र में मिलती हैं।

इस प्रकार जंबूद्वीप में भरत तथा ऐरावत क्षेत्र के अंतर्गत कुल छप्पन सहस्र नदियाँ हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में हैमवत तथा हैरण्यवत क्षेत्र के अन्तर्गत कितनी महानदियाँ प्रतिपादित हुई हैं?

हे गौतम! वहाँ रोहिता, रोहितांशा, सुवर्णकूला, रूप्यकूला संज्ञक चार महानदियाँ आख्यात हुई हैं।

इन दोनों में अट्ठाईस-अट्ठाईस सहस्र नदियाँ मिलती हैं। वे इनसे आपूरित होकर पूर्वी एवं पश्चिमी लवण समुद्र में मिलती हैं।

इस प्रकार हैमवत-हैरण्यवत क्षेत्र में कुल एक लाख बारह हजार नदियाँ हैं।

जम्बूद्वीप के अन्तर्गत हरिवर्ष तथा रम्यक् वर्ष के अन्तर्गत कितनी महानदियाँ आख्यात हुई हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! हरि, हरिकांता, नरकांता तथा नारिकांता - ये चार महानदियाँ इन दोनों वर्ष के अन्तर्गत आख्यात हुई हैं।

इनमें से प्रत्येक महानदी में ५६-५६ सहस्र नदियाँ मिलती हैं। इनसे आपूरित होकर वे महानदियाँ पूर्वी एवं पश्चिमी लवण समुद्र में मिल जाती है।

इस प्रकार जम्बूद्वीप में हरिवर्ष एवं रम्यक् वर्ष दोनों में मिलाकर दो लाख चौबीस सहस्र नदियाँ हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में, महाविदेह क्षेत्र के अन्तर्गत कितनी महानदियाँ कही गई हैं?

हे गौतम! वहाँ शीता एवं शीतोदा - दो महानदियाँ बतलाई गई हैं।

उनमें से प्रत्येक महानदी में पाँच लाख बत्तीस हजार नदियाँ मिलती हैं। उनसे आपूरित होकर वे पूर्वी एवं पश्चिमी लवण समुद्र में सम्मिलित होती हैं।

इस प्रकार जम्बूद्वीप में महाविदेह क्षेत्र के अंतर्गत कुल दस लाख चौंसठ हजार नदियाँ हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में मंदर पर्वत के दक्षिण में कितनी लाख नदियाँ पूर्वाभिमुख तथा पश्चिमाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में मिलती हैं?

हे गौतम! एक लाख छियानवें हजार नदियाँ पूर्वाभिमुख तथा पश्चिमाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में मिलती हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत मंदर पर्वत के उत्तर में कितनी लाख नदियाँ पूर्वाभिमुख एवं पश्चिमाभिमुख होती हुई लवण समुद्र में गिरती हैं?

हे गौतम! एक लाख छियानवें हजार नदियाँ पूर्वाभिमुख एवं पश्चिमाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में मिलती हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में कुल कितनी लाख नदियाँ पूर्वाभिमुख एवं पश्चिमाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में गिरती हैं?

हे गौतम! कुल सात लाख अट्ठाईस हजार नदियाँ यावत् लवण समुद्र में मिलती हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत कितनी लाख नदियाँ पूर्वाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में गिरती हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत सात लाख अट्ठाईस हजार नदियाँ पूर्वाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में गिरती हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत कितनी लाख नदियाँ पश्चिमाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में गिरती हैं?

हे गौतम! सात लाख अट्ठाईस हजार नदियाँ पश्चिमाभिमुख होती हुईं लवण समुद्र में गिरती हैं।

इस प्रकार कुल मिलाकर जम्बूद्वीप में १४ लाख ५६ हजार नदियाँ हैं, ऐसा बतलाया गया है।

विवेचन - शंका - प्रस्तुत सूत्र में जंबूद्वीप के अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों में मागध, वरदाम और प्रभास ये तीन तीर्थ ही बताये हैं जबकि शत्रुंजय, शिखरजी आदि स्थानों पर अनेकों महापुरुष मोक्ष में गये तो फिर इन्हें तीर्थ मानना या नहीं?

समाधान - जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र के छठे वक्षस्कार में ये तीन तीर्थ कहे गये हैं जबकि शत्रुंजय, शिखर आदि को शास्त्र में कहीं भी तीर्थ नहीं बताया गया है और भरत आदि ने इनकी पूजा भी नहीं की है अतः इन स्थानों को तीर्थ मानना मिथ्या है क्योंकि जो भी महापुरुष मोक्ष में गये हैं वे त्याग तपस्या की करनी से गये, स्थान के कारण से नहीं। पन्नवणा सूत्र के दूसरे पद में बताया है कि सम्पूर्ण अढ़ाई द्वीप के प्रत्येक स्थान से अनन्त जीव मोक्ष में गये हैं। तो आज जहाँ कत्लखाने चल रहे हैं वहाँ से भी अनन्त जीव मोक्ष में गये हैं, क्योंकि समय के प्रभाव से स्थान में परिवर्तन होता रहता है। जैसे कोई धर्म स्थान अनार्य लोगों के अधिकार में आ जाने से वहाँ पर जीव हत्या भी हो सकती है और कोई हिंसा का स्थान धर्मस्थान भी बनाया जा सकता है। वहाँ से कोई जीव मोक्ष भी जा सकता है तो क्या उस कत्लखाने को भी तीर्थ मानोगे? जो संभव नहीं हैं क्योंकि फिर तो गजसुकुमाल मुनि का मुक्ति स्थल श्मशान को भी तीर्थ मानना होगा। अतः स्थानों को तीर्थ नहीं मानना चाहिए। क्योंकि त्याग और तपस्या ही तारने वाली है, स्थान नहीं। शास्त्र में इनको कहीं पर भी तीर्थ नहीं बताया गया है, किन्तु वैष्णव धर्मियों की नकल से काशी, मथुरा आदि की तरह जैन धर्म में भी आडम्बर प्रिय लोगों ने इन स्थानों को तीर्थ रूप से प्रचारित कर दिया और नये-नये स्थानों पर छह काय जीवों की हिंसा और आडम्बर बढ़ाते ही जा रहे हैं।

॥ छठा वक्षस्कार समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सत्तमो वक्खारो - सप्तम् वक्षस्कार

चन्द्र आदि की संख्याएँ

(१५६)

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे कइ चंदा पभासिंसु पभासंति पभासिस्संति कइ सूरिया तवइंसु तवेंति तविस्संति केवइया णक्खत्ता जोगं जोइंसु जोयंति जोइस्संति केवइया महग्गहा चारं चरिंसु चरंति चरिस्संति केवइयाओ तारागणकोडाकोडीओ सोभिंसु सोभंति सोभिस्संति?

गोयमा! दो चंदा पभासिंसु ३ दो सुरिया तवइंसु ३ छप्पण्णं णक्खत्ता जोगं जोइंसु ३ छावत्तरं महग्गहसयं चारं चरिंसु ३-एगं च सयसहस्सं तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं। णव य सया पण्णासा तारागण-कोडिकोडीणं॥

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत अतीतकाल में कितने चंद्र प्रभासित होते रहे हैं - उद्योत करते रहे हैं, वर्तमान में कितने उद्योत करते हैं और भविष्य में कितने उद्योत करेंगे? कितने सूर्य अतीत में तपते रहे हैं, वर्तमान में तपते हैं और भविष्य में तपते रहेंगे? कितने नक्षत्र अतीत, वर्तमान एवं भविष्य (क्रमशः) में योग करते रहे हैं, करते हैं और करते रहेंगे? कितने महाग्रह अतीत, वर्तमान एवं भविष्य (क्रमशः) में गति करते रहे हैं गति करते हैं और गति करते रहेंगे? कितने कोटानुकोटि तारागण (क्रमशः) अतीत, वर्तमान एवं भविष्य में शोभित होते रहे हैं, होते हैं और होते रहेंगे?

हे गौतम! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत दो चंद्रमा प्रभासित होते रहे हैं, होते हैं और होते रहेंगे। दो सूर्य तपते रहे हैं, तपते हैं और तपते रहेंगे। छप्पन नक्षत्र दूसरे नक्षत्रों के साथ योग करते रहे हैं, करते हैं और करते रहेंगे। एक सौ छियत्तर महाग्रह गतिशील होते रहे हैं, होते हैं और होते रहेंगे।

गाथा - एक लाख तैंतीस हजार नौ सौ पचास कोटानुकोटि तारे शोभित होते रहे हैं, होते हैं और होते रहेंगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूर्य मण्डलों की संख्या आदि

(१६०)

कइ णं भंते! सूरमंडला पण्णत्ता?

गोयमा! एगे चउरासीए मंडलसए पण्णत्ते।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइयं ओगाहित्ता केवइया सूरमंडला पण्णत्ता?

गोयमा! जंबुद्दीवे २ असीयं जोयणसयं ओगाहित्ता एत्थ णं पण्णट्ठी सूरमंडला पण्णत्ता,

लवणे णं भंते! समुद्दे केवइयं ओगाहित्ता केवइया सूरमंडला पण्णत्ता?

गोयमा! लवणे समुद्दे तिण्णि तीसे जोयणसए ओगाहित्ता एत्थ णं एगूणवीसे सूरमंडलसए पण्णत्ते, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे लवणे य समुद्दे एगे चुलसीए सूरमंडलसए भवंतीतिमक्खायं?॥

भावार्थ - हे भगवन्! सूर्यमण्डल कितने आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! सूर्यमण्डल १८४ कहे गए हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में कितने क्षेत्र का अवगाहन कर आने वाले क्षेत्र में कितने सूर्यमण्डल आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में १८० योजन क्षेत्र का अवगाहन कर आगत क्षेत्र में ६५ सूर्यमंडल आख्यात हुए हैं।

हे भगवन्! लवण समुद्र में कितने क्षेत्र का अवगाहन कर, आगत क्षेत्र में कितने सूर्यमंडल अभिहित हुए हैं?

हे गौतम! लवण समुद्र में ३३० योजन क्षेत्र का अवगाहन कर आगत क्षेत्र में ११९ सूर्यमंडल कहे गए हैं।

इस प्रकार जम्बूद्वीप एवं लवण समुद्र में कुल १८४ सूर्यमंडल बतलाए गए हैं।

(१६१)

सव्वब्भंतराओ णं भंते! सूरमंडलाओ केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिरए सूरमंडले पण्णत्ते?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! पंचदसुत्तरे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरए सूरमण्डले पण्णत्ते २ ॥

भावार्थ - हे भगवन्! सर्वाभ्यंतर सूर्यमंडल से सर्व बाह्य सूर्यमंडल कितनी दूरी पर कहा गया है?

हे गौतम! वह ५१० योजन की दूरी पर बतलाया गया है।

(१६२)

सूरमण्डलस्स णं भंते! सूरमण्डलस्स य केवइयं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

गोयमा! दो जोयणाइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ३॥

भावार्थ - हे भगवन्! एक सूर्य मंडल से दूसरे सूर्यमंडल की व्यवधान रहित दूरी कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! एक सूर्यमंडल से दूसरे सूर्यमंडल की व्यवधान रहित दूरी दो योजन है।

(१६३)

सूरमंडले णं भंते! केवइयं आयामविक्खंभेणं केवइयं परिक्खेवेणं केवइयं बाहल्लेणं पण्णत्ते?

गोयमा! अडयालीसं एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खंभेणं तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं चउवीसं एगसट्ठिभाए जोयणस्स बाहल्लेणं पण्णत्ते इति ४॥

भावार्थ - हे भगवन्! सूर्यमण्डल की लम्बाई-चौड़ाई, परिधि एवं मोटाई कितनी कही गई है?

हे गौतम! सूर्यमंडल की लम्बाई-चौड़ाई $\frac{४८}{६१}$ योजन, परिधि उससे तीन गुनी से कुछ अधिक तथा मोटाई $\frac{२४}{६१}$ योजन कही गई है।

मेरु से सूर्यमण्डल का अन्तर

(१६४)

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वब्भंतरे सूरमंडले पण्णत्ते?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! चोयालीसं जोयणसहस्साइं अट्ठ य वीसे जोयणसए अबाहाए सव्वब्भंतरे सूरमंडले पण्णत्ते।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइ अबाहाए सव्वब्भंतराणंतरे सूरमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! चोयालीसं जोयण-सहस्साइं अट्ठ य बावीसे जोयणसए अडयालीसं च एगसट्ठिभागे जोयणस्स बाहाए अब्भंतराणंतरे सूरमंडले पण्णत्ते।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए अब्भंतरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! चोयालीसं जोयणसहस्साइं अट्ठ य पणवीसे जोयणसए पणतीसं च एगसट्ठिभागे जोयणस्स अबाहाए अब्भंतरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते।

एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे सूरिए तयणंतराओ मंडलाओ तयणंतरं मंडलं संकममाणे २ दो दो जोयणाइं अडयालीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगे मंडले अबाहावुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइत्ति।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिरे सूरमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पणयालीसं जोयणसहस्साइं तिण्णि य तीसे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरे सूरमंडले पण्णत्ते।

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिराणंतरे सूरमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पणयालीसं जोयणसहस्साइं तिण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तेरस य एगसट्ठिभाए जोयणस्स अबाहाए बाहिराणंतरे सूरमंडले पण्णत्ते,

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए बाहिरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! पणयालीसं जोयणसहस्साइं तिण्णि य चउवीसे जोयणसए छव्वीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स अबाहाए बाहिरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते।

एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे संकममाणे दो दो जोयणाइं अडयालीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगे मंडले अबाहावुड्ढिं णिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ ५।

भावार्थ - हे भगवन्! सर्वाभ्यंतर सूर्यमण्डल जम्बूद्वीपवर्ती मंदर पर्वत से कितने अंतर पर बतलाया गया है?

हे गौतम! सर्वाभ्यंतर सूर्यमण्डल जम्बूद्वीपवर्ती मंदर पर्वत से चवालीस हजार आठ सौ बीस योजन पर कहा गया है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीपवर्ती मंदर पर्वत के सर्वाभ्यंतर सूर्यमण्डल से दूसरा सूर्यमंडल कितने अंतर पर कहा गया है?

हे गौतम! सर्वाभ्यंतर सूर्यमण्डल से दूसरा सूर्यमंडल ४४८२२$\frac{४८}{६१}$ योजन के अंतर पर कहा गया है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीपवर्ती मंदर पर्वत के सर्वाभ्यंतर सूर्यमंडल से तीसरा सूर्यमंडल कितने अंतर पर कहा गया है?

हे गौतम! सर्वाभ्यंतर सूर्यमंडल से तीसरा सूर्यमंडल ४४८२५$\frac{३५}{६१}$ योजन के अंतर पर कहा गया है।

इस प्रकार प्रत्येक दिन-रात एक-एक मंडल के परित्याग क्रम से निष्क्रमण करता हुआ सूर्य तदनंतर मंडल से तदनंतर मंडल-पूर्व मण्डल से उत्तर मंडल पर संक्रमण करता हुआ, एक-एक मण्डल पर २$\frac{४८}{६१}$ योजन के अंतर की अभिवृद्धि करता हुआ, सर्व बाह्य मंडल पर पहुँच कर गति करता है।

हे भगवन्! सर्व बाह्य सूर्यमण्डल जम्बूद्वीपवर्ती मंदर पर्वत से कितने अंतर पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! वह ४५३३० योजन के अन्तर पर आख्यात हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! जम्बूद्वीपवर्ती मंदर पर्वत के सर्व बाह्य सूर्यमण्डल से दूसरे बाह्य सूर्यमण्डल का अंतर कितना बतलाया गया है?

हे गौतम! सर्व बाह्य सूर्यमण्डल से दूसरे बाह्य सूर्यमण्डल का अंतर ४५३२७ $\frac{१३}{६१}$ योजन है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीपवर्ती मंदर पर्वत के सर्वबाह्य सूर्यमंडल से तीसरे बाह्य सूर्यमण्डल का अन्तर कितना कहा गया है?

हे गौतम! सर्वबाह्य सूर्यमण्डल से तीसरे सूर्यमण्डल का अंतर ४५३२४ $\frac{२६}{६१}$ योजन कहा गया है।

इस प्रकार अहोरात्र मंडल के परित्यागक्रम से जम्बूद्वीप में प्रविष्ट होता हुआ सूर्य तदनंतर मंडल से तदनंतर मंडल पर संक्रमण करता हुआ, एक-एक मंडल पर २ $\frac{४८}{६१}$ योजन की अन्तर्वृद्धि कम करता हुआ, सर्वाभ्यंतर मंडल पर पहुँच कर गतिशील होता है।

सूर्यमण्डल : आयाम-विस्तार आदि

(१६५)

जंबुद्दीवे दीवे सव्वब्भंतरं णं भंते! सूरमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! णवणउइं जोयणसहस्साइं छच्च चत्ताले जोयणसए आयाम-विक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं पण्णरस य जोयणसहस्साइं एगूणणउइं च जोयणाइं किंचिविसेसाहियाइं परिक्खेवेणं०।

अब्भंतराणंतरे णं भंते! सूरमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! णवणउइं जोयणसहस्साइं छच्च पणयाले जोयणसए पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खम्भेणं तिण्णि जोयणसयसहस्साइं पण्णरस य जोयणसहस्साइं एगं सत्तुत्तरं जोयणसयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अब्भंतरतच्चे णं भंते! सूरमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! णवणउइं जोयणसहस्साइं छच्च एक्कावण्णे जोयणसए णव य एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं पण्णरस जोयणसहस्साइं एगं च पणवीसं जोयणसयं परिक्खेवेणं०।

एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं उवसंकममाणे २ पंच २ जोयणाइं पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगे मंडले विक्खंभवुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ अट्ठारस २ जोयणाइं परिरयवुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

सव्वबाहिरए णं भंते! सूरमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं छच्च सट्ठे जोयणसए आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं अट्ठारस य सहस्साइं तिण्णि य पण्णरसुत्तरे जोयणसए परिक्खेवेणं०।

बाहिराणंतरे णं भंते! सूरमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं छच्च चउप्पण्णे जोयणसए छव्वीसं च एगसट्ठिभागे जोयणस्स आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं अट्ठारस य सहस्साइं दोण्णि य सत्ताणउए जोयणसए परिक्खेवेणंति।

बाहिरतच्चे णं भंते! सूरमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं छच्च अडयाले जोयणसए बावण्णं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खम्भेणं तिण्णि जोयणसयसहस्साइं अट्ठारस य सहस्साइं दोण्णि य अउणासीए जोयणसए परिक्खेवेणं०।

Jain Education International　For Personal & Private Use Only　www.jainelibrary.org

एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ पंच पंच जोयणाइं पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगे मंडले विक्खंभवुड्ढिं णिवुड्ढेमाणे २ अट्ठारस २ जोयणाइं परिरयवुड्ढिं णिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ ६॥

शब्दार्थ - **अभिवड्ढेमाणे** - अभिवृद्धि करता हुआ, **णिवुड्ढेमाणे** - कम करता हुआ।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप में सर्वाभ्यंतर सूर्यमण्डल का आयाम-विस्तार-लम्बाई-चौड़ाई एवं परिधि कितनी आख्यात की गई है?

हे गौतम! उसका आयाम-विस्तार ९९६४० योजन एवं परिधि ३१५०८९ योजन से कुछ अधिक आख्यात हुई है।

हे भगवन्! द्वितीय आभ्यंतर मंडल का आयाम-विस्तार एवं परिधि कितनी कही गई है?

हे गौतम! इसका आयाम-विस्तार ९९६४५ $\frac{३५}{६१}$ योजन तथा परिधि ३१५१०७ योजन कही गई है।

हे भगवन्! तृतीय आभ्यंतर सूर्यमंडल का आयाम-विस्तार एवं परिधि कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! इसका आयाम-विस्तार ९९६५१ $\frac{९}{६१}$ योजन एवं परिधि ३१५१२५ योजन बतलाई गई है।

इस प्रकार उक्त क्रम से निष्क्रमण करता हुआ सूर्य पूर्व मंडल से उत्तर मंडल पर उपसंक्रमण करता हुआ - पहुँचता हुआ, एक-एक मंडल पर ५ $\frac{३५}{६१}$ योजन की विस्तार वृद्धि करता हुआ तथा अठारह योजन की परिधि बढ़ाता हुआ, सर्वबाह्य मंडल पर पहुँचकर आगे गतिशील होता है।

हे भगवन्! सर्वबाह्य सूर्यमण्डल की लम्बाई-चौड़ाई तथा परिधि कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! इसकी लम्बाई-चौड़ाई १००६६० योजन तथा परिधि ३१८३१५ योजन बतलाई गयी है।

हे भगवन्! द्वितीय बाह्य सूर्यमण्डल का आयाम-विस्तार एवं परिधि कितनी कही गई है?

हे गौतम! द्वितीय बाह्य सूर्यमण्डल का आयाम-विस्तार १००६५४ $\frac{२६}{६१}$ योजन एवं परिधि ३१८२९७ योजन कही गई है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! तृतीय बाह्य सूर्यमंडल का आयाम-विस्तार एवं परिधि कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! इसका आयाम-विस्तार १००६४८$\frac{५२}{६१}$ योजन तथा परिधि ३१८२७९ योजन कही गई है।

इस प्रकार पूर्वोक्त क्रम से प्रवेश करता हुआ सूर्य पूर्वमंडल से उत्तर मंडल तक जाता हुआ, एक-एक मंडल पर ५$\frac{३५}{६१}$ योजन की विस्तार वृद्धि कम करता हुआ, अठारह-अठारह योजन की परिधि में कमी करता हुआ, सर्वाभ्यंतर मंडल पर पहुँच कर आगे गतिशील होता है।

मुहूर्त्तगति

(१६६)

जया णं भंते! सूरिए सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच पंच जोयणसहस्साइं दोण्णि य एगावण्णे जोयणसए एगूणतीसं च सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणूसस्स सीयालीसाए जोयणसहस्सेहिं दोहि य तेवट्ठेहिं जोयणसएहिं एगवीसाए य जोयणस्स सट्ठिभाएहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, से णिक्खममाणे सूरिए णवं संवच्छरं अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि सव्वब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! सूरिए अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच पंच जोयणसहस्साइं दोण्णि य एगावण्णे जोयणसए सीयालीसं च सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुस्सस्स सीयालीसाए जोयणसहस्सेहिं एगूणासीए जोयणसए सत्तावण्णाए य सट्ठिभाएहिं जोयणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिहा छेत्ता एगूणवीसाए चुण्णियाभागेहिं सूरिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चंसि अहोरत्तंसि अब्भंतरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! सूरिए अब्भंतरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच-पंच जोयणसहस्साइं दोण्णि य बावण्णे जोयणसए पंच य सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुस्सस्स सीयालीसाए जोयणसहस्सेहिं छण्णउईए जोयणेहिं तेत्तीसाए सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिहा छेत्ता दोहिं चुण्णियाभागेहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे संकममाणे अट्ठारस २ सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगे मंडले मुहुत्तगइं अभिवुड्ढेमाणे अभिवुड्ढेमाणे चुलसीइं २ सयाइं जोयणाइं पुरिसच्छायं णिवुड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! सूरिए सव्वबाहिरमंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच पंच जोयणसहस्साइं तिण्णि य पंचुत्तरे जोयणसए पण्णरस य सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुस्सस्स एगतीसाए जोयणसहस्सेहिं अट्ठहि य एगत्तीसेहिं जोयणसएहिं तीसाए सट्ठिभाएहिं जोयणस्स सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, एस णं पढमे छम्मासे, एस णं पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे, से पविसमाणे सूरिए दोच्चे छम्मासे अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! सूरिए बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच पंच जोयणसहस्साइं तिण्णि य चउरुत्तरे जोयणसए सत्तावण्णं च सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुस्सस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगत्तीसाए जोयणसहस्सेहिं णवहि य सोलसुत्तरेहिं जोयणसएहिं इगुणालीसाए य सट्ठिभाएहिं जोयणस्स सट्ठिभाएहिं जोयणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिहा छेत्ता सट्ठीए चुण्णियाभागेहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, से पविसमाणे सूरिए दोच्चंसि अहोरत्तंसि बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! सूरिए बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच पंच जोयणसहस्साइं तिण्णि य चउरुत्तरे जोयणसए इगुणालीसं च सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुयस्स एगाहिएहिं बत्तीसाए जोयणसहस्सेहिं एगूणपण्णाए य सट्ठिभाएहिं जोयणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिहा छेत्ता तेवीसाए चुण्णियाभाएहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ।

एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ अट्ठारस २ सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगे मंडले मुहुत्तगइं णिवड्ढेमाणे २ साइरेगाइं पंचासीइं २ जोयणाइं पुरिसच्छायं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ, एस णं दोच्चे छम्मासे, एस णं दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे, एस णं आइच्चे संवच्छरे, एस णं आइच्चस्स संवच्छरस्स पज्जवसाणे पण्णत्ते।

भावार्थ - हे भगवन्! जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तो वह एक-एक मुहूर्त्त में कितने क्षेत्र को पार करता है?

हे गौतम! वह एक-एक मुहूर्त्त में ५२५१$\frac{२९}{६०}$ योजन को पार करता है। उस समय सूर्य यहाँ भरत क्षेत्र में विद्यमान मनुष्यों को ४७२६३$\frac{२१}{६०}$ योजन की दूरी से दिखलाई पड़ता है। वहाँ से निकलता हुआ सूर्य नव संवत्सर का प्रथम अयन बनाता हुआ प्रथम अहोरात्र में सर्वाभ्यंतर मंडल से द्वितीय मंडल पर उपसंक्रमण कर गति करता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! जब सूर्य सर्वाभ्यंतर मंडल से द्वितीय मंडल पर उपसंक्रमण कर गति करता है, तब वह एक-एक मुहूर्त्त में कितने क्षेत्र को पार करता है?

हे गौतम! तब वह प्रत्येक मुहूर्त्त में ५२५१ $\frac{४७}{६०}$ योजन क्षेत्र को पार करता है। तब वहाँ स्थित मनुष्यों को ४७१७९ $\frac{५७}{६०}$ तथा ६० भागों में बांटे हुए एक योजन के इकसठ भागों में से १९ भाग योजनांश की दूरी से सूर्य दिखाई देता है। वहाँ से निकलता हुआ सूर्य दूसरे अहोरात्र में तृतीय आभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य तृतीय आभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है तब वह प्रत्येक मुहूर्त्त में कितना क्षेत्र बांधता है?

हे गौतम! वह ५२५२ $\frac{५}{६०}$ योजन प्रति मुहूर्त्त गति करता है तब वहाँ स्थित लोगों को वह ४७०९६ $\frac{३३}{६०}$ योजन तथा साठ भागों में बांटे हुए एक योजन के एक भाग के ६१ भागों में दो भाग योजनांश की दूरी से दिखलाई देता है।

इस क्रम से निष्क्रमण करता हुआ सूर्य पूर्वमंडल से उत्तर मंडल का संक्रमण करता हुआ $\frac{१८}{६०}$ योजन मुहूर्त्त गति वृद्धिंगत करता हुआ एक पुरुष छाया न्यून ८४ योजन की कमी करता हुआ, सर्व बाह्य मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य सर्व बाह्य मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है तब वह प्रति मुहूर्त्त कितना क्षेत्र लांघता है?

हे गौतम! वह प्रतिमुहूर्त्त ५३०५ $\frac{१५}{६०}$ योजन गमन करता है।

तब वहाँ स्थित लोगों को वह (सूर्य) ३१८३१ $\frac{३०}{६०}$ योजन की दूरी से दिखलाई पड़ता है। ये प्रथम छह मास हैं। इस प्रकार प्रथम छह मास का समापन करता हुआ सूर्य दूसरे छह मास प्रथम अहोरात्र में, सर्व बाह्य मंडल से द्वितीय बाह्य मंडल पर उपसंक्रमण कर गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य द्वितीय बाह्य मंडल पर उपसंक्रमण कर गति करता है तो वह प्रतिमुहूर्त्त कितना क्षेत्र लांघता है?

हे गौतम! वह ५३०४ $\frac{५७}{६०}$ योजन प्रति मुहूर्त्त गति करता है। तब वहाँ स्थित मनुष्यों को वह ३१९१६ $\frac{३९}{६०}$ योजन एवं साठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के इकसठ भागों में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से ६० भाग योजनांश की दूरी से दृष्टिगोचर होता है। वहाँ से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य दूसरे अहोरात्र में तृतीय बाह्य मंडल पर उपसंक्रमण कर गतिशील होता है।

हे भगवन्! जब सूर्य दूसरे बाह्य मंडल पर उपसंक्रमण कर गति करता है तो वह प्रतिमुहूर्त्त कितना क्षेत्र लांघता है?

हे गौतम! वह ५३०४$\frac{३९}{६०}$ योजन प्रतिमुहूर्त्त गति करता है। तब वहाँ स्थित मनुष्यों को ३२००१$\frac{४९}{६०}$ योजन तथा साठ भागों में विभक्त एक योजन के एक भाग के इकसठ भागों में से तेवीस भाग योजनांश की दूरी से सूर्य दृष्टिगोचर होता है।

इस तरह पूर्व वर्णित क्रमानुसार प्रवेश करता हुआ सूर्य पूर्वमंडल से उत्तर मंडल पर संक्रमण करता हुआ प्रतिमंडल पर मुहूर्त्त गति को $\frac{१८}{६०}$ योजन कम करता हुआ, एक पुरुष छाया प्रमाण अधिक ८५ योजन की वृद्धि करता हुआ सर्वाभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है।

ये दूसरे छह मास हैं। इस तरह दूसरे छह मास का समापन होता है। यह आदित्य-संवत्सर है। इस प्रकार आदित्य-संवत्सर की सम्पन्नता बतलाई गई है।

दिवस-रात्रि प्रमाण

(१६७)

जया णं भंते! सूरिए सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?

गोयमा! तया णं उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ, से णिक्खममाणे सूरिए णवं संवच्छरं अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! सूरिए अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?

गोयमा! तया णं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ दोहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुवालसमुहुत्ता राई भवइ दोहि य एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहियत्ति, से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चंसि अहोरत्तंसि जाव चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?

गोयमा! तया णं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे दुवालसमुहुत्ता राई भवइ चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहियत्ति।

एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ दो दो एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं मंडले दिवसखेत्तस्स णिवुड्ढेमाणे २ रयणिखेत्तस्स अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइत्ति।

जया णं सूरिए सव्वब्भंतराओ मंडलाओ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं सव्वब्भंतरमंडलं पणिहाय एगेणं तेसीएणं राइंदियसएणं तिण्णि छावट्ठे एगसट्ठिभागमुहुत्तसए दिवसखेत्तस्स णिवुड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिवुड्ढेत्ता चारं चरइत्ति।

जया णं भंते! सूरिए सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?

गोयमा! तया णं उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइत्ति, एस णं पढमे छम्मासे, एस णं पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे। से पविसमाणे सूरिए दोच्चं छम्मासं अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! सूरिए बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?

गोयमा! अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ दोहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ दोहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिए, से पविसमाणे सूरिए दोच्चंसि अहोरत्तंसि बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जया णं भंते! सूरिए बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?

गोयमा! तया णं अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिए इति, एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे संकममाणे दो दो एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं एगमेगे मंडले रयणिखेत्तस्स णिवुड्ढेमाणे २ दिवसखेत्तस्स अभिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइत्ति।

जया णं सूरिए सव्वबाहिराओ मंडलाओ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं सव्वबाहिरं मंडलं पणिहाय एगेणं तेसीएणं राइंदियसएणं तिण्णि छावट्ठे एगसट्ठिभागमुहुत्तसए रयणिखेत्तस्स णिवुड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिवुड्ढेत्ता चारं चरइ, एस णं दोच्चे छम्मासे, एस णं दुच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे, एस णं आइच्चे संवच्छरे, एस णं आइच्चस्स संवच्छरस्स पज्जवसाणे पण्णत्ते ८।

शब्दार्थ - **उत्तमकट्ठपत्ते** - अधिक से अधिक, **राई** - रात्रि।

भावार्थ - हे भगवन्! जब सूर्य सर्वाभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है उस समय दिन-रात कितने बड़े होते हैं?

हे गौतम! तब दिन अधिक से अधिक १० मुहूर्त्त का तथा रात्रि कम से कम १२ मुहूर्त्त की होती है। वहाँ से निष्क्रमण करता हुआ सूर्य नव संवत्सर में, प्रथम अहोरात्र में, द्वितीय आभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य द्वितीय आभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है तब दिवस एवं रात्रि कितने बड़े होते हैं?

हे गौतम! तब दिन १८ मुहूर्त्त से $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्तांश कम होता है तथा रात्रि १२ मुहूर्त्त से $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्तांश अधिक होती है।

हे भगवन्! वहाँ से निष्क्रमण करता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र में दूसरे आभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है, तब दिन एवं रात्रि कितने बड़े होते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! तब दिन १८ मुहूर्त्त से $\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्तांश कम तथा रात्रि १२ मुहूर्त्त से $\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्तांश अधिक होती है।

इस क्रम से निष्क्रमण करता हुआ तथा पूर्वमंडल से उत्तर मंडल का संक्रमण करता हुआ सूर्य प्रत्येक मंडल में दिवस परिमाण को $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्तांश कम करता हुआ तथा रात्रि परिमाण को $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्तांश अधिक करता हुआ, सर्व बाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर आगे गति करता है।

जब सूर्य सर्वाभ्यंतर मंडल से सर्वबाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है, तब सर्वाभ्यंतर मंडल का परित्याग कर १८३ अहोरात्र में, दिवस क्षेत्र में $\frac{१}{६१}$ मुहूर्त्तांश कम ३६६ में तथा रात्रि क्षेत्र में इतने ही मुहूर्त्तांश अधिक गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य सर्वबाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तब दिवस कितना बड़ा तथा रात्रि कितनी बड़ी होती है?

हे गौतम! तब रात्रि अधिक से अधिक १८ मुहूर्त्त की तथा दिन कम से कम १२ मुहूर्त्त का होता है।

ये प्रथम छह मास हैं। इस प्रकार प्रथम छह मास का पर्यवसान होता है। वहाँ से प्रवेश करता हुआ सूर्य द्वितीय छह मास के प्रथम अहोरात्र में दूसरे बाह्य मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य द्वितीय बाह्य मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है तब दिन कितना बड़ा होता है तथा रात्रि कितनी बड़ी होती है?

हे गौतम! तब रात अठारह मुहूर्त्त $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्तांश कम होती है तथा दिन १२ मुहूर्त्त से २१ मुहूर्त्तांश अधिक होता है। वहाँ से प्रवेश करता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र में तृतीय बाह्य मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य तृतीय बाह्य मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है तब दिन-रात कितने बड़े होते हैं?

हे गौतम! तब रात्रि १८ मुहूर्त्त से $\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्तांश कम होता है तथा दिन १२ मुहूर्त्त से $\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्तांश अधिक होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार पूर्वोक्त क्रमानुसार प्रवेश करता हुआ सूर्य पूर्वमंडल से उत्तरमण्डल का संक्रमण करता हुआ रात्रि क्षेत्र में, एक-एक मंडल में मुहूर्त्तांश कम करता हुआ तथा दिवस क्षेत्र में दो मुहूर्त्तांश अधिक करता हुआ सर्वाभ्यंतर मंडल का उपसंक्रमण कर गति करता है।

हे भगवन्! जब सूर्य सर्वबाह्य मंडल से सर्वाभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तब वह सर्व बाह्य मंडल का परित्याग कर १८३ अहोरात्र में रात्रि क्षेत्र में ३६६ से $\frac{१}{६१}$ मुहूर्त्तांश कम कर तथा दिवस क्षेत्र में उतने ही मुहूर्त्तांश अधिक कर गति करता है।

ये द्वितीय छह मास हैं। इस प्रकार द्वितीय छह मास का समापन होता है। यह आदित्य-संवत्सर है। इस प्रकार इसका समापन क्रम बतलाया गया है।

ताप-क्षेत्र

(१६८)

जया णं भंते! सूरिए सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं किंसंठिया तावखेत्तसंठिई पण्णत्ता?

गोयमा! उड्ढीमुहकलंबुयापुप्फसंठाणसंठिया तावखेत्तसंठिई पण्णत्ता, अंतो संकुया बाहिं वित्थडा अंतो वट्टा बाहिं विहुला अंतो अंकमुहसंठिया बाहिं सगडुद्धीमुहसंठिया, उभओ पासे णं तीसे दो बाहाओ अवट्ठियाओ हवंति पणयालीसं २ जोयणसहस्साइं आयामेणं, दुवे य णं तीसे बाहाओ अणवट्ठियाओ हवंति, तंजहा-सव्वब्भंतरिया चेव बाहा सव्वबाहिरिया चेव बाहा, तीसे णं सव्वब्भंतरिया बाहा मंदरपव्वयंतेणं णवजोयणसहस्साइं चत्तारि छलसीए जोयणसए णव य दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं।

एस णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएति वएज्जा?

गोयमा! जे णं मंदरस्स० परिक्खेवं तं परिक्खेवं तिहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस णं परिक्खेवविसेसे आहिएति वएज्जा, तीसे णं सव्वबाहिरिया बाहा लवणसमुद्दंतेणं चउणवई जोयणसहस्साइं अट्ठ य अट्ठसट्ठे जोयणसए चत्तारि य दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएति वएज्जा?

गोयमा! जे णं जंबुद्दीवस्स २ परिक्खेवे तं परिक्खेवं तिहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसभागे हीरमाणे एस णं परिक्खेवविसेसे आहिएति वएज्जा।

तया णं भंते! तावखेत्ते केवइयं आयामेणं पण्णत्ते?

गोयमा! अट्ठहत्तरिं जोयणसहस्साइं तिण्णि य तेत्तीसे जोयणसए जोयणस्स तिभागं च आयामेणं पण्णत्ते।

मेरुस्स मज्झयारे जाव य लवणस्स रुंदछब्भागो।

तावायामो एसो सगडुद्धीसंठिओ णियमा॥१॥

तया णं भंते! किंसंठिया अंधयारसंठिई पण्णत्ता?

गोयमा! उद्धीमुहकलंबुयापुप्फसंठाणसंठिया अंधयारसंठिई पण्णत्ता, अंतो संकुया बाहिं वित्थडा तं चेव जाव तीसे णं सव्वब्भंतरिया बाहा मंदरपव्वयंतेणं छज्जोयणसहस्साइं तिण्णि य चउवीसे जोयणसए छच्च दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेणंति।

से णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएति वएज्जा?

गोयमा! जे णं मंदरस्स पव्वयस्स परिक्खेवे तं परिक्खेवं दोहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस णं परिक्खेवविसेसे आहिएति वएज्जा, तीसे णं सव्वबाहिरिया बाहा लवणसमुद्दंतेणं तेसट्ठी जोयणसहस्साइं दोण्णि य पणयाले जोयणसए छच्च दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं।

से णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएति वएज्जा?

गोयमा! जे णं जंबुद्दीवस्स २ परिक्खेवे तं परिक्खेवे तं परिक्खेवं दोहिं गुणेत्ता जाव तं चेव।

तया णं भंते! अंधयारे केवइए आयामेणं पण्णत्ते?

गोयमा! अट्ठहत्तरिं जोयणसहस्साइं तिण्णि य तेत्तीसे जोयणसए तिभागं च आयामेणं पण्णत्ते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जया णं भंते! सूरिए सव्वबाहिरमंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं किंसंठिया तावखेत्तसंठिई पण्णत्ता?

गोयमा! उद्धीमुहकलंबुयापुप्फसंठाणसंठिया० पण्णत्ता, तं चेव सव्वं णेयव्वं णवरं णाणत्तं जं अंधयारसंठिईए पुव्ववण्णियं पमाणं तं तावखेत्तसंठिईए णेयव्वं, जं तावखेत्तसंठिईए पुव्ववण्णियं पमाणं तं अंधयारसंठिईए णेयव्वंति।

भावार्थ - हे भगवन्! जब सूर्य सर्वाभ्यंतर मंडल का उपसंक्रांत कर गति करता है तो उसके ताप क्षेत्र की स्थिति का संस्थान कैसा बतलाया गया है?

हे गौतम! तब ताप क्षेत्र की स्थिति ऊर्ध्वमुख युक्त कदम्ब पुष्प के संस्थान के सदृश होती है। वह भीतर से संकीर्ण तथा बाहर से विस्तीर्ण होती है। अंदर से वृत्त तथा बाहर से विस्तृत, भीतर से अंकमुख - आसनस्थ पुरुष के गोद के मुख भाग जैसी तथा गाड़ी की धुरी के आगे के हिस्से जैसे होती है।

दोनों ओर उसकी दो भुजाएं अवस्थित हैं। नियत परिमाण है। इनमें से प्रत्येक का आयाम ४५,००० योजन परिमित है। उनकी दो बाहाएं अनवस्थित - अनियत प्रमाण हैं। वे सर्वाभ्यंतर तथा सर्वबाह्य के रूप में कही गई है।

उनमें सर्वाभ्यंतर बाह्य की परिधि मंदर पर्वत के अंत में ९४८६ $\frac{९}{१०}$ योजन है।

हे भगवन्! यह परिधि का प्रमाण किस आधार पर वर्णित हुआ है?

हे गौतम! मंदर पर्वत की परिधि को तीन से गुणित किया जाए, गुणनफल को दस से विभाजित किया जाय, इसका भागफल उस परिधि का प्रमाण (९४८६ $\frac{९}{१०}$ योजन) है।

उसकी सर्वबाह्य बाहा की परिधि लवण समुद्र के अंत में ९४८६८ $\frac{४}{१०}$ योजन परिमित है।

हे भगवन्! इस परिधि का यह परिमाण कैसे कहा गया है?

हे गौतम! जंबुद्वीप की परिधि को तीन से गुणित किया जाय, गुणनफल को दस से विभाजित किया जाय, जो भागफल आए, वह उस परिधि का परिमाण है।

हे भगवन्! उस समय ताप-क्षेत्र का आयाम कितना होता है?

हे गौतम! इसका आयाम ७८३३३ $\frac{१}{३}$ योजन बतलाया गया है। मेरु से लेकर जंबूद्वीप तक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के योजन प्रमाण यावत् लवण समुद्र के विस्तार के $\frac{१}{६}$ भाग का योग ताप क्षेत्र की लम्बाई है। इसका संस्थान गाड़ी की धुरी के आगे के हिस्से-नेमा के समान है।

हे भगवन्! तब अंधकार की स्थिति का संस्थान कैसा होता है?

हे गौतम! अंधकार की स्थिति का संस्थान ऊर्ध्वमुखी कदंब के फूल के सदृश होता है। वह भीतर से संकड़ी बाहर से चौड़ी यावत् उसका आगे का वर्णन पूर्ववत् है।

उसकी सर्वाभ्यंतर बाहा की परिधि मेरु पर्वत के अंत में ६३२४ $\frac{६}{१०}$ योजन परिमित है।

हे भगवन्! परिधि का यह परिमाण किस प्रकार है?

हे गौतम! मेरु पर्वत की परिधि को दो से गुणित किया जाय, गुणनफल को दस से विभाजित किया जाय, उसका भागफल उस परिधि का परिमाण है।

उसकी सर्वबाह्य बाह्य की परिधि लवण समुद्र के अंत में ६३२४५ $\frac{६}{१०}$ योजन है।

हे भगवन्! परिधि का यह परिमाण कैसे है?

हे गौतम! जंबूद्वीप की परिधि को दो से गुणित किया जाय यावत् शेष पूर्ववत् है।

हे भगवन्! तब अंधकार क्षेत्र का आयाम कितना कहा गया है?

हे गौतम! उसका आयाम ७८३३३ $\frac{१}{३}$ योजन बतलाया गया है।

हे भगवन्! जब सूर्य सर्वबाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तो तापक्षेत्र का संस्थान कैसा होता है?

हे गौतम! उसका संस्थान ऊर्ध्वमुखी कदंब के पुष्प जैसा होता है। बाकी का वर्णन पहले की तरह ग्राह्य है। इतना अंतर है-अंधकार संस्थिति का जो पूर्ववर्णित परिमाण है, ताप-क्षेत्र का परिमाण भी वैसा ही है जो ताप क्षेत्र का पूर्ववर्णित परिमाण है, वही अंधकार संस्थिति का जानना चाहिए।

लेश्या-प्रभाव एवं सूर्य दर्शन

(१६६)

जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हंता गोयमा! तं चेव जाव दीसंति।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि य मज्झंतियमुहुत्तंसि य अत्थमणमुहुत्तंसि य सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं? हंता तं चेव जाव उच्चत्तेणं।

जइ णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि य मज्झं० अत्थ० सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं कम्हा णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति०?

गोयमा! लेसापडिघाएणं उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति लेसाहितावेणं मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति लेसापडिघाएणं अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, एवं खलु गोयमा! तं चेव जाव दीसंति।

शब्दार्थ - **उग्गमणमुहुत्तंसि** - उदयकाल, **मज्झंतिय** - मध्याह्न काल, **अत्थमण** - अस्तमन-छिपने का समय, **पडिघाएणं** - प्रतिघात से, **अहितावेणं** - अभिताप से।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या जंबूद्वीप में सूर्य (दो) उदयकाल में स्थानापेक्षया दूर होते हुए भी देखने वाले की प्रतीति की अपेक्षा से मूल-समीप दिखाई देते हैं? मध्याह्न काल में समीप होते हुए भी क्या दूर दिखाई देते हैं? छिपने के समय में वे दूर होते हुए भी नजदीक दिखाई देते हैं?

हाँ, गौतम! वे वैसे ही यावत् दिखाई देते हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में सूर्य उदय, मध्याह्न एवं अस्तमन के समय क्या सर्वत्र एक जैसी ऊँचाई लिए होते हैं?

हाँ, गौतम! वे एक सदृश यावत् ऊँचाई लिए रहते हैं।

हे भगवन्! यदि जम्बूद्वीप में सूर्य उदय के समय, मध्याह्न के समय, छिपने के समय सर्वत्र समान ऊँचाई लिए होते हैं तो उदयकाल से दूर होते हुए भी समीप क्यों दिखाई देते हैं, मध्याह्न के समय समीप होते हुए भी दूर क्यों दिखाई देते हैं तथा अस्तमन के समय दूर होते हुए भी समीप क्यों दिखाई देते हैं?

हे गौतम! लेश्या-तेज के प्रतिघात से उदयकाल में सूर्य दूर होते हुए भी नजदीक दिखाई देते हैं। मध्याह्न काल में लेश्या के अभिताप से निकट होते हुए भी सूर्य दूर दिखाई देते हैं। इसी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार अस्त होने के समय लेश्या के प्रतिघात के कारण दूर होते हुए भी सूर्य नजदीक दिखाई देते हैं।

हे गौतम! दूर यावत् समीप दिखाई देने के यही कारण हैं।

क्षेत्र-स्पर्श

(१७०)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं गच्छंति पडुप्पण्णं खेत्तं गच्छंति अणागयं खेत्तं गच्छंति?

गोयमा! णो तीयं खेत्तं गच्छंति पडुप्पण्णं खेत्तं गच्छंति णो अणागयं खेत्तं गच्छंतित्ति,

तं भंते! किं पुट्ठं गच्छंति जाव णियमा छद्दिसिंति, एवं ओभासेंति।

तं भंते! किं पुट्ठं ओभासेंति०? एवं आहारपयाइं णेयव्वाइं पुट्ठोगाढमणंतरअणुमहआइ-विसयाणुपुव्वी य जाव णियमा छद्दिसिं, एवं उज्जोवेंति तवेंति पभासेंति।

शब्दार्थ - **तीयं** - अतीत, **पडुप्पण्णं** - प्रत्युत्पन्न-वर्तमान, **अणागयं** - अनागत, **पुट्ठं** - स्पर्श।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या जंबूद्वीप में सूर्य अतीत क्षेत्र का अतिक्रमण करते हैं या वर्तमान क्षेत्र का अतिक्रमण करते हैं या भविष्य क्षेत्र का अतिक्रमण करते हैं?

हे गौतम! वे अतीत एवं अनागत क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करते केवल वर्तमान क्षेत्र का अतिक्रमण करते हैं।

हे भगवन्! क्या वे (गम्यमान क्षेत्र का) स्पर्श करते हुए अतिक्रमण करते हैं, यावत् छह दिशा विषयक क्षेत्र का अतिक्रमण करते हैं, इस प्रकार अवभासित होते हैं?

हे भगवन्! क्या वे उस क्षेत्र का स्पर्श करते हुए अवभासित होते हैं?

इस संबंध का वर्णन प्रज्ञापना सूत्र के आहार पद के सपृष्ट सूत्र, अवगाढ़ सूत्र, अनंतर सूत्र, अणुबादर सूत्र, विषय सूत्र, आनुपूर्वी सूत्र आदि के रूप में विस्तार से ज्ञातव्य है यावत् दोनों सूर्य छहों दिशाओं में उद्योत करते हैं, प्रभासित होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूर्य की अवभासन आदि क्रिया

(१७१)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरियाणं किं तीए खेत्ते किरिया कज्जइ पडुप्पण्णे० अणागए०?

गोयमा! णो तीए खेत्ते किरिया कज्जइ पडुप्पण्णे० कज्जइ णो अणागए०।

सा भंते! किं पुट्ठा कज्जइ०।

गोयमा! पुट्ठा० णो अणापुट्ठा कज्जइ जाव णियमा छद्दिसिं।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबुद्वीप में दो सूर्यों द्वारा अवभासन आदि की क्रिया अतीत, वर्तमान या भविष्य में से किस क्षेत्र में की जाती है?

हे गौतम! अवभासन आदि क्रिया अतीत एवं भविष्य - दोनों क्षेत्रों में नहीं की जाती, वर्तमान क्षेत्र में की जाती है।

हे भगवन्! क्या सूर्य अपने क्षेत्र द्वारा क्षेत्र स्पर्श पूर्वक ये क्रियाएं करते हैं या अस्पर्श पूर्वक करते हैं?

हे गौतम! वे क्षेत्र के स्पर्शपूर्वक अवभासन आदि क्रिया करते हैं, अस्पृष्ट रूप में यह नहीं करते यावत् ये क्रियाएं छहों दिशाओं में नियमतः की जाती है।

सूर्य द्वारा परितापित प्रदेश

(१७२)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिया केवइयं खेत्तं उद्धं तवयंति अहे तिरियं च?

गोयमा! एगं जोयणसयं उद्धं तवयंति अट्ठारससयजोयणाइं अहे तवयंति सीयालीसं जोयणसहस्साइं दोण्णि य तेवट्ठे जोयणसए एगवीसं च सट्ठिभाए जोयणस्स तिरियं तवयंतित्ति।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में सूर्य कितने क्षेत्र के ऊर्ध्व भाग को, अधोभाग को तथा तिर्यक् भाग को अपने तेज से परिव्याप्त करते हैं (तपाते हैं)?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! ऊर्ध्वभाग में १०० योजन क्षेत्र अधोभाग में १८०० योजन क्षेत्र तथा तिर्यक् क्षेत्र में ४७२६३ $\frac{२१}{६०}$ योजन क्षेत्र को अपने तेज से परिव्याप्त करते हैं।

ज्योतिष्क देवों की स्थिति एवं वैशिष्ट्य

(१७३)

अंतो णं भंते! माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिमसूरियगहगणणक्खत्ततारारूवा ते णं भंते! देवा किं उड्ढोववण्णगा कप्पोववण्णगा विमाणोववण्णगा चारोववण्णगा चारट्ठिइया गइरइया गइसमावण्णगा?

गोयमा! अंतो णं माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिमसूरिय जाव तारारूवा ते णं देवा णो उड्ढोववण्णगा णो कप्पोववण्णगा विमाणोववण्णगा चारोववण्णगा णो चारट्ठिइया गइरइया गइसमावण्णगा उड्ढीमुहकलंबुयापुप्फसंठाणसंठिएहिं जोयणसाहस्सिएहिं तावखेत्तेहिं साहस्सियाहिं वेउव्वियाहिं बाहिराहिं परिसाहिं महया हयणट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा महया उक्किट्ठसीहणायबोलकलकलरवेणं अच्छं पव्वयरायं पयाहिणावत्तमण्डलचारं मेरुं अणुपरियट्टंति।

भावार्थ - हे भगवन्! मानुषोत्तर पर्वतवर्ती चन्द्रमा, सूरज, ग्रह, नक्षत्र एवं तारे-ये ज्योतिष्क देव क्या ऊर्ध्वोपपन्न हैं - सौधर्म आदि बारह कल्पों से ऊपर ग्रैवेयक तथा अनुत्तर विमानों में उत्पन्न हैं, क्या कल्पोपपन्न हैं, क्या विमानोपपन्न हैं, क्या चारोपपन्न हैं अथवा क्या वे चार स्थितिक - परिभ्रमण रहित, गतिरतिक - गति में आसक्ति युक्त, गति समापन्न - गति युक्त हैं?

हे गौतम! मानुषोत्तर गतिवर्ती चन्द्रमा सूरज यावत् तारे - ये ज्योतिष्क देव ऊर्ध्वोपपन्न एवं कल्पोपपन्न नहीं हैं। वे विमानोपपन्न एवं चारोपपन्न हैं। चार स्थितिक नहीं है। वे गति रतिक एवं गति समापन्न हैं। ऊर्ध्वमुखी कदंब के फूल के आकार में संस्थित हजारों योजनों तक चन्द्र-सूर्य की अपेक्षा से ताप क्षेत्र युक्त, वैक्रिय लब्धि सहित है। वैक्रियलब्धि द्वारा वे बाह्य परिषदों एवं वृहद रूप में नाट्य, गीत, वाद्य, तंत्री, ताल, त्रुटित, घन, मृदंग - इन गाजों बाजों से उत्पन्न मधुर ध्वनि के बीच दिव्य भोगों को भोगते हुए उत्कृष्ट आवाज में सिंहनाद के साथ, कलकल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्द युक्त, वे स्वर्ण से चमकते हुए रत्नों के बाहुल्य से निर्मल उज्ज्वल प्रदक्षिणावर्त्त मण्डल द्वारा मेरु पर्वत के चारों ओर गतिशील रहते हैं।

विवेचन - इस सूत्र में प्रयुक्त मानुषोत्तर पर्वत के संदर्भ में ज्ञातव्य है कि मनुष्यों की उत्पत्ति, स्थिति तथा मृत्यु आदि मानुषोत्तर पर्वत से पहले-पहले होते हैं, उससे आगे नहीं होते। अर्थात् वह मनुष्यों से रहित स्थान है, इसलिए उसे मानुषोत्तर कहा जाता है।

विद्या आदि विशिष्ट लब्धियों या शक्तियों के अभाव में मनुष्य उसका लंघना नहीं कर सकते, इसलिए भी उसे मानुषोत्तर कहा जाता है।

इन्द्र के अभाव में वैकल्पिक व्यवस्था

(१७४)

तेसि णं भंते! देवाणं जाहे इंदे चुए भवइ, से कहमियाणिं पकरेंति?

गोयमा! ताहे चत्तारि पंच वा सामाणिया देवा तं ठाणं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति जाव तत्थ अण्णे इंदे उववण्णे भवइ।

इंदट्ठाणे णं भंते! केवइयं कालं उववाएणं विरहिए?

गोयमा! जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं छम्मासे उववाएणं विरहिए।

बहिया णं भंते! माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिम जाव तारारूवा तं चेव णेयव्वं णाणत्तं विमाणोववण्णगा णो चारोववण्णगा चारट्ठिइया णो गइरइया णो गइसमावण्णगा पक्किट्टगसंठाणसंठिएहिं जोयणसयसाहस्सिएहिं तावखेत्तेहिं सयसाहस्सियाहिं वेउव्वियाहिं बाहिराहिं परिसाहिं महया हयणट्ट जाव भुंजमाणा सुहलेसा मंदलेसा मंदायवलेसा चित्तंतरलेसा अण्णोण्णसमोगाढाहिं लेसाहिं कूडाविव ठाणठिया सव्वओ समंता ते पएसे ओभासंति उज्जोवेंति पभासेंतित्ति।

तेसि णं भंते! देवाणं जाहे इंदे चुए भवइ से कहमियाणिं पकरेंति जाव जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मासा इति।

शब्दार्थ - पकरेंति - करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! उन ज्योतिष्क देवों का इन्द जब च्युत-कालगत हो जाता है तब देव किस प्रकार काम चलाते हैं?

हे गौतम! जब तक दूसरा इन्द्र उत्पन्न नहीं होता यावत् तब तक चार या पांच सामानिक देव मिलकर इन्द्र के स्थान का कार्य निर्वाह करते हैं।

हे भगवन्! इन्द्र का स्थान दूसरे इन्द्र के उत्पन्न होने तक कितने समय रिक्त (विरहित) रहता है?

हे गौतम! वह कम से कम एक समय और अधिक से अधिक छह मास पर्यन्त इन्द्रोत्पत्ति से विरहित रहता है।

हे भगवन्! मानुषोत्तर पर्वत के बहिर्वर्ती चन्द्र यावत् तारे आदि ज्योतिष्क देवों का वर्णन वैसा ही जानना चाहिए। इतना अन्तर है-वे विमानोत्पन्न होते हैं किन्तु चारोपपन्न-गति युक्त नहीं होते। वे चारस्थितिक होते हैं, गतिरतिक तथा गतिसमापन्न नहीं होते।

वे पकी हुई ईंट की आकृति में संस्थित चन्द्र एवं सूर्य की अपेक्षा लाखों योजन विस्तीर्ण ताप-क्षेत्र युक्त, लाखों विक्रिया जनित रूप धारण करने में समर्थ बाह्य परिषदों से युक्त अत्यधिक वाद्य संगीत की ध्वनि के साथ यावत् विविध सुखोपभोग करते हुए सुखलेश्या युक्त मंद लेश्या - तीव्र शीतलता आदि रहित, मंदातप लेश्या - अधिक शीत आदि से रहित, चित्रांतर लेश्या - चित्र विचित्र लेश्यायुक्त, परस्पर अपनी-अपनी लेश्याओं के अवगाह-मिलने से युक्त, पर्वत शिखरों की तरह स्व-स्वस्थितिक सब ओर के अपने प्रदेशों को अवभासित, उद्योतित एवं प्रभासित करते हैं।

हे भगवन्! जब मानुषोत्तर पर्वत के बाहर स्थित देवों के इन्द्र का च्यवन हो जाता है तो वे यहाँ कैसी व्यवस्था करते हैं यावत् हे गौतम! जब तक नया इन्द्र उत्पन्न नहीं होता, पूर्ववत् कम से कम एक समय तक तथा अधिक से अधिक छह मास तक व्यवस्था होती है।

चन्द्र मंडल

(१७५)

कइ णं भंते! चन्दमण्डला पण्णत्ता?

गोयमा! पण्णरस चंदमण्डला पण्णत्ता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइयं ओगाहित्ता केवइया चंदमण्डला पण्णत्ता?

गोयमा! जम्बुद्दीवे दीवे असीयं जोयणसयं ओगाहित्ता एत्थ णं पंच चंदमण्डला पण्णत्ता,

लवणे णं भंते! पुच्छा।

गोयमा! लवणे णं समुद्दे तिण्णि तीसे जोयणसए ओगाहित्ता एत्थ णं दस चंदमण्डला पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं जम्बुद्दीवे दीवे लवणे य समुद्दे पण्णरस चंदमण्डला भवंतीतिमक्खायं।

भावार्थ - हे भगवन्! चन्द्रमण्डल कितने आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! वे पन्द्रह कहे गए हैं।

हे भगवन्! जंबुद्वीप में कितने क्षेत्र का अवगाहन कर कितने चन्द्र मण्डल हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में १८० योजन क्षेत्र का अवगाहन करते हुए पांच चन्द्रमण्डल बतलाए गये हैं।

हे भगवन्! लवण समुद्र में कितने क्षेत्र का अवगाहन करते हुए, कितने चन्द्रमंडल बतलाए गए हैं?

हे गौतम! लवण समुद्र में ३३० योजन क्षेत्र का अवगाहन करते हुए दस चन्द्र मण्डल कहे गए हैं। इस प्रकार जम्बूद्वीप एवं लवण समुद्र में कुल पन्द्रह चन्द्रमंडल बतलाए गए हैं।

(१७६)

सव्वब्भंतराओ णं भंते! चन्द्रमंडलाओ केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिरए चंदमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पंचदसुत्तरे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरए चंदमंडले पण्णत्ते।

भावार्थ - हे भगवन्! सर्वाभ्यंतर चन्द्रमंडल से सर्वबाह्य चन्द्रमंडल अबाधित रूप में कितनी दूरी पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! वह ५१० योजन दूरी पर कहा गया है।

(१७७)

चंदमंडलस्स णं भंते! चंदमंडलस्स य एस णं केवइयाए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! पणतीसं २ जोयणाइं तीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णियाभाए चंदमंडलस्स अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

भावार्थ - हे भगवन्! एक चन्द्रमंडल दूसरे चन्द्रमंडल से कितनी दूरी है?

हे गौतम! एक चंद्रमण्डल की दूसरे चन्द्रमंडल से ३५$\frac{६०}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में चार भाग योजनांश प्रमाण दूरी है।

(१७८)

चंदमंडले णं भंते! केवइयं आयामविक्खंभेणं केवइयं परिक्खेवेणं केवइयं बाहल्लेणं पण्णत्ते?

गोयमा! छप्पण्णं एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खम्भेणं तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं अट्ठावीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स बाहल्लेणं०।

भावार्थ - हे भगवन्! चन्द्रमंडल का आयाम विस्तार, परिधि एवं ऊँचाई कितनी निरूपित हुई है?

हे गौतम! चन्द्रमंडल का आयाम विस्तार $\frac{५६}{६१}$ योजन, परिधि इससे तीन गुनी से कुछ अधिक तथा ऊँचाई $\frac{२८}{६१}$ योजन आख्यात हुई है।

(१७९)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वब्भंतरए चंदमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! चोयालीसं जोयणसहस्साइं अट्ठ य वीसे जोयणसए अबाहाए सव्वब्भंतरे चंदमंडले पण्णत्ते।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए अब्भंतराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! चोयालीसं जोयणसहस्साइं अट्ठ य छप्पण्णे जोयणसए पणवीसं च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णियाभाए अबाहाए अब्भंतराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए अब्भंतरतच्चे चंदमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! चोयालीसं जोयणसहस्साइं अट्ठ य बाणउए जोयणसए एगावण्णं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णियाभागं अबाहाए अब्भंतरतच्चे चंदमंडले पण्णत्ते।

एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे चंदे तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ छत्तीसं छत्तीसं जोयणाइं पणवीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णियाभाए एगमेगे मंडले अबाहाए वुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जम्बुद्दीवे० दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिरे चंदमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पणयालीसं जोयणसहस्साइं तिण्णि य तीसे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरए चंदमंडले पण्णत्ते।

जम्बुद्दीवे० दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए बाहिराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पणयालीसं जोयणसहस्साइं दोण्णि य तेणउए जोयणसए पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता तिण्णि चुण्णियाभाए अबाहाए बाहिराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते।

जम्बुद्दीवे० दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए बाहिरतच्चे चंदमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पणयालीसं जोयणसहस्साइं दोण्णि य सत्तावण्णे जोयणसए णव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

य एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता छ चुण्णियाभाए अबाहाए बाहिरतच्चे चंदमंडले पण्णत्ते।

एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे चंदे तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ छत्तीसं २ जोयणाइं पणवीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णियाभाए एगमेगे मंडले अबाहाए वुड्ढिं णिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबुद्वीप में मंदर पर्वत से सर्वाभ्यंतर चन्द्रमंडल कितने अन्तर पर कहा गया है?

हे गौतम! जंबुद्वीप में मंदर पर्वत से सर्वाभ्यंतर चन्द्रमंडल चवालीस हजार आठ सौ बीस योजन के अंतर पर कहा गया है।

हे भगवन्! जंबुद्वीप में मेरु पर्वत से दूसरा आभ्यंतर चन्द्रमंडल कितने अन्तर पर बतलाया गया है?

हे गौतम! जंबुद्वीप में मंदर पर्वत से दूसरा आभ्यंतर चन्द्रमंडल ४४८५६$\frac{२५}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में विभक्त एक योजन के एक भाग के सात भागों में से चार भाग योजनांश के अंतर पर बतलाया गया है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में मंदर पर्वत से तीसरा आभ्यंतर चन्द्रमंडल कितने अन्तर पर निरूपित हुआ है?

हे गौतम! जंबुद्वीप में मंदर पर्वत से तीसरा आभ्यंतर चन्द्रमंडल ४४८९२$\frac{५१}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में से एक भाग योजनांश के अंतर पर निरूपित हुआ है।

इस क्रमानुसार निष्क्रमण करता हुआ चन्द्र पूर्व मंडल से उत्तर मंडल का संक्रमण करता हुआ ३६$\frac{२५}{६१}$ योजन एवं इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के सात भागों में से चार भाग योजनांश की वृद्धि करता हुआ सर्व बाह्य मंडल को उपक्रांत कर गति करता है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में, मंदर पर्वत से सर्व बाह्य चंद्रमंडल कितने अंतर पर आख्यात हुआ है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! जम्बूद्वीप में मंदर पर्वत से सर्वबाह्य चन्द्रमंडल पैंतालीस हजार तीन सौ तीस योजन के अंतर पर आख्यात हुआ है।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में मंदर पर्वत से दूसरा बाह्य चन्द्रमंडल कितने अंतर पर कहा गया है?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में मंदर पर्वत से दूसरा बाह्य चन्द्रमंडल ४५२९३ $\frac{३५}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में विभक्त एक योजन के एक भाग के सात भागों में से तीन भाग योजनांश के अंतर पर कहा गया है।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में, मंदर पर्वत से तीसरा बाह्य चन्द्रमंडल कितने अंतर पर आख्यात हुआ है?

हे गौतम! वह ४५२५७ $\frac{९}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में से छह भाग योजनांश के अंतर पर कहा गया है।

इस क्रमानुसार प्रवेश करता हुआ चन्द्रपूर्वमंडल से उत्तर मंडल का संक्रमण करता हुआ एक-एक मंडल पर ३६ $\frac{३५}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में से चार भाग योजनांश की वृद्धि में कमी करता हुआ सर्वाभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है।

चन्द्रमंडल : विस्तार

(१८०)

सव्वब्भंतरे णं भंते! चंदमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! णवणउइं जोयणसहस्साइं छच्चचत्ताले जोयणसए आयाम-विक्खंभेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं पण्णरस जोयणसहस्साइं अउणाणउइं च जोयणाइं किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते।

अब्भंतराणंतरे सा चेव पुच्छा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! णवणउइं जोयणसहस्साइं सत्त य बारसुत्तरे जोयणसए एगावण्णं च एगसट्ठिभागे जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णियाभागं आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं पण्णरस जोयणसहस्साइं तिण्णि य एगूणवीसे जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं।

अब्भंतरतच्चे णं जाव प०?

गोयमा! णवणउइं जोयणसहस्साइं सत्त य पंचासीए जोयणसए इगतालीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता दोण्णि य चुण्णियाभाए आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं पण्णरस जोयणसहस्साइं पंच य इगुणापण्णे जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणंति, एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे चंदे जाव संकममाणे २ बावत्तरिं २ जोयणाइं एगावण्णं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं च चुण्णियाभागं एगमेगे मंडले विक्खम्भवुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ दो दो तीसाइं जोयणसयाइं परिरयवुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

सव्वबाहिरए णं भंते! चंदमंडले केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं छच्चसट्ठे जोयणसए आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं अट्ठारस सहस्साइं तिण्णि य पण्णरसुत्तरे जोयणसए परिक्खेवेणं०।

बाहिराणंतरे णं पुच्छा, गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं पंच सत्तासीए जोयणसए णव य एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता छ चुण्णियाभाए आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं अट्ठारस सहस्साइं पंचासीइं च जोयणाइं परिक्खेवेणं०।

बाहिरतच्चे णं भंते! चंदमंडले० पण्णत्ते?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं पंच य चउदसुत्तरे जोयणसए एगूणवीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता पंच चुण्णियाभाए आयामविक्खम्भेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं सत्तरस सहस्साइं अट्ठ य पणपण्णे जोयणसए परिक्खेवेणं०।

एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे चंदे जाव संकममाणे २ बावत्तरिं २ जोयणाइं एगावण्णं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णियाभागं एगमेगे मण्डले विक्खम्भवुड्ढिं णिवुड्ढेमाणे २ दो दो तीसाइं जोयणसयाइं परिरयवुड्ढिं णिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

भावार्थ - हे भगवन्! सर्वाभ्यंतर चन्द्रमंडल का आयाम-विस्तार तथा परिधि कितनी कही गई है?

हे गौतम! इसका आयाम - विस्तार ९९६४० योजन एवं उसकी परिधि ३१५०८९ योजन से कुछ अधिक बतलाई गई है।

हे भगवन्! द्वितीय आभ्यंतर चन्द्रमंडल का आयाम-विस्तार तथा परिधि कितनी कही गई है?

हे गौतम! द्वितीय आभ्यंतर चन्द्रमंडल का आयाम-विस्तार ९९७१२$\frac{५१}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में से एक भाग योजनांश एवं उसकी परिधि ३१५३१९ योजन से कुछ ज्यादा कही गई है।

हे भगवन्! तृतीय आभ्यंतर मंडल का आयाम-विस्तार तथा परिधि कितनी आख्यात हुई है?

हे गौतम! इसका आयाम-विस्तार ९९७८५$\frac{४१}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में से दो भाग योजनांश तथा उसकी परिधि ३१५५४९ योजन से कुछ ज्यादा आख्यात हुई है।

इस क्रम के अनुसार निष्क्रमण करता हुआ चन्द्र प्रत्येक मंडल पर ७२$\frac{५१}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में एक भाग योजनांश विस्तार वृद्धि करता हुआ सर्वबाह्य मंडल को उपसंक्रांत करता है।

हे भगवन्! सर्वबाह्य चन्द्रमंडल का आयाम-विस्तार एवं परिधि कितनी निरूपित हुई है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! इसका आयाम-विस्तार १००६६० योजन एवं परिधि ३१८३१५ योजन निरूपित हुई है।

हे भगवन्! द्वितीय बाह्य चन्द्रमंडल का आयाम-विस्तार तथा परिधि कितनी कही गई है?

हे गौतम! इसका आयाम-विस्तार १००५८७ $\frac{९}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में विभक्त एक योजन के एक भाग के सात भागों में से छह भाग योजनांश एवं उसकी परिधि ३१८०८५ योजन कही गई है।

हे भगवन्! तृतीय बाह्य चंद्रमंडल का आयाम-विस्तार एवं परिधि कितनी प्रतिपादित हुई है?

हे गौतम! तृतीय बाह्य मंडल का आयाम-विस्तार १००५१४ $\frac{१९}{६१}$ योजन तथा इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में से पांच भाग योजनांश एवं उसकी परिधि ३१७८५५ योजन कही गई है।

इस क्रमानुसार प्रवेश करता हुआ चन्द्र पूर्वमंडल से उत्तर मंडल को संक्रांत करता हुआ प्रत्येक मंडल पर ७२ $\frac{५१}{६१}$ योजन एवं इकसठ भागों में बंटे हुए एक योजन के एक भाग के सात भागों में से एक भाग योजनांश विस्तार वृद्धि कम करता हुआ तथा २३० योजन परिधि वृद्धि कम करता हुआ सर्वाभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है।

चन्द्र-मुहूर्त्त गति

(१८१)

जया णं भंते! चंदे सव्वब्भंतरमण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ, तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं तेवत्तरिं च जोयणाइं सत्तत्तरिं च चोयाले भागसए गच्छइ मण्डलं तेरसहिं सहस्सेहिं सत्तहि य पणवीसेहिं सएहिं छेत्ता इति, तया णं इहगयस्स मणूसस्स सीयालीसाए जोयणसहस्सेहिं दोहि य तेवट्ठेहिं जोयणसएहिं एगवीसाए य सट्ठिभाएहिं जोयणस्स चंदे चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जया णं भंते! चंदे अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ जाव केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं सत्तत्तरिं च जोयणाइं छत्तीसं च चोयत्तरे भागसए गच्छइ मण्डलं तेरसहिं सहस्सेहिं जाव छेत्ता।

जया णं भंते! चंदे अब्भंतरतच्चं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं असीइं च जोयणाइं तेरस य भागसहस्साइं तिण्णि य एगूणवीसे भागसूए गच्छइ मण्डलं तेरसहिं जाव छेत्ता इति।

एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे चंदे तयाणंतराओ जाव संकममाणे २ तिण्णि २ जोयणाइं छण्णउइं च पंचावण्णे भागसए एगमेगे मण्डले मुहुत्तगइं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

जया णं भंते! चंदे सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं एगं च पणवीसं जोयणसयं अउणत्तरिं च णउए भागसए गच्छइ मंडलं तेरसहिं भागसहस्सेहिं सत्तहि य जाव छेत्ता इति।

तया णं इहगयस्स मणूसस्स एक्कतीसाए जोयणसहस्सेहिं अट्ठहि य एगत्तीसेहिं जोयणसएहिं चंदे चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ।

जया णं भंते! बाहिराणंतरं पुच्छा?

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं एक्कं च एक्कवीसं जोयणसयं एक्कारस य सट्ठे भागसहस्से गच्छइ मण्डलं तेरसहिं जाव छेत्ता।

जया णं भंते! बाहिरतच्चं पुच्छा?

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं एगं च अट्ठारसुत्तरं जोयणसयं चोद्दस य पंचुत्तरे भागसए गच्छइ मंडलं तेरसहिं सहस्सेहिं सत्तहिं पणवीसेहिं सएहिं छेत्ता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं खलु एएणं उवाएणं जाव संकममाणे २ तिण्णि २ जोयणाइं छण्णउइं च पंचावण्णे भागसए एगमेगे मण्डले मुहुत्तगइं णिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

भावार्थ - हे भगवन्! जब चन्द्रमा सर्वाभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तो वह प्रतिमुहूर्त कितना क्षेत्र पार करता है?

हे गौतम! वह प्रतिमुहूर्त ५०७३ $\frac{७७४४}{१३७२५}$ योजन क्षेत्र पार करता है। तब वहाँ स्थित (भरतार्द्ध क्षेत्र) मनुष्यों को ४७२६३ $\frac{२१}{६०}$ योजन की दूरी से दिखलाई पड़ता है।

हे भगवन्! जब चन्द्रमा दूसरे आभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तब वह प्रतिमुहूर्त कितने क्षेत्र को पार करता है?

हे गौतम! तब वह प्रतिमुहूर्त ५०७७ $\frac{३६७४}{१३७२५}$ योजन पार क्षेत्र करता है।

हे भगवन्! जब चन्द्रमा तृतीय आभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तो वह प्रतिमुहूर्त कितना क्षेत्र पार करता है?

हे गौतम! तब वह प्रतिमुहूर्त ५०८० $\frac{१३३१९}{१३७२५}$ योजन पार करता है।

इस क्रमानुसार निष्क्रमण करता हुआ चन्द्रमा यावत् प्रत्येक मंडल पर ३ $\frac{९६५५}{१३७२५}$ योजन क्षेत्र पार करता है।

हे भगवन्! जब चन्द्र सर्वबाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तब वह प्रतिमुहूर्त कितना क्षेत्र पार करता है?

हे गौतम! वह ५१२५ $\frac{६९९०}{१३७२५}$ योजन क्षेत्र पार करता है। तब वहाँ अवस्थित लोगों को ३१८३१ योजन की दूरी से दिखलाई देता है।

हे भगवन्! जब चन्द्र द्वितीय बाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तब वह प्रतिमुहूर्त कितना क्षेत्र पार करता है?

हे गौतम! वह प्रतिमुहूर्त ५१२१ $\frac{११६०}{१३७२५}$ योजन क्षेत्र पार करता है।

हे भगवन्! जब चन्द्र तृतीय बाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है तब प्रतिमुहूर्त वह कितना क्षेत्र पार करता है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! तब वह प्रतिमुहूर्त $५११८\frac{१४०५}{१३७२५}$ योजन पार करता है।

इस क्रमानुसार संक्रमण करता हुआ चन्द्रमा एक-एक मंडल पर $३\frac{९६५५}{१३७२५}$ योजन मुहूर्त गति कम करता हुआ सर्वाभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है।

नक्षत्र-मण्डल आदि

(१८२)

कइ णं भंते! णक्खत्तमण्डला पण्णत्ता?

गोयमा! अट्ठ णक्खत्तमण्डला पण्णत्ता।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइयं ओगाहित्ता केवइया णक्खत्तमंडला पण्णत्ता?

गोयमा! जम्बुद्दीवे दीवे असीयं जोयणसयं ओगाहेत्ता एत्थ णं दो णक्खत्त-मंडला पण्णत्ता।

लवणे णं भंते! समुद्दे केवइयं ओगाहेत्ता केवइया णक्खत्तमंडला पण्णत्ता?

गोयमा! लवणे णं समुद्दे तिण्णि तीसे जोयणसए ओगाहित्ता एत्थ णं छ णक्खत्तमंडला पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं जम्बुद्दीवे दीवे लवणसमुद्दे अट्ठ णक्खत्तमंडला भवंतीतिमक्खायं।

सव्वब्भंतराओ णं भंते! णक्खत्तमंडलाओ केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पंचदसुत्तरे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते।

णक्खत्तमंडलस्स णं भंते! णक्खत्तमंडलस्स य एस णं केवइयाए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

गोयमा! दो जोयणाइं णक्खत्तमंडलस्स य णक्खत्तमंडलस्स य अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णक्खत्तमंडले णं भंते! केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं केवइयं बाहल्लेणं पण्णत्ते?

गोयमा! गाउयं आयामविक्खम्भेणं तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं अद्धगाउयं बाहल्लेणं पण्णत्ते।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वब्भंतरे णक्खत्तमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! चोयालीसं जोयणसहस्साइं अट्ठ य वीसे जोयणसए अबाहाए सव्वब्भंतरे णक्खत्तमंडले पण्णत्ते।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते?

गोयमा! पणयालीसं जोयणसहस्साइं तिण्णि य तीसे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते।

सव्वब्भंतरे णं भंते! णक्खत्तमंडले केवइयं आयामविक्खंभेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! णवणउइं जोयणसहस्साइं छच्चचत्ताले जोयणसए आयामविक्खंभेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं पण्णरस जोयणसहस्साइं एगूणणवइं च जोयणाइं किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते।

सव्वबाहिरए णं भंते! णक्खत्तमंडले केवइयं आयामविक्खंभेणं केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?

गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं छच्च सट्ठे जोयणसए आयामविक्खंभेणं तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं अट्ठारस य जोयणसहस्साइं तिण्णि य पण्णरसुत्तरे जोयणसए परिक्खेवेणं पण्णत्ते।

जया णं भंते! णक्खत्ते सव्वब्भंतरमंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं दोण्णि य पण्णट्ठे जोयणसए अट्ठारस य भागसहस्से दोण्णि य तेवट्ठे भागसए गच्छइ मंडलं एक्कवीसाए भागसहस्सेहिं णवहि य सट्ठेहिं सएहिं छेत्ता।

जया णं भंते! णक्खत्ते सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ?

गोयमा! पंच जोयणसहस्साइं तिण्णि य एगूणवीसे जोयणसए सोलस य भागसहस्सेहिं तिण्णि य पणट्ठे भागसए गच्छइ मण्डलं एगवीसाए भागसहस्सेहिं णवहि य सट्ठेहिं सएहिं छेत्ता।

एए णं भंते! अट्ठ णक्खत्तमंडला कइहिं चंदमंडलेहिं समोयरंति?

गोयमा! अट्ठहिं चंदमंडलेहिं समोयरंति, तंजहा-पढमे चंदमंडले तइए० छट्ठे० सत्तमे० अट्ठमे० दसमे० इक्कारसमे० पण्णरसमे चंदमंडले।

एगमेगेणं भंते! मुहुत्तेणं केवइयाइं भागसयाइं गच्छइ?

गोयमा! जं जं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तस्स २ मंडलपरिक्खेवस्स सत्तरस अट्ठे भागसए गच्छइ मंडलं सयसहस्सेणं अट्ठाणउईए य सएहिं छेत्ता इति।

एगमेगेणं भंते! मुहुत्तेणं सूरिए केवइयाइं भागसयाइं गच्छइ?

गोयमा! जं जं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तस्स २ मण्डलपरिक्खेवस्स अट्ठारसतीसे भागसए गच्छइ मण्डलं सयसहस्सेहिं अट्ठाणउईए य सएहिं छेत्ता,

एगमेगेणं भंते! मुहुत्तेणं णक्खत्ते केवइयाइं भागसयाइं गच्छइ?

गोयमा! जं जं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तस्स तस्स मंडलपरिक्खेवस्स अट्ठारस पणतीसे भागसए गच्छइ मंडलं सयसहस्सेणं अट्ठाणउईए य सएहिं छेत्ता।

शब्दार्थ - **समोयरंति** - अन्तर्भूत होते हैं।

भावार्थ - हे भगवन्! नक्षत्र मंडल कितने कहे गए हैं?

हे गौतम! नक्षत्र मंडल आठ कहे गए हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में कितने प्रमाण क्षेत्र का अवगाहन कर कितने नक्षत्र मंडल हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में १८० योजन क्षेत्र का अवगाहन कर दो नक्षत्र मंडल है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! लवण समुद्र में कितने क्षेत्र का अवगाहन कर कितने नक्षत्र मंडल हैं?

हे गौतम! लवण समुद्र में ३३० योजन क्षेत्र का अवगाहन कर छह नक्षत्र मंडल हैं।

इस प्रकार जम्बूद्वीप एवं लवण समुद्र के कुल आठ नक्षत्र मंडल हैं।

हे भगवन्! सर्वाभ्यंतर नक्षत्र मंडल से सर्वबाह्य नक्षत्र मंडल कितनी व्यवधान रहित दूरी पर कहा गया है?

हे गौतम! यह ५१० योजन की व्यवधान शून्य दूरी पर कहा गया है।

हे भगवन्! एक नक्षत्र मण्डल से दूसरे नक्षत्र मंडल का व्यवधान रहित अंतर कितना आख्यात हुआ है?

हे गौतम! यह दो योजन बतलाया गया है।

हे भगवन्! नक्षत्र मंडल का आयाम-विस्तार, परिधि एवं ऊँचाई कितनी कही गई है?

हे गौतम! नक्षत्र मंडल का आयाम-विस्तार दो कोस तथा परिधि इससे तीन गुनी से कुछ ज्यादा तथा ऊँचाई एक कोस कही गई है।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में मंदर पर्वत से सर्वाभ्यंतर नक्षत्र मंडल व्यवधान रहित रूप में कितनी दूरी पर कहा गया है?

हे गौतम! जंबूद्वीप में मंदर पर्वत से सर्वाभ्यंतर नक्षत्र मंडल अव्यवहित रूप में ४४८२० योजन की दूरी पर कहा गया है।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में मंदर पर्वत से सर्व बाह्य नक्षत्र मंडल व्यवधान रहित रूप में कितने अन्तर पर बतलाया गया है?

हे गौतम! यह ४५३३० योजन के अंतर पर बतलाया गया है।

हे भगवन्! सर्वाभ्यंतर नक्षत्र मंडल का आयाम-विस्तार एवं परिधि कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! सर्वबाह्य नक्षत्र मंडल का आयाम-विस्तार ९९६४० योजन एवं परिधि ३१५०८९ से कुछ ज्यादा बतलाई गई है।

हे भगवन्! सर्व बाह्य नक्षत्र मंडल का आयाम-विस्तार तथा परिधि कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! उसका आयाम-विस्तार १००६६० योजन एवं परिधि ३१८३१५ योजन बतलाई गई है।

हे भगवन्! जब नक्षत्र सर्वाभ्यंतर मंडल को उपसंक्रांत कर गति करते हैं तो एक मुहूर्त्त में कितना क्षेत्र पार करते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! वे ५२६५ $\frac{१८२६३}{२१९६०}$ योजन क्षेत्र पार करते हैं।

हे भगवन्! जब नक्षत्र सर्व बाह्य मंडल को उपसंक्रांत कर गति करते हैं तो वे प्रतिमुहूर्त कितना क्षेत्र पार करते हैं?

हे गौतम! वे प्रतिमुहूर्त ५३१९ $\frac{१६३६५}{२१९६०}$ योजन क्षेत्र पार करते हैं।

हे भगवन्! वे आठ नक्षत्र मंडल कितने चन्द्रमंडलों में अन्तर्भूत होते हैं?

हे गौतम! वे पहले, तीसरे, छठे, सातवें, आठवें, दसवें, ग्यारहवें एवं पन्द्रहवें चंद्रमंडल में अन्तर्भूत होते हैं।

हे भगवन्! चन्द्र एक मुहूर्त्त में मंडल परिधि का कितना भाग पार करता है?

हे गौतम! चन्द्रमा जिस-जिस मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है उस-उस मंडल की परिधि का $\frac{१७६८}{१०९८००}$ भाग पार करता है।

हे भगवन्! सूर्य प्रतिमुहूर्त्त मंडल परिधि का कितना भाग पार करता है?

हे गौतम! सूर्य जिस-जिस मंडल को उपसंक्रांत कर गति करता है, उस-उस मंडल की परिधि के $\frac{१८३०}{१०९८००}$ भाग पार करता है।

हे भगवन्! नक्षत्र प्रतिमुहूर्त्त मंडल परिधि का कितना भाग पार करते हैं?

हे गौतम! नक्षत्र जिस-जिस मंडल को उपसंक्रांत कर गति करते हैं, उस-उस मंडल की परिधि का $\frac{१८३५}{१०९८००}$ भाग पार करते हैं।

(१८३)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिया उदीणपाईणमुग्गच्छ पाईणदाहिणमागच्छंति १ पाईणदाहिणमुग्गच्छ दाहिणपडीणमागच्छंति २ दाहिणपडीणमुग्गच्छ पडीण-उदीणमागच्छंति ३ पडीणउदीणमुग्गच्छ उदीणपाईणमागच्छंति ४?

हंता गोयमा! जहा पंचमसए पढमे उद्देसे ज़ाव णेवत्थि० उस्सप्पिणी अवट्ठिए णं तत्थ काले प० समणाउसो!, इच्चेसा जम्बुद्दीवपण्णत्ती सूरपण्णत्ती वत्थुसमासेणं सम्मत्ता भवइ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे चंदिमा उदीणपाईणमुग्गच्छ पाईणदाहिणमागच्छंति जहा सूरवत्तव्वया जहा पंचमसयस्स दसमे उद्देसे जाव अवट्ठिए णं तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो!, इच्चेसा जम्बुद्दीवपण्णत्ती चंदपण्णत्ती वत्थुसमासेणं सम्मत्ता भवइ।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में दो सूर्य उत्तर-पूर्व दिक्कोण में उदित होकर क्या दक्षिण पूर्व कोण में आते हैं? क्या दक्षिण-पूर्व कोण में उदित होकर दक्षिण पश्चिम कोण में अस्त होते हैं? क्या दक्षिण-पश्चिम कोण में उदित होकर पश्चिमोत्तर कोण में आते हैं? क्या पश्चिमोत्तर कोण में उदित होकर उत्तर-पूर्व में आते हैं?

हाँ, गौतम! ऐसा ही होता है। भगवती सूत्र, पंचम शतक प्रथम उद्देशक में यावत् '**णेवत्थि उस्सप्पिणी अवट्ठिए णं तत्थकाले पण्णत्ते**' तक जो वर्णन हुआ है, वह इस संदर्भ में ज्ञातव्य ग्राह्य है।

हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति में सूर्य विषयक वर्णन यहाँ संक्षेप में समाप्त होता है।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में दो चन्द्रमा उत्तर-पूर्व कोण में उदित होकर दक्षिण पूर्व कोण में आते हैं इत्यादि सूर्य के सदृश वर्णन भगवती सूत्र पंचम शतक, दशम उद्देशक में आए हुए यावत् '**अवट्ठिए णं तत्थ काले पण्णत्ते**' तक से ज्ञातव्य है।

हे आयुष्मन् श्रमण गौतम! जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र में चंद्र विषयक वर्णन यहाँ संक्षिप्त रूप में समाप्त होता है।

संवत्सर-भेद

(१८४)

कइ णं भंते! संवच्छरा पण्णत्ता?

गोयमा! पंच संवच्छरा पण्णत्ता, तंजहा-णक्खत्तसंवच्छरे जुगसंवच्छरे पमाणसंवच्छरे लक्खणसंवच्छरे सणिच्छरसंवच्छरे।

णक्खत्तसंवच्छरे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! दुवालसविहे पण्णत्ते, तं०-सावणे भद्दवए आसोए जाव आसाढे, जं वा विहप्फई महग्गहे दुवालसेहिं संवच्छरेहिं सव्वणक्खत्त मण्डलं समाणेइ सेत्तं णक्खत्तसंवच्छरे।

जुगसंवच्छरे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा-चंदे चंदे अभिवड्ढिए चंदे अभिवड्ढिए चेवेति, पढमस्स णं भंते! चंदसंवच्छरस्स कइ पव्वा पण्णत्ता?

गोयमा! चउव्वीसं पव्वा पण्णत्ता।

बिइयस्स णं भंते! चंदसंवच्छरस्स कइ पव्वा पण्णत्ता?

गोयमा! चउव्वीसं पव्वा पण्णत्ता।

एवं पुच्छा तइयस्स।

गोयमा! अभिवड्ढिय संवच्छरस्स छव्वीसं पव्वा पण्णत्ता, चउत्थस्स० चंदसंवच्छरस्स० चोव्वीसं पव्वा०, पंचमस्स णं० अभिवड्ढियस्स० छव्वीसं पव्वा पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं पंचसंवच्छरिए जुए एगे चउव्वीसे पव्वसए पण्णत्ते, सेत्तं जुगसंवच्छरे।

पमाणसंवच्छरे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा-णक्खत्ते चंदे उऊ आइच्चे अभिवड्ढिए, सेत्तं पमाणसंवच्छरे।

लक्खणसंवच्छरे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा-

"समयं णक्खत्ता जोगं, जोयंति समयं उऊ परिणमंति।
णच्चुण्ह णाइसीओ, बहूदओ होइ णक्खत्ते॥१॥
ससि समगपुण्णमासिं जोएंति विसमचारिणक्खत्ता।
कडुओ बहूदओ य, तमाहु संवच्छरं चंदं॥२॥

विसमं पवालिणो परिणमंति अणुऊसु दिंति पुप्फफलं।
वासं ण सम्म वासइ, तमाहु संवच्छरं कम्मं॥३॥
पुढविदगाणं च रसं पुप्फफलाणं च देह आइच्चो।
अप्पेणवि वासेणं सम्मं णिप्फज्जए सस्सं॥४॥
आइच्चतेयतविया खणलवदिवसा उऊ परिणमंति।
पूरेइ य णिण्णथले तमाहु अभिवड्ढियं जाण॥५॥"

से लक्खण संवच्छरे।

सणिच्छरसंवच्छरे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?

गोयमा! अट्ठावीसइविहे पण्णत्ते, तंजहा-

अभिई सवणे धणिट्ठा सयभिसया दो य होंति भद्दवया।
रेवइ अस्सिणि भरणी, कत्तिय तह रोहिणी चेव॥१॥

जाव उत्तराओ आसाढाओ जं वा सणिच्चरे महग्गहे तीसाए संवच्छरेहिं सव्वं णक्खत्तमण्डलं समाणेइ सेत्तं सणिच्छरसंवच्छरे।

शब्दार्थ - **विहप्फई** - वृहस्पति।

भावार्थ - हे भगवन्! संवत्सर कितने प्रतिपादित हुए हैं?

हे गौतम! वे पांच बतलाए गए हैं - १. नक्षत्र संवत्सर २. युग संवत्सर ३. प्रमाण संवत्सर ४. लक्षण संवत्सर ५. शनैश्चर संवत्सर।

हे भगवन्! नक्षत्र संवत्सर कितनी तरह का कहा गया है?

हे गौतम! वह बारह तरह का कहा गया है - श्रावण, भाद्रपद, आश्विन यावत् आषाढ। अथवा बृहस्पति, महाग्रह बारह वर्षों में जो समस्त नक्षत्र मण्डल को पार करता है, वह काल विशेष भी नक्षत्र संवत्सर के नाम से अभिहित होता है।

हे भगवन्! युग संवत्सर कितने प्रकार का कहा गया है?

हे गौतम! यह पांच प्रकार का बतलाया गया है - १. चन्द्र संवत्सर २. चन्द्र संवत्सर ३. अभिवर्द्धित संवत्सर ४. चंद्र संवत्सर ५. अभिवर्द्धित संवत्सर।

हे भगवन्! प्रथम चन्द्र संवत्सर के कितने पर्व-पक्ष कहे गए हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! उसके चौबीस पक्ष कहे गए हैं।

हे भगवन्! द्वितीय चन्द्र संवत्सर के कितने पक्ष कहे गए हैं?

हे गौतम! उसके भी चौबीस पक्ष बतलाए गए हैं।

हे भगवन्! तृतीय अभिवर्द्धित संवत्सर के कितने पक्ष बतलाए गए हैं?

हे गौतम! उसके २६ पक्ष बतलाए गए हैं।

चौथे चन्द्र संवत्सर के भी २४ एवं पांचवें अभिवर्द्धित संवत्सर के २६ पक्ष कहे गए हैं। पांच भेदों में बंटे हुए युग संवत्सर के सारे १२४ पक्ष होते हैं।

हे भगवन्! प्रमाण संवत्सर कितनी तरह का कहा गया है?

हे गौतम! यह पांच तरह का कहा गया है - १. नक्षत्र २. चन्द्र ३. ऋतु ४. आदित्य ५. अभिवर्द्धित संवत्सर।

हे भगवन्! लक्षण संवत्सर कितनी तरह का कहा गया है?

हे गौतम! यह पांच प्रकार का कहा गया है-

गाथाएं - १. समक संवत्सर - जिसमें कृतिका आदि नक्षत्र समरूप में होते हैं - जो नक्षत्र जिन तिथियों में स्वाभाविक रूप में होते हैं, तदनुरूप कार्तिकी पूर्णिमा आदि तिथियों से-मासान्तिक तिथियों से योग करते हैं, जिसमें ऋतुएं समरूप में - न अधिक उष्ण तथा न अधिक शीतल होती हैं, जो विपुल जलयुक्त-वृष्टि युक्त होता है, वह समक् संवत्सर के नाम से अभिहित हुआ है॥१॥

२. चन्द्र संवत्सर - जब चन्द्रमा के साथ पूर्णिमा में विषम-मास विसदृश नाम युक्त नक्षत्र का योग होता है, जो कटुक - ऊष्मा, शैत्य, रोग आदि की बहुतायत के कारण कष्ट-कर होता है, अतिवृष्टि युक्त होता है, वह चन्द्र संवत्सर कहा जाता है।

३. कर्म संवत्सर - जहाँ असमय में वनस्पति अंकुरित होती है, विपरीत ऋतु में पुष्प, फल आदि फलते-फूलते हैं, जिसमें यथोचित वृष्टि नहीं होती, उसे कर्म संवत्सर के नाम से अभिहित किया गया है।

४. आदित्य संवत्सर - जिसमें सूरज, पृथ्वी, जल, फूल, फल इन सबको रस प्रदान करता है, जिसमें स्वल्प वृष्टि से ही धान्य भलीभांति उत्पन्न होता है, वह आदित्य संवत्सर कहा जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५. अभिवर्द्धित संवत्सर - जिसमें क्षण, लव, दिन, ऋतु सूर्य के तेज से तपे रहते हैं, जिसमें नीचे के स्थान पानी से भरे रहते हैं, उसे अभिवर्द्धित संवत्सर कहते हैं।

हे भगवन्! शनैश्चर संवत्सर कितनी तरह का कहा गया है?

हे गौतम! वह अट्ठाईस तरह का कहा गया है -

अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, सतभिषक, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, भरिणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा एवं उत्तराषाढ़ा।

अथवा शनैश्चर महाग्रह तीस संवत्सरों-वर्षों में समग्र नक्षत्र मंडल को पार करता है। वह काल शनैश्चर संवत्सर के नाम से अभिहित हुआ है।

विवेचन - अधिक मास होने के कारण अभिवृद्धित संवत्सर के दो पर्व-पक्ष अधिक होते हैं इसलिए चौबीस के स्थान पर छब्बीस पर्व कहे गये हैं।

मास, पक्ष आदि

(१८५)

एगमेगस्स णं भंते! संवच्छरस्स कइ मासा पण्णत्ता?

गोयमा! दुवालस मासा पण्णत्ता, तेसि णं दुविहा णामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा-लोइया लोउत्तरिया य, तत्थ लोइया णामा इमे, तंजहा-सावणे भद्दवए जाव आसाढे, लोउत्तरिया णामा इमे, तंजहा-

अभिणंदिए पइट्ठे य, विजए पीइवद्धणे।
सेयंसे य सिवे चेव, सिसिरे य सहेमवं॥१॥
णवमे वसंतमासे, दसमे कुसुमसंभवे।
एक्कारसे णिदाहे य, वणविरोहे य बारसे॥२॥

एगमेगस्स णं भंते! मासस्स कइ पक्खा पण्णत्ता?

गोयमा! दो पक्खा पण्णत्ता, तंजहा-बहुलपक्खे य सुक्कपक्खे य।

एगमेगस्स णं भंते! पक्खस्स कइ दिवसा पण्णत्ता?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! पण्णरस दिवसा पण्णत्ता, तंजहा-पडिवादिवसे बिइयादिवसे जाव पण्णरसीदिवसे।

एएसि णं भंते! पण्णरसण्हं दिवसाणं कइ णामधेज्जा पण्णत्ता?

गोयमा! पण्णरस णामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा-

पुव्वंगे सिद्धमणोरमे य तत्तो मणोहरे चेव।
जसभद्दे य जसधरे छट्ठे सव्वकामसमिद्धे य॥१॥
इंदमुद्धाभिसित्ते य सोमणस धणंजए य बोद्धव्वे।
अत्थसिद्धे अभिजाए अच्चसणे सयंजए चेव॥२॥
अग्गिवेसे उवसमे दिवसाणं होंति णामधिज्जाइं।

एएसि णं भंते! पण्णरसण्हं दिवसाणं कइ तिही पण्णत्ता?

गोयमा! पण्णरस तिही पण्णत्ता, तंजहा-णंदे भद्दे जए तुच्छे पुण्णे पक्खस्स पंचमी, पुणरवि णंदे भद्दे जए तुच्छे पुण्णे पक्खस्स दसमी, पुणरवि णंदे भद्दे जए तुच्छे पुण्णे पक्खस्स पण्णरसी, एवं ते तिगुणा तिहीओ सव्वेसिं दिवसाणंति।

एगमेस्स णं भंते! पक्खस्स कइ राईओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! पण्णरस राईओ पण्णत्ताओ, तंजहा-पडिवा राई जाव पण्णरसी राई।

एयासि णं भंते! पण्णरसण्हं राईणं कइ णामधेज्जा पण्णत्ता?

गोयमा! पण्णरस णामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा-

उत्तमा य सुणक्खत्ता, एलावच्चा जसोहरा।
सोमणसा चेव तहा, सिरिसंभूया य बोद्धव्वा॥१॥
विजया य वेजयंति जयंति अपराजिया य इच्छा य।
समाहारा चेव तहा तेया य तहा अईतेया॥२॥
देवाणंदा णिरई रयणीणं णामधिज्जाइं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एयासि णं भंते! पण्णरसण्हं राईणं कइ तिही पण्णत्ता?

गोयमा! पण्णरस तिही पण्णत्ता, तंजहा-उग्गवई भोगवई जसवई सव्वसिद्धा सुहणामा, पुणरवि उग्गवई भोगवई जसवई सव्वसिद्धा सुहणामा, पुणरवि उग्गवई भोगवई जसवई सव्वसिद्धा सुहणामा, एवं तिगुणा एए तिहीओ सव्वेसिं राईणं,

एगमेगस्स णं भंते! अहोरत्तस्स कइ मुहुत्ता पण्णत्ता?

गोयमा! तीसं मुहुत्ता पण्णत्ता, तंजहा-

रुद्दे सेए मित्ते वाउ सुबीए तहेव अभिचंदे।
माहिंद बलव बंभे बहुसच्चे चेव ईसाणे॥१॥
तट्ठे य भावियप्पा वेसमणे वारुणे य आणंदे।
विजए य वीससेणे पायावच्चे उवसमे य॥२॥
गंधव्व अग्गिवेसे सयवसहे आयवे य अममे य।
अणवं भोमे वसहे सव्वट्ठे रक्खसे चेव।

भावार्थ - हे भगवन्! प्रत्येक संवत्सर में कितने मास कहे गए हैं?

हे गौतम! प्रत्येक संवत्सर में बारह मास बतलाए गए हैं। उनके लौकिक तथा लोकोत्तर के रूप में दो तरह के नाम अभिहित हुए हैं - १. लौकिक २. लोकोत्तर।

इनमें लौकिक नाम इस तरह हैं - १. श्रावण, २. भाद्रपद तथा ३. आषाढ़ आदि।

लोकोत्तर नाम इस प्रकार हैं - १. अभिनंदित २. प्रतिष्ठित ३. विजय ४. प्रीतिवर्द्धन ५. श्रेयस् ६. शिव ७. शिशिर ८. हिमवान् ९. बसंतमास १०. कुसुमसंभव ११. निदाघ और १२. वन विरोह।

हे भगवन्! प्रत्येक मास में कितने पक्ष अभिहित हुए हैं?

हे गौतम! प्रत्येक मास में कृष्ण एवं शुक्ल - दो पक्ष अभिहित हुए हैं।

हे भगवन्! प्रत्येक पक्ष में कितने दिन कहे गए हैं?

हे गौतम! प्रत्येक पक्ष के १५ दिन कहे गए हैं -

प्रतिपदा, द्वितीया यावत् पंचदसी (पंचदशी) दिवस - अमावस्या या पूर्णिमा का दिन।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! इन १५ दिनों के क्या-क्या नाम बतलाए गये हैं?

हे गौतम! उनके १५ नाम इस प्रकार हैं - १. पूर्वांग २. सिद्धमनोरम ३. मनोहर ४. यशोभद्र ५. यशोधर ६. सर्वकाम समृद्ध ७. इन्द्रमूर्धाभिषिक्त ८. सौमनस ९. धनंजय १०. अर्थसिद्ध ११. अभिजात १२. अत्यशन १३. शतंजय १४. अग्निवेश्म और १५. उपशम।

हे भगवन्! इन १५ दिनों की तिथियाँ किन-किन नामों से अभिहित हुई है?

हे गौतम! इनकी पन्द्रह तिथियाँ इन नामों से अभिहित हुई हैं - १. नंदा २. भद्रा ३. जया ४. तुच्छा ५. पूर्णा, पुनश्चय ६. नंदा ७. भद्रा ८. जया ९. तुच्छा १०. पूर्णा, पुश्नच ११. नंदा १२. भद्रा १३. जया १४. तुच्छा १५. पूर्णा।

इस प्रकार तीन आवृत्तियों में पन्द्रह तिथियाँ होती है।

हे भगवन्! प्रत्येक पक्ष में कितनी रात्रियाँ कही गई हैं?

हे गौतम! प्रत्येक पक्ष में १५ रात्रियाँ कही गई हैं - यथा - प्रतिपदा रात्रि यावत् पंचदसी (अमावस्या या पूर्णिमा की) रात्रि।

हे भगवन्! इन पन्द्रह रात्रियों के क्या-क्या नाम कहे गए हैं?

हे गौतम! इनके पन्द्रह नाम कहे गए हैं - १. उत्तमा २. सुनक्षत्रा ३. एलापत्या ४. यशोधरा ५. सौमनसा ६. श्रीसंभूता ७. विजया ८. वैजयन्ती ९. जयंती १०. अपराजिता ११. इच्छा १२. समाहारा १३. तेजा १४. अतितेजा १५. देवानंदा अथवा निरति।

हे भगवन्! इन पन्द्रह रात्रियों की कौन-कौन सी तिथियाँ कही गई हैं?

हे गौतम! इनके नाम इस प्रकार हैं - १. उग्रवती २. भोगवती ३. यशोमती ४. सर्व सिद्धा ५. शुभनामा पुनश्च ६. उग्रवती ७. भोगवती ८. यशोमती ९. सर्वसिद्धा १०. शुभनामा पुनरपि ११. उग्रवती १२ भागवती १३. यशोमती १४. सर्वसिद्धा १५. शुभनामा। इस प्रकार तीन आवृत्तियों में समस्त रात्रियों की तिथियों का समावेश हो जाता है।

हे भगवन्! प्रत्येक अहोरात्र में कितने मुहूर्त्त कहे गए हैं?

हे गौतम! तीस मुहूर्त्त कहे गए हैं - रुद्र, श्रेय, मित्र, वायु, सुपीत, अभिचंद्र, माहिंद्र, बलवान, ब्रह्म, बहुसत्य, ईशान, त्वष्टा, भावितात्मा, वैश्रमण, वारुण, आनंद, विजय, विश्वसेन, प्राजापत्य, उपशम, गंधर्व, अग्निवेश्म, शतवृषभ, आतप, अमम, ऋणवत्, भौम, वृषभ, सर्वार्थ तथा राक्षस।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करण विवेचन

(१८६)

कइ णं भंते! करणा पण्णत्ता?

गोयमा! एक्कारस करणा पण्णत्ता, तंजहा-बवं बालवं कोलवं थीविलोयणं गराइ वणिजं विट्ठी सउणी चउप्पयं णागं किंथुग्धं।

एएसि णं भंते! एक्कारसण्हं करणाणं कइ करणा चरा कइ करणा थिरा पण्णत्ता?

गोयमा! सत्त करणा चरा चत्तारि करणा थिरा पण्णत्ता, तंजहा-बवं बालवं कोलवं थीविलोयणं गराइ वणिजं विट्ठी, एए णं सत्त करणा चरा, चत्तारि करणा थिरा पण्णत्ता, तंजहा-सउणी चउप्पयं णागं किंथुग्घं, एए णं चत्तारि करणा थिरा पण्णत्ता।

एए णं भंते! चरा थिरा वा कया भवंति?

गोयमा! सुक्कपक्खस्स पडिवाए राओ बवे करणे भवइ, बिइयाए दिवा बालवे करणे भवइ, राओ कोलवे करणे भवइ, तइयाए दिवा थीविलोयणं करणं भवइ, राओ गराइकरणं भवइ, चउत्थीए दिवा वणिजं राओ विट्ठी पंचमीए दिवा बवं राओ बालवं छट्ठीए दिवा कोलवं राओ थीविलोयणं सत्तमीए दिवा गराइ राओ वणिजं अट्ठमीए दिवा विट्ठी राओ बवं णवमीए दिवा बालवं राओ कोलवं दसमीए दिवा थीविलोयणं राओ गराइ एक्कारसीए दिवा वणिजं राओ विट्ठी बारसीए दिवा बवं राओ बालवं तेरसीए दिवा कोलवं राओ थीविलोयणं चउद्दसीए दिवा गराइकरणं राओ वणिजं पुण्णिमाए दिवा विट्ठीकरणं राओ बवं करणं भवइ।

बहुलपक्खस्स पडिवाए दिवा बालवं राओ कोलवं बिइयाए दिवा थीविलोयणं राओ गराइ तइयाए दिवा वणिजं राओ विट्ठी चउत्थीए दिवा बवं राओ बालवं पंचमीए दिवा कोलवं राओ थीविलोयणं छट्ठीए दिवा गराइ राओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वणिजं सत्तमीए दिवा विट्ठी राओ बवं अट्ठमीए दिवा बालवं राओ कोलवं णवमीए दिवा थीविलोयणं राओ गराइ दसमीए दिवा वणिजं राओ विट्ठी एक्कारसीए दिवा बवं राओ बालवं बारसीए दिवा कोलवं राओ थीविलोयणं तेरसीए दिवा गराइ राओ वणिजं चउद्दसीए दिवा विट्ठी राओ सउणी अमावासाए दिवा चउप्पयं राओ णागं सुक्कपक्खस्स पाडिवए दिवा किंथुग्घं करणं भवइ।

भावार्थ - हे भगवन्! करण कितने आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! वे ग्यारह कहे गए हैं।

१. बव २. बालव ३. कौलव ४. स्त्री विलोचन ५ गरादि ६. वणिज ७. विष्टि ८. शकुनी ९. चतुष्पद १०. नाग और ११. किंस्तुघ्न।

हे भगवन्! इन ग्यारह करणों में कितने करण चर एवं कितने करण स्थिर - अचर कहे गए हैं?

हे गौतम! इसमें सात चर एवं चार स्थिर - अचर कहे गए हैं।

बव, बालव, कौलव, स्त्री विलोचन, गरादि, वणिज तथा विष्टि - ये सात करण चर कहे गए हैं।

शकुनी, चतुष्पद, नाग एवं किंस्तुघ्न - ये चार स्थित कहे गये हैं।

हे भगवन्! ये चर एवं स्थिर करण कब-कब होते हैं?

हे गौतम! शुक्लपक्ष की प्रतिपदा की रात्रि में बव करण होता है। द्वितीया को दिन में बालव करण, रात्रि में कौलव करण होता है। तृतीया को दिन में स्त्री विलोचन करण होता है तथा रात्रि में गरादि करण होता है। चतुर्थी को दिन में वणिज करण और रात्रि में विष्टि करण होता है। पंचमी को दिन में बव करण तथा रात्रि में बालव करण होता है। षष्ठी को दिन में कौलव करण और रात्रि में स्त्री विलोचन करण होता है। सप्तमी को दिन में गरादि करण तथा रात्रि में वणिज करण होता है। अष्टमी को दिन में विष्टि करण तथा रात्रि में बव करण होता है। नवमी को दिन में बालव करण और रात्रि में कौलव करण होता है। दशमी को दिन में स्त्री विलोचन करण तथा रात्रि में गरादि करण होता है। एकादशी के दिन में वणिज करण एवं रात्रि में विष्टि करण होता है। द्वादशी को दिन में बव करण तथा रात्रि में बालव करण होता है। त्रयोदशी को दिन में कौलव करण एवं रात्रि में स्त्रीविलोचन करण होता है। चतुर्दशी को दिन में गरादि करण एवं रात्रि में वणिज करण होता है। पूर्णिमा को दिन में विष्टि करण एवं रात्रि में बव करण होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को दिन में बालव करण तथा रात्रि में कौलव करण होता है। द्वितीया को दिन में स्त्री विलोचनकरण तथा रात्रि में गरादि करण होता है। तृतीया को दिन में वणिज करण तथा रात्रि में विष्टि करण होता है। चतुर्थी को दिन में बव करण एवं रात्रि में बालव करण होता है। पंचमी को दिन में कौलव करण एवं रात्रि में स्त्री विलोचन करण होता है। षष्ठी को दिन में गरादि करण तथा रात्रि में वणिज करण होता है। सप्तमी को दिन में विष्टि करण और रात्रि में बव करण होता है। अष्टमी को दिन में बालव करण और रात्रि में कौलव करण होता है। नवमी को दिन में स्त्री विलोचन करण एवं रात्रि में गरादि करण होता है। दशमी को दिन में वणिज करण और रात्रि में विष्टि करण होता है। एकादशी को दिन में बव करण और रात्रि में बालव करण होता है। द्वादशी को दिन में कौलव करण और रात्रि में स्त्री विलोचन करण होता है। त्रयोदशी को दिन में गरादि करण और रात्रि में वणिज करण होता है। चतुर्दशी को दिन में विष्टि करण और रात्रि में शकुनी करण होता है। अमावस्या को दिन में चतुष्पद करण और रात्रि में नाग करण होता है।

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को दिन में किंस्तुघ्न करण होता है।

संवत्सर, अयन, ऋतु आदि

(१८७)

किमाइया णं भंते! संवच्छरा किमाइया अयणा किमाइया उऊ किमाइया मासा किमाइया पक्खा किमाइया अहोरत्ता किमाइया मुहुत्ता किमाइया करणा किमाइया णक्खत्ता पण्णत्ता?

गोयमा! चंदाइया संवच्छरा दक्खिणाइया अयणा पाउसाइया उऊ सावणाइया मासा बहुलाइया पक्खा दिवसाइया अहोरत्ता रोद्दाइया मुहुत्ता बालवाइया करणा अभिजियाइया णक्खत्ता पण्णत्ता समणाउसो! इति।

पंचसंवच्छरिए णं भंते! जुगे केवइया अयणा केवइया उऊ एवं मासा पक्खा अहोरत्ता केवइया मुहुत्ता पण्णत्ता?

गोयमा! पंचसंवच्छरिए णं जुगे दस अयणा तीसं उऊ सट्ठी मासा एगे वीसुत्तरे पक्खसए अट्ठारसतीसा अहोरत्तसया चउप्पण्णं मुहुत्तसहस्सा णव सया पण्णत्ता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - आइया - आदिम-प्रथम।

भावार्थ - हे भगवन्! संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र, मुहूर्त करण तथा नक्षत्र इनमें आदिम-प्रथम कौन-कौन से हैं?

आयुष्मन् श्रमण गौतम! इनमें क्रमशः चंद्र संवत्सर, दक्षिण अयन, पावस ऋतु, श्रावण मास, कृष्ण पक्ष, दिवस अहोरात्र, रुद्र मुहूर्त, बालव करण तथा अभिजित नक्षत्र - ये आदिम या प्रथम हैं।

हे भगवन्! पांच संवत्सरों के युग में अयन, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र तथा मुहूर्त कितने-कितने आख्यात हुए हैं?

हे गौतम! पांच संवत्सरों के युग में क्रमशः १० अयन, ३० ऋतु, ६० मास, १२० पक्ष, १८३० अहोरात्र तथा ५४९०० मुहूर्त बतलाए गए हैं।

नक्षत्र

(१८८)

गाहा - जोगा १ देवय २ तारग्ग ३ गोत्त ४ संठाण ५ चंदरविजोगा ६।
कुल ७ पुण्णिम अमवस्सा य ८ सण्णिवाए ९ य णेया य १०॥१॥

कइ णं भंते! णक्खत्ता पण्णत्ता?

गोयमा! अट्ठावीसं णक्खत्ता पण्णत्ता, तंजहा-अभिई १ सवणो २ धणिट्ठा ३ सयभिसया ४ पुव्वभद्दवया ५ उत्तरभद्दवया ६ रेवई ७ अस्सिणी ८ भरणी ९ कत्तिया १० रोहिणी ११ मियसिर १२ अद्दा १३ पुणव्वसू १४ पूसो १५ अस्सेसा १६ मघा १७ पुव्वफग्गुणी १८ उत्तरफग्गुणी १९ हत्थो २० चित्ता २१ साई २२ विसाहा २३ अणुराहा २४ जेट्ठा २५ मूलं २६ पुव्वासाढा २७ उत्तरासाढा २८ इति।

भावार्थ - गाथा - योग, देवता, ताराग्र, गोत्र, संस्थान, चन्द्र - रवि योग, कुल, पूर्णिमा - अमावस्या सन्निपात तथा नेता (मास का परिसमापक नक्षत्र गण) ये यहाँ विवक्षित हैं॥१॥

हे भगवन्! नक्षत्र कितने कहे गए हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! वे अट्ठाईस बतलाए गए हैं - १. अभिजित २. श्रवण ३. धनिष्ठा ४. शतभिषक ५. पूर्वभाद्रपदा ६. उत्तर भाद्रपदा ७. रेवती ८. अश्विनी ९. भरणी १०. कृत्तिका ११. रोहिणी १२. मृगशिरा १३. आर्द्रा १४. पुनर्वसु १५. पुष्य १६. अश्लेषा १७. मघा १८. पूर्वाफाल्गुनी १९. उत्तराफाल्गुनी २०. हस्त २१. चित्रा २२. स्वाति २३. विशाखा २४. अनुराधा २५. ज्येष्ठा २६. मूल २७. पूर्वाषाढ़ा और २८ उत्तराषाढ़ा।

नक्षत्र योग

(१८९)

एएसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं कयरे णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणेणं जोयं जोएंति, कयरे णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स उत्तरेणं जोयं जोएंति, कयरे णक्खत्ता जे णं चंदस्स दाहिणेणवि उत्तरेणवि पमद्दंपि जोयं जोएंति, कयरे णक्खत्ता जे णं चंदस्स दाहिणेणंपि पमद्दंपि जोयं जोएंति, कयरे णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स पमद्दं जोयं जोएंति?

गोयमा! एएसि णं अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं तत्थ णं जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणेणं जोयं जोएंति ते णं छ, तंजहा-

मियसिरं १ अद्द २ पुस्सो ३ ऽसिलेस ४ हत्थो ५ तहेव मूलो य ६।
बाहिरओ बाहिरमंडलस्स छप्पेते णक्खत्ता॥१॥

तत्थ णं जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स उत्तरेणं जोयं जोएंति ते णं बारस, तंजहा-अभिई सवणो धणिट्ठा सयभिसया पुव्वभद्दवया उत्तरभद्दवया रेवई अस्सिणी भरणी पुव्वाफग्गुणी उत्तराफग्गुणी साई, तत्थ णं जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणओवि उत्तरओवि पमद्दंपि जोयं जोएंति ते णं सत्त, तंजहा- कत्तिया रोहिणी पुणव्वसू मघा चित्ता विसाहा अणुराहा, तत्थ णं जे ते णक्खत्त जे णं सया चंदस्स दाहिणओवि पमद्दंपि जोयं जोएंति ताओ णं दुवे आसाढाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सव्वबाहिरए मंडले जोयं जोइंसु वा ३, तत्थ णं जे ते णक्खत्ते जे णं सया चंदस्स पमद्दं० जोएइ सा णं एगा जेट्ठा इति।

शब्दार्थ - पमद्दंपि - प्रमर्दितकर - चीरकर।

भावार्थ - हे भगवन्! इन अट्ठाईस नक्षत्रों में कितने ऐसे नक्षत्र हैं, जो सदैव चन्द्रमा की दक्षिण दिशा में स्थित होते हुए, इनके साथ योग करते हैं? कितने नक्षत्र ऐसे हैं, जो सदा चन्द्रमा के उत्तर में स्थित होते हुए इससे योग करते हैं? कितने नक्षत्र ऐसे हैं, जो चन्द्रमा के दक्षिण में भी एवं उत्तर में भी नक्षत्र विमानों को चीर कर योग करते हैं। कितने नक्षत्र ऐसे हैं, चन्द्रमा के दक्षिण में नक्षत्र विमानों को चीर कर चन्द्रमा से योग करते हैं?

हे गौतम! इन २८ नक्षत्रों में से जो नक्षत्र सदा चन्द्रमा के दक्षिण में स्थित होते हुए योग करते हैं, वे छह हैं - १. मृगशिरा २. आर्द्रा ३. पुष्य ४. अश्लेषा ५. हस्त ६. मूल।

चन्द्र संबंधी मंडलों के बाहर से ही ये छह नक्षत्र योग करते हैं।

अट्ठाईस नक्षत्रों में जो नक्षत्र सदा चन्द्रमा के उत्तर में स्थित होते हैं, वे बारह हैं - १. अभिजित २. श्रवण ३. धनिष्ठा ४. शतभिषक ५. पूर्वाभाद्रपदा ६. उत्तरभाद्रपदा ७. रेवती ८. अश्विनी ९. भरणी १०. पूर्वाफाल्गुनी ११. उत्तराफाल्गुनी और १२. स्वाति।

अट्ठाईस नक्षत्रों में जो नक्षत्र नित्य चन्द्रमा के दक्षिण में भी तथा उत्तर में भी नक्षत्र विमानों को प्रमर्दित कर चन्द्र के साथ योग करते हैं, वे सात हैं - १. कृत्तिका २. रोहिणी ३. पुनर्वसु ४. मघा ५. चित्रा ६. विशाखा और ७. अनुराधा।

इन नक्षत्रों में से जो सदा चन्द्रमा के दक्षिण में नक्षत्र विमानों को चीर कर उससे योग करते हैं, वे पूर्वाषाढ़ा तथा उत्तराषाढ़ा के रूप में दो हैं।

ये दोनों सदैव सर्व बाह्य मंडल में स्थित होते हुए चन्द्रमा के साथ योग करते हैं।

इन नक्षत्रों में से जो सदा नक्षत्र विमानों को चीर कर चन्द्र से योग करता है, वह ज्येष्ठा नक्षत्र है।

नक्षत्रों के देवता

(१९०)

एएसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिई णक्खत्ते किंदेवयाए पण्णत्ते?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! बम्हदेवयाए पण्णत्ते, सवणे णक्खत्ते विण्हुदेवयाए पण्णत्ते, धणिट्ठा० वसुदेवयाए पण्णत्ते, एएणं कमेणं णेयव्वा अणुपरिवाडी इमाओ देवयाओ-बम्हा विण्हू वसू वरुणे अए अभिवड्ढी पूसे आसे जमे अग्गी पयावई सोमे रुद्दे अदिई वहस्सई सप्पे पिऊ भगे अज्जम सविया तट्ठा वाऊ इंदग्गी मित्तो इंदे णिरई आऊ विस्सा य, एवं णक्खत्ताणं एसा परिवाडी णेयव्वा जाव उत्तरासाढा किंदेवया पण्णत्ता?

गोयमा! विस्सदेवया पण्णत्ता।

शब्दार्थ - अणुपरिवाडी - अनुपरिपाटी - क्रमशः।

भावार्थ - हे भगवन्! इन अट्ठाईस नक्षत्रों में अभिजित आदि नक्षत्रों के कौन-कौन देवता कहे गए हैं?

हे गौतम! अभिजित, श्रवण एवं धनिष्ठा नक्षत्र के क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु एव वसु देवता कहे गये हैं। पहले नक्षत्र से अट्ठाईस नक्षत्र तक के देवता क्रमशः इस प्रकार हैं - ब्रह्मा, विष्णु, वसु, वरुण, अज, अभिवृद्धि, पूसा, अश्व, यम, अग्नि, प्रजापति, सोम, रुद्र, अदिति, बृहस्पति, सर्प, पितृ, भग, अर्यमा, सविता, त्वष्टा, वायु, इन्द्राग्नि, मित्र, इन्द्र, नेर्ऋत, आप एवं विश्वेदेवा।

उत्तराषाढा नक्षत्र पर्यन्त यह क्रम ग्राह्य है।

अन्त में यावत् उत्तराषाढ़ा का कौन देवता है?

हे गौतम! विश्वेदेवा इसके देवता बतलाए गए हैं।

नक्षत्र संबद्ध तारे

(१९१)

एएसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिई णक्खत्ते कइतारे पण्णत्ते?

गोयमा! तितारे पण्णत्ते, एवं णेयव्वा जस्स जइयाओ ताराओ, इमं च तं तारग्गं-

तिगतिगपंचगसयदुग-दुगबत्तीसगतिगं तह तिगं च।
छप्पंचगतिगएक्कगपंचगतिग-छक्कगं चेव॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सत्तगदुगदुग पंचग एक्केक्कग पंच चउतिगं चेव।

एक्कारसग चउक्कं चउक्कगं चेव तारग्गं।

भावार्थ - हे भगवन्! इन अट्ठाईस नक्षत्रों में अभिजित नक्षत्र के कौन-कौन से तारे कहे गए हैं?

हे गौतम! अभिजित नक्षत्र के तीन तारे बतलाए गए हैं। जिन नक्षत्रों के जितने-जितने तारे हैं, वे इस प्रकार (पहले से अंतिम तक) ज्ञातव्य है-

गाथाएं - अट्ठाईस नक्षत्रों के क्रमशः तीन, तीन, पांच, सौ, दो, दो, बत्तीस, तीन, तीन, छह, पांच, तीन, एक, पांच, तीन, छह, सात, दो, दो, पांच, एक, एक, पांच, चार, तीन, ग्यारह, चार एवं चार तारे हैं।

नक्षत्रों के गोत्र एवं संस्थान

(१९२)

एएसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिई णक्खत्ते किंगोत्ते पण्णत्ते?

गोयमा! मोग्गलायणसगोत्ते०,

गाहा - मोग्गल्लायण १ संखायणे २ य तह अग्गभाव ३ कण्णिल्ले ४।

तत्तो य जाउकण्णे ५ धणंजए ६ चेव बोद्धव्वे॥१॥

पुस्सायणे ७ य अस्सायणे य ८ भग्गवेसे ९ य अग्गिवेसे १० य।

गोयम ११ भारद्दाए १२ लोहिच्चे १३ चेव वासिट्ठे १४॥२॥

ओमज्जायण १५ मंडव्वायणे १६ य पिंगायणे १७ य गोवल्ले १८।

कासव १९ कोसिय २० दब्भा २१ य चामरच्छाय २२ सुंगा य २३॥३॥

गोवल्लायण २४ तेगिच्छायणे २५ य कच्चायणे २६ हवइ मूले।

तत्तो य वज्झियायण २७ वग्घावच्चे य गोत्ताइं २८॥४॥

एएसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिईणक्खत्ते किंसंठिए पण्णत्ते?

गोयमा! गोसीसावलिसंठिए पण्णत्ते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाहा - गोसीसावलि १ काहार २ सउणि ३ पुप्फोवयार ४ वावी य ५-६।
णावा ७ आसक्खंधग ८ भग ९ छुरघरए १० य सगडुद्धी ११॥१॥
मिगसीसावलि १२ रुहिरबिंदु १३ तुल्ल १४. वद्धमाणग १५ पडागा १६।
पागारे १७ पलियंके १८-१९ हत्थे २० मुहफुल्लए २१ चेव॥२॥
खीलग २२ दामणि २३ एगावली २४ य गयदंत २५ विच्छुअयले य २६।
गयविक्कमे २७ य तत्तो सीहणिसीही य २८ संठाणा।

शब्दार्थ - अयल - पूंछ।

भावार्थ - हे भगवन्! इन अठारह नक्षत्रों में अभिजित नक्षत्र का क्या गोत्र आख्यात हुआ है? हे गौतम! अभिजित नक्षत्र का मोद्‌गलायन गोत्र कहा गया है।

गाथाएं - प्रथम से अंतिम नक्षत्र तक गोत्रों के नाम इस प्रकार हैं -

१. मोद्‌गलायन २. सांख्यायन ३. अग्रभाव ४. कर्णिलायन ५. जातुकर्ण ६. धनंजय ७. पुष्यायन ८. अश्वायन ९. भार्गवेश १०. अग्निवेश्म ११. गौतम १२. भारद्वाज १३. लोहित्यायन १४. वाशिष्ठ १५. अवमार्जायन १६. मांडव्यायन १७. पिंगायन १८. गोवल्य १९. काश्यप २०. कौशिक २१. दार्भायन २२. चामरच्छायन २३. शुंगायन २४. गोवल्यायन २५. चिकित्सायन २६. कात्यायन २७. बाभ्रव्यायन २८. व्याघ्रापत्य॥१-४॥

हे भगवन्! इन अट्ठाईस नक्षत्रों में अभिजित नक्षत्र का संस्थान कैसा है?

हे गौतम! अभिजित नक्षत्र का संस्थान गोशीर्षावलि - गाय के मस्तकवर्ती पुद्‌गलों की दीर्घ श्रेणी के सदृश है।

गाथाएं - प्रथम से अंतिम नक्षत्र पर्यन्त अट्ठाईस नक्षत्रों के संस्थान इस तरह हैं - १. गोशीर्षावलि २. कासार (सरोवर के सदृश) ३. शकुनि-पक्षी ४. पुष्प राशि ५-६. वापी - बावड़ी ७. नौका ८. अश्वस्कन्ध ९. भग १०. क्षुरगृह - नाई की पेटी ११. गाड़ी की धुरी १२. मृगशीर्षावलि १३. रुधिरबिन्दु १४. तुला १५. वर्द्धमानक १६. पताका १७. प्राकार - परकोटा १८-१९. पल्यंक - पलंग २०. हस्त २१. विकसित जूही पुष्प २२. कीलक २३. दामन - रज्जु २४. एकावली - इकलड़ा हार २५. गजदंत २६. बिच्छू की पूंछ २७. गज विक्रम - हाथी का पैर २८. सिंह निक्षेणी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नक्षत्र-चन्द्र एवं सूर्य का योग

(१९३)

एएसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिइणक्खत्ते कइमुहुत्ते चंदेण सद्धिं जोगं जोएइ?

गोयमा! णव मुहुत्ते सत्तावीसं च सत्तट्ठिभाए मुहुत्तस्स चंदेण सद्धिं जोगं जोएइ, एवं इमाहिं गाहाहिं अणुगंतव्वं –

अभिइस्स चंदजोगो सत्तट्ठिंखंडिओ अहोरत्तो।
ते हुंति णव मुहुत्ता सत्तावीसं कलाओ य॥१॥
सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जेट्ठा य।
एए छण्णक्खत्ता पण्णरसमुहुत्तसंजोगा॥२॥
तिण्णेव उत्तराइं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य।
एए छण्णक्खत्ता पणयालमुहुत्तसंजोगा॥३॥
अवसेसा णक्खत्ता पण्णरसवि हुंति तीसइमुहुत्ता।
चंदंमि एस जोगो णक्खत्ताणं मुणेयव्वो॥४॥

एएसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिईणक्खत्ते कइ अहोरत्ते सूरेण सद्धिं जोगं जोएइ?

गोयमा! चत्तारि अहोरत्ते छच्च मुहुत्ते सूरेण सद्धिं जोगं जोएइ, एवं इमाहिं गाहाहिं णेयव्वं-

अभिई छच्च मुहुत्ते चत्तारि य केवले अहोरत्ते।
सूरेण समं गच्छइ एत्तो सेसाण वोच्छामि॥१॥
सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जेट्ठा य।
वच्चंति मुहुत्ते इक्कवीस छच्चेवऽहोरत्ते॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तिण्णेव उत्तराइं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य।
वच्चंति मुहुत्ते तिण्णि चेव वीसं अहोरत्ते॥३॥
अवसेसा णक्खत्ता पण्णरसवि सूरसहगया जंति।
बारस चेव मुहुत्ते तेरस य समे अहोरत्ते॥४॥

भावार्थ - हे भगवन्! अट्ठाईस नक्षत्रों में से अभिजित नक्षत्र कितने मुहूर्त्त तक चन्द्रमा के साथ योग युक्त रहता है?

हे गौतम! अभिजित नक्षत्र चन्द्रमा के साथ $९\frac{२७}{६७}$ मुहूर्त्त तक योग युक्त रहता है।

इन गाथाओं द्वारा-नक्षत्रों का चंद्र के साथ कितने मुहूर्त्त तक योग होता है, यह ज्ञातव्य है-

गाथाएं - अभिजित नक्षत्र का चन्द्रमा के साथ एक अहोरात्र में तीस मुहूर्त्त में उसके $\frac{२१}{६७}$ भाग प्रमाण योग रहता है। इससे अभिजित चन्द्र - योग का समय $\frac{३०}{१} \times \frac{२१}{६७} = \frac{६३०}{६७} = ९\frac{२७}{६७}$ फलित होता है॥१॥

शतभिषक, भरणी, आर्द्रा, अश्लेषा, स्वाति तथा ज्येष्ठा - इन छह नक्षत्रों का चंद के साथ १५ मुहूर्त्त तक योग रहता है॥२॥

उत्तर फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा एवं उत्तरभाद्रपदा, पुनर्वसु, रोहिणी एवं विशाखा - इनका चंद्र के साथ पैंतालीस मुहूर्त्त पर्यन्त योग रहता है॥३॥

अवशिष्ट १५ नक्षत्रों का चन्द्र के साथ तीस मुहूर्त्त तक योग रहता है। नक्षत्रों का चन्द्रमा के साथ यह योग क्रम ज्ञातव्य है।

हे भगवन्! इन अट्ठाईस नक्षत्रों में अभिजित नक्षत्र का सूर्य के साथ कितने अहोरात्र तक योग रहता है?

हे गौतम! इसका सूर्य के साथ चार अहोरात्र एवं छह मुहूर्त्त तक योग रहता है। प्रस्तुत गाथाओं द्वारा नक्षत्र एवं सूर्य का योग ज्ञातव्य है-

गाथा - अभिजित मुहूर्त्त का सूर्य के साथ चार अहोरात्र एवं छह मुहूर्त्त तथा शतभिषक, भरणी, आर्द्रा, अश्लेषा, स्वाति तथा ज्येष्ठा नक्षत्रों का सूर्य के साथ छह अहोरात्र एवं २१ मुहूर्त्त तक योग रहता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा एवं उत्तरभाद्रपदा, पुनर्वसु, रोहिणी, विशाखा - इन नक्षत्रों का सूर्य के साथ बीस अहोरात्र तथा तीन मुहूर्त्त पर्यन्त योग रहता है।

अवशिष्ट पन्द्रह नक्षत्रों का सूर्य के साथ तेरह अहोरात्र एवं बारह मुहूर्त्त तक योग रहता है।

कुल, उपकुल, कुलोपकुल, अमावस्या, पूर्णिमा

(१६४)

कइ णं भंते! कुला कइ उवकुला कइ कुलोवकुला पण्णत्ता?

गोयमा! बारस कुला बारस उवकुला चत्तारि कुलोवकुला पण्णत्ता, बारस कुला, तंजहा-धणिट्ठा कुलं १ उत्तरभद्दवया कुलं २ अस्सिणी कुलं ३ कत्तिया कुलं ४ मिगसिर कुलं ५ पुस्सो कुलं ६ मघा कुलं ७ उत्तरफग्गुणी कुलं ८ चित्ता कुलं ६ विसाहा कुलं १० मूलो कुलं ११ उत्तरासाढा कुलं १२।

मासाणं परिणामा होंति कुला उवकुला उ हेट्ठिमगा।

होंति पुण कुलोवकुला अभीइसय अद्द अणुराहा॥१॥

बारस उवकुला तंजहा-सवणो उवकुलं १ पुव्वभद्दवया उवकुलं २ रेवई उवकुलं ३ भरणी उवकुलं ४ रोहिणी उवकुलं ५ पुणव्वसू उवकुलं ६ अस्सेसा उवकुलं ७ पुव्वफग्गुणी उवकुलं ८ हत्थो उवकुलं ६ साई उवकुलं १० जेट्ठा उवकुलं ११ पुव्वासाढा उवकुलं १२। चत्तारि कुलोवकुला तंजहा - अभिई कुलोवकुला १ सयभिसया कुलोवकुला २ अद्दा कुलोवकुला ३ अणुराहा कुलोवकुला ४।

कइ णं भंते! पुण्णिमाओ कइ अमावासाओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! बारस पुण्णिमाओ बारस अमावासाओ पण्णत्ताओ०, तंजहा-साविट्ठी पोट्ठवई आसोई कत्तिगी मग्गसिरी पोसी माही फग्गुणी चेत्ती वइसाही जेट्ठामूली आसाढी।

साविट्ठिण्णं भंते! पुण्णिमासिं कइ णक्खत्ता जोगं जोएंति?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! तिण्णि णक्खत्ता जोगं जोएंति, तंजहा-अभिई सवणो धणिट्ठा।

पोट्ठवइण्णं भंते! पुण्णिमं कइ णक्खत्ता जोगं जोएंति?

गोयमा! तिण्णि णक्खत्ता० जोएंति, तंजहा-सयभिसया पुव्वभद्दवया उत्तरभद्दवया।

अस्सोइण्णं भंते! पुण्णिमं कइ णक्खत्ता जोगं जोएंति?

गोयमा! दो....जोएंति, तंजहा-रेवई अस्सिणी य, कत्तिइण्णं दो-भरणी कत्तिया य, मग्गसिरिण्णं दो-रोहिणी मग्गसिरं च, पोसिं णं तिण्णि-अद्दा पुणव्वसू पुस्सो, माघिण्णं दो-अस्सेसा मघा य, फग्गुणिं णं दो-पुव्वाफग्गुणी य उत्तराफग्गुणी य, चेत्तिण्णं दो-हत्थो चित्ता य, विसाहिण्णं दो-साई विसाहा य, जेट्ठामूलिण्णं तिण्णि-अणुराहा जेट्ठा मूलो, आसाढिण्णं दो-पुव्वासाढा उत्तरासाढा।

साविट्ठिण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं जोएइ उवकुलं जोएइ कुलोवकुलं जोएइ?

गोयमा! कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ कुलोवकुलं वा जोएइ, कुलं जोएमाणे धणिट्ठा णक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे सवणे णक्खत्ते जोएइ कुलोवकुलं जोएमाणे अभिई णक्खत्ते जोएइ, साविट्ठिण्णं पुण्णिमासिं कुलं वा जोएइ जाव कुलोवकुलं वा जोएइ, कुलेण वा जुत्ता उवकुलेण वा जुत्ता कुलोवकुलेण वा जुत्ता साविट्ठी पुण्णिमा जुत्तत्ति वत्तव्वं सिया।

पोट्ठवइण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं जोएइ ३ पुच्छा?

गोयमा! कुलं वा० उवकुलं वा० कुलोवकुलं वा जोएइ, कुलं जोएमाणे उत्तरभद्दवया णक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे पुव्वभद्दवया० कुलोवकुलं जोएमाणे सयभिसया णक्खत्ते जोइए, पोट्ठवइण्णं पुण्णिमं कुलं वा जोएइ जाव कुलोवकुलं वा जोएइ कुलेणं वा जुत्ता जाव कुलोवकुलेण वा जुत्ता पोट्ठवई पुण्णमासी जुत्तत्ति वत्तव्वं सिया।

अस्सोइण्णं भंते! पुच्छा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ णो लब्भइ कुलोवकुलं कुलं जोएमाणे अस्सिणीणक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे रेवइणक्खत्ते जोएइ, अस्सोइण्णं पुण्णिमं कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ कुलेण वा जुत्ता उवकुलेण वा जुत्ता अस्सोई पुण्णिमा जुत्तत्ति वत्तव्वं सिया।

कत्तिइण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं....पुच्छा?

गोयमा! कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ णो कुलोवकुलं जोएइ, कुलं जोएमाणे कत्तियाणक्खत्ते जोएइ उव० भरणी०, कत्तिइण्णं जाव वत्तव्वं०।

मग्गसिरिण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं तं चेव दो जोएइ णो भवइ कुलोवकुलं कुलं जोएमाणे मग्गसिरणक्खत्ते जोएइ उ० रोहिणी०, मग्गसिरिणं पुण्णिमं जाव वत्तव्वं सिया इति। एवं सेसियाओऽवि जाव आसाढिं, पोसिं जेट्ठामूलिं च कुलं वा उवकुलं वा, कुलोवकुलं वा, सेसियाणं कुलं वा उवकुलं वा कुलोवकुलं ण भण्णइ।

साविट्ठिण्णं भंते! अमावासं कइ णक्खत्ता जोएंति?

गोयमा! दो णक्खत्ता जोएंति, तंजहा-अस्सेसा य महा य।

पोट्ठवइण्णं भंते! अमावासं कइ णक्खत्ता जोएंति?

गोयमा! दो...पुव्वाफग्गुणी उत्तराफग्गुणी य।

अस्सोइण्णं भंते!....दो-हत्थे चित्ता य, कत्तिइण्णं दो-साई विसाहा य, मग्गसिरिण्णं तिण्णि-अणुराहा जेट्ठा मूलो य, पोसिण्णं दो-पुव्वासाढा, उत्तरासाढा, माहिण्णं तिण्णि-अभिई, सवणो धणिट्ठा, फग्गुणिं णं तिण्णि-सयभिसया पुव्वभद्दवया उत्तरभद्दवया, चेत्तिण्णं दो-रेवई अस्सिणी य, वइसाहिण्णं दो-भरणी कत्तिया य, जेट्ठामूलिण्णं दो-रोहिणी मग्गसिरं च, आसाढिण्णं तिण्णि-अद्दा पुणव्वसू पुस्सो इति।

साविट्ठिण्णं भंते! अमावासं किं कुलं जोएइ उवकुलं जोएइ कुलोवकुलं जोएइ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ णो लब्भइ कुलोवकुलं, कुलं जोएमाणे महाणक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे अस्सेसाणक्खत्ते जोएइ, साविट्ठिण्णं अमावासं कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ, कुलेण वा जुत्ता उवकुलेणं वा जुत्ता साविट्ठी अमावासा जुत्तत्ति वत्तव्वं सिया।

पोट्ठवइण्णं भंते! अमावासं तं चेव दो जोएइ कुलं वा जोएइ उवकुलं०, कुलं जोएमाणे उत्तराफग्गुणी णक्खत्ते जोएइ उव० पुव्वाफग्गुणी०, पोट्ठवइण्णं अमावासं जाव वत्तव्वं सिया, मग्गसिरिण्णं तं चेव कुलं मूले णक्खत्ते जोएइ उ० जेट्ठा० कुलोवकुलं अणुराहा जाव जुत्तत्ति वत्तव्वं सिया, एवं माहीए फग्गुणीए आसाढीए कुलं वा उवकुलं वा कुलोवकुलं वा, अवसेसियाणं कुलं वा उवकुलं वा जोएइ।

जया णं भंते! साविट्ठी पुण्णिमा भवइ तया णं माही अमावासा भवइ जया णं माही पुण्णिमा भवइ तया णं साविट्ठी अमावासा भवइ?

हंता गोयमा! जया णं साविट्ठी तं चेव वत्तव्वं।

जया णं भंते! पोट्ठवई पुण्णिमा भवइ तया णं फग्गुणी अमावासा भवइ जया णं फग्गुणी पुण्णिमा भवइ तया णं पोट्ठवई अमावासा भवइ?

हंता गोयमा! तं चेव, एवं एएणं अभिलावेणं इमाओ पुण्णिमाओ अमावासाओ णेयव्वाओ-अस्सिणी पुण्णिमा चेत्ती अमावासा कत्तिगी पुण्णिमा वइसाही अमावासा मग्गसिरी पुण्णिमा जेट्ठामूली अमावासा पोसी पुण्णिमा असाढी अमावासा।

भावार्थ - हे भगवन्! कुल, उपकुल एवं कुलोपकुल कितने कहे गए हैं?

हे गौतम! कुल बारह, उपकुल बारह तथा कुलोपकुल चार कहे गए हैं।

बारह कुल ये हैं - १. धनिष्ठा २. उत्तरा भाद्रपदा ३. अश्विनी ४. कृत्तिका ५. मृगशिर ६. पुष्य ७. मघा ८. उत्तर फाल्गुनी ६. चित्रा १०. विशाखा ११. मूला और १२. उत्तराषाढा कुल।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाथा - जिन नक्षत्रों द्वारा मास परिसमाप्त होते हैं, वे मास सदृश नाम युक्त नक्षत्र कुल कहलाते हैं। जो कुलों के अधस्तन - समीप होते हैं, वे उपकुल कहलाते हैं। जो कुलों एवं उपकुलों के अधस्तन होते हैं, वे कुलोपकुल कहे जाते हैं। ये अभिजित, शतभिषक, आर्द्रा और अनुराधा है।

बारह उपकुल इस प्रकार हैं - १. श्रवण २. भाद्रपदा ३. रेवती ४. भरणी ५. रोहिणी ६. पुनर्वसु ७. आश्लेषा ८. पूर्वाफाल्गुनी ९. हस्त १०. स्वाति ११. ज्येष्ठा और १२. पूर्वाषाढा। चार कुलोपकुल इस प्रकार हैं - १. अभिजित २. शतभिषक ३. आर्द्रा ४. अनुराधा।

हे भगवन्! पूर्णिमाएं तथा अमावस्याएं कितनी कही गई हैं?

हे गौतम! वे बारह-बारह कही गई हैं, जो इस प्रकार है -

१. श्राविष्ठी - श्रावणी २. प्रोष्ठपदी - भाद्रपदी ३. आश्वयुजी - आसोजी ४. कार्तिकी ५. मार्गशीर्षी ६. पौषी ७. माघी ८. फाल्गुनी ९. चैत्री १०. वैशाखी ११. ज्येष्ठा मूली और १२. आषाढी।

हे भगवन्! श्रावणी पूर्णिमा के साथ कितने नक्षत्रों का योग होता है?

हे गौतम! श्रावणी पूर्णिमा के साथ अभिजित, श्रवण तथा धनिष्ठा इन तीन नक्षत्रों का योग होता है।

हे भगवन्! भाद्रपदी पूर्णिमा के साथ कितने नक्षत्रों का योग होता है?

हे गौतम! इसके साथ शतभिषक, पूर्वभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा - इन तीन नक्षत्रों का योग होता है।

हे भगवन्! आसोजी पूर्णिमा के साथ किन-किन नक्षत्रों का योग होता है?

हे गौतम! उसके साथ रेवती एवं अश्विनी नक्षत्र का योग होता है।

कार्तिक पूर्णिमा के साथ भरणी एवं कृत्तिका, मार्गशीर्षी पूर्णिमा के साथ रोहिणी एवं मृगशिर, पौषी पूर्णिमा के साथ आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य, माघी पूर्णिमा के साथ अश्लेषा और मघा, फाल्गुनी पूर्णिमा के साथ-पूर्वा फाल्गुनी एवं उत्तराफाल्गुनी, चैत्री पूर्णिमा के साथ हस्त और चित्र, वैशाखी पूर्णिमा के साथ स्वाति और विशाखा, ज्येष्ठा मूली पूर्णिमा के साथ अनुराधा ज्येष्ठा तथा मूल और आषाढ़ी पूर्णिमा के साथ पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्रों का योग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! श्रावणी पूर्णिमा के साथ क्या कुल, उपकुल एवं कुलोपकुल नक्षत्रों का योग होता है?

हे गौतम! इन तीनों का ही योग होता है।

कुल योग के अन्तर्गत धनिष्ठा का, उपकुल योग के अन्तर्गत श्रवण का तथा कुलोपकुल योग के अन्तर्गत अभिजित का योग होता है।

श्रावणी पूर्णमासी के साथ कुल यावत् कुलोपकुल का योग होता है।

हे भगवन्! भाद्रपदी पूर्णिमा के साथ क्या कुल, उपकुल और कुलोपकुल का योग होता है?

हे गौतम! इन तीनों का ही योग होता है।

कुल योग में उत्तर भाद्रपदा, उपकुल योग में पूर्वभाद्रपदा तथा कुलोपकुल योग में शतभिषक नक्षत्र का योग होता है।

भाद्रपद पूर्णिमा के साथ कुल यावत् कुलोपकुल का योग होता है अथवा यह पूर्णिमा कुलयोग युक्त यावत् कुलोपकुल योग युक्त होता है।

इसी प्रकार गौतम ने आसोजी पूर्णिमा के संदर्भ में पूछा। भगवन् ने कहा -

हे गौतम! कुल एवं उपकुल का होता है, कुलोपकुल का नहीं होता।

कुलयोग में अश्विनी तथा उपकुलयोग में रेवती नक्षत्र का योग होता है। यों आश्विनी पूर्णिमा के साथ कुल एवं उपकुल का योग होता है। वह इन दोनों के योग से युक्त कही गई है।

हे भगवन्! कार्तिकी पूर्णिमा के साथ कुल, उपकुल, कुलोपकुल का योग होता है?

हे गौतम! कुल एवं उपकुल का योग होता है। कुलोपकुल का नहीं होता।

कुल योग में कृत्तिका एवं उपकुल में भरणी नक्षत्र का योग होता है। यों कार्तिकी पूर्णिमा यावत् इन दोनों से युक्त कही गई है।

हे भगवन्! मार्गशीर्ष पूर्णिमा के साथ क्या कुल, उपकुल या कुलोपकुल का योग होता है?

हे गौतम! कुल एवं उपकुल का योग होता है, कुलोपकुल का नहीं होता।

कुल योग में मृगशिरा का तथा उपकुल में रोहिणी नक्षत्र का योग होता है, मार्गशीर्ष पूर्णिमा यावत् पूर्ववत् वक्तव्य है।

इसी प्रकार शेष आषाढ़ी पूर्णिमा तक का वर्णन यावत् वैसा ही है। इतना अंतर है - पौषी एवं ज्येष्ठामूली पूर्णिमा के साथ कुल, उपकुल एवं कुलोपकुल इन तीनों का योग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवशिष्ट पूर्णिमाओं के साथ कुल एवं उपकुल का योग कहा गया है, कुलोपकुल का नहीं कहा गया है।

हे भगवन्! श्रावणी अमावस्या के साथ कितने नक्षत्रों का योग होता है?

हे गौतम! दो नक्षत्रों का योग होता है - अश्लेषा और मघा।

हे भगवन्! भाद्रपदी अमावस्या के साथ कितने नक्षत्रों का योग होता है?

हे गौतम! इसके साथ पूर्वाफाल्गुनी एवं उत्तराफाल्गुनी - इन दो नक्षत्रों का योग होता है।

हे भगवन्! आसोजी अमावस्या के साथ कितने नक्षत्रों का योग होता है?

हे गौतम! आसोजी के साथ हस्त एवं चित्रा, कार्तिकी के साथ स्वाति एवं विशाखा, मार्गशीर्षी के साथ अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल, पौषी के साथ पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा, माघी के साथ अभिजित, श्रवण और धनिष्ठा, फाल्गुनी के साथ शतभिषक, पूर्वभाद्रपदा तथा उत्तरभाद्रपदा, चैत्री के साथ रेवती और अश्विनी, वैशाखी के साथ भरणी एवं कृत्तिका, ज्येष्ठामूला के साथ रोहिणी एवं मृगशिर तथा आषाढ़ी अमावस्या के साथ आर्द्रा, पुनर्वसु तथा पुष्य – इन तीन नक्षत्रों का योग होता है।

हे भगवन्! श्रावणी अमावस्या के साथ क्या कुल, उपकुल या कुलोपकुल का योग होता है?

हे गौतम! श्रावणी अमावस्या के साथ कुल एवं उपकुल का योग होता है, कुलोपकुल का नहीं। कुल योग के अन्तर्गत मघा तथा उपकुल योग के अन्तर्गत अश्लेषा नक्षत्र का योग होता है।

इस प्रकार अमावस्या कुल एवं उपकुल से युक्त होती है।

हे भगवन्! क्या भाद्रपदी अमावस्या के साथ कुल एवं उपकुल का योग होता है?

हे गौतम! इसके अन्तर्गत कुल योग में उत्तराफाल्गुनी एवं उपकुल के अन्तर्गत पूर्वाफाल्गुनी का योग होता है।

इस प्रकार भाद्रपदी अमावस्या यावत् इन दोनों से युक्त होती है।

मार्गशीर्षी अमावस्या के साथ कुल योग के अन्तर्गत मूल नक्षत्र का, उपकुल योग के अन्तर्गत ज्येष्ठा तथा कुलोपकुल के अन्तर्गत अनुराधा नक्षत्र का योग होता यावत् यह अमावस्या इनसे युक्त होती है।

माघी, फाल्गुनी तथा आषाढी अमावस्या के साथ कुल, उपकुल और कुलोपकुल का योग होता है। अवशिष्ट अमावस्याओं के साथ कुल एवं उपकुल का ही योग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! जब श्रवण नक्षत्र युक्त पूर्णिमा होती हैं तब क्या उससे पहले की अमावस्या मघा नक्षत्र युक्त होती है?

(तथा) जब पूर्णिमा मघा नक्षत्र युक्त होती है तब उससे पहले की अमावस्या श्रवण नक्षत्र युक्त होती है।

हे गौतम! ऐसा ही होता है। जब पूर्णिमा श्रवण नक्षत्र युक्त होती है तब उससे पहले की अमावस्या मघा नक्षत्र युक्त होती है। जब पूर्णिमा मघा नक्षत्र युक्त होती है तो उसके बाद आने वाली अमावस्या श्रवण नक्षत्र युक्त होती है।

हे भगवन्! जब भाद्रपदी पूर्णिमा होती है तब क्या उसके बाद आने वाली अमावस्या फाल्गुनी नक्षत्र युक्त होती है?

हाँ, गौतम! ऐसा ही होता है।

इस कथन पद्धति से पूर्णिमाओं और अमावस्याओं की संगति इस प्रकार ज्ञातव्य है -

जब पूर्णिमा अश्विनी नक्षत्र युक्त होती है तब उसके बाद आने वाली अमावस्या चित्रा नक्षत्र युक्त होती है। जब पूर्णिमा कृत्तिका नक्षत्र युक्त होती है तब अमावस्या विशाखा नक्षत्र युक्त होती है। जब पूर्णिमा मृगशिरा नक्षत्र युक्त होती है तो अमावस्या ज्येष्ठामूल नक्षत्र युक्त होती है। जब पूर्णिमा पुष्य नक्षत्र युक्त होती है तब अमावस्या आषाढ़ा नक्षत्र युक्त होती है।

मास समापक नक्षत्र

(१९५)

वासाणं भंते! पढमं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-उत्तरासाढा अभिई सवणो धणिट्ठा, उत्तरासाढा चउद्दस अहोरत्ते णेइ, अभिई सत्त अहोरत्ते णेइ, सवणो अट्ठऽहोरत्ते णेइ, धणिट्ठा एगं अहोरत्तं णेइ, तंसि च णं मासंसि चउरंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स चरिमदिवसे दो पया चत्तारि य अंगुला पोरिसी भवइ।

वासाणं भंते! दोच्चं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! चत्तारि०, तंजहा-धणिट्ठा सयभिसया पुव्वाभद्दवया उत्तराभद्दवया।

धणिट्ठा णं चउद्दस अहोरत्ते णेइ, सयभिसया सत्त अहोरत्ते णेइ, पुव्वाभद्दवया अट्ठ अहोरत्ते णेइ, उत्तराभद्दवया एगं अहोरत्तं णेइ तंसि च णं मासंसि अट्ठंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स चरिमे दिवसे दो पया अट्ठ य अंगुला पोरिसी भवइ।

वासाण णं भंते! तइयं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-उत्तरभद्दवया रेवई अस्सिणी, उत्तरभद्दवया चउद्दस राइंदिए णेइ, रेवई पण्णरस० अस्सिणी एगं०, तंसि च णं मासंसि दुवालसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स चरिमे दिवसे लेहट्ठाइं तिण्णि पयाइं पोरिसी भवइ।

वासाणं भंते! चउत्थं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि०, तंजहा-अस्सिणी भरणी कत्तिया, अस्सिणी चउद्दस० भरणी पण्णरस० कत्तिया एगं०, तंसि च णं मासंसि सोलसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स चरिमे दिवसे तिण्णि पयाइं चत्तारि अंगुलाइं पोरिसी भवइ।

हेमंताणं भंते! पढमं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि०, तंजहा-कत्तिया रोहिणी मिगसिरं, कत्तिया चउद्दस० रोहिणी पण्णरस० मिगसिरं एगं अहोरत्तं णेइ, तंसि च णं मासंसि वीसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि तिण्णि पयाइं अट्ठ य अंगुलाइं पोरिसी भवइ।

हेमंताणं भंते! दोच्चं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-मिगसिरं अद्दा पुणव्वसू पुस्सो, मिगसिरं चउद्दस राइंदियाइं णेइ, अद्दा अट्ठ० णेइ, पुणव्वसू सत्त राइंदियाइं० पुस्सो एगं राइंदियं णेइ, तया णं चउव्वीसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि लेहट्ठाइं चत्तारि पयाइं पोरिसी भवइ।

हेमंताणं भंते! तच्चं मास कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि०, तंजहा-पुस्सो असिलेसा महा, पुस्सो चोद्दस राइंदियाइं णेइ, असिलेसा पण्णरस० महा एक्कं, तया णं वीसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि तिण्णि पयाइं अट्ठंगुलाइं पोरिसी भवइ।

हेमंताणं भंते! चउत्थं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि णक्खत्ता तंजहा-महा पुव्वाफग्गुणी उत्तराफग्गुणी, महा चउद्दस राइंदियाइं णेइ, पुव्वाफग्गुणी पण्णरस राइंदियाइं णेइ, उत्तराफग्गुणी एगं राइंदियं णेइ, तया णं सोलसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि तिण्णि पयाइं चत्तारि अंगुलाइं पोरिसी भवइ।

गिम्हाणं भंते! पढमं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-उत्तराफग्गुणी हत्थो चित्ता, उत्तराफग्गुणी चउद्दस राइंदियाइं णेइ, हत्थो पण्णरस राइंदियाइं णेइ, चित्ता एगं राइंदियं णेइ, तया णं दुवालसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ।

तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि लेहट्ठाइं तिण्णि पयाइं पोरिसी भवइ।

गिम्हाणं भंते! दोच्चं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-चित्ता साई विसाहा, चित्ता चउद्दस राइंदियाइं णेइ, साई पण्णरस राइंदियाइं णेइ, विसाहा एगं राइंदियं णेइ, तया णं अट्ठंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि दो पयाइं अट्ठंगुलाइं पोरिसी भवइ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गिम्हाणं भंते! तच्चं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-विसाहाऽणुराहा जेट्ठा मूलो, विसाहा चउद्दस राइंदियाइं णेइ, अणुराहा अट्ठ राइंदियाइं णेइ, जेट्ठा सत्त राइंदियाइं णेइ, मूलो एक्कं राइंदियं०, तया णं चउरंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि दो पयाइं चत्तारि य अंगुलाइं पोरिसी भवइ।

गिम्हाणं भंते! चउत्थं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?

गोयमा! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-मूलो पुव्वासाढा उत्तरासाढा, मूलो चउद्दस राइंदियाइं णेइ, पुव्वासाढा पण्णरस राइंदियाइं णेइ, उत्तरासाढा एगं राइंदियं णेइ, तया णं वट्टाए समचउरंससंठाण-संठियाए णग्गोहपरिमंडलाए सकायमणुरंगियाए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि लेहट्ठाइं दो पयाइं पोरिसी भवइ।

एएसि णं पुव्ववण्णियाणं पयाणं इमा संगहणी, तंजहा-

जोगो देवयतारग्ग-गोत्तसंठाणं चंदरविजोगो।

कुलपुण्णिमअमवस्सा णेया छाया य बोद्धव्वा।।

शब्दार्थ - **लेहट्ठाइं** - परिपूर्ण।

भावार्थ - हे भगवन्! चातुर्मासिक वर्षाकाल के प्रथम श्रावण मास को कितने नक्षत्र समाप्त करते हैं - उसकी समाप्तिकाल में कितने नक्षत्र होते हैं?

हे गौतम! वह चार नक्षत्रों से परिसमाप्त होता है - उत्तराषाढ़ा, अभिजित, श्रवण एवं धनिष्ठा।

उत्तराषाढा नक्षत्र श्रावण मास के चवदह, अभिजित नक्षत्र सात, श्रवण आठ तथा धनिष्ठा एक दिन-रात परिसमाप्त करता है। उस मास में सूर्य चार अंगुल अधिक पुरुष छाया प्रमाण अनुपरिवर्तन करता है। उस मास के अंतिम दिन पुरुष की छाया का प्रमाण दो पद से चार अंगुल अधिक होता है। उस समय एक पहर दिन चढ़ता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! वर्षाकाल में द्वितीय भाद्रपद मास को कितने नक्षत्र परिसमाप्त करते हैं?

हे गौतम! धनिष्ठा, शतभिषक, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद - ये चार नक्षत्र उसे परिसमाप्त करते हैं।

धनिष्ठा नक्षत्र चवदह, शतभिषक सात, पूर्व भाद्रपदा आठ तथा उत्तर भाद्रपदा एक दिन-रात समाप्त करते हैं। उस मास में सूर्य आठ अंगुल अधिक पुरुष छाया प्रमाण अनुपर्यटन करता है।

मास के अंतिम दिन पुरुष छाया प्रमाण दो पद से आठ अंगुल अधिक होता है।

हे भगवन्! वर्षाकाल में तृतीय - आश्विन मास को कितने नक्षत्र परिसमाप्त करते हैं?

हे गौतम! उसे उत्तरभाद्रपदा, रेवती एवं अश्विनी - ये तीन नक्षत्र परिसमाप्त करते हैं। उत्तर भाद्रपदा चवदह, रेवती पन्द्रह तथा अश्विनी नक्षत्र एक रात-दिन परिसमाप्त करता है।

उस मास में सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से बारह अंगुल अधिक परिभ्रमण करता है।

उस मास के अन्तिम दिन पूरे तीन पद पुरुष छाया प्रमाण पोरसी होती है।

हे भगवन्! वर्षाकाल के चतुर्थ मास-कार्तिक के परिसमापन में कितने नक्षत्र रहते हैं?

हे गौतम! अश्विनी, भरणी एवं कृतिका - ये तीन नक्षत्र रहते हैं।

अश्विनी नक्षत्र चवदह रात्रि दिवस का परिसमापन करता है। भरणी नक्षत्र पन्द्रह रात्रि दिवस परिसमाप्त करता है। कृत्रिका नक्षत्र एक रात्रि-दिवस परिसमाप्त करता है। उस मास में सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से सोलह अंगुल अधिक परिभ्रमण करता है। उस मास के अन्तिम दिन तीन पद पुरुष छाया प्रमाण से चार अंगुल अधिक पोरसी होती है।

हे भगवन्! चातुर्मास हेमन्तकाल के प्रथम मास - मार्गशीर्ष को कितने नक्षत्र परिसमाप्त करते हैं?

हे गौतम! कृत्तिका, रोहिणी एवं मृगशिर - ये तीन नक्षत्र उसे परिसमाप्त करते हैं।

कृत्तिका नक्षत्र चवदह दिन-रात, रोहिणी पन्द्रह दिन-रात एवं मृगशिर नक्षत्र एक दिन-रात परिसमापन करता है। उस मास में सूर्य एक पुरुष छाया प्रमाण से बीस अंगुल ज्यादा अनुपर्यटन करता है। उस मास के अन्तिम दिन तीन पद पुरुष छाया प्रमाण से आठ अंगुल अधिक पोरसी होती है।

हे भगवन्! हेमंतकाल के द्वितीय मास - पौष को कितने नक्षत्र परिसम्पन्न करते हैं?

हे गौतम! उसे चार नक्षत्र - मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु एवं पुष्य परिसम्पन्न करते हैं।

मृगशिर चवदह रात्रि दिवस तथा आर्द्रा आठ रात्रि दिवस, पुनर्वसु सात रात्रि दिवस तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुष्य एक रात्रि दिवस परिसम्पन्न करता है। तब सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से चौबीस अंगुल अधिक अनुपर्यटन करता है। उस मास के अन्तिम दिन परिपूर्ण चार पद पुरुष छाया प्रमाण होती है।

हे भगवन्! हेमन्त काल के तृतीय मास माघ को कितने नक्षत्र परिसम्पन्न करते हैं?

हे गौतम! उसे पुष्य, अश्लेषा एवं मघा - ये तीन नक्षत्र परिसम्पन्न करते हैं।

पुष्य चवदह, अश्लेषा पन्द्रह तथा मघा नक्षत्र एक रात्रि दिवस परिसम्पन्न करता है। तब सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से बीस अंगुल अधिक अनुपर्यटन करता है। उस मास के अंतिम दिन पोरसी तीन पद पुरुष छाया प्रमाण से आठ अंगुल अधिक होती है।

हे भगवन्! हेमन्तकाल के चतुर्थ मास - फाल्गुन को कितने नक्षत्र परिसम्पन्न करते हैं?

हे गौतम! उसे मघा, पूर्वाफाल्गुनी एवं उत्तराफाल्गुनी - ये तीन नक्षत्र परिसम्पन्न करते हैं।

मघा चवदह, पूर्वाफाल्गुनी पन्द्रह तथा उत्तराफाल्गुनी एक दिन-रात परिसम्पन्न करते हैं। तब सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से सोलह अंगुल अधिक अनुपर्यटन करता है। उस मास के अंतिम दिन तीन पद पुरु छाया प्रमाण से चार अंगुल अधिक पोरसी होती है।

हे भगवन्! ग्रीष्मकाल के प्रथम मास - चैत्र मास का कितने नक्षत्र परिसमापन करते हैं?

हे गौतम! उत्तराफाल्गुनी, हस्त एवं चित्रा - ये तीन नक्षत्र उसका परिसमापन करते हैं।

उत्तराफाल्गुनी चवदह, हस्त पन्द्रह एवं चित्रा एक रात-दिन का परिसमापन करता है। तब सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से १२ अंगुल अधिक अनुपर्यटन करता है। उस मास के अंतिम दिन पूरे तीन पद पुरुष छाया प्रमाण पोरसी होती है।

हे भगवन्! ग्रीष्मकाल के द्वितीय मास - वैशाख का कितने नक्षत्र परिसमापन करते हैं?

हे गौतम! उसका तीन नक्षत्र - चित्रा स्वाति एवं विशाखा परिसमापन करते हैं।

चित्रा चवदह, स्वाति पन्द्रह एवं विशाखा नक्षत्र एक दिन-रात परिसम्पन्न करते हैं।

तब सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से आठ अंगुल अधिक अनुपर्यटन करता है। उस महीने के अंतिम दिन दो पद पुरुष छाया प्रमाण से आठ अंगुल अधिक पोरसी होती है।

हे भगवन्! ग्रीष्मकाल के तृतीय मास - ज्येष्ठ का कितने नक्षत्र परिसमापन करते हैं?

हे गौतम! विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा एवं मूल - ये चार नक्षत्र उसका परिसमापन करते हैं।

विशाखा चवदह, अनुराधा आठ, ज्येष्ठा सात तथा मूल एक दिवस-रात्रि का परिसमापन करते हैं। तब सूर्य पुरुष छाया प्रमाण से चार अंगुल अधिक अनुपर्यटन करता है। उस मास के अंतिम दिन दो पद पुरुष छाया प्रमाण से चार अंगुल अधिक पोरसी होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन्! ग्रीष्मकाल के चतुर्थ मास - आषाढ़ का कितने नक्षत्र परिसमापन करते हैं?

हे गौतम! मूल, पूर्वाषाढ़ा एवं उत्तराषाढ़ा - ये तीन नक्षत्र उसका परिसमापन करते हैं।

मूल चवदह, पूर्वाषाढा पन्द्रह तथा उत्तराषाढा एक दिवस रात्रि का परिसमापन करते हैं। सूर्य तब गोलाकार, समचतुरस्त्र संस्थान युक्त, न्यग्रोध परिमंडल - वट वृक्ष की तरह ऊपर से संपूर्णतः विस्तीर्ण, नीचे से संकीर्ण प्रकाश वस्तु के कलेवर के तुल्य आकृतिमय छाया से युक्त अनुपर्यटन करता है।

उस मास के अंतिम दिन पूरे दो पद प्रमाण युक्त पोरसी होती है।

इनकी संग्राहिका गाथा इस प्रकार है - योग, देवता, तारे, गोत्र, संस्थान, चंद्र-सूर्य योग, कुल, पूर्णिमा, अमावस्या तथा छाया - इनका वर्णन उपर्युक्त रूप में ज्ञातव्य है।

सूर्य-चन्द्र एवं तारागण

(१९६)

गाहा - **हिट्ठिं ससिपरिवारो मंदरऽबाहा तहेव लोगंते।**
धरणितलाओ अबाहा अंतो बाहिं च उड्ढमुहे॥१॥
संठाणं च पमाणं वहंति सीहगई इड्ढिमंता य।
तारंतरऽग्गमहिसी तुडिय पहु ठिई य अप्पबहू॥२॥

अत्थि णं भंते! चंदिमसूरियाणं हिट्ठिंपि तारारूवा अणुंपि तुल्लावि समेवि तारारूवा अणुंपि तुल्लावि उप्पिंपि तारारूवा अणुंपि तुल्लावि?

हंता गोयमा! तं चेव उच्चारेयव्वं।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-अत्थि णं० जहा जहा णं तेसिं देवाणं तवणियमबंभचेराइं ऊसियाइं भवंति तहा तहा णं तेसि णं देवाणं एवं पण्णायए, तंजहा-अणुत्ते वा तुल्लत्ते वा, जहा जहा णं तेसिं देवाणं तवणियमबंभचेराइं णो ऊसियाइं भवंति तहा तहा णं तेसिं देवाणं एवं णो पण्णायए, तंजहा-अणुत्ते वा तुल्लत्ते वा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दार्थ - **हिट्ठि** - नीचे, **अणु** - हीन।

भावार्थ - **गाथाएं** - (इस सूत्र में वर्णित विषयों का दो गाथाओं में सांकेतिक रूप में प्रतिपादन हुआ है।)

चन्द्र तथा सूर्य के अधस्तन प्रदेशवर्ती, तारक मंडल का मेरु से ज्योतिष्चक्र के अंतर का, लोकांत एवं भूतल से ज्योतिष्चक्र के अन्तर नक्षत्र क्षेत्र की गति का ज्योतिष्चक्र के देवों के विमानों के संस्थान का, संख्या का, देवों द्वारा उनके वहन किए जाने का, देवों की शीघ्र-मंद आदि गति एवं स्वल्प बहुत वैभव का, ताराओं की परस्परिक दूरी का, चन्द्र आदि देवों की अग्र महीषियों का, देवों की आभ्यंतर परिषदें, योग-सामर्थ्य आदि का ज्योतिष्क देवों के आयुष्य एवं उनके अल्प बहुत्व का विस्तार से आगे वर्णन है॥१-२॥

हे भगवन्! क्षेत्र की अपेक्षा से चन्द्र एवं सूर्य के नीचे के प्रदेश में विद्यमान, समश्रेणी में स्थित, उपरितन प्रदेशवर्ती तारा-विमानों के अधिष्ठायक देवों में से कई देव क्या उद्योत समृद्धि आदि में उनसे न्यून हैं, क्या कतिपय देव उनके समान हैं?

हाँ गौतम! ऐसा ही है। ऊपर जैसा प्रश्न हुआ है, तदनुरूप ही उसका उत्तर है।

हे भगवन्! ऐसा क्यों है?

हे गौतम! पहले के भव में उन तारा विमानों के अधिष्ठायक देवों द्वारा किए गए तपश्चरण, नियमानुसरण एवं ब्रह्मचर्य सेवन जैसे साधना मूलक आचरण में जो न्यूनाधिक तारतम्य रहा है, तदनुसार उनमें द्युति, वैभव की अपेक्षा से इनमें चन्द्र आदि की तुलना में न्यूनता, तुल्यता है। अथवा पूर्वभव में उन देवों का तपश्चरण नियमानुसरण, ब्रह्मचर्य सेवन आदि उच्च या निम्न नहीं होते, तदनुसार उनमें उद्योत, वैभव आदि की दृष्टि से न उनसे हीन होते हैं और न तुलनीय हैं।

चन्द्र परिवार

(१९७)

एगमेगस्स णं भंते! चंदस्स केवइया महग्गहा परिवारो केवइया णक्खत्ता परिवारो केवइयाओ तारागणकोडाकोडीओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! अट्ठासीइमहग्गहा परिवारो, अट्ठावीसं णक्खत्ता परिवारो, छावट्ठिसहस्साइं णव सया पण्णत्तरा तारागणकोडाकोडीओ पण्णत्ताओ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! एक-एक चन्द्र का महाग्रह परिवार, नक्षत्र परिवार तथा तारागण परिवार कितना कोटानुकोटि है?

हे गौतम! प्रत्येक चन्द्र का परिवार ८८ महाग्रह २८ नक्षत्र तथा ६६९७५ कोटानुकोटि तारागण हैं, ऐसा आख्यात हुआ है।

गति क्रम

(१९८)

मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए जोइसं चारं चरइ?

गोयमा! इक्कारसहिं इक्कवीसेहिं जोयणसएहिं अबाहाए जोइसं चारं चरइ, लोगंताओ णं भंते! केवइयाए अबाहाए जोइसे पण्णत्ते?

गोयमा! एक्कारस एक्कारसेहिं जोयणसएहिं अबाहाए जोइसे पण्णत्ते।

धरणितलाओ णं भंते!०सत्तहिं णउएहिं जोयणसएहिं जोइसे चारं चरइत्ति, एवं सूरविमाणे अट्ठहिं सएहिं, चंदविमाणे अट्ठहिं असीएहिं, उवरिल्ले तारारूवे णवहिं जोयणसएहिं चारं चरइ।

जोइसस्स णं भंते! हेट्ठिल्लाओ तलाओ केवइयाए अबाहाए सूरविमाणे चारं चरइ?

गोयमा! दसहिं जोयणेहिं अबाहाए चारं चरइ, एवं चंदविमाणे णउईए जोयणेहिं चारं चरइ, उवरिल्ले तारारूवे दसुत्तरे जोयणसए चारं चरइ, सूरविमाणाओ चंदविमाणे असीईए जोयणेहिं चारं चरइ, सूरविमाणाओ जोयणसए उवरिल्ले तारारूवे चारं चरइ, चंदविमाणाओ वीसाए जोयणेहिं उवरिल्ले णं तारारूवे चारं चरइ।

भावार्थ - हे भगवन्! ज्योतिष्चक्र के देव मंदर पर्वत से कितनी दूरी पर गति करते हैं?

हे गौतम! वे ११२१ योजन की दूरी पर गति करते हैं।

हे भगवन्! ज्योतिष्चक्र लोक के अंत से, अलोक से पूर्व कितने अंतर पर स्थित कहा गया है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! वहाँ से ११११ योजन की दूरी पर स्थित है, ऐसा बतलाया गया है।

हे भगवन्! नीचे का ज्योतिष्चक्र पृथ्वी तल से कितनी ऊंचाई पर गति करता है?

हे गौतम! ७९० योजन की ऊँचाई पर वह गति करता है।

इसी तरह सूर्य विमान पृथ्वीतल से आठ सौ योजन की ऊँचाई पर, चन्द्र विमान ८८० योजन की ऊँचाई पर तथा ऊपर के तारारूप-नक्षत्र-ग्रह-प्रकीर्ण ९०० योजन की ऊँचाई पर गति करते हैं।

हे भगवन्! ज्योतिष्चक्र के अधस्तन तल से सूर्य विमान कितनी दूरी पर, कितनी ऊँचाई पर गमन करता है?

हे गौतम! वह १० योजन की दूरी पर उतनी ही ऊँचाई पर गमन करता है। चंद्र विमान ९० योजन की दूरी एवं उतनी ही ऊँचाई पर गमन करता है। ऊपर के प्रकीर्ण ११० योजन की दूरी तथा उतनी ही ऊँचाई पर गमन करते हैं। सूर्य के विमान से चन्द्रमा का विमान ८० योजन की दूरी पर ऊँचाई पर गति करता है। उपरितन तारारूप ज्योतिष्चक्र १०० योजन की दूरी पर उतनी ही ऊँचाई पर गति करता है। यह चन्द्र विमान से बीस योजन की दूरी पर, उतनी ही ऊँचाई पर गति करता है।

(१९९)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं कयरे णक्खत्ते सव्वब्भंतरिल्लं चारं चरइ? कयरे णक्खत्ते सव्वबाहिरं चारं चरइ? कयरे० सव्वहिट्ठिल्लं चारं चरइ? कयरे० सव्वउवरिल्लं चारं चरइ?

गोयमा! अभिई णक्खत्ते सव्वब्भंतरं चारं चरइ, मूलो सव्वबाहिरं चारं चरइ, भरणी सव्वहिट्ठिल्लगं० साई सव्वुवरिल्लगं चारं चरइ।

चंदविमाणे णं भंते! किंसिंठिए पण्णत्ते?

गोयमा! अद्धकविट्ठसंठाणसंठिए सव्वफालियामए अब्भुग्गयमूसिए एवं सव्वाइं णेयव्वाइं।

चंदविमाणे णं भंते! केवइयं आयामविक्खंभेणं केवइयं बाहल्लेणं पण्णत्ते?

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

गोयमा!

छप्पण्णं खलु भाए विच्छिण्णं चंदमंडलं होइ।

अट्ठावीसं भाए बाहल्लं तस्स बोद्धव्वं॥१॥

अडयालीसं भाए विच्छिण्णं सूरमण्डलं होइ।

चउवीसं खलु भाए बाहल्लं तस्स बोद्धव्वं॥२॥

दो कोसे य गहाणं णक्खत्ताणं तु हवइ तस्सद्धं। तस्सद्धं ताराणं तस्सद्धं चेव बाहल्लं।

शब्दार्थ - कवित्थ - क़टहल, **फालिया** - स्फटिक।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में २८ नक्षत्रों के अन्तर्गत कौनसा नक्षत्र समस्त मंडलों के भीतर के मंडल से होता हुआ गमन करता है? कौनसा नक्षत्र समस्त मंडलों के नीचे होता हुआ गमन करता है? कौनसा नक्षत्र समस्त मंडलों के ऊपर होता हुआ गमन करता है?

हे गौतम! अभिजित नक्षत्र सर्वाभ्यंतर मंडल में से होता हुआ, मूल नक्षत्र सभी मंडलों से बाहर होता हुआ, भरणी नक्षत्र समग्र मंडलों के नीचे होता हुआ एवं स्वाति नक्षत्र समस्त मंडलों के ऊपर होता हुआ गति करता है।

हे भगवन्! चन्द्र विमान का संस्थान कैसा आख्यात हुआ है?

हे गौतम! चन्द्र विमान ऊपर की ओर मुंह कर रखे हुए आधे कटहल के फल के आकार का कहा गया है। वह सम्पूर्णतः स्फटिकमय है। सूर्य आदि सभी ज्योतिष्क देवों के विमान इसी प्रकार के हैं, यह ज्ञातव्य है।

हे भगवन्! चन्द्रविमान आयाम-विस्तार एवं ऊँचाई में कितना कहा गया है?

हे गौतम! चन्द्रविमान $\frac{५६}{६१}$ योजन चौड़ा तथा वृत्ताकार होने से उतना ही लम्बा एवं $\frac{२८}{६१}$ योजन ऊँचा है।

सूर्य विमान $\frac{४८}{६१}$ योजन चौड़ा एवं उतना ही लम्बा तथा $\frac{२८}{६१}$ योजन ऊँचा है।

ग्रहों, नक्षत्रों एवं ताराओं के विमान क्रमशः दो कोस, एक कोस तथा अर्द्धकोस विस्तार युक्त हैं।

ग्रह आदि विमानों की ऊँचाई उनके विस्तार से आधी होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्विधरूपधारी विमान वाहक देव

(२००)

चंदविमाणं णं भंते! कइ देवसाहस्सीओ परिवहंति?

गोयमा! सोलस देव-साहस्सीओ परिवहंति।

चंदविमाणस्स णं पुरत्थिमेणं सेयाणं सुभगाणं सुप्पभाणं संखतलविमलणिम्मल-दहिघण-गोखीर-फेणरयय-णिगरप्पगासाणं थिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवर-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठतिक्ख-दाढाविडंबियमुहाणं रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहाणं महुगुलिय-पिंगलक्खाणं पीवरवरोरुपडिपुण्णविउलखंधाणं मिउविसय-सुहुमलक्खण-पसत्थवरवण्णकेसरसडोवसोहियाणं ऊसियसुणमियसुजायअप्फो-डियलंगूलाणं वइरामयणक्खाणं वइरामयदाढाणं वइरामयदंताणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुयाणं तवणिज्जजोत्तगसुजोइयाणं कामगमाणं पीइगमाणं मणोगमाणं मणोरमाणं अमियगईणं अमियबलवीरियपुरिसक्कार-परक्कमाणं महया अप्फोडिय-सीहणायबोलकल-कलरवेणं महुरेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ य सोभयंता चत्तारि देवसाहस्सीओ सीहरूवधारीणं पुरत्थिमिल्लं बाहं परिवहंति।

चंदविमाणस्स णं दाहिणेणं सेयाणं सुभगाणं सुप्पभाणं संखतलविमलणिम्मल-दहिघण-गोखीरफेणरययणिगरप्पगासाणं वइरामयकुंभजुयलसुट्ठियपीवर-वरवइरसोंड-वट्टियदित्तसुरत्तपउमप्पगासाणं अब्भुण्णयमुहाणं तवणिज्जविसाल-कण्णचंचल-चलंतविमलुज्जलाणं महुवण्णभिसंतणिद्धपत्तलणिम्मलतिवण्ण-मणिरयणलोयणाणं अब्भुग्गयमउलमल्लियाधवलसरिससंठिय-णिव्वणदढकसिण-फालियामयसुजाय-दंतमुसलोवसोभियाणं कंचणकोसीपविट्ठदंतग्गविमलमणिरयण-रुइलपेरंतचित्त-रूवगविराइयाणं तवणिज्जविसालतिलगप्पमुहपरिमंडियाणं णाणामणिरयणमुद्ध-गेविज्जबद्धगलयवरभूसणाणं वेरुलियविचित्तदण्डणिम्मल-वइरामयतिक्खलट्ठ-अंकुसकुंभजुयलयंतरोडियाणं तवणिज्जसुबद्ध-कच्छदप्पिय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बलुद्धराणं विमलघण-मण्डलवइरामयलालाललियतालणाणं णाणामणिरयण-घंटपासगरययामयबद्ध-लज्जुलंबियघंटाजुयलमहुरसरमणहराणं अल्लीणपमाणजुत्त-वट्टिय-सुजायलक्खण-पसत्थरमणिज्जवालगत्तपरिपुंछणाणं उवचियपडिपुण्ण-कुम्मचलणलहु-विक्कमाणं-अंकमयणक्खाणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुयाणं तवणिज्जजोत्तग-सुजोइयाणं कामगमाणं पीइगमाणं मणोगमाणं मणोरमाणं अमियगईणं अमियबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमाणं महया गंभीरगुलुगुलाइयरवेणं महुरेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ य सोभयंता चत्तारि देवसाहस्सीओ गयरूवधारीणं देवाणं दक्खिणिल्लं बाहं परिवहंति।

चंदविमाणस्स णं पच्चत्थिमेणं सेयाणं सुभगाणं सुप्पभाणं चलचवलक-कुहसालीणं घणणिचियसुबद्धलक्खणुण्णयईसियाणयवसभोट्ठाणं चंकमियललिय-पुलिय-चलचवलगव्वियगईणं सण्णयपासाणं संगयपासाणं सुजायपासाणं पीवरवट्टियसुसंठिय-कडीणं ओलंबपलंबलक्खणपमाणजुत्तरमणिज्जवालगंडाणं समखुरवालिधाणाणं समलिहियसिंगतिक्खग्गसंगयाणं तणुसुहुमसुजायणिद्धलो-मच्छविधराणं उवचियमंसलविसालपडिपुण्णखंधपएससुंदराणं वेरुलियभिसंत-कडक्खसुणिरिक्खणाणं जुत्तपमाणपहाणलक्खणपसत्थरमणिज्जगग्गरगल्लसो-भियाणं घरघरगसुसद्दबद्धकंठपरिमंडियाणं णाणामणिकणगरयणघंटियावेगच्छिगसु-कयमालियाणं वरघंटागलयमालुज्जलसिरिधराणं पउमुप्पलसगलसुरभिमाला-विभूसियाणं वइरखुराणं विविहविक्खुराणं फालियामयदंताणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुयाणं तवणिज्जजोत्तगसुजोइयाणं कामगमाणं पीइगमाणं मणोगमाणं मणोरमाणं अमियगईणं अमियबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमाणं महया गज्जिय-गंभीररवेणं महुरेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ य सोभयंता चत्तारि देवसाहस्सीओ वसहरूवधारीणं देवाणं पच्चत्थिमिल्लं बाहं परिवहंति।

चंदविमाणस्स णं उत्तरेणं सेयाणं सुभगाणं सुप्पभाणं तरमल्लिहायणाणं हरिमेलमउलमल्लियच्छाणं चंचुच्चिललियपुलियचलचवलचंचलगईणं लंघणवग्गण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धावणधोरणतिवइजइण सिक्खियगईणं ललंतलामगललायवरभूसणाणं सण्णय-पासाणं संगयपासाणं सुजायपासाणं पीवरवट्टियसुसंठियकडीणं ओलंबपलं-बलक्खणपमाणजुत्त-रमणिज्जवालपुच्छाणं तणुसुहुमसुजायणिद्धलोमच्छविहराणं मिउविसयसुहुमलक्खण-पसत्थविच्छिण्णकेसरवालिहराणं ललंतथासगल-लाडवरभूसणाणं मुहमण्डग-ओचूलगचामरथासगपरिमण्डियकडीणं तवणिज्जखुराणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुयाणं तवणिज्जजोत्तगसुजोइयाणं कामगमाणं जाव मणोरमाणं अमियगईणं अमियबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमाणं महया हयहेसिय-किल-किलाइयरवेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ य सोभयंता चत्तारि देव-साहस्सीओ हयरूवधारीणं देवाणं उत्तरिल्लं बाहं परिवहंति।

गाहा - सोलसदेवसहस्सा हवंति चंदेसु चेव सूरेसु।
अट्ठेव सहस्साहं एक्केक्कंमी गहविमाणे॥१॥
चत्तारि सहस्साइं णक्खत्तंमि य हवंति इक्किक्के।
दो चेव सहस्साइं ताराऱूवेक्कमेक्कंमि॥२॥

एवं सूरविमाणाणं जाव ताराऱूवविमाणाणं, णवरं एस देवसंघाएत्ति।

शब्दार्थ - **सुभगाणं** - सुंदर, **सुप्पभाणं** - उत्तम प्रभा युक्त, **विडंबियं** - प्रकटित, **महुगुलिय** - जमे हुए शहद की गोली, **केसरसटा** - अयाल, **उवसोहियाणं** -, उपशोभित, **अप्फोडिय** - आस्फालन युक्त, **जोत्तग** - रस्सा, **कुंभ** - मस्तक, **सोंड** - सूंड, **णिद्ध** - स्निग्ध-चिकने, **पत्तल** - पलक, **णिव्वण** - निर्व्रण-घाव रहित, **कोसी** - खोल, **लज्जु** - रज्जु, **अल्लीण** - सुंदर, **ककुह** - ककुध-यूही, **ईसिय** - कुछ, **वालिधाणाणं** - पूंछ युक्त, **तरमल्लिहायणाणं** - तारुण्यावस्था युक्त, **थासक** - दर्पण।

भावार्थ - हे भगवन्! चंद्र विमान का कितने सहस्त्र देव परिवहन करते हैं?

हे गौतम! सोलह सहस्त्रदेव उसका परिवहन करते हैं। चन्द्र विमान के पूर्वी भाग में शंख के अधस्तन भाग निर्मल, स्वच्छ दही, गाय का दूध, फेन, रजत राशि के समान दीप्ति युक्त, सुंदर, स्थिर, सुदृढ़, कांत, प्रकृष्ट, गोलाकार, परिपुष्ट परस्पर, मिलित, विशिष्ट तीक्ष्ण दाढ़ों से व्यक्त मुख युक्त, लाल कमल के पत्र के समान सुकोमल तालु जिह्वा युक्त, जमे हुए मधु की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोली के समान पीले-भूरे नेत्र युक्त, परिपुष्ट, सुंदर जंघा युक्त, विशाल स्कन्ध युक्त, कोमल, विशद, सूक्ष्म, उत्तम लक्षण युक्त, स्कन्धों पर उगे हुए अयालों से सुशोभित, ऊपर सुंदर रूप में झुकाई हुई, सहज रूप में हलन-चलन युक्त पूंछ से युक्त, वज्रमय नख, दाढ़ एवं दांत युक्त तपनीय स्वर्ण जैसी जिह्वा और तालु से युक्त, तपनीय स्वर्ण निर्मित रस्से द्वारा विमान के साथ भलीभांति जुते हुए, इच्छानुरूप, प्रीतिमय, मनोरम, अपरिमित तीव्र गति से चलने वाले, अपार बल, शक्ति एवं पराक्रम से युक्त, तेज, गंभीर स्वर से गर्जन करते हुए, मधुर, मनोहर ध्वनि द्वारा गगन मंडल को गुंजाते हुए, दिशाओं को शोभित करते हुए चार सहस्त्र सिंह रूपधारी देव विमान के पूर्वी भाग का परिवहन किए चलते हैं।

चंद्र विमान के दाहिनी ओर सफेद वर्णयुक्त, सुभग-सुंदर प्रभायुक्त, शंख तल, निर्मलदधि, गोदुग्ध, फेन तथा रजत राशि की तरह निर्मल, उज्ज्वल दीप्तियुक्त, वज्रमय, द्विधा विभक्त, कुंभ की तरह विशाल मस्तक युक्त, सुस्थित, सुपुष्ट, उत्तम, वज्रमय, गोलाकार सूंड, उस पर उभरे हुए द्युतिमय रक्त कमल से प्रतीत होते बिन्दुओं से सुशोभित उन्नत मुख युक्त, तपनीय स्वर्णमय, विशाल सहज रूप में चपलतामय, हिलते हुए, निर्मल, उद्योतमय कर्ण युक्त, शहद जैसे रंग के देदीप्यमान, चिकने, कोमल, पलक युक्त, त्रिवर्ण-तीन वर्ण के रत्नों जैसी आँखों से युक्त बाहर निकले हुए, कोमल श्वेत चमेली के पुष्प के समान धवल (सफेद) एक समान संस्थान युक्त, घाव रहित, दृढ़, संपूर्णतः स्फटिकमय, सुजात-सुंदर-रूप में उत्पन्न मूसल के सदृश अग्रभागों पर रत्नजटित, स्वर्णनिर्मित खोलों से सुसज्ज, दांतों से सुशोभित, स्वर्णमय, विशाल तिलक आदि पुष्पों से परिमंडित विविध मणियों एवं रत्नों से सज्जित मुख युक्त, गले में धारण किए हुए अलंकारों से विभूषित, कुंभस्थल के दोनों भागों के मध्य रखे हुए, नीलम निर्मित चित्रमय हत्थे सहित, उज्ज्वल, वज्ररत्नमय, तेज, सुंदर, अंकुश से युक्त, कक्ष में बंधी हुई रस्सी से युक्त, दर्पोद्धत, उत्कट बलयुक्त, निर्मल, सघन मण्डल युक्त, वज्रमय लालों से सुशोभित लटकते हुए अलंकार सहित, विविध मणियों एवं रत्नों से सजे हुए दोनों ओर विद्यमान छोटी-छोटी घंटियों से समायुक्त, रजत निर्मित बंधी हुई रज्जु से लटकते हुए दो घटाओं के मधुर स्वर से मनोहर प्रतीत होते हुए, स्वभावतः सुंदर निष्पत्तिमय, समुचित प्रमाणोपेत, उत्तम लक्षण युक्त, प्रशस्त, रमणीय बालों से सुशोभित पूंछ युक्त, मांसल, परिपूर्ण, कछुए की तरह उन्नत चरणों द्वारा धीर गंभीर ध्वनि युक्त अंक रत्नमय नाखून युक्त तपनीय स्वर्णमय जिह्वा एवं तालु युक्त तपनीय स्वर्ण निर्मित रस्से से सुंदर रूप में जुते हुए यथेच्छ, उल्लासमय मन की गति सदृश सत्वर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गमनशील अपरिमित गति युक्त अपरिसीम बल, शक्ति पौरुष एवं पराक्रमशील, उच्च गंभीर स्वर से गगन को आपूरित करते हुए, दिशाओं को गुंजित करते हुए, गजरूपधारी चार सहस्त्र देव विमान के दक्षिणी पार्श्व को परिवहन करते हैं।

चन्द्रविमान के पश्चिम में श्वेत वर्ण युक्त, सौभाग्य युक्त, उत्तम प्रभामय, इधर-उधर हिलती हुई थूही से सुशोभित, ठोस लोहमय, बड़े हथौड़े की तरह सघन, सुगठित, उत्तम लक्षण युक्त, किंचिद् झुके हुए ओष्ठोपेत चंक्रमित-टेढ़ी-मेढ़ी, सुंदर, प्रफुल्लित, चपल गति युक्त, संगत, झुके हुए प्रमाणोपेत, देह के पार्श्व भागों से युक्त, परिपुष्ट, गोल, सुसंस्थित आकार वाली कटि युक्त, लटकते हुए लम्बे-लम्बे, सुंदर, उत्तम लक्षण युक्त, प्रमाणोपेत, रमणीय, बालों से शोभित गंडस्थल युक्त, समान खुर एवं पूंछ युक्त, समान रूप से उत्कीर्ण किए गए से, तीक्ष्ण सींगों से युक्त, अत्यंत सूक्ष्म, चिकने बालों को धारण किए हुए परिपुष्ट, विशाल, सुंदर स्कन्ध प्रदेश वाले, नीलम की तरह भासमान, कटाक्ष - तिरछे नेत्रों से युक्त, यथोचित प्रमाणोपेत, विशिष्ट, प्रशस्त, रमणीय गग्गरक संज्ञक विशेष परिधान - झूल से सुशोभित, हिलने-डुलने से परस्पर घर्षण से बजने जैसी ध्वनि से समवेत घरघरक संज्ञक आभरण विशेष से विमंडित, वक्षस्थल पर मणिरत्नों तथा घंटियों की माला से बने वैकक्षिक आभूषण से सज्जित, इस प्रकार उज्ज्वल शोभामय, पद्म, उत्पलों की अखंडित, सुरभिमय मालाओं से विभूषित, वज्ररत्नमय खुर युक्त, मणि, स्वर्ण आदि से खुरों के ऊर्ध्ववर्ती भागों से युक्त, स्फटिक मय दंतयुक्त, तपनीय स्वर्णमय जिह्वा, तालु युक्त एवं तपनीय स्वर्णनिर्मित रस्से द्वारा विमान से जुड़े हुए इच्छानुरूप, उल्लासमय, मन की गति की तरह सत्वरगामी, मनोरम अप्रतिम गति युक्त, अपरिमित बल, वीर्य, पराक्रमयुक्त, अत्यधिक गर्जना द्वारा आकाश को पूरित करते हुए, दिशाओं को शोभित करते हुए चार सहस्र वृषभ रूपधारी देव विमान के पश्चिमी पार्श्व को उठाए चलते हैं।

चन्द्रविमान के उत्तर में श्वेत वर्ण के सुभग, सुंदर प्रभायुक्त, तारुण्य युक्त, हरिमेलक एवं चमेली की कलियों जैसे नेत्रों से शोभित, तिरछी, चंचल, पुलकित, चपल गतियुक्त, खड्डे आदि को लांघने, ऊँचा कूदना, वेगपूर्वक दौड़ना, तीव्रता पूर्वक, त्रिपदी - तीन पैरों से दौड़ने में समर्थ आदि अश्वविषयक गतिक्रमों के अभ्यस्त, नीचे की ओर लटकते हुए, गले में पहनाए हुए सुंदर अलंकारों से विभूषित, झुके हुए, प्रमाणोपेत, सुनिष्पन्न, पार्श्व भाग युक्त, परिपुष्ट, गोल, सुंदर कटियुक्त, लटकते हुए, लंबे, उत्तम लक्षणयुक्त, सुंदर, चँवर जैसे पूँछ से युक्त, अत्यंत सूक्ष्म सुनिष्पन्न, चिकने, कोमल देह की छवि से विभूषित, मृदु, उज्ज्वल, सूक्ष्म, प्रशस्त लक्षणयुक्त,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कंधे पर उगे हुए विस्तीर्ण बालों की पंक्ति से विभूषित, अलंकृत, ललाट पर दर्पण जटित आभूषण धारण किए हुए, मुख पर लटकते हुए, लूम्बे, चँवर एवं दर्पण जटित विविध आभूषणों से सुशोभित कटियुक्त, तपनीय स्वर्ण जैसे खुर, जीभ एवं तालुयुक्त, तपनीय स्वर्ण निर्मित रस्सों से जुते हुए, इच्छानुरूप यावत् मनोरम गति से चलने वाले अपरिमित बल, शक्ति तथा पुरुषार्थ एवं पराक्रम युक्त, उच्च हिनहिनाहट ध्वनि से आकाश को आपूरित तथा दिशाओं को सुशोभित करते हुए चार सहस्र अश्वरूपधारी देव विमान के उत्तरी पार्श्व को धारण किए हुए चलते हैं।

गाथाएँ - चार-चार सहस्र सिंहरूपधारी, गजरूपधारी, वृषभरूपधारी एवं अश्वरूपधारी देव चन्द्र एवं सूर्य के विमानों को परिवहन किए चलते हैं।

ग्रहों के विमानों को दो-दो सहस्र सिंहरूपधारी, गजरूपधारी, वृषभरूपधारी एवं अश्वरूपधारी- कुल आठ-आठ सहस्र देव परिहवन किए रहते हैं॥१॥

नक्षत्रों को एक-एक सहस्र सिंहरूपधारी, गजरूपधारी, वृषभरूपधारी एवं अश्वरूपधारी देव- कुल चार सहस्र देव परिवहन किए चलते हैं।

तारों के विमान ५००-५०० सिंहरूपधारी, गजरूपधारी, वृषभरूपधारी एवं अश्वरूपधारी देव - कुल दो सहस्र देव वहन किए चलते हैं॥२॥

विवेचन - प्रस्तुत सूत्र में आभियोगिक देवों द्वारा सिंहरूप, गजरूप, वृषभरूप एवं अश्वरूप विकुर्वित कर विमानों के परिवहन करने का जो वर्णन आया है, शब्द संरचना की दृष्टि से वह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। शब्दालंकारों के प्राचुर्य से परिपूर्ण, उत्कृष्ट प्राकृत गद्यकाव्य का यह अतिसुंदर उदाहरण है। सिंह, हस्ति, वृषभ, अश्व के अंगोपांगों का जो वर्णन किया गया है, उनमें जो उपमा आदि अलंकारों का अत्यन्त सुंदर रूप में प्रयोग हुआ है, वह वास्तव में अद्भूत है। एक-एक अंग-प्रत्यंग के साथ अनुप्रासों की विलक्षण छटा तो दृष्टिगत होती ही है किन्तु एक-एक उपमेय के उपमानों की एक लम्बी श्रेणी या पंक्ति वहाँ बड़े विशद रूप में संप्रयुक्त है, जिसे पढ़ कर सहृदय पाठक भाव विमुग्ध हो जाता है। काव्यशास्त्र में इसे 'मालोपमा' कहा गया है। उपमाओं की मालाओं सी वहाँ उपस्थापित है। इस वर्णन को पढ़ते समय उत्तरवर्ती संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत कादम्बरी एवं उपमितिभवप्रपंचकथा जैसे अतिप्रशस्त काव्यों का स्मरण हो उठता है।

प्रस्तुत वर्णन के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी जो गद्यात्मक, आलंकारिक विवेचन हुआ है, वह इसी कोटि का है। इससे प्रकट होता है कि प्राकृत में गद्य रचना का उत्तरोत्तर सुंदर विकास होता गया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्योतिष्क देवों की गति का तारतम्य

(२०१)

एएसि णं भंते! चंदिमसूरियगहगणणक्खत्ततारारूवाणं कयरे सव्वसिग्घगई कयरे सव्वसिग्घतराए चेव?

गोयमा! चंदेहिंतो सूरा सिग्घगई, सूरेहिंतो गहा सिग्घगई, गहेहिंतो णक्खत्ता सिग्घगई, णक्खत्तेहिंतो तारारूवा सिग्घगई, सव्वप्पगई चंदा, सव्वसिग्घगई तारारूवा इति।

भावार्थ - हे भगवन्! इन चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र एवं तारे - इन ज्योतिष्क देवों में कौन सर्वाधिक शीघ्र गतियुक्त एवं शीघ्रतर गतियुक्त है?

हे गौतम! चन्द्रों की अपेक्षा सूर्यों की गति, सूर्यों की अपेक्षा ग्रहों की, ग्रहों की अपेक्षा नक्षत्रों की तथा नक्षत्रों की अपेक्षा तारों की गति अधिक शीघ्रतायुक्त है। इनमें चन्द्र सबसे मंदगतियुक्त एवं तारे सर्वाधिक शीघ्र गतियुक्त हैं।

ज्योतिष्क देवों की ऋद्धि

(२०२)

एएसि णं भंते! चंदिमसूरियगहगणणक्खत्ततारारूवाणं कयरे सव्वमहिड्डिया कयरे सव्वप्पड्डिया?

गोयमा! तारारूवेहिंतो णक्खत्ता महिड्डिया, णक्खत्तेहिंतो गहा महिड्डिया, गहेहिंतो सूरिया महिड्डिया, सूरेहिंतो चंदा महिड्डिया, सव्वप्पिड्डिया तारारूवा, सव्वमहिड्डिया चंदा।

भावार्थ - हे भगवन्! इन चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र एवं तारों में कौन-कौन सर्वाधिक ऋद्धिशाली है और कौन सबसे कम ऋद्धियुक्त है?

हे गौतम! तारों की अपेक्षा नक्षत्र, नक्षत्रों की अपेक्षा ग्रह, ग्रहों की अपेक्षा सूर्य एवं सूर्यों की अपेक्षा चन्द्र अधिक समृद्धिशाली हैं।

इस प्रकार तारे सबसे कम ऋद्धिशाली एवं चन्द्र सर्वाधिक ऋद्धियुक्त है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तारों का पारस्परिक अंतर

(२०३)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे तारारूवस्स य तारारूवस्स य केवइए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

गोयमा! दुविहे अंतरे पण्णत्ते, तंजहा-वाघाइए य णिव्वाघाइए य, णिव्वाघाइए जहण्णेणं पंचधणुसयाइं उक्कोसेणं दो गाउयाइं, वाघाइए जहण्णेणं दोण्णि छावट्ठे जोयणसए उक्कोसेणं बारस जोयणसहस्साइं दोण्णि य बायाले जोयणसए तारारूवस्स य २ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप में एक तारे से दूसरे तारे का कितना अंतर बतलाया गया है?

हे गौतम! व्याघातिक - बीच में आए हुए पर्वत आदि के व्यवधान से युक्त तथा निर्व्याघातिक - सर्वथा व्यवधान रहित, के रूप में दो प्रकार के अंतर बतलाए गए हैं। एक तारे से दूसरे तारे का निर्व्याघातिक अंतर न्यूनतम ५०० धनुष तथा उत्कृष्टतम दो गव्यूत (चार कोश) बतलाया गया है।

एक तारे से दूसरे तारे का व्याघातिक अंतर कम से कम २६६ योजन तथा अधिकतम १२२४२ योजन कहा गया है।

ज्योतिष्क देवों की प्रमुख देवियाँ

(२०४)

चंदस्स णं भंते! जोइसिंदस्स जोइसरण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ?

गोयमा! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तंजहा - चंदप्पभा दोसिणाभा अच्चिमाली पभंकरा, तओ णं एगमेगाए देवीए चत्तारि २ देवीसहस्साइं परिवारो पण्णत्तो, पभू णं ताओ एगमेगा देवी अण्णं देवीसहस्सं विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं सोलस देवीसहस्सा, सेत्तं तुडिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पहू णं भंते! चंदे जोइसिंदे जोइसराया चंदवडेंसए विमाणे चंदाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए तुडिएणं सद्धिं महया हयणट्टगीयवाइय जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए?

गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे,

से केणट्ठेणं भंते! जाव विहरित्तए?

गोयमा! चंदस्स णं जोइसिंदस्स जोइसरण्णो चंदवडेंसए विमाणे चंदाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए माणवए चेइयखंभे वइरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु बहूइओ जिणसकहाओ सण्णिखित्ताओ चिट्ठंति, ताओ णं चंदस्स अण्णेसिं च बहूणं देवाण य देवीण य अच्चणिज्जाओ जाव पज्जुवासणिज्जाओ, से तेणट्ठेणं गोयमा! णो पभूत्ति।

पभू णं चंदे...सभाए सुहम्माए चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं एवं जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए केवलं परियारिद्धीए, णो चेव णं मेहुणवत्तियं। विजया १ वेजयंती २ जयंती ३ अपराजिया ४ सव्वेसिं गहाईणं एयाओ अग्गमहिसीओ, छावत्तरस्सवि गहसयस्स एयाओ अग्गमहिसीओ वत्तव्वाओ, इमाहि गाहाहिंति-

इंगालए १ वियालए २ लोहियंके ३ सणिच्छरे चेव ४।
आहुणिए ५ पाहुणिए ६ कणगसणामा य पंचेव ११॥१॥
सोमे १२ सहिए १३ अस्सासणे य १४ कज्जोवए १५ य कब्बुरए १६।
अयकरए १७ दुंदुभए संखसणामेवि तिण्णेव २०॥२॥
एवं भाणियव्वं जाव भावकेउस्स अग्गमहिसीओत्ति।

शब्दार्थ - **मेहुण** - मैथुन।

भावार्थ - हे भगवन्! ज्योतिष्क देवों के इन्द्र, ज्योतिष्क देवों के राजा, चंद्र के कितनी देवियाँ आख्यात हुई हैं?

हे गौतम! चंद्रप्रभा, ज्योत्स्नाभा, अर्चिमाली, प्रभंकरा - ये चार प्रधान देवियाँ आख्यात हुई हैं। उनमें से प्रत्येक प्रधान देवी का चार-चार सहस्र देवी परिवार कहा गया है। एक-एक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रधान देवी अन्य सहस्रों देवियों की विकुर्वणा करने में सक्षम होती है। इस प्रकार सोलह सहस्र देवियाँ विकुर्वित होती हैं। अवशिष्ट त्रुटितादि वाद्य, ध्वनि, नृत्य, संगीत नाट्यादि का वर्णन पूर्ववत् है।

हे भगवन्! ज्योतिष्क देवों के स्वामी, इन्द्र, राजा चंद्रावतंसक विमान में, चंद्रा राजधानी में, सुधर्मा सभा में त्रुटित आदि वाद्य, नृत्य गीत प्रभृति यावत् दिव्य भोगोपभोग में क्या विहरणशील है?

हे गौतम! ऐसा नहीं है।

हे भगवन्! वह किस कारण से यावत् भोगानुरंजित क्यों नहीं है?

हे गौतम! ज्योतिष्केन्द्र, ज्योतिष्कराज के चंद्रावतंसक विमान में, चंद्रा राजधानी में, सुधर्मा सभा में माणवक संज्ञक चैत्य स्तंभ है। उस पर हीरक निर्मित, गोलाकार पात्रों में जिनेन्द्रों की बहुत-सी अस्थियाँ स्थापित हैं। वे चन्द्र एवं अन्य बहुत से देव एवं देवियों के लिए अर्चनीय यावत् पर्युपासनीय है।

हे गौतम! उनके प्रति बहुमान के कारण आशातना के भय से सुधर्मा सभा में अपने चार सहस्र सामानिक देवों से घिरा हुआ चंद्रमा यावत् दिव्य भोगोपभोग में निरत नहीं होता। वहाँ केवल परिवार ऋद्धि, रूप, वैभव में सुख मानता है, मैथुन सेवन नहीं करता।

समस्त ग्रहों की विजया, वैजयंती, जयंती तथा अपराजिता नामक चार अग्रमहीषियाँ हैं। इस प्रकार १७६ ग्रहों की ये अग्रमहीषियाँ हैं।

गाथाएँ - अंगारक, विकालक, लोहितांक, शनैश्चर, आधुनिक, प्राधुनिक, कण, कणक, कणकणक, कणवितानक, कणसंतानक, सोम, सहित, आश्वासन, कार्योपग, कर्बुरक, अजकरक, दुंदुभक, शंख, शंखनाभ, शंखवर्णाभ इस प्रकार भावकेतु पर्यन्त ग्रहों का उच्चारण करना चाहिए। इन सबकी प्रधान देवियाँ उपर्युक्त नामयुक्त हैं।

नक्षत्रों का अधिष्ठायक देव

(२०५)

गाहा - **बम्हा विण्हू य वसू वरुणे अय वुड्ढी पूस आस जमे।**
अग्गि पयावइ सोमे रुद्दे अदिई वहस्सई सप्पे॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पिउ भगअज्जमसविया तट्ठा वाऊ तहेव इंदग्गी।
मित्ते इंदे णिरई आऊ विस्सा य बोद्धव्वे॥२॥

भावार्थ - ब्रह्मा, विष्णु, वसु, वरुण, अज, वृद्धि, पूसा, अश्व, यम, अग्नि, प्रजापति, सोम, रुद्र, अदिति, बृहस्पति, सर्प, पिता, भग, अर्यमा, सविता, त्वष्टा, वायु, इन्द्राग्नी, मित्र, इन्द्र, निर्ऋति, आप, विश्वेदेव - ये अट्ठाईस क्रमशः अभिजित से लेकर उत्तराषाढ़ा पर्यन्त अट्ठाईस नक्षत्रों के अधिष्ठायक देव हैं।

देवों की कालस्थिति

(२०६)

चंदविमाणे णं भंते! देवाणं केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता?

गोयमा! जहण्णेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससय-सहस्समब्भहियं।

चंदविमाणे णं० देवीणं...जहण्णेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्ध-पलिओवमं पण्णासाए वाससहस्सेहिमब्भहियं।

सूरविमाणे देवाणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससहस्समब्भहियं, सूरविमाणे देवीणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पंचहिं वाससएहिं अब्भहियं।

गहविमाणे देवाणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं, गहविमाणे देवीणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं।

णक्खत्तविमाणे देवाणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्ध-पलिओवमं, णक्खत्तविमाणे देवीणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं साहियं चउब्भागपलिओवमं।

ताराविमाणे देवाणं जहण्णेणं अट्ठभागपलिओवमं उक्कोसेणं चउब्भाग-पलिओवमं, ताराविमाणदेवीणं जहण्णेणं अट्ठभाग-पलिओवमं उक्कोसेणं साइरेगं अट्ठभागपलिओवमं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ - हे भगवन्! चंद्रविमान में देवों की कालस्थिति कितनी बतलाई गई है?

हे गौतम! चन्द्रविमान में देवों की स्थिति कम से कम $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा अधिकतम एक पल्योपम से एक लाख वर्ष ज्यादा बतलाई गई है।

चन्द्रविमान में देवियों की कालस्थिति न्यूनतम $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा अधिकतम आधे पल्योपम से ५०,००० वर्ष ज्यादा बतलाई गई है।

सूर्यविमान में देवों की कालस्थिति न्यूनतम $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा अधिकतम एक पल्योपम से एक हजार वर्ष ज्यादा बतलाई गई है।

सूर्यविमान में देवियों की स्थिति न्यूनतम $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा अधिकतम अर्द्धपल्योपम से ५०० वर्ष ज्यादा बतलाई गई है।

ग्रहविमान में देवों की न्यूनतम स्थिति $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा अधिकतम एक पल्योपम कही गई है। ग्रहविमान में देवियों की स्थिति अल्पतम $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा उत्कृष्टतम अर्द्धपल्योपम कही गई है।

नक्षत्र विमानों में देवों की स्थिति जघन्यतः $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा ज्यादा से ज्यादा अर्द्धपल्योपम आख्यात हुई है। यहाँ देवियों की जघन्यतः $\frac{१}{४}$ पल्योपम तथा उत्कृष्टः $\frac{१}{४}$ पल्योपम से कुछ अधिक होती है।

ताराविमान में देवों की स्थिति जघन्यतः $\frac{१}{८}$ पल्योपम तथा उत्कृष्टतः $\frac{१}{४}$ पल्योपम होती है। यहाँ देवियों की स्थिति न्यूनतम $\frac{१}{८}$ पल्योपम तथा उत्कृष्टतः $\frac{१}{८}$ पल्योपम से कुछ अधिक होती है।

संख्या-तारतम्य

(२०७)

एएसि णं भंते! चंदिमसूरियगहमणणक्खत्ततारारूवाणं कयरे-कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा! चंदिमसूरिया दुवे तुल्ला सव्वत्थोवा, णक्खत्ता संखेज्जगुणा, गहा संखेज्जगुणा, तारारूवा संखेज्जगुणा इति॥

शब्दार्थ - थोवा - कम।

भावार्थ - हे भगवन्! चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र एवं ताराओं में कौन, कितने, अल्प, बहुत एवं तुल्य या विशेषाधिक है?

हे गौतम! चन्द्र एवं सूर्य तुल्य या समान हैं। वे सबसे कम हैं। इनकी अपेक्षा नक्षत्र संख्येय गुणा अधिक हैं। नक्षत्रों की अपेक्षा ग्रह संख्यात गुणा अधिक हैं तथा ग्रहों की अपेक्षा तारे संख्यात गुणा अधिक हैं।

तीर्थंकरादि संख्या-क्रम

(२०८)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे जहण्णपए वा उक्कोसपए वा केवइया तित्थयरा सव्वग्गेणं पण्णत्ता?

गोयमा! जहण्णपए चत्तारि उक्कोसपए चोत्तीसं तित्थयरा सव्वग्गेणं पण्णत्ता।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे जहण्णपए वा उक्कोसपए वा केवइया चक्कवट्टी सव्वग्गेणं पण्णत्ता?

गोयमा! जहण्णपए चत्तारि उक्कोसपए तीसं चक्कवट्टी सव्वग्गेणं पण्णत्ता इति, बलदेवा तत्तिया चेव जत्तिया चक्कवट्टी, वासुदेवावि तत्तिया चेवत्ति।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया णिहिरयणा सव्वग्गेणं पण्णत्ता?

गोयमा! तिण्णि छलुत्तरा णिहिरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया णिहिरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति?

गोयमा! जहण्णपए छत्तीसं उक्कोसपए दोण्णि सत्तरा णिहिरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।

जम्बुद्दीवे० केवइया पंचिंदियरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता?

गोयमा! दो दसुत्तरा पंचिंदियरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जम्बुद्दीवे० जहण्णपए वा उक्कोसपए वा केवइया पंचिंदियरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति?

गोयमा! जहण्णपए अट्ठावीसं उक्कोसपए दोण्णि दसुत्तरा पंचिंदियरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया एगिंदियरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता?

गोयमा! दो दसुत्तरा एगिंदियरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइया एगिंदियरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति?

गोयमा! जहण्णपए अट्ठावीसं उक्कोसेणं दोण्णि दसुत्तरा एगिंदियरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप के अंतर्गत कम से कम तथा अधिक से अधिक समग्र रूप में कितने तीर्थंकर परिज्ञापित हुए हैं?

हे गौतम! कम से कम चार तथा अधिकतम चौंतीस तीर्थंकर परिज्ञापित हुए हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप के अंतर्गत न्यूनतम तथा अधिकतम कितने चक्रवर्ती कहे गए हैं?

हे गौतम! न्यूनतम चार तथा अधिकतम तीस चक्रवर्ती कहे गए हैं। जितने चक्रवर्ती होते हैं, उतने ही बलदेव एवं वासुदेव होते हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में समग्र निधिरत्न - उत्कृष्ट निधान कितने बतलाए गए हैं?

हे गौतम! समग्र निधिरत्न ३०६ बतलाए गए हैं।

हे भगवन्! जम्बूद्वीप में कितने सौ रत्न यथाशीघ्र परिभोग्य हैं?

हे गौतम! न्यूनतम ३६ तथा अधिकतम २७० निधिरत्न यथाशीघ्र परिभोग्य हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में कितने सौ पंचेन्द्रिय रत्न समग्रतया बतलाए गए हैं?

हे गौतम जम्बूद्वीप में कुल २१० पंचेन्द्रिय रत्न कहे गए हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में कम से कम तथा अधिक से अधिक कितने सौ पंचेन्द्रिय रत्न यथा शीघ्र परिभोग में आते हैं?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में कम से कम अट्ठाईस तथा अधिकतम २१० पंचेन्द्रिय रत्न परिभोग्य हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में कुल कितने सौ एकेन्द्रिय रत्न परिज्ञापित हुए हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे गौतम! कुल २१० एकेन्द्रिय रत्न परिज्ञापित हुए हैं।

हे भगवन्! जंबूद्वीप में कितने सौ एकेन्द्रिय रत्न यथाशीघ्र परिभोगोपयोगी हैं?

हे गौतम! न्यूनतम अट्ठाईस तथा अधिकतम २१० एकेन्द्रिय रत्न यथाशीघ्र परिभोग्य हैं।

विवेचन - जम्बूद्वीप के महाविदेह क्षेत्र के बत्तीस विजयों में बत्तीस तथा भरत क्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में एक-एक तीर्थंकर जब होते हैं तब तीर्थंकरों की उत्कृष्ट संख्या ३४ होती है।

जब जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह क्षेत्र में शीता महानदी के दक्षिण और उत्तर भाग में एक-एक और शीतोदा महानदी के दक्षिण और उत्तर भाग में एक-एक चक्रवर्ती होता है, तब जघन्य चार चक्रवर्ती होते हैं।

जब महाविदेह के ३२ विजयों में से अट्ठाईस विजयों में २८ चक्रवर्ती और भरत में एक एवं ऐरवत में एक चक्रवर्ती होता है तब समग्र जम्बूद्वीप में उनकी उत्कृष्ट संख्या तीस होती है।

स्मरण रहे कि जिस समय २८ चक्रवर्ती २८ विजयों में होते हैं उस समय शेष चार विजयों में चार वासुदेव होते हैं और जहाँ वासुदेव होते हैं वहाँ चक्रवर्ती नहीं होते। अतएव चक्रवर्तियों की उत्कृष्ट संख्या जम्बूद्वीप में तीस ही बतलाई गई है।

चक्रवर्तियों की जघन्य संख्या की संगति तीर्थंकरों की संख्या के समान जान लेना चाहिए।

जब चक्रवर्तियों की उत्कृष्ट संख्या तीस होती है तब वासुदेवों की जघन्य संख्या चार होती है और जब वासुदेवों की उत्कृष्ट संख्या ३० होती है तब चक्रवर्ती की संख्या ४ होती है।

बलदेवों की संख्या की संगति वासुदेवों के समान जान लेना चाहिए क्योंकि ये दोनों सहचर होते हैं।

प्रत्येक चक्रवर्ती के नौ-नौ निधान होते हैं। उनके उपयोग में आने की जघन्य और उत्कृष्ट संख्या चक्रवर्तियों की जघन्य और उत्कृष्ट संख्या पर आधृत है। निधानों और रत्नों की संख्या के सम्बन्ध में भी यही जानना चाहिए।

प्रत्येक चक्रवर्ती के नौ निधान होते हैं। नौ को चौतीस से गुणित करने पर ३०६ संख्या आती है। किन्तु उनमें से चक्रवर्तियों के उपयोग में आने वाले निधान जघन्य छत्तीस और अधिक से अधिक २७० हैं।

चक्रवर्ती के सात पंचेन्द्रियरत्न इस प्रकार हैं - १. सेनापति २. गाथापति ३. वर्द्धकी ४. पुरोहित ५. गज ६. अश्व ७. स्त्रीरत्न।

एकेन्द्रिय रत्न - १. चक्ररत्न २. छत्ररत्न ३. चर्मरत्न ४. दण्डरत्न ५. असिरत्न ६. मणिरत्न ७. काकणीरत्न।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जंबूद्वीप का विस्तार

(२०९)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइयं आयामविक्खम्भेणं केवइयं परिक्खेवेणं केवइयं उव्वेहेणं केवइयं उड्ढं उच्चत्तेणं केवइयं सव्वग्गेणं पण्णत्ते?

गोयमा! जम्बुद्दीवे दीवे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खम्भेणं तिण्णि जोयणसयसहस्साइं सोलस य सहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं पण्णत्ते, एगं जोयणसहस्सं उव्वेहेणं णवणउइं जोयणसहस्साइं साइरेगाइं उड्ढं उच्चत्तेणं साइरेगं जोयणसयसहस्सं सव्वग्गेणं पण्णत्ते।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप का आयाम-विस्तार, परिधि, उद्वेध - भूमिगत गहरा भाग, ऊँचाई - ये समग्रतया कितने बतलाए गए हैं?

हे गौतम! जंबूद्वीप का सम्पूर्णतया आयाम-विस्तार एक लाख योजन, परिधि ३१६२२७ योजन ३ कोस १२८ धनुष एवं १३$\frac{१}{२}$ अंगुल से कुछ ज्यादा कही गई है। इसकी जमीन में गहराई १००० योजन तथा ऊँचाई ९९,००० योजन से कुछ अधिक बतलाई गई है।

जंबूद्वीप की नित्यता, अनित्यता

(२१०)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे किं सासए असासए?

गोयमा! सिय सासए सिय असासए।

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-सिय सासए सिय असासए?

गोयमा! दव्वट्ठयाए सासए वण्णपज्जवेहिं गंधपज्जवेहिं रसपज्जवेहिं फासपज्जवेहिं असासए, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-सिय सासए सिय असासए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे कालओ केवचिरं होइ?

गोयमा! ण कयावि णासि ण कयावि णत्थि ण कयावि ण भविस्सइ भुविं च भवइ य भविस्सइ य धुवे णिइए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे जम्बुद्दीवे दीवे पण्णत्ते इति।

शब्दार्थ - सिय - स्यात्-कथंचित्।

भावार्थ - हे भगवन्! जंबूद्वीप क्या शाश्वत है या अशाश्वत है?

हे गौतम! जंबूद्वीप कथंचित् शाश्वत है, कथंचित् अशाश्वत।

हे भगवन्! वह शाश्वत एवं अशाश्वत - दोनों कैसे कहा गया है?

हे गौतम! द्रव्यत्व रूप से शाश्वत है तथा वर्ण, गंध, रस एवं स्पर्श पर्याय की अपेक्षा से (पर्यायार्थिकनय की अपेक्षा से) अशाश्वत है।

हे गौतम! इसी कारण वह स्यात् शाश्वत एवं स्यात् अशाश्वत कहा गया है।

हे भगवन्! जंबूद्वीप की स्थिति काल की अपेक्षा से कियत्कालिक है?

हे गौतम! वह भूतकाल में न था, वर्तमान में नहीं है, भविष्य में नहीं होगा, ऐसा नहीं है। वह अतीत में था, वर्तमान में है और भविष्य में रहेगा।

जंबूद्वीप ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित एवं नित्य परिज्ञापित हुआ है।

जंबूद्वीप का स्वरूप

(२११)

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे किं पुढविपरिणामे आउपरिणामे जीवपरिणामे पोग्गलपरिणामे?

गोयमा! पुढविपरिणामेवि आउपरिणामेवि जीवपरिणामेवि पुग्गलपरिणामेवि।

जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सव्वपाणा सव्वजीवा सव्वभूया सव्वसत्ता पुढविकाइयत्ताए आउकाइयत्ताए तेउकाइयत्ताए वाउकाइयत्ताए वणस्सइकाइयत्ताए उववण्णपुव्वा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हंता गोयमा! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।

शब्दार्थ - **असइं** - असकृत - अनेक बार, **अदुवा** - अथवा।

भावार्थ - हे भगवन्! क्या जंबूद्वीप पृथ्वी परिणाम - पार्थिव पिण्डरूप, जल परिणाम, जीव परिणाम या पुद्गलस्कन्ध रूप है?

हे गौतम! वह पृथ्वीपर्याय, जलपर्याय, जीवपर्याय एवं पुद्गलस्कन्ध रूप है।

हे भगवन्! क्या जंबूद्वीप में सर्वप्राण - द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय के प्राणी, सर्वजीव-पंचेन्द्रिय जीव, सर्वभूत-वानस्पतिक जीव, सर्वसत्त्व - पृथ्वी, जल, अग्नि तथा वायु के जीव - ये सब पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक के रूप में पूर्वोत्पन्न हैं?

हाँ गौतम! वे अनेक अथवा अनेक बार उत्पन्न हुए हैं।

जंबूद्वीप : नामकरण

(२१२)

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-जम्बुद्दीवे दीवे?

गोयमा! जम्बुद्दीवे णं दीवे तत्थ २ देसे २ तहिं २ बहवे जम्बूरुक्खा जम्बूवणा जम्बूवणसंडा णिच्चं कुसुमिया जाव पिंडममंजरिवडेंसगधरा सिरीए अईव २ उवसोभेमाणा २ चिट्ठंति, जम्बूए८ सुदंसणाए अणाढिए णामं देवे महिड्ढिए जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-जम्बुद्दीवे दीवे इति।

भावार्थ - हे भगवन्! जम्बूद्वीप इस नाम से क्यों पुकारा जाता है?

हे गौतम! जम्बूद्वीप में स्थान-स्थान पर जामुन के पेड़ हैं। इनसे भरे हुए वन एवं वनखण्ड हैं। ये हमेशा कुसुमित यावत् पुष्पदंडिकाएं, मंजरियों से अलंकृत हैं, अतीव शोभामय हैं।

जंबू सुदर्शना में अत्यंत समृद्धिशाली यावत् पल्योपमस्थितिक अनादृत नामक देव निवास करता है।

हे गौतम! इसी कारण वह जंबूद्वीप के नाम से अभिहित हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपसंहार

(२१३)

तए णं समणे भगवं महावीरे मिहिलाए णयरीए माणिभद्दे चेइए बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं बहूणं देवाणं बहूणं देवीणं मज्झगए एवमाइक्खइ, एवं भासइ, एवं पण्णवेइ, एवं परूवेइ जम्बूदीवपण्णत्ती णामत्ति अज्जो! अज्झयणे अट्ठं च हेउं च पसिणं च कारणं च वागरणं च भुज्जो २ उवदंसेइ त्तिबेमि।

॥ सत्तमो वक्खारो समत्तो॥

॥ जंबुद्दीवपण्णत्तीसुत्तं समत्तं॥

शब्दार्थ - परूवेइ - प्ररूपयति-प्ररूपित किया।

भावार्थ - श्री सुधर्मा स्वामी ने अपने शिष्य जंबू को संबोधित करते हुए कहा - हे जम्बू! मिथिला नगरी के अंतर्गत, मणिभद्र चैत्य में बहुत से श्रमणों, श्रमणियों, श्रावकों, श्राविकाओं, देवों और देवियों की परिषद् के मध्य श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति नामक सूत्र का अध्ययन, अर्थ, हेतु, प्रश्न, कारण, व्याकरण - विश्लेषण पूर्वक बार-बार इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्ररूपण, प्रज्ञापन एवं उपदेश किया।

इस प्रकार जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति - सूत्र का समापन होता है।

॥ सातवां वक्षस्कार समाप्त॥

॥ जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र समाप्त॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ
ब्यावर (राज.)

मुद्रक
स्वास्तिक प्रिन्टर्स
प्रेम भवन हाथी भाटा, अजमेर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org